हरियाणवी लोकधारा

बी.ए.- III

हिन्दी (अनिवार्य)

Directorate of Distance Education
Maharshi Dayanand University, Rohtak

हरियाणवी लोकधारा

बी.ए. III

हिन्दी (अनिवार्य)

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय

रोहतक-124 001

Copyright © 2004, Maharshi Dayanand University, ROHTAK
All Rights Reserved. No part of this publication may be reproduced or stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means; electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the written permission of the copyright holder.

Maharshi Dayanand University
ROHTAK – 124 001

विषय सूची

काव्य-भाग

हरियाणवी काव्यधारा

1	गरीबदास	5-38
2	नितानंद	39-67
3	बाजे भगत	68-81
4	लखमीचद	82-95
5	माँगेराम	96-106
6	साधुराम	107-123
7	बस्तीराम	124-135
8	फौजी मेहर सिंह	136-154
9	तारादत्त विलक्षण	155-172
10	जगदीश चंद्र वत्स	173-188
11	डॉ० जय नारायण कौशिक	189-199
12	भारत भूषण सांघीवाल	200-219
13	कंवल सिंह हरियाणवी	220-229

गद्य-भाग

हरियाणवी लोककथा

1	कंवल हरियाणवी	230-240
2	रामफल चहल	241-248
3	रघुवीर सिंह मथाणा	249-256

बी० ए० तृतीय वर्ष
हिंदी (अनिवार्य)
हरियाणवी लोकधारा

पूर्णांक : 100
समय : 3 घण्टे

निर्देश:

1. हरियाणवी जनपदीय भाषा और साहित्य पर आधारित पुस्तक से व्याख्या के लिए चार अवतरण पूछे जाएँगे। परीक्षार्थियों को इनमें से दो की सप्रसंग व्याख्या करनी होगी। प्रत्येक व्याख्या 8 अंकों की होगी।
2. हरियाणवी जनपदीय भाषा और साहित्य पर आधारित पाठ्य पुस्तक में से किन्हीं दो रचनाकारों का साहित्यिक परिचय पूछा जाएगा। जिनमें से परीक्षार्थियों को एक का परिचय देना होगा। यह प्रश्न 10 अंकों का होगा।
3. पाठ्य पुस्तक की अनुशीलनी में निर्धारित प्रश्नों में से कोई दो प्रश्न पूछे जाएँगे, जिनमें से परीक्षार्थियों को एक का उत्तर देना होगा। यह प्रश्न 10 अंकों का होगा।
4. प्रयोजनमूलक हिंदी और हिंदी भाषा पर आधारित पाठ्य पुस्तक से चार प्रश्न पूछे जाएँगे, जिनमें से परीक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 10 अंकों का होगा।
5. हिंदी साहित्य का इतिहास (आदिकाल और मध्यकाल) से 4 प्रश्न पूछे जाएँगे जिनमें से परीक्षार्थियों को दो प्रश्नों के उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 10 अंकों का होगा।
6. हिंदी साहित्य का इतिहास (आदिकाल–मध्यकाल) और प्रयोजनमूलक पाठ्य पुस्तक दोनों में से 5–5 अति लघूतरी प्रश्न पूछे जाएँगे जिनमें से परीक्षार्थियों को किन्हीं सात प्रश्नों के लगभग 50 शब्दों में उत्तर देने होंगे। प्रत्येक प्रश्न 2 अंकों का होगा और पूरा प्रश्न 14 अंकों का होगा।
7. काव्यांग से दो रसों के और दो अलंकारों के सोदाहरण लक्षण पूछे जाएँगे। परीक्षार्थियों को एक रस और एक अलंकार का लक्षण सोदाहरण लिखना होगा। यह प्रश्न 5 + 5 = 10 अंकों का होगा।

पाठ्य पुस्तक/पाठ्य विषय

1. हरियाणवी लोकधारा–प्रधान संपादक–डॉ० मीरा गौतम, प्रोफेसर, हिंदी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र।
2. प्रयोजनमूलक हिंदी और काव्यांग–डॉ० नरेश मिश्र, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय; रोहतक।
3. हिंदी साहित्य का इतिहास (आदिकाल एवं मध्यकाल)।

हरियाणवी काव्यधारा

काव्य-भाग

1. गरीबदास

जीवन परिचय

भारत में संत काव्य की समृद्ध परम्परा रही है। गरीबदास जी संत काव्य परंपरा की महान् विभूति थे। हरियाणा मे संतमत के उद्‌भव और विकास में संत गरीबदास का नाम आदर से लिया जाता है। कुछ आलोचकों ने इन्हें कबीर का प्रति रूप माना है क्योंकि इन्होंने स्वयं कबीर साहब को अपना गुरु माना है। इन्होंने सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन की सहज अभिव्यक्ति की। अन्य संतों की भांति इनके बारे में भी यही कहा जाता है कि वे पढ़े–लिखे नहीं थे। इन्होंने एक समाज सुधारक, एक संत और एक सच्चे भक्त की भूमिका का पालन अत्यन्त कुशलतापूर्वक किया है।

संत गरीबदास (छुड़ानी वाले) का जन्म वैशाख मास में शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी के दिन संवत् 1774 में हुआ। इनकी जन्मतिथि के बारे में किसी प्रकार का मतभेद नहीं है। इनकी जन्मतिथि के संबंध में सबसे प्रमाणिक तथ्य उनके पुत्र एवं शिष्य संत जैतराम ने अपनी वाणी में इस प्रकार दिया है :–

संवत् सतरासौ चौहत्तर, शुभ मुहर्त अबीछ नक्षत्र।
वैसाख मास की पूर्णमासी ऐसे सतगुरु उतरे आंही।।

संत गरीबदास की शिष्य परंपरा के अवधूत स्वामी श्री भक्तराम ने भी गरीबदास का जन्म संवत् 1774 (सन् 1717 ई०) में हरियाणा प्रांत के छुडानी गांव में हुआ बताया है।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर संत गरीबदास का जन्म हरियाणा प्रांत के रोहतक जिले के छुड़ानी गांव में संवत् 1774 में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री बलराम सिंह और माता का नाम श्रीमती रानी था। जाट कृषक परिवार में उत्पन्न संत गरीबदास अत्यंत निश्छल और सात्विक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। संत गरीबदास ने विक्रम संवत् 1835 (सन् 1778 ई०) में भाद्रपद् की शुक्ल पक्ष की द्वितीया को शरीर त्याग दिया। इनकी मृत्यु तिथि के विषय में प्रामाणिक तथ्य उनके पुत्र एवं शिष्य संत जैतराम ने अपनी वाणी में इस प्रकार दिया है–

सम्मत अठारह सौ पैंतीसा प्रलोकी सिधारे जगदीसा।
मास भादवा दौज कहावै, पखारा शुक्ल पक्ष कहावै।।

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' उक्ति के अनुसार किसी भी महापुरुष के सद्‌गुण उसके शैशवकाल में ही प्रकट होने लगते हैं। संत गरीबदास भी अन्य बालकों से भिन्न थे। बाल्यकाल से ही माता–पिता को आनंद देने के लिए अनेक लीलाएं करते रहते थे। वे कई बार बालकों को अनुभवी उपदेश देते थे। अज्ञानी एवं अबोध बच्चे इसे न समझकर कहा करते– "पता नहीं राणी का छोहरा क्या कविता कहता है, कुछ समझ में तो आती नहीं।" संत गरीबदास लगभग दस वर्ष की आयु के हुए तो इनके पिता ने इन्हें गौएं चराने के काम में लगा दिया। वे अधिकांश समय तक उधेड़–बुन में ही रहते थे।

गरीबदास एक गृहस्थ संत थे, संन्यासी योगी या वैरागी नहीं थे। संसार में रहकर उन्होंने साधना की, विरक्त होकर नहीं। उन्होंने कभी भी घर–बार छोड़कर बैरागी बनने का उपदेश नहीं दिया अपितु इस संसार में रहते हुए सभी

उत्तरदायित्वों को निभाते हुए कमल के समान निर्लिप्त भाव से ईश्वर की भक्ति करने की प्रेरणा दी है। इनका विवाह छुड़ानी गांव से तीस किलोमीटर दूर आसौधा गांव से सोनीपत की तरफ जाने वाली सड़क पर स्थित बरौणा गांव के चौधरी न्यादर सिंह की पुत्री मोहिनी देवी से हुआ था। इनके पांच पुत्र और दो पुत्रियां थीं।

गरीबदास निरक्षर जरूर थे, परन्तु जन्मजात प्रतिभावान एवं तेजस्वी पुरुष थे। इन्होंने कबीर की भांति स्पष्ट कहा है–

द्वादश तिलक नहीं हर करहैं, दर्पण ध्यान न धोती।

कागज कलम नहीं कोई हमरै, ना पत्रा न पौथी।।

इन्होंने सत्संग तथा स्वानुभूति के द्वारा इतना अधिक ज्ञान प्राप्त कर लिया था कि उनकी शिक्षा का अनुमान वाणी से ही लगाया जा सकता है। इनके अनुसार पौथी पढ़ना तो निरर्थक है क्योंकि परमात्मा कलम से अक्षरबद्ध नहीं हो सकता। वे कहते हैं–

गरीब पोथी तो थोथी भई, थूर बिलावे काहि।

चार वेद पंडित पढ़या, ओह अक्षर नहीं माहिं।।

संत गरीबदास जी अत्यंत निर्भीक, दयालु, परोपकारी, सरल, निश्चल एवं सहनशील स्वभाव के थे। वे स्वभाव से बड़े क्षमाशील थे। उनकी सहजता से सभी प्रभावित थे।

गरीबदास ने स्वयं अपनी वाणी में बार–बार कबीर साहब का शिष्य होना स्वीकार किया है–

'दास गरीब कबीर का चेरा, सत्यलोक अमरापुर डेरा'।

साहित्यिक कृति

'ग्रंथ साहिब' में इनकी वाणी संग्रहीत है। इनकी रचना के विषय में कहा जाता है कि गरीबदास अनपढ़ थे, इसलिए इनकी वाणी को लिपिबद्ध दादू संप्रदाय के एक महात्मा गोपालदास ने किया है। इनकी रचना में जीवन को गति देने वाले अनूठे भाव हैं।

साहित्यिक परिचय

1. निर्गुण ब्रह्म में विश्वास - गरीबदास ने निर्गुण ब्रह्म के उपासक होने के कारण अद्वैतवाद को अपनाया है। जीव को ब्रह्म से भिन्न न मानकर उसे उसी का अंश प्रतिपादित किया है। उनका ब्रह्म अविगत है। वह फूलों की सुगंध से भी पतला, अजन्मा और निर्विकार है। वह विश्व के कण–कण में है, उसे कहीं बाहर ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं है। उस निराकार परमात्मा का कोई रूप नहीं है, कोई आकार नहीं है और न ही उसका कोई स्वाद चखकर बता सकता है–

कुछ रूप न रेख बिबेक लख्या चाख्या, नहीं मीठा खारा है

गलता न समान समाय रह्या, जो पिंड ब्रह्मांड से न्यारा है।

गरीबदास निर्गुण ईश्वर को कण–कण में बताते हुए कहते हैं–

गरीब ज्यूं मेहंदी के पात में लाली रही समाय।

यौं साहिब तन बीच है, खोज करो सत भाय।।

2. गुरु-महिमा – गरीबदास ने गुरु को परमात्मा से भी बढ़कर माना है क्योंकि परमात्मा की कृपा होने से पहले गुरु की कृपा होना आवश्यक है। गुरु ही अपने आशीर्वाद और ज्ञान से शिष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को नष्ट करता है जिससे उसे लक्ष्य मिलता है–

सद्गुरु पूर्ण ब्रह्म हैं, सद्गुरु आप अलेख।

सद्गुरु रमता राम है, यामे मीन न मेख।।

सद्गुरु ही स्वयं व्यापक ब्रह्म है और वह स्वयं आलेख है। सद्गुरु सब में रमे हुए राम–स्वरूप है। इसमें संदेह के लिए स्थान नहीं है।

गरीबदास कहते हैं कि सद्गुरु का तो उपदेश पारस पत्थर स्वरूप है, हमारा अन्तःकरण लोहे की तरह कठोर है। सद्गुरु के उपदेश रूपी पारस का जब हमारे हृदय रूपी लोहे से स्पर्श होता है तो वह पलक मात्र में सोना बना देते हैं।

गरीब सतगुरु पारस रूप है, हमरी लोहा जात।
पलक बीच कंचन करैं, पलटैं पिंडा गात।।

3. **बाह्याडम्बर खंडन** – गरीबदास ने विभिन्न धर्मों में प्रचलित विभिन्न अंधविश्वासों, रूढ़ियों और बाह्याडम्बरों का डटकर विरोध किया। उन्होंने लोगों को उपदेश दिया कि यज्ञ, दान, तीर्थ, व्रत इत्यादि जीव को मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। इसके लिए तो जीवन को राम–नाम का आश्रम ग्रहण करना अनिवार्य है। उनका स्पष्ट कथन है–

गरीब कोटि गऊ जे दान दे, कोटि जगि जौनार।
कोटि कूप तीर्थ खने, मिटे नहीं जम मार।।
\+ + + +
गरीब कोटिक तीर्थ व्रत करि, कोटि गज करि दान।
कोटि अश्व विपरों दिये, मिटे न खैंचातान।।

4. **पाखंड विरोध** – गरीबदास जहाँ साधुओं के सदगुणों पर मुग्ध थे, वहाँ उनके अवगुणों और पाखंडों का खुला विरोध करते थे। वे किसी भी संप्रदाय के दिखावे और पाखंड को देख चुप नहीं रहे। उन्हें सुधार की चाह थी–

कोयलियों में हाथ घसौरे, माला गुप्त फिरावैं हैं।
मन मणके का फेर न जानें, साहिब दर नहिं जावे हैं।।

5. **जातिवाद का विरोध** – संत गरीबदास ने पुराणों के विविध दृष्टांतों के द्वारा धर्म, कर्म, यज्ञ, दान आदि की महत्ता और समाज के लिए इनकी अनिवार्यता का मुक्त कंठ से प्रतिपादन किया है। वे धर्म में नवागत संकीर्णताओं और पाखंडों का डटकर विरोध करते हुए किसी भी जाति, धर्म या संप्रदाय को बिल्कुल क्षमा नहीं करते थे। साधु समाज से इनकी आत्मीयता थी। वे साधु समाज में आदर्श और एकरूपता देखते थे–

गरीब साधु साधु सब एक हैं, इन में कछु न भ्रांति।
निरबैरी निर्भय सदा, एक जाति एक पांति।।

उन्हें हिन्दू–मुस्लिम के तूफानी संघर्ष में साधु अखाड़ों को भी भाग लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। उसकी भी उन्होंने निंदा की है–

तीर तुमक तरवार कटारी, जम घट घोर बंधावै हैं।
हरि पैड़ी हरि हेत न जान्या, वहाँ जाय तेग चलावै हैं।।
\+ + + +
काटे शीश नहीं दिल में करुणा, जग में साधु कहावै हैं।
जो नर मारे दर्शन जाही तिस कूं नरक पठावें हैं।।

जातिवाद का खंडन करते हुए वे कहते हैं–

मुसलमान कुं गाय भखी, हिंदू खाया सूर।
गरीबदास दुंहु दीनसे, राम रहीमा दूर।।
\+ + +
जिस दगड़े पंड़ित गए, शेख सय्यद मुल्लान।
काजी कूप पंड़त है, पढ़ पढ़ हर्फ कुरान।।

6. **माया का विरोध** -- गरीबदास ने बार बार माया से सावधान रहने की चेतावनी दी है। उनका कथन है कि महाठगिनी है। मीठी वाणी बोलकर वह सभी को अपने फंदे में फंसा लेती है। इस संसार में जो कुछ भी सुंदर एवं आकर्षक है वही माया है। मनुष्य इसमें भ्रमित हो उलझ जाता है। सच्चा गुरु ही जीव को माया के जाल से बचा सकता है। माया के जाल से ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी नहीं बच पाए--

गरीब माया का रस पीयकर, फूट गए पट चार।
ऐसा सद्गुरु हम मिल्या, लोचन शंख उघाड़।।

\+ + + + + +

गरीब माया ब्रह्मा विष्णु हैं, माया शंकर शेष।
पांच तत्त्व गुण तीन लग, माया ही प्रवेश।।

\+ + + + + +

गरीब माया ही के रंग हैं, माया ही के रूप।
माया ही के रंक हैं, माया ही के भूप।।

7. **नारी भावना** -- समाज में नारी की महती भूमिका है। नारी पुरुष की सहभागिनी है। नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व की अवहेलना की जाती रही है। उसका धर्म पति सेवा माना जाता रहा है। पतिव्रता स्त्री की गणना गुणवती स्त्री के रूप में होती है। गरीबदास ने इस विषय में पतिव्रता की चरण पूजा करने को कहा है और चरण पूजा को गंगा स्नान के समान बताया है। संत विचार दर्शनीय है--

गरीब पतिव्रता के चरण की, शिर पर रज ले डार।
अठसठि तीरथ सब कीये, गंगा न्हान किदार।।

\+ + + + + +

गरीब पतिव्रता सो जानिये, मानें पीव की कान।
पीव भावे सोई करे, बिन आज्ञा नहीं खान।।

उन्होंने त्रिया चरित्र अर्थात् नारी के दूषित विचारों की निंदा भी की है--

गरीब कामिनी काली नागनी, मारत है भर डंक।
सुर नर मुनि जन डस लिए, खाये राव रंक।।

8. **नाम स्मरण** -- गरीबदास ने अद्वैतवाद का अनुसरण करते हुए भी भक्ति की उपेक्षा नहीं की है बल्कि भक्ति को सर्वोपरि स्थान दिया है। वह भक्ति का गुणगान करता है--

गरीब भक्ति बिना क्या होत है, भ्रम रहा संसार।
रती कंचन पाया नहीं, रावन चलती वार।।

\+ + + + + +

गरीब संग सुदामा संत ते, दारिद्र का दरियाव।
कंचन महल बख्य दिये, तंडुल भेंट चढ़ाय।।

9. **रहस्यवाद** -- गरीबदास की वाणी में रहस्यवादी भावना के भी दर्शन होते हैं। उन्होंने भक्ति के लिए ईश्वर को प्रियतम और स्वयं को पत्नी मानते हुए प्रेम की अभिव्यक्ति की है। उनकी वियोगिनी आत्मा प्रभु से मिलने के लिए आतुर है और वह सदैव विरहाग्नि में तपती रहती है--

गरीब मैं बैरागनि बिरहनी, तुम्हरी रावल जीत।
मैं घर जारया आपना, सुन सुन तुम्हरी बात।।

संत कवि कहता है कि जीवात्मा को उस (सतगुरु) ब्रह्म ने विरह रूपी बाण कसकर मार दिया है और वह पार निकल गया है जो जीवन रूपी आधर (श्वास) को ले गया है। अब इस तन का कोई आधार नहीं है–

गरीब सतगुरु मार्‌या बान कासि, निकसि गया है पार।
श्वास सिलहरा ले गया, मौह तन कौन आधार।।

योग से प्रभावित होकर इन्होंने अनेक प्रतीकात्मक शब्दों का प्रयोग किया है।

10. भाषा-शैली – गरीबदास का आविर्भाव जिन परिस्थितियों में हुआ वह सक्रांति काल था, जहाँ मुगलकालीन सस्कृति का भानु अस्ताचल को गमन कर रहा था और एक नवीन साम्राज्य पनप रहा था। इसलिए समाज में प्रचलित अरबी, फारसी शब्दावली का प्रभाव गरीबदास की भाषा पर भी पड़ा। इनकी भाषा को भी अन्य संतों की भाषा की तरह 'सधुक्कड़ी भाषा' या 'खिचड़ी भाषा' कहा जा सकता है क्योंकि इसमें खड़ी बोली, अहीरवाटी, हरियाणवी, अरबी–फारसी, तुर्की के शब्दों का प्रयोग हुआ है। दोहा, चौपाई, सोरठा, रेखते, झूमकरा, सवैया आदि छंदों का सफल प्रयोग हुआ है। भाषा की सरलता इनके काव्य की अपनी विशेषता है।

व्याख्या

सतगुरु की महिमा

(1)

गरीब, सतगुरु संगति सार है, सकल कुसंग सब जीव।
पानी से निकसै नहीं, नेक जतन कर घीव।।

शब्दार्थ – संगति=साथ, सकल=समस्त, सारे, कुसंग=कुसंगति, निकसै=निकलना, नेक=अनेक, जतन=प्रयत्न, घीव=घी।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत गरीबदास द्वारा रचित 'कुसंगति का अंग' से अवतरित की गई है जिसमें गुरु की महिमा को वाणी प्रदान की गई है। गुरु की कृपा से अज्ञानी और मूर्ख भी जीवन की दिशा प्राप्त करके उद्धार करने में सफल हो जाते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि सतगुरु ही सब संगति का सार है अर्थात् सतगुरु की संगति ही जीवात्मा को ससार रूपी सागर से पार लगा सकती है। उन्होंने अन्य सारे जीवों की संगति को कुसंगति बताया है। जिस प्रकार अनेक प्रयत्न करने पर भी पानी को मथने से घी नहीं निकल सकता, ठीक उसी प्रकार सांसारिक जीवों की संगति से उद्धार नहीं हो सकता। उद्धार तो गुरु की कृपा से होगा। उनके अनुसार गुरु–संगति जीवन का पथ–प्रदर्शन करती है।

विशेष –

(i) गरीबदास ने गुरु की महिमा का गान किया और उन्होंने स्वीकार किया कि वह सर्वोपरि है।

(ii) सत्संगति की प्रेरक सलाह है।

(iii) अनुप्रास और स्वरमैत्री अलंकारों का सहज प्रयोग है।

(iv) लाक्षणिक भाषा का प्रयोग है।

(v) तद्‌भाव शब्दावली का भावानुकूल प्रयोग प्रशंसनीय है।

(vi) भाषा भावानुकूल और सरस है।

(vii) खिचड़ी या मिश्रित भाषा का प्रयोग है।

(2)

गरीब, परमानंद से बीछर्‌या, योह मन हँसा काग।
मुक्ति नहीं सतगुरु बिना, कहां छापेले दाग।।

शब्दार्थ – परमानंद=परमात्मा, बीछर्‌या=अलग होना, बिछुड़ना, योह=यह, हँसा=जीवात्मा, काग=कौआ, छापेले=छिपाना, दाग=दोष, कलंक।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहिब' के 'कुसंगति का अंग' शीर्षक से अवतरित है, जिसमें सतगुरु की अपार महिमा का गान किया गया है। जीव इस संसार में जन्म लेने के बाद सृष्टि रचयिता परमात्मा को भूल जाता है और दर–दर की ठोकरें खाता है फिरता है। गुरु के आशीर्वाद से ही जीव की मुक्ति सम्भव है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि जीवात्मा परमात्मा से अलग होकर यत्र–तत्र भटकती रहती है क्योंकि मन चंचल होता है उसमें स्थिरता नहीं होती। जीवात्मा रूपी हंस अज्ञानी व्यक्ति रूपी कौओं के साथ इस प्रकार भटकते हैं जैसे चंचल मन मानव को स्थिर नहीं होने देता। जीव अपने द्वारा किये गये पापों, दुष्कर्मों को छिपा नहीं सकता। सतगुरु ही जीव को जन्म–मरण के चक्र से मुक्ति दिला सकता है। सतगुरु–शरण एकमात्र आधार है।

विशेष –

(i) चेतावनी दी है कि अपने पापों, दुष्कर्मों को मानव छिपा नहीं सकता और मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकता।

(ii) गुरु की महिमा का गान है।

(iii) रूपक अलंकार का प्रयोग है।

(iv) लाक्षणिक भाषा का प्रयोग है।

(v) शब्द चयन प्रभावी, आकर्षक और प्रतीकात्मक है।

(vi) प्रतीकात्मकता प्रभावी है।

(vii) सधुक्कड़ी भाषा का सुन्दर प्रयोग है।

(3)

गरीब, कमली कै रंग ना चढ़ै, कोयला नहीं सफेद।
सतगुरु बिन सीझै नहीं, कहा पढ़त है वेद।।

शब्दार्थ – कमली=कम्बली, सुफेद=सफेद, वेद=ग्रंथ, बिन=बिना।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहिब' के 'कुसंगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें अज्ञानी और मूर्ख लोगों के बारे में बताया गया है। वेद–शास्त्र पढ़ने वाले ज्ञानी भी सतगुरु की सहायता के बिना अज्ञानी ही सिद्ध होते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि मूर्ख व्यक्तियों पर ज्ञान का प्रभाव अत्यल्प पड़ता है जैसे काले रंग की कम्बली के ऊपर कोई दूसरा रंग नहीं चढ़ाया जा सकता वह काली की काली बनी रहती है और कोयले को सफेद नहीं किया जा सकता। उसी प्रकार अज्ञानी और मूर्ख व्यक्ति को समझाना भैंस के आगे बीन बजाने जैसा होता है। मनुष्य चाहे कितना ही वेदों–शास्त्रों का अध्ययन कर ले–ऐसे को सत्य–ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। केवल सतगुरु की सहायता से सत्य ज्ञान प्राप्त कर सकता है, अपने अच्छे लक्ष्य की तरफ बढ़ सकता है। आकर्षक उद्‌बोधन है।

विशेष –

(i) अज्ञानियों को जगाने के लिए उद्‌बोधन है।

(ii) अज्ञानी लोगों को काली कम्बली पर रंग न चढ़ने जैसा बताया गया है।

(iii) सतगुरु की महिमा का गान है।

(iv) 'कमली कै' में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

(v) लाक्षणिक भाषा का प्रयोग है।

(vi) काली कम्बली और कोयले का मनमोहक दृष्टान्त है।

(vii) कुसंगति से दूर रहने की प्रेरणा दी गई है।

(viii) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(4)

गरीब, कौडी बदले जात है, योह मानिक रग हंस।
पाचों सेती बंध रह्या, जुग जुग होत विधंस।।

शब्दार्थ – कौड़ी=व्यर्थ की वस्तु सेती=साथ, मानिक=माणिक्य, नग=नगीना, बहुमूल्य पत्थर, हंस=जीवात्मा, जुग=युग, विधंस=विध्वंस, नष्ट।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत गरीबदास द्वारा रचित ग्रंथ साहिग के 'कुसगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है, जिसमें जीवात्मा को उसके दुष्कर्मों और पापों के कारण होने वाली बाधाओं के प्रति सचेत किया गया है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि माणिक्य नग रूपी जीवात्मा अपने दुष्कर्मों और कुसंगति के कारण व्यर्थ की वस्तु बनती जा रही है। जो व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार को नहीं त्यागता उसका विनाश निश्चित है। इस प्रकार मनुष्य को निम्नताओं से बचना चाहिये।

विशेष –

(i) मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार से दूर रहने की सलाह दी गई है।

(ii) 'जुग जुग' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(iii) सुन्दर लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता है।

(iv) भाषा भावानुकूल और सरस है।

(v) प्रभावी गेयता है।

(vi) तद्भव शब्दावली का प्रशंसनीय प्रयोग है।

(vii) गेय–मुक्तक शैली का प्रयोग है।

(viii) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(5)

गरीब, पाँच पच्चीस कुसंगनि, सुनि सरवर नहीं न्हाय।
सतगुरु से मेला नहीं, यों चौरासी जाय।।

शब्दार्थ –

पाँच=पाँच तत्त्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, वायु); पाँच ज्ञानेन्द्रियां (कान, नाक, जीभ, आँख, त्वचा); पाँच कर्मेन्द्रियां (वाक्, पाद, पाणि, पत्यु, उपस्थ)। पच्चीस=तत्त्व – प्रकृति, पुरुष, महत्, अहंकार, मन, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पंच तन्मात्र तथा पंच महाभूत। सुनि=शून्य, सरवर=सरोवर, चौरासी=चौरासी लाख योनियाँ।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। कवि का मानना है कि जीवात्मा विषय–वासनाओं में उलझ कर गुरु से ज्ञान प्राप्त नहीं करती जिस कारण उसकी ईश्वर से भेंट नहीं हो पाती।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि जीवात्मा, तुम्हें माया के मोह ने घेर रखा है। पाँच तत्त्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश, वायु), पाँच ज्ञानेन्द्रियों (कान, नाक, जीभ, आँख, त्वचा) और पाँच कर्मेन्द्रियों (वाक्, पाद, पाणि, पत्यु, उपस्थ) ने तुम्हें घेर रखा है। तुम पचीस कुसंगतियों के शिकार बने हुए हो जिस का परिणाम यह हुआ है कि तुम शून्य सरोवर रूपी परमात्मा के नाम में गोता नहीं लगा सके। तुम्हें ईश्वर की प्राप्ति के लिए इसमें नहाने का अवसर ही नहीं मिला। तुम सच्चे गुरु से भेंट नहीं कर पाए जिस से तुम्हें ब्रह्म का ज्ञान होता। तुम्हारा जीवन तो व्यर्थ ही चौरासी लाख योनियों को नष्ट करता हुए बीता जा रहा है। भाव है कि गुरु के ज्ञान की प्राप्ति न हो सकने के कारण मानव–जीवन

लेकर भी तुम्हारा पृथ्वी लोक पर आना व्यर्थ सिद्ध हुआ है।

विशेष –

(i) गुरु महिमा का वर्णन है।

(ii) सुन्दर लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता है।

(iii) दोहा, छंद ने गेयता का गुण प्रदान किया है।

(iv) तद्भव शब्दावली की प्रधानता है।

(v) भावानुकूल भाषा का प्रयोग है।

(vi) अनुप्रास और स्वरमैत्री का सहज प्रयोग है।

(6)

गरीब, सतगुरु सुरति नगर सैं, आये हैं बड़काज।
कउवा कदर न जानही; हंसा चढ़ैं जिहाज।।

शब्दार्थ – सुरति=ध्यान, बड़काज=बड़े कार्य, कऊवा=कौआ, जानही=जानता, हंसा=जीवात्मा, चढ़ै=चढ़ना, जिहाज=नाम रूपी जहाज।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहिब' के 'कुसंगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है, जिसमें सतगुरु की महिमा का गान किया गया है। मनुष्य इस संसार में जन्म लेता है और अज्ञानता में ऐसे जीवन बर्बाद कर देता है। गुरु की कृपा से ज्ञानी मनुष्य इस संसार रूपी सागर को पार कर जाते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि सतगुरु सुरति नगर से यहाँ बड़े महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए पधारे हैं। अर्थात् मूर्ख व्यक्ति उनके महत्त्व को नहीं समझते जबकि हंस रूपी ज्ञानी व्यक्ति सतगुरु द्वारा बताये गये नाम रूपी जहाज पर चढ़कर संसार रूपी सागर को पार कर लेते हैं। जो गुरु के महत्त्व कों नहं समझ पाते वे बीच में ही डूबकर मर जाते हैं–उनका पतन निश्चित है।

विशेष –

(i) कौआ और हंस के माध्यम से समाज को दिशा देने का प्रयास किया गया है।

(ii) अज्ञानी को नाम रूपी जहाज में बैठाकर भवसागर पार करने की प्रेरणा है।

(iii) सतगुरु की महिमा का रेखांकन है।

(iv) अनुप्रास, रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों का सुन्दर प्रयोग है।

(v) अन्योक्ति अलंकार का प्रयोग है।

(vi) प्रभावी लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता है।

(vii) गेय मुक्तक शैली का प्रयोग किया गया है।

(viii) भाषा सहज, सरल और प्रवाहमयी है।

(ix) तद्भव शब्दों के साथ तत्सम शब्दों का मणिकांन्चनयोग है।

(7)

गरीब, कस्तूरी की वासना, मिरगा लेत सुवास।
निरखि परखि पावे नहीं, बहुरि ढंढोरे घास।।

शब्दार्थ – कस्तूरी=सुगंधित पदार्थ, मिरगा=मृग, सुवास=सुगंध, निरखि–परखि=देखना, परखना, पावै=प्राप्त करना, बहुरि=पुनः, फिर।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित गरीबदास द्वारा रचित ग्रंथ साहब' के 'कुसंगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें कस्तूरी को ब्रह्मा की तरह सर्वव्यापक बताया गया है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हिरण कस्तूरी की सुगंध लेता है और उसे अपने आसपास देखता है जब नहीं मिलती तो घास में बार–बार ढूंढ़ता फिरता है। ठीक यही स्थिति मनुष्य के बारे में है। वह परमात्मा को यत्र–तत्र खोजता फिरता है जबकि परमात्मा घट–घट वासी हैं। परमात्मा को अपने अन्दर खोजने की जरूरत है, दर–दर भटकने की कोई आवश्यकता नहीं है।

विशेष –

(i) हिरण और कस्तूरी के माध्यम से अज्ञानियों को समझाने का प्रयास किया गया है।

(ii) परमात्मा को घट–घट वासी बताया गया है।

(iii) अन्योक्ति अलंकार का अनुकरणीय प्रयोग है।

(iv) लाक्षणिकता का सुन्दर प्रयोग है।

(v) शब्द चयन सर्वथा प्रभावी भावाभिव्यक्ति में समर्थ है।

(vi) भाषा सहज, सरल और प्रवाहमयी है।

(vii) गेय मुक्तक शैली का प्रयोग किया गया है।

(8)

गरीब, कस्तूरी महकंत है, साहिब है संबूह।
नौका चढ़ै न नाम की, अंधे डूबत कूह।।

शब्दार्थ – महकंत=महक रही है, सुगंध दे रही है, संबूह=सुगंध सहित, कूह=चीख।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास द्वारा रचित है जिसमें कवि ने गुरु के ज्ञान की महत्ता को प्रतिपादित किया है। जो व्यक्ति गुरु का ज्ञान प्राप्त नहीं करता और राम के नाम रूपी नौका पर संवार नही होता वह अज्ञान और नाश के अंधकार में डूब मरता है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि गुरु के ज्ञान और भक्ति की कस्तूरी सब दिशाओं में अपनी सुगंध महका रही है। उस का प्रभाव चारों दिशाओं में समान रूप से फैला है और ईश्वर स्वयं तो सब प्रकार की मधुर गंध का रूप ही है, वही गुणों को प्रदान करने वाले हैं। जो गुरु के द्वारा दी गई ईश्वर नाम की नौका पर सवार होता नहीं, वह अज्ञान के अंधकार में पीड़ा के कारण चीख कर डूब जाता है, नष्ट हो जाता है। भाव है कि गुरु का ज्ञान ही ईश्वर की ओर जीवात्मा को उन्मुख करता है।

विशेष –

(i) जीवात्मा को गुरु के नाम की ओर उन्मुख किया गया है।

(ii) दोहा–छंद में लयात्मकता की सुन्दर सृष्टि है।

(iii) लाक्षणिकता कथन को गंभीरता मिली है।

(iv) अनुप्रास का सहज प्रयोग सराहनीय है।

(v) प्रतीकात्मकता का प्रयोग प्रशंसनीय है।

(vi) खिचड़ी भाषा का प्रयोग है।

(vii) शांत रस सुन्दर परिपाक है।

संगति की महिमा

(1)

गरीब, संगत कीजै साध की, संसारी भटकत।
पिंजर सूबा पढ़त है, किस कूं बूझै पंथ।।

शब्दार्थ – संगत=संगत, साध=साधु, पिंजर=पिंजरा, बूझै=पूछना, पंथ=रास्ता।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहित के 'संगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें सत्संगति की महिमा बताई गई है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि मनुष्य को साधुओं की संगति करनी चाहिए। जो सांसारिक आकर्षण में फंसते हैं, वे भटकते रहते हैं। जो लोग साधुओं की संगति नहीं करते वे तोते के समान पिंजरे में ही भटकते रहते हैं। उनको मोक्ष–प्राप्ति का रास्ता कौन बताएगा ?

विशेष –

(i) साधु संगति पर बल दिया गया है।

(ii) सांसारिक आकर्षणों में फंसे जीवों को चेतावनी दी गई है।

(iii) अनुप्रास और अन्योक्ति अलंकार का प्रयोग है।

(iv) गेयता का गुण विद्यमान है।

(v) भाषा भावानुकूल है जिसमें सरसता विद्यमान है।

(vi) खिचड़ी भाषा का प्रयोग किया गया है।

(vii) प्रभावी लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता का प्रयोग है।

(2)

गरीब, साधौ की संगति करै, बड़भागी बड़ देब।
आपन तौं संशय नहीं, और उतारैं खेव।।

शब्दार्थ – साधौ=साधु, बड़भागी=बड़े भाग्य, अच्छे भाग्य, संशय=शंका, संदेह। आपन=अपना, खेव=पार लगाना।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहित के 'संगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें साधुओं की संगति के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं जो मनुष्य साधुओं की संगति करते हैं वे भाग्यवान हैं और देवताओं के समान हैं। साधुजनों को अपने बारे में तो कोई शंका या संदेह नहीं और वे दूसरे लोगों से भी संसार रूपी सागर से पार कर देते हैं। साधु–संतों की संगति से मनुष्य सांसारिक आकर्षणों से ऊपर उठकर मुक्ति प्राप्त करते हैं।

विशेष –

(i) साधु संगति करने वालों को भाग्यवान बताया गया है।

(ii) 'बड़भागी बड़' में अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।

(iii) सुन्दर लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता है।

(iv) भाषा सहज, सरल और प्रभावमयी है।

(v) गेय मुक्तक शैली का प्रयोग किया गया है।

(vi) तद्भव शब्दों के साथ तत्सम शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(3)

गरीब, संगत सुर की कीजिये, असर आव है ओस।
बुद्धि भृष्टि सौं संग क्या, उलटा देही दोष।।

शब्दार्थ – संगत=संगति, सुर=देवता, असर=प्रभाव, ओस=ओस कण, भृष्टि=भ्रष्ट, संग=साथ।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहित के 'संगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें देव तुल्य साधु जनों की संगति के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि मनुष्य को देव तुल्य साधु जनों की संगति करनी चाहिए जो उनको शीतलता प्रदान करते हैं। साधु संगति से स्वभाव में शीतलता और व्यवहार में विनम्रता आ जाती है। जिन मनुष्यों की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है वे साधु संगति करना तो क्या उल्टे उनमें दोष निकालने लग जाते हैं।

विशेष –

(i) बुद्धिहीनों को चिंतन के लिए प्रेरणा दी गई है।

(ii) देव तुल्य साधुजनों के महत्त्व को रेखांकित किया गया है।

(iii) अनुप्रास और स्वरमैत्री अलंकारों का सुन्दर प्रयोग है।

(iv) शब्द चयन प्रभावी है।

(v) लाक्षणिकता का प्रयोग किया गया है।

(vi) गेय मुक्तक शैली का प्रयोग किया गया है।

(vii) सधुक्कड़ी भाषा प्रयुक्त हुई है।

(4)

गरीब, संगति सुर की कीजिये, असुरन सौं क्या हेत।
डाल मूल पावै नहीं, ज्यों मूली का खेत।।

शब्दार्थ – सुर=देवता, असुरन=राक्षस, डाल=टहनी, तना, मूल=जड़।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहित के 'संगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें सत्संगति और कुसंगति के परिणाम की तरफ संकेत किया गया है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि मनुष्य को देवतुल्य साधुजनों की संगति करनी चाहिए जिससे कल्याण होगा। राक्षसों या दुष्ट लोगों की संगति से कोई हित नहीं होगा। जैसे मूली के खेत से जब मूली को उखाड़ लिया जाता है तो न तो जड़ मिलती है और न टहनी या तना। किसी प्रकार का कोई चिह्न शेष नहीं रहता। वैसे ही जो मनुष्य राक्षसों की संगति करते हैं, उनका विनाश निश्चित है, उनका पतन होता चला जाता है।

विशेष –

(i) देवतुल्य साधुजनों की संगति का गुणगान किया गया है।

(ii) अनुप्रास और उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग है।

(iii) लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता विद्यमान है।

(iv) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(v) शब्द–चयन सर्वथा उचित होने से प्रभावी भावाभिव्यक्ति है।

(vi) आकर्षक गेयता है।

(5)

गरीब, संगति सुर की जोरि है, असुरन की है गंद।
सुर है सुरगा लोक के, असुर मलीनं जिंद।।

शब्दार्थ – सुर=देवता, असुरन=राक्षस, सुरगालोक=स्वर्ग लोक, जिंद=जीवित।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित संत गरीबदास द्वारा रचित 'ग्रंथ साहित के 'संगति का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है जिसमें सत्संगति के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हमने ईश्वर की कृपा और गुरु के ज्ञान से भक्त रूपी देवताओं को संगत को पाया है, स्वयं को भक्तों से जोड़ा है और अच्छी संगत को पाया है। अज्ञानियों और पापी रूपी असुरों की संगत जीवन को खराब कर देने वाली गंदगी है। हम उस से बचे रहे हैं। देवता तो स्वर्ग लोक से संबंधित है जो जन्म–मरण के बंधन में बंधे हुए दुष्ट हैं। भाव है कि सदा अच्छी संगति पा कर अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाओ न कि दुष्टों के साथ रह कर अपने जीवन को बिगाड़ो।

विशेष –

(i) संगति के प्रभाव से जीवन को सफल बनाने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) दोहा छंद गेयता का आधार बना है।

(iii) अनुप्रास अलंकार का सहज प्रयोग है।

(iv) शांत रस का परिपाक है।

(v) लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता से कथन को गहनता–गंभीरता मिली है।

(6)

गरीब, संगति हुई तौ क्या हुआ, हिरदै नहीं विवेक।
छलनी कंदा छानिहीं, कूकस राख्या देखि।।

शब्दार्थ – विवेक=ज्ञान, बुद्धि, कूकस=कुछ भी, कंदा=मिश्री, सफेद शक्कर।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। कवि का मानना है कि जीवन में सत्संगति की आवश्यकता होती है पर साथ ही अपने विवेक की आवश्यकता भी होती है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि यदि मानव को श्रेष्ठ संगति प्राप्त भी हुई तो क्या लाभ? यदि मानव के हृदय में विवेक नहीं है तो सत्संगति भी कुछ नहीं कर सकती। छलनी तो पानी में घुली मिस्री को भी अपने पार से गुजर जाने देती है; उसे रोक नहीं पाती। क्या कभी किसी ने छलनी से पानी में घुली शक्कर को रुकते देखा है ? भाव है कि यदि मनुष्य में अपनी बुद्धि की ही कमी है तो अच्छी संगत भी बेचारी क्या करेगी ?

विशेष –

(i) मानवीय विवेक के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है।

(ii) दोहा छंद ने कवि के कथन को संगीतात्मकता का गुण प्रदान किया है।

(iii) अनुप्रास दृष्टांत और प्रश्न अलंकारों का सहज प्रयोग किया गया है।

(iv) तद्भव और देशज शब्दावली का बहुत प्रयोग है।

(v) आकर्षक माधुर्य गुण विद्यमान है।

(vi) शांत रस का मनभावन परिपाक है।

(7)

गरीब, सूवा सतगुरु कहत है, पिंजर पड़े प्रान।
खिड़की खुल्हैं उड़ गया, मंत्र न लाग्या कान।।

शब्दार्थ – सूवा=तोता, जीवात्मा, पिंजर=पिंजरा, खुल्हैं=खुल गई।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। कवि का मानना है कि यदि जीवात्मा गुरु के ज्ञान को पाना ही नहीं चाहती और मोहमाया में डूबी रहना चाहती है। इससे वह असफल हो जाता है।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि जीवात्मा रूपी तोते को सच्चे गुरु ज्ञान देते रहें, अपनी बात कहते रहे पर तोते के प्राण तो पिंजरे से निकल भागने की ओर लगा है। उस का ध्यान गुरु के उपदेश की ओर नहीं बल्कि पिंजरे की बंद खिड़की की ओर लगे हैं कि कब यह खुले और मैं बाहर जाऊँ। पिंजरे की खिड़की खुली और जीवात्मा रूपी तोता उड़ गया। गुरु के मंत्र उस के कानों पर कोई प्रभाव नहीं डाल सके। भाव है कि गुरु के ज्ञान को पाने के लिए मन का उधन लगना परम आवश्यक है।

विशेष –

(i) विवेक की महत्ता का प्रतिपादन है।

(ii) 'सूवा', 'पिंजर', 'खिड़की', 'मंत्र' में प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता विद्यमान है।

(iii) शांत रस का सुन्दर परिपाक है।

(iv) तद्भव शब्दों की बहुलता है।

(v) दोहा छंद गेयता का आधार बना है।

(8)

गरीब, संगत हेत न प्रीतिपद, सूवै ज्यूं संसार।
पिंजर खाली तास का, उडि गया बनौं मंझार।।

शब्दार्थ – हेत=के लिए, प्रीतिपद=प्रेम, स्नेह का भाव, सूवै=तोते, तास=उस, मंझार=में।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से लिया गया है जिसके रचियता संत गरीबदास हैं। कवि का मानना है कि इस संसार में गुरु के प्रति प्रेम–भाव रखकर ईश्वर की ओर उन्मुख होने वाले नाममात्र ही हैं। सभी विषय–वासनाओं से ग्रसित संसार के प्रति आकृष्ट हैं। इसीलिए सभी संकटग्रस्त हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि इस कलयुग में लोगों के हृदय में संतों के प्रति प्रेमभाव और ज्ञान पाने की इच्छा नहीं रही है। जिस प्रकार तोता जंगल में सुख अनुभव करता है, उसी प्रकार तोते रूपी जीवात्माएं भी संसार की विषय–वासनाओं में ही संलिप्त रह सुख पाना चाहती है। उस का पिंजरा खाली पड़ा है और वह जगल में उड़ गया है। भाव है कि तन रूपी पिंजरा तो विद्यमान है पर मन रूपी तोता विषय–वासनाओं के जंगल में उड़कर जा चुका है।

विशेष –

(i) कलियुग के प्रभाव का मानव मन पर चित्रांकन है।

(ii) सुन्दर लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता विद्यमान है।

(iii) आकर्षक माधुर्य गुण विद्यमान है।

(iv) दोहा छंद से गेयता का मुखर स्वर है।

(v) तद्भव शब्दों की बहुलता है।

(9)

गरीब, ऐसी संगतिं जै मिलै, तौ सांई सैं भेंट।
ऊपरली बरबाद है, जम मारेगा फेट।।

शब्दार्थ – साई=स्वामी, परमात्मा, बरबाद=नष्ट, जम=यम, फेट=बंधन।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। कवि ने सत्संगति की कामना की है ताकि यम की मार से बच सके।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि यदि सत्संगति मिल जाए जो मन से अज्ञान को दूर कर सके तो परमात्मा से भेंट हो जायेगी; अज्ञान मिट जाने के कारण जीवन के सुख प्राप्त हो जाएंगे। यदि ऐसा न हुआ तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा और यमराज फेट से बांध कर मारेगा। भाव है कि सत्संगति ही कलयुग में जीवन को श्रेष्ठ बना सकती है।

विशेष –

(i) सत्संगति की महत्ता की ओर संकेत किया गया है।

(ii) दोहा छंद के प्रयोग से गेयता की प्राप्ति हुई है।

(iii) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) शांत रस का सुन्दर परिपाक है।

(v) मोहक लाक्षणिकता का प्रयोग है।

(10)

गरीब, ऐसी संगत जो मिलै, भक्ति गर्भ प्रहलाद।
नारद से सतगुरु मिलैं, तो सूझै अगम अगाध।।

शब्दार्थ – सतगुरु=सच्चे गुरु, सूझै=ज्ञान होता है, अगम=जिस तक पहुंचा न जा सके, अगाध=जिस की गहराई को मापा न जा सके।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से लिया गया है जिसके रचयिता संत गरीबदास हैं। कवि ने सत्संगति के प्रभाव को अति महत्त्वपूर्ण माना है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि यदि ऐसी संगति मिल जाए जैसी प्रह्लाद को गर्भावस्था में ही भक्ति के उपदेश रूप में मिल गई थी, तो ईश्वर की प्राप्ति सरल हो जाए। यदि प्रह्लाद को भक्ति का उपदेश देने वाले नारद मुनि जैसे सच्चे गुरु मिल जाए तो अगम और अगाध ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग भी दिखाई दे जाए। भाव है कि संगति के प्रभाव से कठिनतम कार्य भी सरल हो जाते हैं। सत्संगति जीवन के लिए वरदान स्वरूप है।

विशेष –

(i) सत्संगति के महत्त्व को स्वीकार किया है।

(ii) दोहा छंद आकर्षक लयात्मकता का आधार है।

(iii) माधुर्य गुण संपन्न भाषा है।

(iv) अनुप्रास ओर उपमा का सुन्दर प्रयोग है।

(v) प्रभावी मिथक का प्रयोग है।

(11)

गरीब सुखदेव गर्भ जुगेसरं, ध्रुवका ध्यान अमान।
लाख बरस के बह गये पंच बरस परवान।।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' के 'संगति की महिमा' खंड से लिया गया है जिसके रचयिता संत गरीबदास हैं। कवि ने सत्संगति की महिमा प्रकट करते हुए माना है कि लम्बा जीवन उतना महत्त्वपूण्र नहीं है जितना अच्छी संगति में जिया हुआ छोटा जीवन। अच्छी संगति को पाने में अमरत्व की प्राप्ति हो जाती है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि शुकदेव ने वेद व्यास की पत्नी के खुले मुख के रास्ते प्रवेश कर बारह वर्ष का समय उस के गर्भ में ही बिताया था और व्यास के मुंह से सुनी ज्ञान भरी बातों को प्राप्त कर लिया था पर ध्रुव ने विष्णु के प्रति बहुत लम्बे समय तक भक्तिभाव अपना कर स्थिर रहने का वरदान पाया था। कवि कहता है कि लम्बे समय का फल तो अधिक परिणामदायक न रहा जबकि कमं समय का प्रभाव अधिक फलदायी रहा।

विशेष –

(i) मिथक के प्रयोग से भक्ति–महत्ता का प्रतिपादन है।

(ii) दोहा छंद से आकर्षक लयात्मकता की सृष्टि है।

(iii) स्वरमैत्री और अनुप्रास का सहज प्रयोग है।

(iv) 'लाख बरस' ओर 'पंच बरस' में सुन्दर प्रतीकात्मकता है।

(v) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(12)

गरीब, जैसे मीन समुद्र में, दसौं दिशा कूं जाय।
हृदय कंवल मैं पैठि करि, जो खोजै सो पाय।।

शब्दार्थ – मीन=मछली, दसौं=दस, हृदय कंवल=हृदय रूपी कमल।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से लिया गया है जिसके रचयिता संत गरीबदास हैं। कवि ने प्रयत्न करने पर ईश्वर की प्राप्ति का वर्णन किया है।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि जिस प्रकार विशाल समुद्र में मछली बड़ी आसानी से दस दिशाओं में तैर कर चली जाती है उसी प्रकार प्रयत्न करने पर हृदयरूपी कमल में ईश्वर की प्राप्ति की जा सकती है। क्योंकि जो खोजने का प्रयत्न करता है वह निश्चित रूप से उसे प्राप्त कर लेता है।

विशेष –

(i) प्रयत्न करने पर ईश्वर की प्राप्ति संभव है।

(ii) दोहा छंद में सुन्दर गेयता है।

(iii) कबीर की साखी का प्रभाव दिखाई देता हैं "जिन्ह ढूंढा तिन्ह पाइया गहरे पानी पैठि। में बपुरा बूड़न डरा रहा किनारै बैठि।"

(iv) माधुर्य गुण संपन्न भाषा है।

(v) तद्भव शब्दावली का बहुल प्रयोग है।

साधु महिमा

(1)

गरीब, धन्य जननी धन्यभूमि धन्य, धन्य नगरी धन्य देश।
धन्य करणी धन्य कुल धन्य, जहां साधू प्रवेश।।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से संकलित की गई हैं। इनके रचयिता संत गरीबदास हैं। कवि की दृष्टि में संत–साधु समाज के उद्धारक हैं। वे परमात्मा के सच्चे भक्त हैं इसलिए सच्चे सम्मान के अधिकारी हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि धन्य है वह माँ जिस के घर संतान रूप में साधु जन्म लेते हैं। धन्य है वह जन्म भूमि और धन्य है वह नगरी जहां साधु प्रवेश करते हैं। साधुओं के द्वारा किया जाने वाला प्रत्येक कर्म धन्य है और वह परिवार भी धन्य है जहां साधु जाते हैं। जहाँ साधु प्रवेश करते हैं वह स्थान धन्य हो जाता है, पूजनीय बन जाता है। भाव है कि साधुओं की कहीं भी उपस्थिति उस स्थान को पवित्र बना देती है।

विशेष –

(i) कवि ने साधु–संतों की प्रतिष्ठा की, जिनके कारण सारे प्राणी सुख प्राप्त कर जीवन की व्याख्या की उच्चता के महत्त्व को समझते हैं।

(ii) दोहा छंद का सुन्दर प्रयोग है।

(iii) गेयता का गुण विद्यमान है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से सरल और सरस अभिव्यक्ति है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) साधु संतों की मोहक प्रशंसा है।

(2)

गरीब, जा उदर साधू बसैं, सौ उदर है पाक।
सनकादिक से उपजहीं, शुकदे बोलैं साषि।।

शब्दार्थ – उदर=पेट, पाक=पवित्र, उपजहीं=पैदा होते हैं, साषि=साक्षी।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत गरीबदास हैं। कवि ने संतों–साधुओं की महत्ता स्वीकार ही नहीं की बल्कि उसका गायन किया है। सारे प्राणी जगत् के लिए वे पूजनीय हैं।

व्याख्या -- संत गरीबदास कहते हैं कि जिस माँ के पेट से साधु बालरूप में जन्म लेते हैं वह पेट पवित्र है; पुण्य है। ब्रह्मा के चार मानस–पुत्र--सनक, सनंदन, सनत्कुमार और सनातन– प्रजा की उत्पत्ति का कारण न बन कर भी इस पवित्रता को प्रकट करने के आधार बने थे। महर्षि व्यास के पुत्र कहलाने वाले शुकदेव इस पवित्रता के साक्षी हैं जिन्होंने व्यास जी की पत्नी के पेट में बारह वर्ष तक रह कर व्यास जी का सारा ज्ञान प्राप्त कर लिया था।

विशेष –

(i) साधुओं को कल्याणकारी मानते हुए उनकी महत्ता को प्रतिष्ठा।

(ii) माधुर्य गुण संपन्नतावाद का प्रयोग है।

(iii) शांत रस सुन्दर परिपाक है।

(iv) तद्भव शब्दावली का सराहनीय प्रयोग है।

(v) अभिधा शब्द शक्ति के प्रयोग से प्रभावी स्पष्टता है।

(3)

गरीब, जहां साधू जन ऊतरैं, तहां भक्ति का भेव।
गोरख उपजे ज्ञान सैं, भभूति दई महादेव।।

शब्दार्थ – जन=लोग, उपजे=उत्पन्न हो, भभूति=राख।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण संत गरीबदास के द्वारा रचित है। इसे 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। सभी संतों ने साधु–महात्माओं को पूजनीय माना है और यह स्वीकार किया है कि उन्हीं के कारण जीव सुख प्राप्त करते हैं। उन का सम्मान किया ही जाना चाहिए।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि जहां साधु उतरते हैं, टिकते हैं; वहां भक्ति का भाव अपने आप ही उत्पन्न हो जाता है। नाथ संप्रदाय के गोरख नाथ ज्ञान से उत्पन्न हुए और भगवान् शिव ने इन्हें भक्ति रूपी भभूति प्रदान की जिस कारण यह अपने संप्रदाय में शिवरूप माने गए। भाव है कि साधु ईश्वर के पवित्र भावों को स्वतः प्राप्त कर लेते हैं।

विशेष –

(i) साधुओं की प्रशंसा की गई है।

(ii) दोहा छंद का सुन्दर प्रयोग है।

(iii) माधुर्य गुण संपन्न भाषा है।

(iv) आकर्षक गेयता है।

(v) मोहक लयात्मकता है।

(vi) अभिधा का अनुकूल प्रयोग है।

(4)

गरीब, संत सुरसरी चलत है, मारू देश बहंत।
बागड मंझि बिलास होहि, नदी सुरसरी संत।।

शब्दार्थ – सुरसरी=गंगा, मारू=रेगिस्तान, बागड=जहां नदी की बाढ़ का पानी न पहुंचता हो, मंढि=मध्य।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में सकलित किया गया है। साधु ईश्वर भक्त ही नहीं होते बल्कि हम मानवों को दिशा दिखाने का कार्य भी करते हैं। वह सब के द्वारा पूजनीय होते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि संत तो गंगा नदी के बहाव के समान पवित्र हैं और वहां भी पहुँच जाते हैं जहाँ रेगिस्तान की शुष्कता होती है अर्थात् नास्तिकों और दुष्ट लोगों तक वे अपने उपदेश की धारा को पहुंचा देते हैं। संत तो गंगा नदी की पवित्र धारा के समान शुष्क स्थान पर पहुंच कर उसे सिक्त कर देते हैं। भाव है कि सत सब को अपने ज्ञान से पवित्रता प्रदान करते हैं।

विशेष –

(i) संतों को समाज के लिए आवश्यक और महत्त्वपूर्ण माना है।

(ii) आकर्षक संगीतात्मकता है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन में सरसता है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(5)

गरीब, सांई संरीखे संत हैं, यामैं मीन न मेष।
पडदा अंग अनादि है, बाहर भीतर एक।।

शब्दार्थ – सांई=स्वामी, यामैं=इन में, मीन=मछली, मन की चंचलता, मेष=भेड़, वासना, अनादि=जिसका अंत न हो।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत गरीबदास हैं। उन्होंने संत काव्य धारा की मान्यताओं की पालना करते हुए साधु संतों की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उन का गुणगान किया है। साधु ही ईश्वर का दूसरा रूप धारण कर लोगों के बीच रह कर उन्हें दिशा दिखाते हैं।

व्याख्या – गरीबदास ने प्रतीकात्मकता का प्रयोग करते हुए संतों की विशेषताओं को प्रकट किया है। वह कहते हैं कि संत तो ईश्वर के समान ही गुणों से युक्त होते हैं। उन में न तो मछली के समान मन की चंचलता होती है और न ही किसी प्रकार की विषय वासनाएँ होती हैं। उन के पास तो ईश्वरीय गुण होते हैं और वे अन्दर–बाहर एक जैसे होते हैं अर्थात् उनकी करनी कथनी में भेद नहीं होता। वे जैसे भीतर से होते हैं वैसे ही बाहर व्यवहार करते हैं। वे छलकपट से रहित होते हैं।

विशेष –

(i) संतों को समाज के लिए आवश्यक और महत्त्वपूर्ण माना गया है।

(ii) आकर्षक संगीतात्मकता है।

(iii) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन में सरसता है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(6)

गरीब, ऐसे साधू संत जन, पारब्रह्म की जाति।
सदा रते हरि नामस्यौं, अन्तर नाहीं घात।।

शब्दार्थ – रते=लीन रहते हैं, नाम स्यौ=ईश्वर के नाम से, अन्तर=हृदय, मन, घात=बेईमानी, भेदभाव।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में स्थान दिया गया है। कवि की दृष्टि में संत–साधु समाज के उद्धारक हैं। वे परमात्मा के सच्चे भक्त होते हैं इसलिए सच्चे सम्मान के अधिकारी हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि साधु–संत तो ईश्वर की ही जाति के होते हैं। वे परमब्रह्म के ही रूप होते हैं। वे सदा ईश्वर के नाम में पूर्ण रूप से डूबे रहते हैं। उनके हृदय में कभी भी किसी प्रकार का भेदभाव या छल–कपट नहीं होता। भाव है कि वे अति सरल स्वभाव के होते हैं।

विशेष –

(i) संतों और साधुओं को समाज में प्रतिष्ठा है।

(ii) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iii) दोहा छंद से कथन को गेयता उभरी है।

(iv) अभिधा से भावों को सरलता मिली है।

(v) शांत रस का परिपाक है।

(7)

गरीब, साध असाध अपार जन, परमानंद स्यौं प्रीति।
कहवत के तौ संत है, अविगत अलख अतीत।।

शब्दार्थ – साध–असाध=अच्छे–बुरे, अलग=निर्गुण ब्रह्म।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत परंपरा के गायक गरीबदास हैं। कवि ने संतों–साधुओं की महत्ता स्वीकार ही नहीं की बल्कि उसका गायन किया है। सारे प्राणी जगत् के लिए वे पूजनीय हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि साधु तो सदा भेदभाव से रहित होते हैं। उनके लिए लोगों की अपार भीड़ में भी कोई अच्छा या बुरा नहीं होता। वे तो सबके साथ परमानंद प्रदान करने वाले ब्रह्म की तरह प्रेम करते हैं। चाहे वे इस संसार में कहलाते तो संत हैं पर वास्तव में वे अविगत, अलख, ईश्वर के ही रूप होते हैं। भाव है कि साधु और ईश्वर में कोई अंतर नहीं है।

विशेष –

(i) साधु–संतों को प्रतिष्ठा दी गई है।

(ii) दोहा छंद का सराहनीय प्रयोग है।

(iii) गेयता का गुण विद्यमान है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन को सरलता और सरसता मिली है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(8)

गरीब, ज्ञान विचार ववेक बिन, क्यों दम तोरै श्वास।
कहा होत हरि नाम सैं, जै दिल ना विश्वास।।

शब्दार्थ – ववेक=ज्ञान, बुद्धि, बिन=बिना, कहा होत=क्या होगा।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण संत गरीबदास के द्वारा रचित है। इसे 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। सभी संतों ने साधु–महात्माओं को पूजनीय माना है और यह स्वीकार किया है कि उन्हीं के कारण जीव सुख प्राप्त करते हैं। उन का सम्मान किया ही जाना चाहिए।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हे मानव ! तू ज्ञान, विचार और विवेक के बिना क्यों अपना जीवन नष्ट कर रहा है। व्यर्थ में साँस ले कर स्वयं को जीवित रूप में प्रकट कर रहा है। यदि दिल में विश्वास न हो, आस्तिकता का भाव विद्यमान न हो तो ईश्वर के नाम को लेने से क्या लाभ ? भाव है कि हृदय में आस्तिकता के भाव न होने पर केवल ईश्वर–भक्ति का नाटक करना व्यर्थ है।

विशेष –

(i) साधुओं को कल्याणकारी मानते हुए उन्हें महत्ता प्रदान की गई है।

(ii) शांत रस का परिपाक है।

(iii) माधुर्य गुण का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(iv) तद्भव शब्दावली का सराहनीय प्रयोग है।

(v) अभिधा शब्द शक्ति के कथन में सरसता और स्पष्टता है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(9)

गरीब, ज्ञान विचार ववेक बिन, क्यों भौंकत हैं श्वान।
दश जोजन जल मैं रहैं, भीजत ना पाषान।।

शब्दार्थ – श्वान=कुत्ता, दश=दस, जोजन=योजन, दूरी मापने की पुरानी इकाई, पाषाण=चट्टान।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत परंपरा के गायक गरीबदास हैं। कवि ने संतो–साधुओं की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उसका गुण–गाण भी कियां है। सारे प्राणी जगत के लिए वे पूजनीय हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हे अज्ञानी मानव, ज्ञान, विचार और विवेक के बिना तू कुत्ते की तरह व्यर्थ क्यों भौंकता है यदि कोई पत्थर दस योजना गहरे पानी में भी डूबा रहे तो भी वह भीगता नहीं है। वह भीतर से सूखा ही रहता है। भाव है कि हृदयहीन–नास्तिक व्यक्ति को चाहे किसी भी संगति में बिठा दो, कितना भी ज्ञान भरा उपदेश दे दो वह तो व्यर्थ ही रहता है। उस पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

विशेष –

(i) संतों और साधुओं को समाज के लिए हितकर मानते हुए उनकी प्रतिष्ठा की है।

(ii) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iii) दोहा छंद से कथन को गेयता मिली है।

(iv) अभिधा से भावों को सरसता–सरलता मिली है।

(v) शांत रस का परिपाक है।

(vi) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(10)

गरीब, ज्ञान विचार ववेक बिन, क्यों रोंकत खर गीध।
कहा होत हरि नाम सैं, जो मन नांही सीध।।

शब्दार्थ – खर=गदहा, गीध=गिद्ध।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित की गई हैं। इनके रचयिता संत गरीबदास हैं। उन्होंने संत काव्य धारा की मान्यताओं की पालना करते हुए साधु संतों की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उन का गुणगान किया है। साधु ही ईश्वर का दूसरा रूप धारण कर लोगों के बीच रह कर उन्हें दिशा दिखाते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि मनुष्य में बिना विचार, विवेक और ज्ञान के कुछ नहीं हो सकता। तुम अज्ञान के प्रतीक गदहे और क्रूरता के प्रतीक गिद्ध को क्यों दोष देते हो। अज्ञानी व्यक्ति भी इन जैसा ही तो होता है। उन में इस से कोई भेद नहीं है। यदि मानव का मन सीधा नहीं है तो केवल ईश्वर नाम रटने से कुछ नहीं होता। भाव है कि जब तक हृदय में साधु संतों का विवेक नहीं आएगा तब तक तुम्हारा जीवन पशुवत ही रहेगा।

विशेष –

(i) साधुओं को कल्याणकारी मानते हुए उनको महत्त्व दिया गया है।

(ii) शांत रस का परिपाक है।

(iii) माधुर्य गुण का प्रयोग है।

(iv) तद्भाव शब्दावली का सराहनीय प्रयोग है।

(v) अभिधा शब्द शक्ति के कथन में सरसता और स्पष्टता है।

(vi) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(11)

गरीब, समझि विचारे बोलना, समझि विचारे चोल।
समझि बिचारे जागना, समझि विचारे ख्याल।।

शब्दार्थ – समझि विचारे=सोच–समझ कर, ख्याल=विचार।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा में स्थान दिया गया है। कवि की दृष्टि में संत–साधु समाज के उद्धारक हैं। वे परमात्मा के सच्चे भक्त होते हैं इसलिए सच्चे सम्मान के अधिकारी हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि साधु महान् होते हैं। वे कोई क्रिया व्यर्थ नहीं करते। वे सोच–समझ कर बोलते हैं, सोच–समझ और विचार कर किसी क्षेत्र में आगे बढ़ते हैं। वे सोच–समझ कर जागते हैं और सोच–समझ कर ही किसी विषय में अपना मन लगाते हैं; ख्याल करते हैं। भाव है कि उनके द्वारा प्रकट किया जाने वाला हर भाव सोचा–समझा हुआ ही होता है।

विशेष –

(i) साधुओं की प्रशंसा की गई है।

(ii) दोहा छंद का सुन्दर प्रयोग है।

(iii) माधुर्य गुण सम्पन्न भाषा है।

(iv) गेंयता की विशेषता विद्यमान है।

(v) लयात्मकता की प्रभावी सृष्टि है।

(vi) अभिधा शब्द शक्ति का सुन्दर प्रयोग है।

(12)

गरीब, करैं विचार समझि करि, खोज बूझ का खेल।
बिना मथे निकसै नहीं, है तिल अंदर तेल।।

शब्दार्थ – समझि=सोच–विचार कर, निकसै=निकलता है।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। साधु ईश्वर भक्त ही नहीं होते बल्कि हम मानवों को दिशा दिखाने कार्य भी करते हैं। वह सबके द्वारा पूजनीय होते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि साधु हर कार्य को बड़े सोच–विचार के बाद ही करते हैं। वे खोज–बूझ कर जीवन का खेल खेलते हैं; अन्धी दौड़ नहीं लगाते, तभी उन्हें फल की प्राप्ति होती है। बिना पीसे तिलों से कभी तेल नहीं निकलता। तेल प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करना पड़ता है। उसी प्रकार श्रेष्ठ कार्य के लिए सोच विचार और प्रयत्न करना ही पड़ता है।

विशेष –

(i) साधुओं को महत्त्व दिया गया है।

(ii) शांत रस का सुन्दर परिपाक है।

(iii) माधुर्य गुण का सुन्दर प्रयोग है।

(iv) तद्भव शब्दावली का सराहनीय प्रयोग है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति क कथन में सरसता और स्पष्टता उभरी है।

(v) दृष्टांत का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(13)

गरीब, जैसें तिल मैं तेल है, यौं काया मध्य राम।
कोल्हू मैं डारि बिना, तत्त नहीं सहकाम।।

शब्दार्थ – काया=शरीर, मध्य=में, डारै=डाले। तत्त=तत्त्व।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत परंपरा के गायक गरीबदास हैं। कवि ने संतो–साधुओं की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उसका गुण–गाण भी किया है। सारे प्राणी जगत के लिए वे पूजनीय हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि जिस प्रकार तिलों में तेल होता है उसी प्रकार शरीर में ईश्वर का वास होता है। उसे प्राप्त करना सरल नहीं है। जैसे कोल्हू में डाले बिना तिलों से तेल नहीं निकलता उसी प्रकार सत्कार्यों और भक्ति के बिना ईश्वर–तत्त्व की प्राप्ति भी संभव नहीं हो सकती। भाव है कि साधु–संगत पा कर मनुष्य अपने जीवन में ईश्वर तत्त्व की प्राप्ति कर सकता है।

विशेष –

(i) साधु–संतों की प्रतिष्ठा की गई है।

(ii) दोहा छंद का सराहनीय प्रयोग है।

(iii) गेयता का गुण विद्यमान है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन को सरलता और सरसता मिली है।

(v) तद्भव शब्दावली का आकर्षक प्रयोग है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(vii) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(14)

गरीब, विचार नाम है समझ का, समझ न परी परख।
अकलमंद एकै घना, बिना अकल क्या लख।।

शब्दार्थ – विचार=सोच, परख=जाँच–पड़ताल, अकलमंद=बुद्धिमान।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित की गई हैं। इनके रचयिता संत गरीबदास हैं। उन्होंने संत काव्य धारा की मान्यताओं की पालना करते हुए साधु संतों की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उन का गुणगान किया है। साधु ही ईश्वर का दूसरा रूप धारण कर लोगों के बीच रह कर उन्हें दिशा दिखाते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हे मानव, विचार तो समझ का नाम है। सोच–विचार और समझ को तेरे द्वारा आसानी से पड़ताल नहीं की जा सकी। बुद्धिमान व्यक्ति तो एक ही पर्याप्त होता है। वह अपनी बुद्धि से श्रेष्ठ कार्यों को कर सकता है। बिना अक्ल के लाखों लोग भी व्यर्थ हैं अर्थात् एक बुद्धिमान व्यक्ति लाख बुद्धिहीनों से श्रेष्ठ होता है। भाव है कि एक बुद्धिमान साधु लाखों मूर्खों को रास्ता दिखाने का कार्य कर सकता है।

विशेष –

(i) संतों को समाज के लिए महत्त्वपूर्ण माना है।

(ii) संगीतात्मकता का तत्त्व विद्यमान है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन की सरसता उभरी है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(15)

गरीब, पारष करैं सो पीर हैं, बोलैं समझ विचार।

नर सरुप नरहरि धर्या, अर्श कला करतार।।

शब्दार्थ – पारष=परख, जाँच–पड़ताल, पीर=गुरु, नरहरि=नृसिंह अवतार, अर्श=आकाश, करतार=ईश्वर।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण संत गरीबदास के द्वारा रचित है। इसे 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। सभी संतों ने साधु–महात्माओं को पूजनीय माना है और यह स्वीकार किया है कि उन्हीं के कारण जीव सुख प्राप्त करते हैं। उन का सम्मान किया ही जाना चाहिये।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि जो दूसरे के सद्गुणों–अवगुणों की सरलता से परख कर लेता है वही गुरु है, बुद्धिमान है, इसलिए उस से सदा सोच–विचार कर बोलो। विष्णु ने नृसिंह अवतार रूप को धारण किया था। यह आकाश में विराजमान ईश्वर की कला थी जो उसने उसकी रक्षा के लिए प्रकट की थी।

विशेष –

(i) साधुओं की प्रशंसा की गई है।

(ii) दोहा छंद है।

(iii) माधुर्य गुण सम्प-ता है।

(iv) गेयता की विशेषता विद्यमान है।

(v) लयात्मकता की प्रभावी सृष्टि है।

(vi) अभिधा का प्रयोग मनभावन है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(16)

गरीब, बिना विचारे क्या लहै, कस्तूरी भटकत।

बिन बूझे नहीं पाइये गाम डगर मग पंथ।।

शब्दार्थ – विचारे=सोचे, कस्तूरी=कस्तूरी मृग, भटकत=भटकता है, गाम=गाँव, डगर=गली, मग=रास्ता।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। साधु ईश्वर भक्त ही नहीं होते बल्कि हम मानवों को दिशा दिखाने का कार्य भी करते हैं। वह सब के द्वारा पूजनीय होते हैं।

व्याख्या – गरीबदास कहते हैं कि हे मानव, तुम्हें बिना सोच–विचार कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता। जिस प्रकार कस्तूरी मृग बिना समझे सुगंध की खोज में व्यर्थ इधर–उधर भटकता रहता है उसी प्रकार ईश्वर के ज्ञान को पाए बिना तुम भी अपना जीवन व्यर्थ गंवा रहे हो। बिना सोचे–समझे तो गांव, गलियों और रास्ते भी नहीं पाये जा सकते हैं।

विशेष –

(i) संतों को समाज के लिए महत्त्वपूर्ण माना है।

(ii) संगीतात्मकता का तत्त्व विद्यमान है।

(iii) शांत रस का सुन्दर परिपाक है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन को सरसता मिली है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(17)

गरीब, ज्ञान सफा के चौक मैं, जाहं विचार बबेक।
कुटलाई जी बहुत हैं, निर्मल अंगा एक।।

शब्दार्थ – बबेक=विवेक, कटुलाई=कुटिलता, निर्मल=स्वच्छ।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण संत गरीबदास के द्वारा रचित है। इसे 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। सभी संतों ने साधु–महात्माओं को पूजनीय माना है और यह स्वीकार किया है कि उन्हीं के कारण जीव सुख प्राप्त करते हैं। उन का सम्मान किया ही जाना चाहिये।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि ज्ञान और दर्शन के चौराहे पर जहाँ विचार और विवेक विद्यमान होते हैं वहां कुटिलता भरे विचार भी अनेक होते हैं। भाव है कि ज्ञान के साथ कुटिलता के विचार भी मानव के मन में बढ़ जाते हैं। पर साधु ही केवल ऐसे होते हैं जो ज्ञान के भंडार हो कर भी निर्मल अंगों से युक्त रहते हैं। वे छल–कपट से सदा दूर ही रहते हैं।

विशेष –

(i) संतों को श्रेष्ठ माना गया है।

(ii) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iii) दोहा छंद है जिसने कथन को गेयता प्रदान की है।

(iv) अभिधा से भावों को सरसता–सरलता मिली है।

(v) शांत रस का परिपाक है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(18)

गरीब, बिना बिचारे भर्म है, सुरपति सरीखा होय।
गौतम रिष गुरुवा बड़े, जाकी पत्नी जोय।।

शब्दार्थ – मर्म=रहस्य, सुरपति=इन्द्र, सरीखा=समान, रिष=ऋषि, जाकी=जिसकी।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। साधु ईश्वर भक्त ही नहीं होते बल्कि हम मानवों को दिशा दिखाने का कार्य भी करते हैं। वह सब के द्वारा पूजनीय होते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि बिना सोचे–विचारे किसी भ्रम का निवारण नहीं हो सकता। यदि देवराज इन्द्र के समान कोई धोखा देने वाला हो तो गौतम ऋक्षि जैसे बड़े गुरु भी उसे नहीं समझ पाए जिनकी पत्नी अहल्या थी। भाव है कि किसी समृद्ध वीर और बड़े व्यक्ति के भेद को पाना सरल नहीं होता है।

विशेष –

(i) समाज में अति चालाक व्यक्ति के भावों को समझना बहुत कठिन है।

(ii) दोहा छंद है।

(iii) माधुर्य गुण सम्पन्न भाषा है।

(iv) गेंयता की विशेषता विद्यमान है।

(v) लयात्मकता की मनभावन सृष्टि है।

(vi) अभिधा का सुन्दर प्रयोग है।

(vii) भाषा सधुक्कड़ी है।

(19)

गरीब, गोरखनाथ सुनाथ हैं, जंत्र मंत्र जोग।
सतगुरु मिले कबीर से, काटे दीरघ रोग।।

शब्दार्थ – सुनाथ=श्रेष्ठ स्वामी, जोग=योग, काटे=दूर करते हैं, दीर्घ=लम्बे, दुखदायी, रोग=कष्ट, मुसीबत।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में स्थान दिया गया है। कवि की दृष्टि में संत–साधु समाज के उद्धारक हैं। वे परमात्मा के सच्चे भक्त होते हैं इसलिए सच्चे सम्मान के अधिकारी हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि नाथ संप्रदाय के गुरु गोरखनाथ श्रेष्ठ स्वामी है, बुद्धिमान हैं और यंत्र–मंत्र–योग को भलीभांति समझ–बूझ कर उनका सहारा लेने वाले हैं। यदि कबीर जैसे सच्चे गुरु मिल जायें तो जीवन के दुःख–क्लेश और पीड़ाएं स्वयं कट जाती हैं। भाव है कि सच्चे साधु जीवन के कष्टों को सहज में दूर कर देते हैं।

विशेष –

(i) साधु–संतों की प्रतिष्ठा की गई है।

(ii) दोहा छंद का सराहनीय प्रयोग है।

(iii) गेयता का गुण विद्यमान है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन में सरलता और सरसता आई है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(20)

गरीब, सारग्राही संत है, चीह्या सार सुरंग।
बेहदि के तौ लाल हे, हदि के पार नहीं रंग।।

शब्दार्थ – सारग्राही=जीवन के रहस्यों और सार को ग्रहण करने वाला, बेहदि=सीमा से न बंधा हुआ, हदि=सीमा में बंधा हुआ, सुरंग=सुन्दर रंग।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित की गई हैं। इनके रचयिता संत गरीबदास हैं। उन्होंने संत काव्य धारा की मान्यताओं की पालना करते हुए साधु संतों की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उन का गुणगान किया है। साधु ही ईश्वर का दूसरा रूप धारण कर लोगों के बीच रह कर उन्हें दिशा दिखाते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि संत सदा संसार की ग्रहण करने की क्षमता रखने वाले होते हैं। उन्होंने जीवन के सुन्दर रंगों को सरलता से पहचाना है। वे बेहदी के तो लाल हैं पर हदि के रंग उन पर नहीं चढ़ते अर्थात् सच्चे संत अधिकारों और लालच की सीमा में न बंधने वाले लाल हैं पर अधिकारों और लालचों की सीमा में बंधने का रंग उन पर नहीं चढ़ता। वे अपनी इच्छा के स्वामी होते हैं। दूसरों के अधिकारों में बंधना उन्हें प्रिय नहीं होता।

विशेष –

(i) संतों को महत्त्व दिया गया है।

(ii) संगीतात्मकता का प्रभावी रूप है।

(iii) शांत रस परिपाक है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन को सरसता मिली है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(21)

गरीब, सारग्राही संत हैं, सिधि सुमरनी फेर।

मन की माला मुकुट धर, ऐसा सुमरन हेर।।

शब्दार्थ – सारग्राही=संसार के सार को ग्रहण करने वाले। सुमरनी=ईश्वर का नाम जपने के लिए प्रयुक्त माला, फेर=फेरना, धर=धारण करना।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में स्थान दिया गया है। कवि की दृष्टि में संत–साधु समाज के उद्धारक हैं। वे परमात्मा के सच्चे भक्त होते हैं इसलिए सच्चे सम्मान के अधिकारी हैं। कवि ने उनके माध्यम से आडंबरों को त्यागने का परामर्श दिया हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि संत तो अपने ज्ञान की सहायता से संसार के सार को ग्रहण करने वाले होते हैं और प्राप्त सिद्धियों की माला को फेरते हैं। मन रूपी माला और मन में प्रभु के मुकुट के समान सर्वोच्च निर्गुण रूप को धारण करते हैं और स्मरण के ऐसे आधार ग्रहण करते हैं जो आडंबरों से रहित हैं।

विशेष –

(i) साधुओं को कल्याणकारी मानते हुए सम्मान दिया है।

(ii) शांत रस का परिपाक है।

(iii) माधुर्य गुण का आकर्षक प्रयोग है।

(iv) तद्भव शब्दावली का सराहनीय प्रयोग है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन में स्पष्टता आई है।

(v) दृष्टांत का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(22)

गरीब, सारग्राही संत है, शब्द सिंध सैलान।

गगन कुंज मैं आरती, देखत नहीं जिहान।।

शब्दार्थ – सिंध=सागर, सैलान=घुमक्कड़, मनमौजी, गगन=आकाश, जिहान=विश्व, संसार।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत गरीबदास के द्वारा रचित हैं जिनको हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। साधु ईश्वर भक्त ही नहीं होते बल्कि हम मानवों को दिशा दिखाने कार्य भी करते हैं। वह सबके द्वारा पूजनीय होते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि साधु–संत तो सदा सार को ग्रहण करने वाले हैं और ईश्वर का नाम रूपी शब्द दूर तक फैले मनमौजी सागर के समान सर्वत्र व्याप्त हैं। साधु–संत आकाश रूपी कुंज में उसी की आरती के दर्शन करता है, वह ईश्वर को संसार के भौतिक रूप में नहीं देखता। भाव है कि साधु–संतों के लिए ईश्वर का निर्गुणी रूप है जो किसी प्रकार दिखाई नही देता चाहे उसका विस्तार सर्वत्र है।

विशेष –

(i) संतों को प्रतिष्ठा दी है।

(ii) तद्भव शब्दों का आकर्षक प्रयोग है।

(iii) दोहा छंद से कथन को गेयता विकसित हुई है।

(iv) अभिधा से भावों को सरलता मिली है।

(v) शांत रस का परिपाक है।

(vi) भाषा सधुक्कड़ी है।

(23)

गरीब, सारग्राही संत है, करते जगि अश्वमेध।
गुण अठारह कथत हैं, रटते चारौं बेद।।

शब्दार्थ – जगि=यज्ञ, अश्वमेध=अश्वमेध यज्ञ, कथत=कहते, रटते=याद करते हैं, वेद=चारों वेद–ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद।

प्रसंग – प्रस्तुत अवतरण संत गरीबदास के द्वारा रचित है। इसे 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। सभी संतों ने साधु–महात्माओं को पूजनीय माना है और यह स्वीकार किया है कि उन्हीं के कारण जीव सुख प्राप्त करते हैं। उन का सम्मान किया ही जाना चाहिए।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि साधु–संत तो सदा ईश्वर नाम के सार को संग्रह करने वाली महान् आत्माएँ होती हैं। वे अश्वमेध यज्ञ करते हैं, अठारह गुणों (ज्ञान, शक्ति, प्रतिभा, बल, पौरुष, तेज आदि) का उल्लेख करते हैं और चारों वेदों–ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद को याद करते हैं। भाव है कि वे अपना समय मानवता के उपकार के लिए धर्म–कर्म में लगाते हैं।

विशेष –

(i) साधु–संतों को प्रतिष्ठा दी है।

(ii) अठारह गुणों का उल्लेख किया गया जबकि अधिकतम गुण सोलह होते हैं।

(iii) दोहा छंद का सराहनीय प्रयोग है।

(iv) गेयता का गुण विद्यमान है।

(v) अभिधा शब्द शक्ति से कथन में सरलता और सरसता आई है।

(vi) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vii) साधु संतों की प्रशंसा है।

(viii) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

(24)

गरीब, सारग्राही संत है, निर्मल नजर आलेख।
तन मन सैं तारी लगी, बहुरि न धारैं भेष।।

शब्दार्थ – निर्मल=साफ–स्वच्छ, अलेख=बिना लिखा हुआ, तारी लगी=स्नान करना, नहाना, बहुरि=पुनः।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित दोहों से लिया गया है जिसके रचयिता संत परंपरा के गायक गरीबदास हैं। कवि ने संतो–साधुओं की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उसका गुण–गाण भी किया है। सारे प्राणी जगत के लिए वे पूजनीय हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि साधु–संत सभी प्रकार के सांसारिक सार को ग्रहण करने वाले हैं, वे पूर्ण रूप से निर्मल हैं और अलिखित ईश्वरीय विधान को भी अपनी आंतरिक दिव्य दृष्टि से देख लेते हैं। ईश्वर के स्वरूप को देख वे तन–मन से उसमें गोता लगा जाते हैं और फिर सांसारिकता का वेष धारण नहीं करते अर्थात् ईश्वर के नाम में ही डूबे रहते हैं।

विशेष –

(i) साधुओं की प्रशंसा की गई है।

(ii) दोहा छंद का प्रयोग है।

(iii) माधुर्य गुण सम्पन्न भाषा है।

(iv) गेयता की विशेषता विद्यमान है।

(v) लयात्मकता की रोचक सृष्टि है।

(vi) अभिधा का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vii) भाषा सधुक्कड़ी है।

(25)

गरीब, सारग्राही संत है, घालत हैं शरतीर।
दास गरीब की बंदगी, सतगुरु मिले कबीर।।

शब्दार्थ – शरतीर=ज्ञान रूपी तीर, बंदगी=प्रणाम।

प्रस्तुत पंक्तियां हमारी हिंदी की पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित की गई हैं। इनके रचयिता संत गरीबदास हैं। उन्होंने संत काव्य धारा की मान्यताओं की पालना करते हुए साधु संतों की महत्ता को स्वीकार ही नहीं किया बल्कि उन का गुण–गान किया है। साधु ही ईश्वर का दूसरा रूप धारण कर लोगों के बीच रहकर उन्हें दिशा दिखाते हैं।

व्याख्या – संत गरीबदास कहते हैं कि संत संसार के सभी प्रकार के सार को ग्रहण करते हैं। वे अपनी बुद्धि से ज्ञान रूपी तीर बरसाते है; अपने ज्ञान को प्रकट करते हैं। गरीबदास कहते हैं कि मुझे मेरे सच्चे गुरु कबीर मिल गये हैं। *मैं उनको प्रणाम करता हूँ, उन की बंदना करता हूँ।*

विशेष –

(i) साधुओं को महत्त्व दिया गया है।

(ii) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iii) दोहा छंद से कथन को गेयता मिली है।

(iv) अभिधा से भावों को सरलता मिली है।

(v) शांत रस परिपाक है।

(vi) सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 गरीबदास के अनुसार गुरु और सत्संगति की महिमा लिखिये।

उत्तर : संत गरीबदास महान् ईश्वर भक्त थे। वे सब के हित चिंतन में लीन रहते थे। धर्म सत्य का उपदेश देता है। सत्य मार्ग पर चलने वाले मनुष्य का आकार भी वही रहता है, परन्तु उसमें शुभ कर्म होते हैं। जीव को इस सत्य मार्ग पर चलाने वाले को ही गुरु की संज्ञा दी गई है।

(अ) गुरु-महिमा

संत गरीबदास ने गुरु की का गान किया है। गुरु के अभाव में तो गोबिन्द की कल्पना ही व्यर्थ समझी गई है। इसलिए गुरु को ईश्वर के समक्ष तक रखा गया है। वे कहते हैं कि संसार रूपी सागर से पार करने के लिए नाम जाप रूपी नौका को गुरु ही बताता है और जीव उस नाम रूपी नौका में बैठकर उसे पार करते हैं क्योंकि केवट–मल्लाह सबको एक दृष्टि से देखता है। ऊँच–नीच का भेदभाव नहीं रखता। जो भी कोई नदी पार करने के लिए नौका में बैठता है उसे पार करा देता है। इसी प्रकार सद्गुरु जी शरण में आए हुए जीवों का कल्याण करने के लिए किसी प्रकार

का भेदभाव नहीं रखते; उत्तम (ऊँच) नीच सबको ज्ञान उपदेश देकर भवसागर से पार कर देते हैं–

गरीब ऐसा सतगुरु हम मिल्या, भवसागर के बीच।
खेवट सभ के खेवता, क्या उत्तम क्या नीच।।

संत गरीबदास कहते हैं कि सत्गुरु का उपदेश तो पारस स्वरूप है, हमारा अन्तः काल लोहे की तरह कठोर है। सद्गुरु के उपदेश रूपी पारस जब हमारे हृदय रूपी लोहे से स्पर्श होता है तो वह पलक मात्र में ही मोक्ष के अधिकारी बना देते हैं–

गरीब सतगुरु पारस रूप हैं हमरी लोहा जात।
पलक बीच कंचन करैं, पलटैं पिंडा गात।।

मनुष्य सत्संग करें या स्वतंत्र साधना करें, उसे फिर भी ऐसे माध्यम की आवश्यकता है जो अनवरत रूप से ईश्वर का मार्ग बताकर उसमें बार–बार प्राण फूंकता रहे। बिना गुरु के साधक का पथ ऐसे विशाल मैदान के समान है जहाँ मनुष्य कहीं भी जा सकता है लेकिन जाता नहीं क्योंकि वहाँ दिशा–भ्रम हो जाता है। सत्संग गुरु ही की खोज में किया जाता है। गुरु ही ऐसा माध्यम है जो कि भक्त को ईश्वर का साक्षात्कार कराता है। जीवन माया के जाल में–इस संसार के आकर्षण में फंस जाता है। उस जाल से बचाने वाले गुरु ही हैं–

गरीब माया का रस पीयकर, फूटिगये पट चार।
ऐसा सत्गुरु हम मिल्या, ज्ञान योग प्रवीन।।

वेदों, पुराणों, शास्त्रों का अध्ययन कर लेने से मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती यह स्थिति तो ठीक वैसी है जैसे काली कम्बली पर रंग चढ़ाने का प्रयास करना और कोयले को सफेद करने का प्रयास करना। सतगुरु की सहायता से जीवात्मा अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकती है ज्ञान प्राप्त कर सकती है।

गरीब कमली के रंग ना चढै, कोमला नहीं सुफेद।
सतगुरु बिन सीझै नहीं, कहा पढ़त है वेद।।

सतगुरु केले के कपूर की तरह है, जैसे केले से स्वाति नक्षत्र के समय बारिश की बूंद पड़ जाए तो उसमें कपूर पैदा होता है और हमारा शरीर केले के पत्ते अर्थात् तिनके की तरह है। सतगुरु के उपदेश रूपी बूंद के हृदय में पड़ जाने से ज्ञान रूपी कपूर उत्पन्न हो जाता है और स्वाति नक्षत्र में सीप में स्वाति बूंद पड़ जाने से मोती पैदा हो जाता है। सद्गुरु के प्रति ऐसा स्नेह हो जैसा कि चंद्रमा के प्रति चकोर का होता है। ऐसा प्रेम हुए बिना ज्ञान होना सम्भव नहीं है–

गरीब सतगुरु कंद कपूर हैं, हमरी तुनका देह।
स्वाति सीप का मेल है, चंद चकोरा नेह।।

गरीबदास ने गुरु को सब संतों में श्रेष्ठ बताया है और कबीर को अपना गुरु सिद्ध किया है–

गरीब ऐसा सतगुरु हम मिल्या, सुरति सिंधु के तीर।
सब संतन सिरताज है, सद्गुरु अदल कबीर।।

संत गरीबदास कहते हैं कि जीवात्मा का शीष और शरीर अवश्य जाएगा अर्थात् मृत्यु को प्राप्त होगा। इसलिए उसको सार्थक करने के लिए सतगुरु की भेंट चढ़ाकर अर्थात् अहंकार को त्याग कर गुरु मंत्र की प्राप्ति करके निरन्तर अजपा जाप जपें जिससे कि यम की चोट न लगे–

गरीब शीश तुम्हारा जाएगा, कर सतगुरु कूं भेंट।
नाम निरंतर लाजिए, जम की लगे न फेट।।

जीव चौरासी लाख योनियों में भटकता रहता है मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती। जन्म–मरण के चक्र से छुटकारा नहीं मिला। सद्गुरु ही जीव को जन्म–मरण के चक्र से छुटकारा दिला सकता है–

गरीब जूनी संकट मेट हैं, आँधे मुख नहीं आय।

ऐसा सतगुरु सेइये, जम से लेत छुड़ाय।।

गुरु की महिमा का बखान सभी संतों ने एक स्वर से किया है। गुरु के चुनते समय सावधान रहने की आवश्यकता है। योग्य शिष्य को योग्य गुरु की प्राप्ति जब हो जाती है तो सारी समस्याओं का हल हो जाता है।

(आ) सत्संगति-महिमा

गरीबदास ने सद्गुरु की प्राप्ति के लिए सत्संगति को एक प्रमुख साधन के रूप में स्वीकार किया है। सत्संगति से मनुष्य में ईश्वर के प्रति श्रद्धा–विश्वास और प्रेम की भावना उत्पन्न होती है जबकि भक्ति की पहली भूमिका है। सत्संगति रूपी नदी में स्नान करने से जीव इस संसार को तैर जाता है। सत्संगति से व्यक्ति में सद्गुणों का आविर्भाव होता है। जिस प्रकार पारस के स्पर्श से लोहा सोना बन जाता है–

गरीब ऐसा कौन अभागिया, करे भजन कुं भंग।

लोहे से कंचन भया, पारस के सतसंग।।

संतों की संगति में रहने वाला जन्म–मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है। सत्संगति में आने से ही ईश्वर के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है और कर्मबंधन समाप्त हो जाता है इसलिए साधुओं की संगति करने वाले जीव बड़भागी हैं–

गरीब साधो की संगति कै, बड़भागी बड़ देव।

आपस तौ संशय नहीं, और उतारे खेव।।

संत गरीबदास कहते हैं इस प्रकार सत्संगति का प्रभाव मनुष्य पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में अवश्य पड़ता है। साधु–संगति भक्ति की प्रेरणा ही नहीं देती अपितु उसे दृढ़ भी करती है। साधु लोग अपने साथ में रहने वाले को अपने जैसा ही बना लेते हैं। संत कहते हैं कि जिस प्रकार यह विश्वास है कि राम भक्ति में अमोघ शक्ति है उसी प्रकार यह विश्वास भी है कि साधु–संगति और साधु सेवा में भी अमोघ शक्ति है। साध संगति कभी निष्फल नहीं जाती।

प्रश्न 2 गरीबदास की भाषाशैली की विवेचना कीजिए।

उत्तर : संत परंपरा के अन्य संतों के ही समान गरीबदास किसी स्कूल में नहीं पढ़े थे। गरीबदास की शिक्षा के विषय में आचार्य परशुराम चतुर्वेदी जी लिखते हैं–"कहा जाता है कि संत गरीबदास पढ़े लिखे कुछ भी नहीं थे। न ही इन्हें पद्य–रचना का ही कोई विशेष अभ्यास था।" यह मत उचित नहीं प्रतीत होता है। गरीबदास जन्मजात तेजस्वी पुरुष थे। यह भी ठीक है कि इनकी शिक्षा अन्य संतों की तरह किसी विद्यालय में नहीं हो पाई और उन्होंने कबीर की भांति स्पष्ट कहा है–

"द्वादस तिलक नहीं हम करहैं, दर्पण ध्यान न धोती।

कागज कलम नहीं कोई हमरे, न पत्ता न पोथी।।"

उपर्युक्त साखी से यह प्रतीत होता है कि उन्होंने किसी परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग अपनी काव्य रचना के लिए नहीं किया। उन्होंने कई भाषाओं के शब्दों को अपनी वाणी में प्रयोग किया, जिस कारण उनकी भाषा को सधुक्कड़ी या खिचड़ी या मिश्रित भाषा कहा जाता है।

साहित्यकार को भावाभिव्यक्ति के लिए भाषा की खोज नहीं करनी पड़ती, बल्कि भावावेग में भाषा स्वयं ही बरसाती नदी के समान उमड़ पड़ती है। भाषा का निर्णय प्रायः शब्दों के आधार पर नहीं किया जाता। इसका आधार क्रियापद संयोजक शब्द तथा कारक चिह्न हैं जो वाक्य विन्यास के लिए आवश्यक होते हैं। गरीबदास की भाषा में केवल शब्द ही नहीं, क्रियापद, कारक आदि भी अनेक भाषाओं के मिलते हैं। उनकी भाषा भावों के अनुसार बदलती दिखाई देती है।

गरीबदास के भाषा सौष्ठव को व्यक्त करने के लिए उनके शब्द–विधान, लोकोक्ति, मुहावरों और प्रतीक आदि निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. शब्द-विधान –

भाव भंगिमा की प्रस्तुति का आधार शब्द है। बिना सार्थक शब्दों के वाक्य–निर्माण नहीं हो सकता और न ही भावाभिव्यक्ति हो सकती है। संत गरीबदास का शब्दविधान आम बोलचाल पर आधारित है। इनके काव्य में यदि फारसी का प्रभाव झलकता है तो वहीं खड़ीबोली का परिचय भी करवाता है। इसी प्रकार भाषा के प्रवाह में कभी संत वाणी के शब्द दृष्टिगोचर होते हैं तो कहीं हरियाणवी शब्दावली प्रयुक्त मिलती है। संत गरीबदास की भाषा संकेतात्मक, प्रतीकात्मक और पारिभाषिक है। इनके भाषा संबंधी कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं–

(अ) तत्सम शब्द – गरीबदास की वाणी में आध्यात्मिक एवं ब्रह्म ज्ञान संबंधी विवेचन में तत्सम शब्द बहुलता से मिलत हैं जैसे–अगम, अगोचर, अटल, अद्‌भुत, अधर, अनन्त, अमर, बैकुण्ठ, मर्म, दामिनी, दधि, लोचन, चिदानन्द आदि।

(ब) तद्‌भव शब्द – गरीबदास की वाणी में तद्‌भव शब्दावली का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है जैसे–अवगत, अचरज, आजस, आग, औगुन, चंद निह्‌चल, पमाना, अमरत (अमृत), करम (कर्म), परकास (प्रकाश), परमेसर (परमेश्वर), प्रापत (प्राप्त), सबद (शब्द) आदि प्रमुख हैं।

(स) देशज शब्द – गरीबदास की भाषा में हरियाणवी, पंजाबी, ब्रजभाषा और अवधी आदि विभिन्न बोलियों, भाषाओं के साधारण बोलचाल के शब्दों का सहज रूप में प्रयोग हुआ है जैसे हरियाणा के शब्द–बोल्या, कित, करु आदि। पंजाबी के शब्द–आंवदा, जांवदा, छुपांवदा, भांडे आदि। अवधी के शब्द–अस, आहि, आन, रावरे, इहां, ऊहां, जिनि आदि।

(द) विदेशी शब्द – गरीबदास ने अपने युग से प्रभावित होकर अरबी–फ़ारसी और उर्दू के आम प्रचलित शब्दों का बड़ी कुशलता से प्रयोग किया है। जैसे–अजब, अल्लाह, आशिक, महबूब, मुरशिद, हराय, खलक, खुदा, कुदान, दरयाव, नमाज, नूर, दरबार आदि।

2. मुहावरे एवं लोकोक्तियां –

मुहावरों और लोकोक्तियों में संत कवि ने गूढ़ तथ्यों को सरल और प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है। इनकी वाणी में प्रयुक्त मुहावरे जैसे (i) 'दर दर मांगे भीख' (भीख मांगना) (ii) 'सौ बातों की बात' (एक ही बात करना)।

लोकोक्ति – (1) 'मैं घर जारया आपना, सुन सुन तुम्हरी बात।' (मूर्खता में अपना नाश करना)।

(2) 'कौन बुझावै है सखि सतगुरु लाई आग'। (समर्थ के आगे किसी की नहीं चलती।

गरीबदास की वाणी में शब्दालंकारों, अर्थालंकारों और मिश्रित अलंकारों का प्रयोग हुआ है। अपनी भाषा में अलंकारो का प्रयोग इन्होंनें जानबूझकर नहीं किया बल्कि अनायास हो गया है। वे तो उनकी वाणी के आवेग से अपने आप इस प्रकार बिखर गए हैं जैसे सागर की तरंगों से रत्न राशि बिखर जाती है। इन्होंने छंदशास्त्र से अनभिज्ञ होते हुए भी दोहा, सोरठा, रमैणी, त्रिभंगी, रेखते, बखै, झूकमरा आदि छंदों का सफल प्रयोग किया है।

प्रतीकों का प्रयोग आदि काल से किया जाता रहा है। वैदिक काल में आध्यात्मिक विचारों की अभिव्यक्ति के लिए ऋषियों नें इनका प्रयोग किया था। वहाँ ब्रह्म को सूर्य, चंद्र आदि प्रतीकों से स्पष्ट किया गया है। सूफी काव्य मे पर्याप्त मात्रा में प्रतीक प्रयुक्त किए गए हैं। गरीबदास की वाणी में उपलब्ध प्रतीक इस प्रकार हैं–

(अ) भावात्मक प्रतीक – गरीबदास ने भगवान् से स्वामी, माता, पिता व प्रियतम आदि का संबंध जोड़ा है। इसके लिए इन्होंने दास्य भाव, वात्सल्य भाव एवं दाम्पत्य भाव के प्रतीक अपनाये हैं। इन्होंने स्वयं को गुलाम, जाद, चाकर, भिक्षुक तथा दास रूप स्वीकार किया है–

कहता दास गरीब है, बांदी जाद गुलाम।
तुमहो तैसी कीजियो, भक्ति हिरंबर नाम।।

इन्होंने ब्रह्म को माता–पिता तथा स्वयं को बालक मानकर वात्सल्य भाव के प्रतीकों का प्रयोग किया है–

मौहीं मादर मौही पिदर प्रानी, मौही आदि मौही अंत निदानी।
मौही मध्य प्रसिद्ध अयूनी, जप तप संयम ध्यान का धूनी।।

दाम्पत्य प्रतीकों की अपनी भावना के रंग से रंजित कर उन्हें सजीव बना दिया है। इन्होंने प्रभु को दुल्हा, कंत, प्रियतम,

पुरुष आदि प्रतीकों से सम्बोधित किया है।–

गरीब पतिव्रता सोई लखो, जानें अपना कंत।
आन ध्यान से रहित होय, गाहक मिले अनंत।।

(ब) दार्शनिक प्रतीक – गरीबदास ने ब्रह्म के अनिर्वचनीय स्वरूप को व्यक्त करने के कुछ परंपरागत प्रतीकों का सहारा लिया है–

गरीब करतूरी की वासना, मिरगा लेत सुबास।
निरख परख पावे नहीं, बहुद ढंढोरे घास।।

इन्होंने जीव के लिए पंछी, दुलहिन, बनजारिन, जोगिन आदि परंपरागत प्रतीकों का प्रयोग किया है। माया को कामिनी, नारी, सुन्दरी, कुमारी, माता सर्पिणी, डायन, नागिन, नटनी, ठगिनी आदि अनेक प्रतीकों द्वारा चित्रित किया है।

(स) साधनात्मक प्रतीक – ब्रह्मरन्ध्र के लिए गगन मंडल, बेगमपुर, मानसरोवर, शून्य आदि प्रतीकों का प्रतीक किया गया है।

गंगा–यमुना–सरस्वती के लिए इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना प्रतीक प्रयुक्त किए गए हैं।

(द) संख्यामूलक प्रतीक – गरीबदास के संख्यामूलक प्रतीक अद्वैतवाद, सांख्यवाद तथा हठयोग से विशेष रूप में प्रभावित हैं। पांच तत्त्व–क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर का, दस इंद्रियां–पांक कर्मेन्द्रियां और पांच ज्ञानेन्द्रियां चौबीस प्रकृति के रूपांतर तथा पच्चीसवां पुरुष है तथा तीन गुण सत्व, रज व तम के प्रतीक हैं।

निश्चय ही गरीबदास ने रहस्यमयी बातों को सरल ढंग से समझाने के लिए विभिन्न भाषा के शब्दों, मुहावरों, लोकोक्तियों और प्रतीकों का सहारा लिया है। यद्यपि ये प्रतीक अब हमें बड़े अटपटे से लगते हैं और समझने की दृष्टि से कठिन प्रतीत होते हैं परन्तु तत्कालीन युग में ये आम बोलचाल की भाषा में प्रचलित थे इसलिए गरीबदास के लिए इनका प्रयोग स्वाभाविक और साधारण था। इस प्रकार गरीबदास की भाषा सरल, बोधगम्य और आकर्षक है।

प्रश्न 3 "गरीबदास एक महान समाज-सुधारक थे" कथन की समीक्षा कीजिये।

उत्तर : साहित्यकार समाज का सर्वाधिक चैतन्यशील प्राणी है और प्रत्येक व्यक्ति समाज की एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। सभ्य व्यक्तियों के समूह को तभी समाज की संज्ञा दी जाती है, जब वे अपने संस्कारों एवं संगठनात्मक ढांचे में सुसम्बद्ध हो। समाज की पहली इकाई परिवार है। व्यक्ति परिवार का एक सदस्य है। परिवार समाज का लघु रूप है। समाज हमेशा विकासोन्मुख रहा है। विकास के मार्ग में कुछ बाधाएं एवं विकृतियां आती रहती हैं जिन्हें समय–समय पर लोकनायक, समाज सुधारक अथवा संत महात्मा अपने सदुपदेशों और नैतिक आचरण से दूर किया करते हैं। मध्यकाल में जब समाज में ऐसी ही विकृतियां पैदा हुईं तो अनेक समाज सुधारक संतों एवं भक्तों ने इस सामाजिक टूटन से उभारने की चेष्टा की। इन्हीं संतों एवं भक्तों की शृंखला में संत गरीबदास ने भी तत्कालीन समाज को एक नई दिशा दी।

संत गरीबदास ने समाज सुधारक के रूप में अपनी वाणी से तत्कालीन जनता को अंधकार के गर्त से उबारा। इनकी वाणी के विविध प्रसंगों में विविध विषयों को उठाया गया है। इन्होंने पारिवारिक संबंधों के विषयों में भी अपनी वाणी में चिंता प्रकट की है। इन्होंने इस नश्वर संसार का विवरण देते हुए संबंधों की बात कही है कि यहाँ सब रोते रह जायेंगे और जीव मिट्टी में मिल जाएगा–

भाई भतीजे रू जोरु जमाल, देखेंगे लड़के जु होगा हवाल।
दादी रू फूफी बहन रोवेगी रूह, यम आन पकरेगा दूबरदूह।
मौसी रू मामा अलामा जहाव, शुकदे कुं पूछो जु विरक्त प्रवान।

नारी पुरुष की सहभागिनी है परन्तु युग युगों से उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की अवहेलना की जाती रही है। उसका धर्म पति सेवा माना जाता रहा है। इन्होंने नारी व पुरुष के संबंधों के विषय में बताते हुए पतिव्रता की चरण पूजा करने को कहा है और चरण पूजा को गंगा स्नान के समान बताया है–

गरीब पतिव्रता के चरण की, शिर पर रज ले डार।
अठसठि तीरथ सब कीये, गंगा न्हान किदार।।

इन्होंने नारी के त्रिया चरित्र की निंदा भी कड़े शब्दों में की है–

गरीब नारी नारी क्या करे, नारी माया मूल।

गरीबदास ने अपनी वाणी में शूरवीर की प्रशंसा और कामी नर की खुलकर निंदा की है। वे कहते हैं कि विषयासक्त नर न केवल स्वयं ही अपनी बर्बादी का कारण बनता है बल्कि अपने परिवार को भी नरक की भट्ठी में झोंक देता है–

गरीब कामी तजे न कामना, ना हृदय हरि सेत।
यमपुर निश्चय जायेगा, सारे कुटुम्ब समेत।।

गरीबदास के हृदय में सामाजिक बुराइयों के निवारण के लिए सतत् ज्वाला धधक रही थी। इनका समस्त कृतित्व सामाजिकता को समर्पित था। इन्होंने हिंदू एवं मुस्लिम समाज में व्याप्त जातिवाद पर कठोर प्रहार किया है। हिंदू समाज के संदर्भ में वे ब्राह्मण की श्रेष्ठा पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं–

जे तू बाह्मनी जाया, तो आन बाट क्यों नहीं आया।
ते घाल्या कंध जनेऊ, तूं भूल्या बाट बटेऊ।
कमल तुम्हारा मुधा, एके जननि सब दूधा।

समाज की आर्थिक दशा के बारे में संत जी ने कहा है कि मनुष्य को प्रभु प्राप्ति के लिए शुद्ध हृदय रखना चाहिए पैसे के पीछे नहीं भागना चाहिए। इन्होंने तत्कालीन समाज की आर्थिकता के संबंध में इस प्रकार कहा है–

गरीब शहजादे मांगत फिरे, दिल्ली के उमराव।
एक रोटी पाई नहीं, खाते नान पुलाव।
गरीब इस ते आगे क्या कहुं, बीती बहुत बिताड़।
बासमती भोजन करें, तिन पाया नहीं पवाड़।।
गरीब खर पवाड़ नहीं खात हैं, मनुष्यों खाया तोड़।
सांगर टीटर भांखड़ी, लिये वृक्ष झरोड़।।

उन्होंने समाज में फैले बाह्याडंबरों और अंधविश्वासों की कटु भर्त्सना की है। उन्होंने लोगों को उपदेश दिया कि यज्ञ–दान, तीर्थ–व्रत इत्यादि से जीव को मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती है। इसके लिए तो उसे राम नाम का आश्रय ग्रहण करना अनिवार्य है–

गरीब कोटि गऊ जे दान दे, कोटि जगि जौनार।
कोटि कूप तीर्थ खने, मिटे नहीं जम मार।।

तत्कालीन समाज में व्याप्त पाखण्डवाद का खुलकर विरोध किया–

कोथलियों में हाथ घसोरें, माला गुप्त फिरावे हैं।
मन मणके का फेर न जानें, साहिब दर नहिं जावे हैं।।

सांप्रदायिकता और जातिवाद का विरोध करते हुए वे कहते हैं–

गरीब साधु-साधु सब एक हैं, इन में कछु न भ्रांति।
निरवैरी निर्भय सदा, एक जाति एक पांति।।
मुसलमान कुं गाय भखी, हिन्दू काया सूर।
गरीबदास दुंहु दीन से, राम रहीमा दूर।।

गरीबदास की वाणी में तत्कालीन समाज को सुधारने के उद्देश्य से सदाचार और नैतिकता पर अनेक स्थलों पर बल दिया गया है। यदि उनकी वाणी को आचार संहिता मान लिया जाए तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। उन्होंने सत्यवादी की भूरि–भूरि प्रशंसा और झूठे की भर्त्सना की है। 'सांच का अंग' प्रकरण में उन्होंने सत्य पर बल दिया ओर झूठे को मिलने वाले दंड की तरफ इंगित करते हुए वे कहते हैं–

गरीब साचे के प्रणाम है, झूठे के शिर डंड।
ठौर नहीं तिहुं लोक में, भरमत है नी खंड।।
गरीब साचे को स्वर्गापुरी, झूठा दोजख माहिं।
चंद सूर की आयु लग, दोजख निकसे नाहिं।।

गरीबदास का कथन है कि मनुष्य को सदाचरण के लिए माया से छुटकारा पाना होगा। बाह्याडंबरों का विरोध करना होगा। इसलिए शील संतोष आदि गुणों को धारण करने का उपदेश देते हैं–

शील संतोष विवेक विचारे, सतगुण तमगुण रजगुण सारे।
दया धर्म और ज्ञान सरोहा, क्षमा यकीन पकरिये लोहा।।

तत्कालीन समाज में हिंदू–मुस्लिम संघर्ष चल रहा था। चारों तरफ हिंसा का वातावरण था। गरीबदास 'जीओ और जीने दो' के सिद्धांत को लेकर चले हैं और जीव हत्या करने को उन्होंने नीच कार्य बताया है। वे कहते हैं कि सभी जीव उस परमात्मा ने बनाए हैं, इसलिए हमें उन सब से प्रेम करना चाहिए–

गरीब धन्य साईं समर्थ तू जो चाहे सो कीन।
एक समुद्र शंख, जीव कोई हंसा, कोई मीन।।

उन्होंने जीव हिंसा करने वाले को धर्म विरोधी और काफिर कहा है–

वे काफिर जो अण्डा फोरें, काफर सूर गऊ कुं तोरें।
वे काफिर जो मृगा मारें, काफर उदर करद से पारें।।

समाज में उस समय और आज भी मादक पदार्थों का सेवन बहुत बढ़ गया है उन्होंने इनका सेवन करने वाले जीव को भी काफिर कहा है–

काफर भांग भसौड़ी भरहीं, काफर हुक्के कुं सर करहिं।
काफर घट में धूमा देहीं, काफर नास नाक में लेहीं।।

इस प्रकार गरीबदास की वाणी का सामाजिक पक्ष प्रबल रूप में उद्घाटित होता है। उनका काव्य स्वान्तः सुखाय न होकर सर्वजनहिताय है। उन्होंने अपने युग की सीमाओं तथा संभावनाओं दोनों का ही चित्रण किया है। उन्होंने अनुभव पर आधारित ज्ञान के आधार पर सामाजिक यथार्थ को ईमानदारी के साथ अभिव्यक्त किया। वे समाज के विकृत रूप को सुधारना चाहते थे जिसमें उन्हें सफलता भी मिली है। वे उच्च कोटि के संत, समाज सुधारक एवं कवि थे। उन्होंने विश्वभर के प्राणियों को परस्पर प्रेम से मिलकर रहने का संदेश दिया है। निश्चय ही गरीबदास महान समाज सुधारक संत कवि थे, जिनके मन में आदर्श समाज स्थापना की भावना थी।

2. नितानंद

जीवन-परिचय

संत नितानंद का हिंदी काव्य–परंपरा में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्हें नित्यानंद नाम से भी जाना जाता है। इनके जन्म स्थान और काल संबंधी कोई वृत्त उपलब्ध नहीं है। जनश्रुति के आधार पर इनका जन्म हरियाणा के ब्राह्मण परिवार में हुआ था। इनका पालन–पोषण रेवाड़ी में हुआ था। इनका बचपन का नाम नंद लाल था। इनके पिता 'भरतपुर' रियासत में अधिकारी थे। पिता के देहावसान के पश्चात् ये अपने नाना सिताब राय के पास रेवाड़ी आ गये थे जहाँ इन्हें संत गुमानी दास मिले थे और ये उनके शिष्य हो गये थे। दीक्षा प्राप्त करने के पश्चात् इनका नाम नितानंद हो गया था। इनके कथनानुसार ये ब्राह्मण कुल से संबंधित थे। ये संत गरीबदास के समकालीन और मित्र थे। संवत् 1856 की भाद्रपद शुक्ला पड़वा को इनका स्वर्गवास हुआ था। इनका अधिकांश जीवन माजरा, बाँस, सुबाना और महमूद पुर (झज्जर) के चारों गांवों के सरोवरों पर बीता था।

ये एक विरक्त महात्मा थे, जिनकी सम्पत्ति केवल चार वस्तुएँ थीं–एक हल्की–सी चादर, एक गुदड़ी जो सर्दियों म ओढ़ने और गर्मियों में बिछाने के काम आती थी, भोजन के लिए एक कटोरी और पानी पीने के लिए एक लुटिया। अब इनके दैनिक उपयोग की वस्तुएँ एक मेले में प्रति वर्ष प्रदर्शित की जाती हैं। यह मेला फाल्गुन की पूर्णिमा और चैत्र की प्रतिपदा को रोहतक जिला के माजरा गाँव में लगता है।

रचनाएँ

नितानंद की वाणी का संकलन दो पुस्तकों के रूप में किया गया है। वे हैं 'सत्यसिद्धांत प्रकाश' और 'नितानंद जी के भजन'। 'सत्यसिद्धांत प्रकाश' में इनकी वाणी को आठ अंकों में विभाजित किया गया है जिसमें मन और माया के अंग सैद्धान्तिक और साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। 'नितानंद के भजन' में इनकी निर्गुण भक्ति और सिद्धांतों का वर्णन किया गया है। इनके द्वारा रचित एक छोटा–सा ग्रंथ और भी मिला है जिसका नाम 'बारह खड़ी' है। इसमें वर्ण क्रमानुसार भक्ति–दर्शन के सिद्धांत प्रतिपादित किए गए हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ

नितानंद लेखनी के पुजारी थे। ईश्वर के प्रति विशेष आस्था थी और सत्य मार्ग के पथिक थे। उनके काव्य की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. **निर्गुण ब्रह्म में आस्था** – नितानंद ने ब्रह्म के निराकार रूप को मान्यता प्रदान की है। वह अजन्मा है, अगोचर है, अजर है और अमर है। वह फूल की सुगंध से भी पतला है। इस संसार में जो कुछ भी है सब उसी का परिणाम है–

ओंकार कुछ अजब है, सब जीवन में जीव।
वही गुरु चेला वही, वही नार वही पीव।।

निर्गुण ब्रह्म और जीवात्मा में भेद है; वे सरलता से नहीं मिल पाते क्योंकि जीवात्मा त्रिगुणात्मक माया के प्रपंचों में फंसकर स्वयं को बिगाड़ लेती है। ब्रह्म से ही सब कुछ उत्पन्न होता है। उसी से पिंड और ब्रह्मांड पूर्ण है पर सभी को दिखलाई नहीं देता। वह केवल उसी को दिखाई देता है जिसे समदृष्टि प्राप्त हो।

2. **गुरु की महत्ता** – संत संप्रदाय में गुरु का महत्त्व सर्वोपरि है। वह ईश्वर से मिलन का रास्ता तैयार करवाता है। नितानंद ने लिखा है–

सतगुरु अंजन आंजिकर, खोलै नैन कपाट।

औधे से सूधे किए, झलक उठी वह बाट।।

जो जीवात्माएं गुरु से अलग हो जाती हैं, वे निश्चित रूप से कष्ट उठाती हैं। जब गुरु की अपने शिष्य पर दया हो जाती है तो वे दुनिया से मुक्ति का रास्ता दिखला देते हैं।

3. माया के प्रति उद्‌बोधन – नितानंद ने कबीर आदि संतों की तरह माया को सांसारिक कष्टों का मूल कारण माना है। वह अपनी त्रिगुणात्मक के कारण तरह–तरह के आकर्षणों को उत्पन्न करती है और जीवात्मा को लुभा लेती है जिस कारण जीव ईश्वर के नाम को भूल जाता है–

माया से काया भई, काया से सब भोग।

भोगों से सभ को लग्या, जन्म मरण का रोग।।

माया के जाल से कोई नहीं बच पाता, हर कोई इससे प्रभावित हो जाता है क्योंकि इसका आकर्षण अत्यधिक है। यह तो सेमल के पेड़ की तरह दिखावा भर है जो कोई इसके आकर्षण में फंस जाते हैं–वे इससे कभी भी छूट नहीं पाते–

ठांव ठांव ठगती फिरै, लियै पंच ठग लार।

लाडू लोग दिखाए कर, लिये मुगद नर नार।।

सच है, जो माया के जाल में एक बार फंस गया वह यम की मार से कभी बच ही नहीं सकता क्योंकि–

काल कुहाड़ा देह बन, काटै दिन और रात।

तरवर ज्यों ढह जायगा, नितानंद समगात।।

4. रहस्यवाद – नितानंद ने संत परंपरा का पालन करते हुए अपनी रहस्यवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। इनकी रहस्यवादिता में साधनात्मकता के स्थान पर भावनात्मकता की अधिकता है। वे ब्रह्म को पाना चाहते हैं, उससे अपना संबंध स्थापित करना चाहते हैं–

जिस नगरी बालम बसैं, हम उस नगर चलां।

आखियां पंख बालम बसै, सन्मुख जाय मिलां।।

ईश्वर से न मिल पाने के कारण जीवात्मा हमेशा दुःखी रहती है। वह उसे पाना चाहती है। पर उसे पाना सरल थोड़े ही है।

सिर साहब को सौंप दे, सो उस घर को जाय।।

भक्त को जब ईश्वर की अज्ञात सत्ता का रहस्य कुछ मालूम हो जाता है तो फिर उसे शेष कुछ भी प्राप्त करने की इच्छा ही नहीं रहती–

नितानंद मोती चुगै, कागा हंसा होय।

मानसरोवर मिल गया, कुमत कालमां धोय।।

5. प्रेम और विश्वास – नितानंद की वाणी में ईश्वर के प्रति सर्वत्र प्रेम और विश्वास है। इसमें उन्होंने यान्त्रिक जड़ता प्रस्तुत नहीं की है। इसका मूल सत्य है और साधना सरल और सुबोध है–अहंकार, दम्भ, पाखण्ड, स्वार्थपरता आदि उसके विरोधी भाव हैं–

प्रेम प्रीत की रीती दुहेली जो जानै सो जानै री।

सिरे देवे सो प्याला लेवे मूरख क्या पहचानै री।।

इनकी वाणी में आध्यात्मिक अनुभूति की विशुद्धता विद्यमान है। इन्होंने न तो किसी धर्म–जाति वर्ग को बुरा–भला कहा है और न खण्डन–मण्डन के सिद्धान्तों की पालना की है। रूढ़ियों और परम्पराओं की आलोचना इन्होंने कड़वे शब्दों में नहीं की है। सामान्य शब्दावली में तुच्छ मानवीय व्यवहार की भर्त्सना अवश्य की है–

करता कंचन त्याग कर, किया कांच से होत।

वै नर रीते रह गये, ज्यों कालर का खेत।।

6. आलोचना पद्धति – नितानंद की वाणी में गर्व की झलक नहीं है। वह आत्म विस्तार के प्रतीक बन सामने आये हैं। यद्यपि उनकी अनुभूति समाज के सुख–दुःख से बनी है पर उसमें लोक संवेदना का स्वर प्रमुख है। यद्यपि इनकी वाणी में कबीर जैसी शक्ति नहीं है और न ही इसमें व्यंग्य और तीव्रता के गुण हैं फिर भी इनकी वाणी समाज के लिए एक प्रेरणा है।

7. भाषा – नितानंद की भाषा सरल, सरस और भावपूर्ण है। इसे खिचड़ी भाषा का नाम नहीं दिया जा सकता। उन्होंने अनेक छंदों और शैलियों का प्रयोग किया है। इनकी वाणी में पंजाबी, राजस्थानी, बांगरू आदि के शब्द प्रचुरता से प्रयुक्त किए गए हैं। फारसी की शब्दावली का भी काफी प्रयोग हुआ है। प्रतीकात्मकता के प्रयोग ने इनके कथन को चमत्कार प्रदान किया है। इन्होंने अलंकारों का भी स्वाभाविक प्रयोग किया है। नितानंद को लय, संगीत और भाव की त्रिवेणी कहा जाता है। नितानंद हरियाणवी लोक कविता के केन्द्रीय बिंदु हैं। इनका साहित्य जन–मन में अपूर्व चेतना उत्पन्न करने का आधार सिद्ध होता है।

व्याख्या

चेतावणी का अंग

(1)

जीव मुसाफिर आइयां, तन सराय के माहिं।

नितानंद इक रैन बकं, फजर राह लग जाहिं।।

शब्दार्थ – मुसाफिर=यात्री, तन सराय=शरीर रूपी ठहरने का स्थान, रैन=रात, राह=रास्ते पर।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहा संत नितानंद के उपभाग 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से लिया गया है। कवि का मत है कि यह संसार मिथ्या है और मनुष्य का जीवन क्षणभंगुर है। अतः समय रहते मन को ईश्वर में लगाना चाहिए।

व्याख्या – कवि नितानंद का कथन है कि हमारे शरीर रूपी सराय में जीव रूपी यात्री आकर ठहरा हुआ है। जिस प्रकार यात्री सराय में रात्रि–भर रूक कर अगले दिन उसे छोड़कर फिर अपने रास्ते पर चल पड़ता है, उसी प्रकार हमारे शरीर में भी जीव कुछ समय के लिए है और कुछ समय बाद यह इसमें से निकलकर अपने रास्ते पर चल पड़ेगा। कहने का भाव यह है कि शरीर नश्वर है जब तक शरीर में जीव रूपी आत्मा है तब तक ईश्वर का नाम स्मरण करते रहो अन्यथा कुछ भी हाँथ नहीं आएगा। नाम के बिना काल–ग्रास बनना निश्चित है।

विशेष –

(i) जीवन की क्षणभंगुरता स्पष्ट की गई है।

(ii) आत्मा को मुसाफिर तथा शरीर को सराय कहा गया है।

(iii) तत्सम, तद्भव के साथ–साथ उर्दू–फारसी के शब्दों का सुंदर समन्वय है।

(iv) रूपक अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

नितानंद इस जगत् को देख्या झाड़ पिछोड़।

हरि बिन आपना को नहीं बिखरी सुरत बहोड़।।

शब्दार्थ – जगत्=संसार, झाड़ पिछोड़=भली–भांति, झाड़–पोंछ कर, सुरत=ध्यान, बहीड़=पीछे।

प्रसंग – नितानंद कृत प्रस्तुत साखी 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से संबंधित है। कवि का विचार है कि यह संसार झूठा है। इसमें रहने वाले सभी प्राणियों का व्यवहार झूठा है–केवल ईश्वर और ईश्वर का नाम ही सच्चा है।

व्याख्या – कवि नितानंद का कथन है कि मैंने इस संसार को भली–भांति परख लिया है, इसकी जांच–पड़ताल कर ली है। निश्चित रूप से यह झूठा है, माया का प्रपंच है। इसकी होश तो हमें बाद में आयेगी अर्थात् जब विषय–वासनाओं और मोह–माया में उलझ कर हम अपना जीवन व्यर्थ गंवा बैठेंगे तो इस तथ्य का बोध होगा कि ईश्वर के बिना हमारा अपना कोई नहीं है।

विशेष –

(i) ईश्वर के महत्त्व और भ्रमात्मक संसार का अंकन किया गया है।

(ii) तद्भव और देशज शब्दावली का सटीक प्रयोग है।

(iii) सभी संतों ने संसार की नश्वरता का इसी प्रकार का वर्णन किया है। कबीर के अनुसार

उपजै निपजै निपजिस भाई
नयनहु देखत इहु जग जाई।

(iv) अल्प समानांतरता का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(3)

नितानंद बूढ़े हुए, जोवन किया पयान।
खोखस-खोखस रह गया, चून-चून लिय छान।।

शब्दार्थ – पयान=प्रस्थान, जोवन=यौवन, जवानी, खोखस=आटे को छानने के बाद बचा हुआ अनाज का छिलका, जिसे व्यर्थ माना जाता है, चून=आटा।

प्रसंग – नितानंद द्वारा रचित 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से लिये गये इस दोहे में कवि ने संत–काव्य परंपरा के अनुसार इस शरीर की अस्थिरता और नश्वरता को वाणी प्रदान की है। मानव शरीर आयु के साथ शिथिल पड़ता जाता है और समय आने पर इस का क्षय हो जाता है।

व्याख्या – कवि जन सामान्य को उद्बोधन करता हुआ कहता है कि मुझ नितानंद की वृद्धावस्था आ गई है, मेरी जवानी प्रस्थान कर गई है अर्थात् जवानी का जोश और सुन्दरता तन पर शेष नहीं रहे। अब तो पिसी हुई गेहूँ में से आटा–आटा छन गया है, शेष अनाज का छिलका रूपी चोकर शेष रह गया है। अर्थात् न तो शारीरिक अंगों में शक्ति बची है और न ही उनमें कोई गुण ही बचा है।

विशेष –

(i) कवि ने जीव की नश्वरता की ओर संकेत किया है।

(ii) 'चून–चून' पुनरुक्ति प्रकाश और पूरे दोहे में स्वाभावोक्ति अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दावली की प्रचुरता है।

(iv) श्रेष्ठ भावाभिव्यक्ति है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(4)

करता कंचन त्याग कर, किया कांच से हेत।
वै नर रीते रह गये, ज्यों कालर का खेत।।

शब्दार्थ – करता=कर्त्ता, ईश्वर, कंचन=सोना, हेत=प्रेम, लगाव, रीते=खाली, रहित, कालर का खेत=बंजर जमीन (वह खेत जिसमें शोरे की अधिकता के कारण कुछ उगता नहीं है)।

प्रसंग – संत नितानंद द्वारा रचित 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से ली गई इस साखी के अंतर्गत मानव को चेतावनी दी गई है कि वह कभी भी ईश्वर को न भूले क्योंकि वही तो जीवन की वास्तविकता है। सांसारिकता तो मोह–माया है, अतः नश्वर है। ईश्वर मूलाधार है।

व्याख्या – कवि नितानंद का कथन है कि हे मानव ! सोने जैसे बहुमूल्य ईश्वर के नाम और भक्ति को छोड़ कर तुम मायात्मक संसार रूपी कांच से प्रेम करते हो–ऐसे इंसान व्यर्थ ही जीवन को गंवा देते हैं। जिस प्रकार शोरे से युक्त खेत में कुछ भी उत्पन्न नहीं होता, उसी प्रकार ईश्वर के नाम से रहित व्यक्ति के हृदय में सिवाय दुष्टता के कुछ नहीं आता। वह दुःख सहता हुआ भटकता रहता है।

विशेष –

(i) सांसारिक प्रपंचों को व्यर्थ और ईश्वर के नाम को वास्तविक माना गया है।

(ii) ईश्वर नाम से रहित हृदय वाले व्यक्ति का जीवन निरर्थक माना गया है।

(iii) ईश्वर के नाम को स्वर्ग तथा सांसारिकता को कांच कहा गया है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(5)

मनषा देही पायकर, साहब रह्या भुलाय।
ज्यूं उजड़ घर की पाहुना, खीर कहां से खाय।।

शब्दार्थ – मनषा=मनुष्य, देही=शरीर, साहब=ईश्वर, पाहुंना=अतिथि।

प्रसंग – संत नितानंद द्वारा विरचित प्रस्तुत साखी 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से ली गई है जिसमें कवि ने बताया है कि यदि मनुष्य का शरीर धारण करके भी यदि कोई ईश्वर का नाम नहीं लेता तो वह किस प्रकार भवबाधा से पार हो सकता है; उसे सुखों की प्राप्ति कैसे हो सकती है ?

व्याख्या – प्रभु आराधक कवि कहता है कि हे मानव ! तू ईश्वर के द्वारा प्रदान किये गये शरीर को प्राप्त करने के बाद भी अपने ईश्वर को भूला रहा; तूने उसे याद नहीं किया। जिस प्रकार उजाड़ घर में पहुंचा मेहमान स्वागत सत्कार नहीं प्राप्त कर सकता, खीर नहीं खा सकता उसी प्रकार ईश्वर को याद न करने वाला व्यक्ति जीवन में सुख भी नहीं पा सकता। अतः यदि तुम जीवन में सुख पाना चाहते हो तो भगवान् का स्मरण करो। ईश्वर नाम ही मूलाधार है।

विशेष –

(i) उपदेशात्मक स्वर में मानव को समझाया गया है कि वह ईश्वरोन्मुख रहे।

(ii) लाक्षणिकता का सुन्दर समावेश है।

(iii) सरलता, सहजता और सरसता से सौन्दर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(6)

निशि दिन खेती ऊजड़ै, पड़ा किसान अचेत।
नितानंद सभ खोयकर, कहा लुणैगा रेत।।

शब्दार्थ – ऊजड़ै=नष्ट होना, अचेत=निश्चेष्ट, बेहोश, सभ=सब, खोयकर=खोकर, कहा=क्या।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ संत नितानंद द्वारा रचित 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से ली गई हैं। इस साखी में मनुष्य को निरंतर नष्ट होते उसके शरीर की ओर ध्यान देने के लिए कहा है। उनके अनुसार जो किसान अपने खेत की उचित देखभाल नहीं करता, उसका सब कुछ लुट जाता है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि दिन–रात शरीर रूपी खेत विषय–वासनाओं में लिप्त रहने के कारण नष्ट हो रहा है किंतु किसान रूपी जीव का इस ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं है। धीरे–धीरे तुम्हारा सब–कुछ नष्ट हो जाएगा और बाद में फिर तुम्हें केवल रेत ही मिलेगी। भाव यह है कि जिस प्रकार किसान के द्वारा उचित देखभाल न करने से उसकी खेती नष्ट हो जाती है और उसके हाथ कुछ नहीं लगता उसी प्रकार भक्ति से विहीन और विषय–वासनाओं में डूबे व्यक्ति का शरीर भी धीरे–धीरे नष्ट हो जाता है और बाद में वह केवल पछताता रहता है। मनुष्य को जगाकर जीवन में गतिशील रहने का सुन्दर उद्‌बोधन है।

विशेष –

(i) मनष्य को ईश्वर में ध्यान लगाने की ओर चेताया गया है।

(ii) खेत और किसान के रूपक के माध्यम से जीवन की नश्वरता की ओर संकेत किया गया है।

(iii) भाषा–शैली प्रतीकात्मकता से सम्पन्न है।

(iv) पूरे दोहे में अन्योक्ति अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(7)

काया खेत किसान जी, पंछी विष विकार।
नितानंद सबहीं लुटैं, बिना ज्ञान की बार।।

शब्दार्थ – काया=शरीर, बार=बाड़।

प्रसंग – संत नितानंद द्वारा रचित 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से ली गई इस साखी में सामान्य मानव को किसान के रूप में मान कर रूपक बांधा है। विषय–वासनायें मनुष्य के जीवन को हर पल ठगती रहती हैं, उसे ईश्वर से दूर करती रहती हैं। जीवन में माया के प्रपंच से बचने के लिए गुरु के द्वारा दिया गया ज्ञान बहुत आवश्यक है। इसके बिना अज्ञान से छुटकारा नहीं हो सकता।

व्याख्या – संत नितानंद कहते हैं कि हे किसान जीव ! तुम्हारा ईश्वर प्रदत्त शरीर खेत है जिसे तुम अपने प्रयासों से पवित्रता, पुण्य, सच्चाई, भक्ति भाव आदि उत्पन्न करने में प्रयुक्त कर सकते थे पर विषय–वासना, सांसारिक माया आदि पक्षियों ने इसे उजाड़ दिया है। नितानंद कहते हैं कि बिना ज्ञान की बाड़ के इसकी रक्षा नहीं हो सकती है और सभी के शरीर रूपी खेत इसीलिए लुट रहे हैं क्योंकि उन्होंने सतगुरु से ज्ञान अर्जन नहीं किया।

विशेष –

(i) रूपक के माध्यम से ज्ञान प्राप्ति की आवश्यकता पर बल दिया गया है।

(ii) प्रतीकात्मकता का आकर्षक प्रयोग है।

(iii) खेत 'शरीर का, किसान जीव का पक्षी, विषय विकारों का तथा बाड़ 'ज्ञान' का प्रतीक है। इससे अभिव्यक्ति में अपूर्व गंभीरता आई है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(8)

चादर महंगे मोल की, दिन-दिन मैली होय।
नितानंद फट जाएगी, धोय सकै तो धोय।।

शब्दार्थ – चादर=शरीर रूपी चादर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ संत नितानंद द्वारा रचित 'चेतावणी का अंग' शीर्षक से ली गई हैं। इस साखी में कवि ने मानव शरीर को असारता तथा विषय–वासनाओं के प्रभाव को व्यंजित किया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि हे मानव ! तुम्हारे शरीर रूपी चादर अमूल्य हैं पर तुम्हारे द्वारा किये जाने वाले दुष्कर्मों और पापों से यह दिन प्रतिदिन मैली होती जा रही है अर्थात् ईश्वर ने जो शरीर तुम्हें दिया है और तुमने विषय–वासनाओं से बिगाड़ लिया है। एक दिन यह निश्चित रूप से फट जायेगा, यदि तू इसे धो सकता है तो धो ले, अर्थात् यदि तू जीवन में सत्कर्म कर सकता है तो उन्हें कर ले, अपने जीवन को कुछ सुधार ले। मर जाने के पश्चात् तो तू फिर कुछ नहीं कर पायेगा। इसमें अनुकरणीय प्रेरणा है।

विशेष –

(i) शरीर की नश्वरता की ओर भी संकेत किया गया है।

(ii) रूपक, अनुप्रास पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का समन्वित और प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(iii) प्रतीकात्मकता का प्रभावोत्पादक रूप है।

(iv) कबीर वाणी का स्पष्ट भाव दिखाई देता है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

मन का अंग

(1)

पैंड भराऊं भक्ति में, तो भाजै सौ कोस।
नितानंद क्या कीजिए, बैरी बस्या पड़ोस।।

शब्दार्थ – भाजै=भागता है, बैरी=शत्रु, बस्या=बस गया है, पड़ोस=आस–पास, निकट ही।

प्रसंग – प्रस्तुत भाव–प्रवाह साखी संत कवि नितानंद द्वारा रचित 'मन का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई हैं। इसमें उन्होंने मन की चंचलता को स्पष्ट करते हुए मन को ही सबसे बड़ा शत्रु कहा है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मेरा मन अत्यंत चंचल है। मैं जब भी इसे ईश्वर की भक्ति की राह में लगाना चाहता हूँ तो यह सौ कोस दूर भागता है। यह ईश्वर की भक्ति में लगता ही नहीं है। यह मन ही मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और जब शत्रु रूपी मन ही आसपास हो तो ईश्वर की भक्ति किस प्रकार की जाए। भाव यह है कि मन की चंचलता ईश्वर भक्ति में सबसे बड़ी बाधक है।

विशेष –

(i) चंचल मन को ईश्वर–भक्ति में बाधक कहा गया है।

(ii) मन की चंचलता को शत्रु की संज्ञा दी गई है।

(iii) भाषा अत्यंत सहज एवं सरल है।

(iv) "बैरी बस्या" में रूपक अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

नितानंद मन मारिये, खंड-खंड कर खोय।

लुनते पर पछताएगा, विष की बाड़ी बोय।।

शब्दार्थ – खंड–खंड=टुकड़े–टुकड़े, खोय=नष्ट करना, विष की बाड़ी=ज़हर की फसल।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत कवि नितानंद द्वारा रचित 'मन का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई हैं। इसमें कवि ने चंचल मन के नियंत्रण पर बल दिया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मन को मारकर सदैव अपने नियंत्रण में रखना चाहिए। यदि मन को नियंत्रण में नहीं रखा जाएगा तो यह धीरे–धीरे हमें पतन की ओर ले जाता है। मन वश में न हो तो यह व्यक्ति को विषयय–वासनाओं में डुबो देता है। अतः मन को नियंत्रण में रखना चाहिए अन्यथा विष की फसल बोने वाले किसान के समान अंत में पछताना पड़ता है। भाव यह है कि मन चंचल है तो वह मनुष्य को पतन की ओर ले जाता है।

विशेष –

(i) मन को वश में करने पर बल दिया गया है।

(ii) विषय–वासनाओं को विषय की बाड़ी कहा गया है।

(iii) मन को नियंत्रण में न रखने पर पतन निश्चित माना गया है।

(iv) भाषा सरल, सहज एवं स्वाभाविक है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(3)

यह मन मृग उजाड़ का, चरै हमारा खेत।

कबहूं बस में पड़ेगा, तो भूनूँ देह समेत।।

शब्दार्थ – मृग=हिरण, चरै=नष्ट करना, भूनूँ=आग में डाल कर पूरी तरह झुलसा देना, देह=शरीर।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत कवि नितानंद द्वारा रचित 'मन का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई हैं। इसमें कवि ने मन को हिरण के समान चंचल बताते हुए उसे वश में करने पर बल दिया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मन रूपी चंचल हिरण निरंतर हमें विषय–वासनाओं में फँसाकर निरन्तर हमारे शरीर रूपी खेत को नष्ट कर रहा है। यह मन रूपी हिरण जिस दिन मेरे वश में आएगा तो मैं इसे शरीर सहित भून डालूँगा। इसे पूरी तरह भस्म कर दूँगा। भाव यह है कि चंचल मन को सदा वश में करने का प्रयास करते रहने चाहिए और इसे विषय–वासनाओं से दूर रखना चाहिए।

विशेष –

(i) मन को हिरण कहकर उसकी चंचलता की ओर संकेत किया गया है।

(ii) हिरण और खेत के माध्यम से चंचल मन तथा उसके द्वारा शरीर को नष्ट करने पर प्रकाश डाला गया है।

(iii) मन को पूर्ण नियंत्रण में रखने पर बल दिया गया है।

(iv) भाषा सरल एवं सहज है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) पूरे दोहे में रूपक अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(vii) 'मन मृग' में अनुप्रास अलंकार है।

(4)

मन के कहे न चलिये, मन की दौड़ कुदौड़।
ले पैठे दरिया में, फेर न पावै ठोड़।।

शब्दार्थ – कुदौड़=बुरी दौड़, पैठे=बैठता है, दरियाव=नदी, फेर=फिर, न पावै=नहीं प्राप्त होता, ठौड=ठिकाना, रुकन का स्थान।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत कवि नितानंद द्वारा रचित 'मन का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई हैं। इसमें कवि ने मन को नियंत्रण में रखने पर बल दिया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि कभी भी मन के अनुसार नहीं चलना चाहिए। मन की गति तो सदा ही कुमार्ग की ओर प्रेरित करती है। यह सदा ही हमें विषय–वासनाओं की ओर ही ले जाता है। मन के अनुसार चलने पर तो यह हमें विषय–वासनाओं के दरिया में बिठा देता है जहाँ हमें कोई ठिकाना या सहारा नहीं मिलता। भाव यह है कि मन सदा ही हमें दिग्भ्रमित करता है।

विशेष –

(i) मन के अनुसार न चलकर उसे वश में करने पर बल दिया गया है।

(ii) चंचल मन सदा ही कुमार्ग पर ले जाता है।

(iii) भाषा सहज, सरल और स्वाभाविक है।

(iv) तुकांत और लयात्मकता का सुन्दर प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(5)

मन डर निर्भय हुआ, कूट पीट सब अंग।
लयी पवन जब जी उठा, यह मन नाग भुजंग।।

शब्दार्थ – निर्भय=भय रहित, कूट–पीट=मार–पीटकर, लयी=पाकर, पवन=वायु, विषय–वासनाएँ, भुजंग=विषधर सर्प।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत कवि नितानंद द्वारा रचित 'मन का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई हैं। इसमें मन की चंचलता को व्यक्त किया गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मैंने अपने मन को पूरी तरह से मारकर अपने वश में कर लिया था और यह सब प्रकार की विषय–वासनाओं से दूर हो गया था किन्तु कुछ समय बाद इसे फिर से विषय–वासनाओं रूपी हवा लग गई और यह मन रूपी नाग पुनः फुंफकारने लगा। भाव यह है कि मन को नियंत्रण में रखना अत्यंत कठिन कार्य है।

विशेष –

(i) मन के विषय–वासनाओं की ओर निरंतर आकर्षित होने पर प्रकाश डाला गया है।

(ii) विषय–वासनाओं को वायु तथा मन को सर्प कहा गया है।

(iii) भाषा सरल, सहज एवं स्वाभाविक है।

(iv) 'जब जी' में अनुप्रास अलंकार है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

माया का अंग

(1)

माया से काया भई, काया से सब भोग।
भोगों से सभ को लाग्या, जन्म मरण का रोग।।

शब्दार्थ – काया=शरीर, माया=ईश्वर की त्रिगुणात्मक शक्ति को जीवात्मा–परमात्मा में भेद उत्पन्न करती है।

प्रसंग – संत नितानंद द्वारा रचित 'माया का अंग' शीर्षक से अवतरित प्रस्तुत साखी में सांसारिक दुःखों की एकमात्र कारण माया को माना गया है। ईश्वर की त्रिगुणात्मक शक्ति माया ही सारे विवादों की जड़ है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि माया के कारण ही शरीर पैदा हुआ, जिसने जीवात्मा और परमात्मा में भेद उत्पन्न किया। शरीर में सभी भोग–विलास, काम–वासना आदि उत्पन्न हुए और इनके परिणामस्वरूप ही इसे जन्म–मरण का रोग लगा। भाव यह है कि माया ही एक मात्र वह सत्ता है जिसने जीवात्मा को तरह–तरह के भ्रमों में फंसा रखा है।

विशेष –

(i) माया के प्रभाव की व्यंजना की गई है।

(ii) अनुप्रास, कारण और पदमैत्री अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

(iii) उपदेशात्मकता का मनभावन पुट है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

ठाँव ठाँव ठगती फिरै, लियै पंच ठग लार।
लाडू लोभ दिखाय कर, लिए मुगद नर नार।।

शब्दार्थ – ठाँव–ठाँव=जगह–जगह, स्थान–स्थान, लाडू=लड्डू, मुगद=मुग्ध।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियों में संत नितानंद ने माया के सर्वव्यापी प्रभाव को अंकित करते हुए कहा है कि कोई भी ऐसा नहीं है जो माया के प्रभाव से बच सका हो। यह सभी को किसी न किसी लालच में फँसा लेता है।

व्याख्या – नितानंद द्वारा रचित 'माया का अंग' से ली गई इस साखी में वे कहते हैं कि माया ने अपनी त्रिगुणात्मकता से मानव शरीर बनाया है, उसे पांच तत्वों से तैयार किया और उसे पाँच ठग रूपी ज्ञानेन्द्रियां (आंख, नाक, कान, त्वचा, जिह्वा) प्रदान कर दी जो तरह–तरह के सांसारिक प्रलोभनों की ओर उसे सदा आकृष्ट करती रहती है। लड्डू रूपी लालच दिखला कर उसने नर–नारियों को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है अर्थात् वे चाह कर भी सांसारिक आकर्षणों

से स्वयं को छुड़वा नहीं पाते।

विशेष –

(i) माया के प्रभाव की तीव्रता, व्यापकता और मारक शक्ति को व्यंजित किया है।

(ii) पुनरुक्ति प्रकाश, रूपक और अनुप्रास अलंकारों का समन्वित प्रयोग किया गया है।

(iii) मूर्द्धन्य का कठोर वर्णों का प्रयोग किया गया है, पर कथन में कठोरता का प्रभाव प्रतीत होता है।

(iv) प्रतीकात्मकता का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(3)

माया तरवर सिमिर का, साखा भरम विकार।
जन्म मरण फल विष भरा, अंध भोगन हार।।

शब्दार्थ – तमरवर=पेड़, सिमिर=सेमर, साखा=शाखा, भरम=भ्रम, धोखा।

प्रसंग – नितानंद द्वारा रचित 'माया का अंग' शीर्षक से अवतरित प्रस्तुत साखी में माया के प्रभाव को अंकित किया गया है। सभी संतों ने माया के प्रभाव की व्यापकता स्वीकार की है। प्रस्तुत साखी में उसके स्वरूप का प्रतिपादन है जिस पर स्पष्ट रूप से कबीर का प्रभाव है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि माया तो सेमल के पेड़ की तरह है जो देखने में तो अति आकर्षक लगता है जिसमें सार कुछ नहीं है। धोखा, भ्रम, विकार, सांसारिकता आदि इसकी शाखाएं हैं। इस पर जन्म–मरण रूपी जहर भरे फल लगते हैं इनका उपभोग करने वाले अंधे हैं अर्थात् जो माया के भेद को समझे बिना इसके बंधन में बंधे रहते हैं, वे अज्ञानी हैं।

विशेष –

(i) माया के जंजाल को न समझने वालों को अंधा कहा गया है।

(ii) रूपक की सुन्दर योजना की गई है।

(iii) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग हुआ है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(4)

नितानंद हर छांड कर, माया में गलतान।
सभै चचोड़े चित दे, ज्यों करंक को स्वान।।

शब्दार्थ – हर=ईश्वर, चचोड़े=दाँतों से काटते रहना, करंक=हड्डियाँ, स्वान=कुत्ता।

प्रसंग – प्रस्तुत सखी संत नितानंद द्वारा रचित 'माया का अंग' खंड से ली गई है जिस में माया की व्यापकता को अंकित किया गया है। मनुष्य माया के जंजाल में इस प्रकार उलझे हुए हैं कि वहाँ से बाहर निकलने के बारे में सोच ही नहीं पाते।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मानव ईश्वर के नाम को छोड़ कर उनके महत्त्व को भूल कर पूरी तरह से माया के जाल में फँसा हुआ है। जिस प्रकार कुत्ता हड्डी को चबाता रहता है चाहे उसे उससे कुछ भी प्राप्त न हो। उसी

प्रकार सभी मानव माया से कुछ–न–कुछ प्राप्त करने की कोशिश करते रहते हैं–भले ही वे जानते हैं कि माया के जाल में फंस कर वह मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकते, उन्हें उससे कुछ भी उपयोगी नहीं मिल सकता।

विशेष –

(i) माया की सर्वव्यापकता और आकर्षण का अंकन किया गया है।

(ii) अनुप्रास और उपमा का स्वाभाविक उपयोग है।

(iii) इस अवधारणा का साखी में प्रयुक्त किया गया है कि कुत्ता हड्डी को चबाता रहता है चाहे उस पर जरा भी मांस न लगा हो। हड्डी उसके मुंह में जगह–जगह चुभती है, उसके मुंह से खून निकलता है और कुत्ता उसे ही यह समझ कर चाटता रहता है कि खून हड्डी से निकल रहा है। कष्टदायक भ्रम का चित्रांकन है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

कुसंग का अंग

(1)

कांजी की इक बूंद से, सौ मन पै फट जाय।
यू नर पड़ै कुसंग में, ताका जन्म विहाय।।

शब्दार्थ – कांजी=एक खट्टा पदार्थ, काली गाजरों से नमक मिलाकर तैयार किया जाने वाला जायकेदार पेय, सौ मन=सैंकड़ों मन, पै=पय, दूध, कुसंग=बुरी संगति, ताका=उसका।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'कुसंग का अंग' शीर्षक से ली गई हैं। इसमें कवि ने बुरी संगति से होने वाली हानि पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि जिस प्रकार कांजी नामक खट्टे पदार्थ की केवल एक बूंद डालने से उसका पूरा जीवन नष्ट हो जाता है उसी प्रकार जो व्यक्ति बुरी संगति में फंस जाता है उसका पूरा जीवन नष्ट हो जाता है। भाव यह है कि बुरी संगति अत्यंत हानिप्रद है। इसमें फँसने से व्यक्ति कभी भी पुनः निकल नहीं पाता और अपना जीवन नष्ट कर लेता है। अतः बुरी संगत से बचना चाहिए।

विशेष –

(i) बुरी संगति के दुष्प्रभाव को बताते हुए उससे बचने पर बल दिया गया है।

(ii) कांची और दूध का अत्यंत सटीक उदाहरण है।

(iii) बुरी संगति में पड़ने वाले मनुष्य का पूरा जीवन नष्ट हो जाता है।

(iv) भाषा सरल एवं सहज है।

(v) उदाहरण अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(vi) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vii) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(2)

ओछी संग न कीजिये, जब लग पार बसाय।
साधु संग गुरु ज्ञान बिन, जन्म अकारथ जाय।।

शब्दार्थ – ओछी=बुरी, जब लग=जब तक, पार बसाय=संभव हो, अकारथ=बेकार, व्यर्थ।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'कुसंग का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है। इसमें बुरी संगति से हर संभव बचने पर बल दिया गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि जब तक संभव हो बुरी संगति से बचना चाहिये। सदा बुरे लोगों से दूर रहने का प्रयास करना चाहिए। बुरी संगति में एक बार पड़ने वाला व्यक्ति सज्जन लोगों की संगति, गुरु और ज्ञान से विमुख हो जाता है और उसका जन्म व्यर्थ ही नष्ट हो जाता है। भाव यह है कि बुरी संगति मनुष्य को गुरु, ज्ञान तथा सज्जन लोगों से दूर कर देती है। सुन्दर और जीवनोपयोगी उद्‌बोधन है।

विशेष –

(i) बुरे लोगों के संग से बचकर रहने का परामर्श दिया गया है।

(ii) बुरी संगति में पड़ने वाले व्यक्ति का जीवन नष्ट हो जाता है।

(iii) बुरी संगति की सज्जन लोगों के संग गुरु और ज्ञान से रहित कर देती है।

(iv) 'साधु संग' में अनुप्रास अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

सत्संग का अंग

(1)

नितानंद सत संग में, हुआ काग से हंस।
पलट रंग और भया, गया काग का अंस।।

शब्दार्थ – काग=कौआ, भया=हो गया, अंस=अंश।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'सत्संग का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है। इसमें सत्संग के होने वाले लाभ पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि सत्संग का बहुत लाभ होता है। सत्संग में जाने से मैं कौए से हंस बन गया हूँ अर्थात् मैं अपनी समस्त बुरी प्रवृत्तियों से दूर हो कर सद्‌वृत्तियाँ अपनाने लगा हूँ। सत्संग में जाने से तो मेरा रंग–ढंग ही बदल गया है और मेरे भीतर से कौए के समान दुष्प्रवृत्तियों का अंश तक समाप्त हो गया है। भाव यह है कि सत्संग से मनुष्य कुमार्ग त्यागकर सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त होता है।

विशेष –

(i) सत्संग के महत्व का संकेत किया गया है।

(ii) सत्संग मनुष्य की समस्त दुष्प्रवृत्तियों को दूर करके उसे श्रेष्ठ बनाता है।

(iii) 'कौआ' बुराई का तथा 'हंस' पवित्रता का प्रतीक है।

(iv) भाषा में प्रभावी प्रतीकात्मकता है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

संतसंगत सुख सिंधु है हर मुक्ता हल मांहि।
नितानंद हंसा चुगै, कागा पावैं नांहि।।

शब्दार्थ – संतसंगत=सज्जन लोगों की संगति, सुख–सिंधु=सुखों का सागर, मुक्ता=मोती, हंसा=हंस, चुगै=चुगता है, कागा=कौआ।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'सत्संग का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है। इसमें सत्संगति के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए उसे सुखों का सागर कहा गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि सज्जन लोगों की संगति का बहुत महत्त्व है। सत्संगति तो सुखों का सागर है जिसमें अनेक प्रकार के ईश्वर नाम के अमूल्य मोती विद्यमान हैं। हंस के समान पवित्र आचरण वाला व्यक्ति ही सत्संगति को पा सकता है, कौए के समान दुष्प्रवृत्तियों से युक्त व्यक्ति इसे प्राप्त नहीं कर सकता। भाव यह है कि सत्संगति का लाभ भी सज्जन ही उठा सकता है, दुष्ट और बुरा व्यक्ति इसका लाभ नहीं उठा सकता।

विशेष –

(i) सत्संगति को सुखों का सागर बताया गया है।

(ii) सत् प्रवृत्ति वाले व्यक्ति को हंस तथा दुष्प्रवृत्तियों वाले व्यक्ति को कौआ कहा गया है।

(iii) सत्संगति में बैठने के लिए स्वयं का भी सज्जन होना आवश्यक है।

(iv) प्रतीकात्मकता का सुंन्दर प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

विचार का अंग

(1)

नितानंद अमृत जहर, मिले देह में आय।
हर जन हंस विचार कर, विषय तज अमृत खाय।।

शब्दार्थ – देह=शरीर, विष=जहर, तज=त्यागकर।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'विचार का अंग' खंड से ली गई है। इसमें मनुष्य को अच्छे और बुरे की पहचान करने को कहा गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मनुष्य को अपने इस जीवन में अमृत के समान सद्वृत्तियों की प्राप्ति होती है और उसे जहर के समान बुरी वृत्तियों का सामना करना पड़ता है। जो ईश्वर के भक्त होते हैं वे हंस की तरह अच्छे और बुरे की पहचान करते हैं तथा वे अपने जीवन में विष रूपी दुष्वृत्तियों को त्यागकर सद्वृत्तियों रूपी अमृत को अपनाते हैं। भाव यह है कि जो अच्छाई और बुराई की पहचान करके अच्छाई को अपनाता है, वही सच्चा ईश्वर भक्त है।

विशेष –

(i) मनुष्य को जीवन में भली प्रकार विचार करके ही आगे बढ़ना चाहिये।

(ii) सद्वृत्तियों को अमृत तथा दुष्वृत्तियों को विष कहा गया है।

(iii) सच्चे संत के लिए अच्छे बुरे कार्यों में भेद की पहचान होना आवश्यक है।

(iv) तत्सम, तद्भव तथा देशज शब्दों का सुन्दर समन्वित प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

जग कांटे का बन बड़ा चलो विचार-विचार।
नितानंद चित चेत कर कूड़े काम निवार।।

शब्दार्थ – जग=संसार, बन=जंगल, चित=हृदय, चेतकर=सावधान करके, कूड़े=बुरे, काम=कार्य, निवार=दूर रहो।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'विचार का अंग' खंड से ली गई है। इसमें कवि ने मनुष्य की सोच–विचार कर बुरे कार्यों से बचने की प्रेरणा दी है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि यह संसार तो कांटों भरा जाल है। इसमें तो अनेक बुरे कार्यों रूपी काँटे हैं। अत भली प्रकार सोच विचार कर चलना चाहिए। मनुष्य को सदा ही अपने हृदय को सावधान करते रहना चाहिए और सदैव बुरे कार्यों से दूर रहना चाहिए। भाव यह है कि संसार में सदा विचारपूर्वक बुराई से बचने का प्रयास करते रहना चाहिए।

विशेष –

(i) संसार को बुराई रूपी काँटों का जंगल कहा गया है।

(ii) मनुष्य को बुराई से दूर रहने की ओर प्रेरित किया गया है।

(iii) तत्सम, तद्भव और पंजाबी के शब्दों का सुंदर समन्वित रूप है।

(iv) बन बड़ा में अनुप्रास अलंकार का स्वाभाविक प्रयोग है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

काल का अंग

(1)

काल बली आवै चल्या, ज्यों कमान का तीर।
नितानंद ले जाएगा, सूना रहै सरीर।।

शब्दार्थ – बली=बलवान, बहादुर, कमान=धनुष।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'काल का अंग' शीर्षक से अवतरित की गई है इसमें मनुष्य के जीवन में मृत्यु के निश्चित आगमन की बात कही गई है। आत्मा तो शरीर छोड़ कर चल देती है पर शरीर व्यर्थ वस्त्र की भांति पड़ा रह जाता है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि बलवान यमराज तो तेजी से चला आ रहा है, मनुष्य का जीवन मौत की ओर खिंचता चला जा रहा है–ठीक बाण से छुटे तीर की तरह। जीवात्मा तो इस जगत् को छोड़ कर चली जाती है पर शरीर–सूना सा यहीं पड़ा रह जाता है।

विशेष –

(i) जीवन में मृत्यु की अनिवार्यता प्रतिपादित की गई है।

(ii) शरीर वस्त्र की तरह यहीं पड़ा रह जाता है पर आत्मा इस से निकल जाती है।

(iii) काल की शक्ति को स्पष्ट किया गया है।

(iv) अनुप्रास और उदाहरण अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

नितानंद नहिं गरभिये, गर्व किये दुख होय।
काचे बासन जल भरा, सुख नींदड़ी न सोय।।

शब्दार्थ – गरभिये=गर्व कीजिये, काचे=कच्चे, बासन=बर्तन, नींदड़ी=नींद।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'काल का अंग' खंड से ली गई है जिसमें मनुष्य से कहा गया है कि जीवन पर व्यर्थ घमण्ड नहीं करना चाहिए। यह तो, नष्ट हो जाने वाला तथा अस्थिर है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि हे मनुष्य ! तू व्यर्थ में क्या घमण्ड करता है, गर्व करने से जीवन में दुःख ही प्राप्त होता है–कभी सुख नहीं मिलता। अरे मानव ! यदि कच्चे बर्तन में पानी भरा हो तो सुख की नींद कैसे ली जा सकती है अर्थात् क्या पता कब पानी से मिट्टी गल जाए और बर्तन फूट जाये। भाव यह है कि इंसान का शरीर कच्चे बर्तन की तरह है, न जाने इस में से कब आत्मा निकल जाये। अतः तू ईश्वर का नाम ले और कच्चे घड़े रूपी अपने शरीर की रक्षा कर।

विशेष –

(i) शरीर की अस्थिरता और क्षण–भंगुरता का अंकन किया गया है।

(ii) कबीर का स्पष्ट प्रभाव है–उन्होंने भी शरीर को कच्चा घड़ा कहा है।

(iii) उपदेशात्मकता का प्रेरक पुट है।

(iv) अनुप्रास, अपह्नुति और दृष्टांत अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(3)

काल कुहाड़ा देह बन, काटै दिन और रात।
तरवर ज्यों ढह जाएगा, नितानंद समगात ।।

शब्दार्थ – काल=यमराज, मौत, तरवर=शरीर, ज्यों=जैसे, ढह=गिर।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'काल का अंग' खंड से ली गई है। जिसमें मनुष्य जीवन की अस्थिरता को प्रकट किया गया है। मौत रूपी कुल्हाड़ा हर समय चलता रहता है और मानवीय शरीर इससे कटता रहता है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मनुष्य का शरीर जंगल की तरह है जिसे मौत रूपी कुल्हाड़ा हर पल काटता रहता है, रात दिन कटने की क्रिया चलती रहती है। यम के कारण यह शरीर तो पेड़ की भांति कट जायेगा। हर मानवीय शरीर से मौत का व्यवहार एक समान है। अतः पता नहीं क्यों मौत के इस व्यवहार से बचने का प्रयास मनुष्य नहीं करता, ईश्वर का स्मरण हर पल क्यों नहीं करता।

विशेष –

(i) संतों की मान्यता के अनुसार शरीर की अस्थिरता और क्षणभंगुरता प्रकट की गई है।

(ii) उपमा अलंकार का सुंदर प्रयोग किया गया है।

(iii) आकर्षक प्रतीकात्मकता है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(4)

नितानंद सौवे जगत्, चढ़ै काल का नीर।
महल लखीणा ढह पड़ै हंस उड़ेगा धीर।।

शब्दार्थ – ढह=गिर, हंस=आत्मा।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी संत नितानंद द्वारा रचित 'काल का अंग' से अवतरित की गई है जिसमें उन्होंने प्राणी की नश्वरता का अंकन किया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि सारा संसार माया के भ्रम में पड़ा हुआ है, सोया हुआ है और यमराज उनकी नींद से बेपरवाह अपना कार्य कर रहा है। शरीर रूपी महल स्वतः नष्ट हो जायेंगे पर उनमें विद्यमान आत्मा रूपी हस अपने वास्तपिक जल रूपी स्रोत की ओर उड़ जाएगा।

विशेष –

(i) शरीर की नश्वता और आत्मा की अनश्वरता की ओर संकेत किया गया है।

(ii) प्रभावी प्रतीकात्मकता विद्यमान है।

(iii) काव्य रूढ़ि की पालना की गई है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

(5)

भक्ति तेग यह हाथ में, करो काल से रार।
साहब को धर सीस पर, पांच मवासी मार।।

शब्दार्थ – तेग=तलवार, मवासी=गढ़पति, विकार।

प्रसंग – संत नितानंद के 'काल का अंग' नामक साखियों में यम की मार का वर्णन किया है। काल किसी की प्रतीक्षा नहीं करता और न ही किसी का पक्ष लेता है, पर यदि ईश्वर का नाम और भक्ति रूपी हथियार भक्त के पास हो तो वह मानव का कुछ बिगाड़ भी नहीं पाता।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं हे मानव ! भक्ति रूपी तलवार हाथ में धारण करके तुम काल से लड़ पड़ो, उसका मुकाबला करो और उसे जीत लो, पर ऐसा करते समय भगवान् को अपने सिर पर धारण करो, उनका आदर–सत्कार करो तथा शरीर में विद्यमान पांच विकारों को मार डालो अर्थात् विषय–वासनाओं से स्वयं को अलग कर ईश्वर का नाम लो, यमराज भी तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा।

विशेष –

(i) भक्त को भक्ति–मार्ग की ओर प्रशस्त किया गया है।

(ii) रूपक और अनुप्रास अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

(iii) प्रतीकात्मकता और उपदेशात्मकता का पुट विद्यमान है।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vi) भावानुकूल सरल भाषा है।

ब्रह्मस्तोत्र

(1)

निज स्वरूप निज अटल है, नरलिप्त सब मांहि।
नाम रूप जग स्वप्न में, ह्वै-ह्वै मिट-मिट जांहि।।

शब्दार्थ – निज=अपना, अटल=स्थिर, निरलिप्त=किसी में लिप्त न होना, जग स्वप्न=संसार रूपी सपना, ह्वै–ह्वै=हो–होकर।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी नितानंद द्वारा रचित 'ब्रह्मस्तोत्र' खंड से अवतरित की गई है। इसमें कवि ने नाम–साधना पर बल दिया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि यह संसार एक सपने के समान है जो बार–बार दिखाई देता है और बार–बार मिट जाता है। इस संसार रूपी सपने में केवल एक ईश्वर का नाम और उसका स्वरूप ही अटल है। यह ईश्वर–नाम ही सबमें निर्लिप्त रूप से विद्यमान है। भाव यह है कि केवल ईश्वर का नाम ही इस संसार में अटल और स्थायी है। अतः नाम की साधना करनी चाहिए।

विशेष –

(i) ईश्वर नाम को ही अटल एवं स्थायी बताया गया है।

(ii) 'ब्रह्मसत्यं जगत् मिथ्या' पंक्ति के आधार पर संसार को स्वप्न की भांति कहा गया है।

(iii) सुन्दर प्रतीकात्मकता है।

(iv) 'ह्वै–ह्वै' 'मिट–मिट' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

(2)

रूम रूम मुख कोड़कर मुख-मुख जीभ करोड़।
नितानंद हर गुण कथे, कदे न आवै ओड़।।

शब्दार्थ – रूम–रूम=रोम–रोम, मुख=मुंह, कोड़कर=खोलकर, निकालकर, हर गुण=ईश्वर का गुणगान, कदे=कभी भी। ओड़=बाधा, रूकावट, मुसीबत।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी नितानंद द्वारा रचित 'ब्रह्मस्तोत्र' खंड से अवतरित की गई है। इसमें ईश्वर के नाम को समस्त बाधाओं को दूर करने वाला कहा गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि अपने शरीर के रोम–रोम और मुख से ईश्वर के नाम का स्मरण करना चाहिए। करोड़ों मनुष्य अपने मुख और जीभ से ईश्वर के नाम की साधना कर रहे हैं। जो व्यक्ति निरंतर ईश्वर के गुणों का गान करता रहता है, उसके जीवन में कभी भी बाधाएं और कठिनाइयाँ नहीं आतीं। भाव यह है कि ईश्वर के नाम–स्मरण से बाधाएं दूर होती हैं। अतः नाम–स्मरण करना चाहिए।

विशेष –

(i) ईश्वर के नाम–स्मरण पर बल दिया गया है।

(ii) ईश्वर के नाम–स्मरण को समस्त विघ्नबाधा हरण बताया है।

(iii) मिश्रित भाषा का प्रयोग है।

(iv) 'रूम–रूम' 'मुख–मुख' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(v) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) माधुर्य–प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) भावानुकूल सरल भाषा है।

सबद

(1)

सोई जन मस्ताना मस्ताना, जिन पाया पद निर्बाना।। टेक।।
मग्न होय चढ़ गए गगन में, अधर धार धर ध्याना।
लगन लाय बिसराय विश्व को, अनहद शब्द पिछाना।
मानसरोवर मथा जुगत कर, मन उनमन ठहराना।
मोती मुक्त उझल अनुभव की, करे हंस अस्नाना।
लक्ष कला ले चन्द्र प्रकाशा, सहस्त्र कला ले भाना।
जगमग लगी महल के भीतर, देखे दरश दिवाना।
ब्रह्म शून्य में परवा हुआ, चेतन चरण समाना।
निर्गुण सेज तेज की नगरी, दे अवगत अस्थाना।
वर्षे पद्म दामिनी दमकैं, हर हीरों की खाना।
गम से दूर अगम से आगे, अद्भुत अजब ठिकाना।
खिल गया कमल नवल बर पाया, नित प्रति अमृत पाना।
अमर कंद भव धंद न व्यापै, जिस घट भ्रम भगाना।
पांच पचीस पुरी तज भाजी, जीत लिया मैदाना।
नितानंद महबूब गुमानो, अब निश्चय कर जाना।

शब्दार्थ – सोई जन=वही व्यक्ति, निर्बाना=निर्वाण, गगन=आकाश, बिसराय=भुलाना, पिछाना=पहचानना, मथा=मथकर, उनमन=बेचैन, चंचल, उलझ=उछाल, लक्ष=लाख, सहस=सहस्त्र, हजार, भाना=भानू, सूर्य, पखा=परवाना, सेज=शैय्या, अवगत=ब्रह्म, अस्थाना=स्थान, पदम्=कमल, दामिनी=बिजली, हर हीरे=रत्न और हीरे, गम=दुःख, नवल=नया, भव धंद=सांसारिक धंधे।

प्रसंग – प्रस्तुत सब्द नितानंद द्वारा रचित है जिसमें व्यक्ति के निर्वाण पद को प्राप्त जीवात्मा की प्रसन्नता तथा ब्रह्म के निवास का अत्यंत सुन्दर चित्रण किया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि जिस व्यक्ति ने निर्वाण पद को प्राप्त कर लिया है, वही इस संसार में पूर्ण मस्त है। वह अपनी ही मस्ती में रहता है। वह तो सृष्टि के आधार ब्रह्म का ध्यान करके उसमें तल्लीन होकर आकाश में चढ़ जाता है। वह लगन लगने पर अनहद नाद को पहचान लेता है और सांसारिकता को भुला देता है। वह व्यक्ति मन रूपी सरोवर को अत्यंत प्रयत्नपूर्वक मथता है और अपने चंचल मन को स्थिर कर लेता है और उसकी आत्मा रूपी हंस मुक्ति रूपी मोतियों को चुगकर निरंतर आनंद का अनुभव करती है और उसी में स्नान करती रहती है। ब्रह्म के दर्शन होने पर उसे ऐसा प्रतीत होता है मानो चंद्रमा अपनी लाखों कलाओं के साथ प्रकाशित हो गया हो और सूर्य भी अपनी हजारों कलाओं से प्रकाश दे रहा हो। उसके शरीर रूपी महल में जगमग लगी रहती है और वह दिवाना होकर उस परम प्रकाशमान ब्रह्म के दर्शन करता रहता है। वह उस शून्य ब्रह्म का जहाँ स्थान है और जहाँ उसकी शैय्या है, वह स्थान अत्यंत प्रकाशमान था। वहां सहस्त्र कमलों की वर्षा होती रहती है और प्रकाश चमकता रहता है।

वह स्थान अनेक हीरों और रत्नों की खान है। वह ऐसा विचित्र स्थान है जहाँ किसी प्रकार का कोई दुःख नहीं है और वह अगम से भी आगे हैं। नितानंद कहते हैं कि जब हृदय में सहस्त्रकमल खिल जाता है तो ब्रह्म के दर्शन हो जाते हैं। ब्रह्म के दर्शन होने पर प्रतिदिन दर्शनों रूपी अमृत प्राप्त होता रहता है जिसे अमर फल की प्राप्ति हो जाए उसके सभी भ्रम दूर भाग जाते हैं और उसे सांसारिक धंधे अच्छे नहीं लगते। नितानंद कहते हैं कि मेरे गुरु गुमानीदास

की कृपा से मैंने अपने ब्रह्म में निश्चय कर लिया है और अपनी पाँचों इन्द्रियों को वश में करके तथा अपने सभी पच्चीस प्रकार के विकारों को दूर करके ब्रह्म को प्राप्त कर लिया है।

विशेष –

(i) निर्वाण पद पाने वाला सांसारिकता को भूलकर ब्रह्म में ही लीन रहने लगता है।

(ii) निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप और उसके स्थान का सुंदर वर्णन किया गया है।

(iii) निर्गुण ब्रह्म अत्यंत प्रकाशमान है। लाखों चन्द्रमा और हजारों सूर्य की ज्योति भी उसके सामने फीकी है।

(iv) ब्रह्म का दर्शन करने वाले के समस्त भ्रम मिट जाते हैं।

(v) पांच से यहाँ तात्पर्य ज्ञानेन्द्रियों तथा पांच कमेन्द्रियों से है।

(vi) पच्चीस से तात्पर्य तत्त्व, प्रकृति, पुरुष, महत्, अहंकार, मन, पंचज्ञानेन्द्रियां, पंचकर्मेन्द्रियां, पंचतन्मात्र, पंच महाभूत से है।

(vii) हठयोग साधना तथा निर्गुण भक्ति पर प्रकाश डाला गया है।

(viii) अनुप्रास तथा सांगरूपक अलंकारों का प्रभावी प्रयोग है।

(2)

और बात कुछ काम न आनै, रमतां सेती लाग रे।
क्या सोचे गफलत के माते, जाग-जाग उठ जाग रे।।
तन सराय में जीव मुसाफिर करत रहे दिमाग रे।
रैन बसेरा कर ले डेरा, चले सवेरा त्याग रे।
उदमा चोला बन्या अमोला, लगै दाग पर दाग रे।
दो दिन की गुजरान जगत में, क्यों जरे बिरानी आग रे।
कुबुध कांचली चढ़ी चित्त पर, हुआ मनुष से नाग रे।
सूझे नहीं सजन सुख सागर, बिना प्रेम बैराग रे।
हर सुमरें सो हंस कहावें, कामी क्रोधी काग रे।
भौंरा भरमत विष के बन में, चल बेगमपुर बाग रे।
शब्द सैन सतगुरु की पिछानी, पाया अटल सुहाग रे।
नितानंद महबूब गुमानी, प्रगटे पूरन भाग रे।।

शब्दार्थ – रमता=रमण करने वाला, सेती=से, गुजरान=गुजारा, रहना, टिकन, बिरानी=परायी, भरमत=भ्रम में पड़ा हुआ।

प्रसंग – प्रस्तुत साखी नितानंद द्वारा रचित 'ब्रह्मस्तोत्र' खंड से अवतरित की गई है। जिस में कवि ने जीवात्मा को ईश्वर की ओर स्वयं को उन्मुख करने की प्रेरणा दी है। यह संसार तो माया का प्रपंच है, जिसमें उलझ कर मानव स्वयं को ही भूल जाता है, अपने ब्रह्म को भूल जाता है।

व्याख्या – नितानंद उपदेशात्मक स्वर में कहते हैं कि हे मानव ! तू अपने मन को ईश्वर के नाम की ओर लगा क्योंकि और किसी भी प्रकार से जीवन को जीने का प्रयास सफल नहीं होगा, कोई भी अन्य बात लाभकारी नहीं होगी। तू झूठे राग–रंग में क्यों डूबा हुआ है? क्यों स्वयं को धोखा देता है ? उठ, जाग और ईश्वरोन्मुख हो। यह शरीर तो सराय की तरह अस्थायी निवास है जिसमें जीवात्मा रूपी यात्री रहता है और व्यर्थ ही माया के प्रपंचों में फंसता है। रात–भर के लिये जीवात्मा इस संसार रूपी घर में ठहरती है और प्रातः होते ही यहां से चल पड़ती है। उद्यम रूपी वस्त्र बड़े मूल्यवान हैं पर नित किए जाने वाले पापक्रर्मों से तूने उस पर दाग लगा लिया है। अरे, तेरी जिन्दगी दो दिन की है, तुझे थोड़ा समय ही यहां गुजारना है फिर क्यों दूसरों की आग में जलता है ? क्योंकि विषय–वासनाओं के प्रभाव में आकर स्वयं को खराब करता है ? अज्ञान की केंचुली तेरे मन पर चढ़ी हुई है और तू मनुष्य से सांप की भांति विषैला हो गया है; दूसरों का अहित करता है। बिना प्रेम और वैराग्य के रास्ते को अपनाये हुए तुम्हें सुखों

को प्राप्त करने का ठीक मार्ग नहीं मिल सकता। जो मानव ईश्वर का नाम लेते हैं, वे हंस कहलाते हैं पर जो काम–वासना और क्रोध से युक्त हैं वे कौए के समान गुणों से रहित हैं। मनरूपी भंवरा तो विषय–वासनाओं के जंगल में भटकता रहता है और तन सुंदर नारियों के प्रेम को पाने हेतु लालायति रहता है; यदि उसकी सुंदरता का मापदंड केवल नारी के तन की सुंदरता ही है तो उसे ईश्वर की प्राप्ति कैसे हो सकती है इसलिए तू अपने मन को नियंत्रित कर। उसे बेगमपुरा नामक ईश्वरधाम की ओर लगा। तभी तेरे मन को ईश्वर के नाम से आत्मिक सुख का अनुभव हो सकेगा। मैंने तो गुरु के द्वारा दिये गये ज्ञान भरे संकेत को देखते ही पहचान लिया। उस पथ का अनुकरण किया और ईश्वर के स्वरूप को प्राप्त कर लिया–मैंने तो गुरु के कारण ईश्वर रूपी स्वामी को पा लिया। नितानंद अपने गुरु गुमानी दास के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहते हैं कि प्रियतम को प्राप्त कर मैं तो इतरा रहा हूँ। मेरा भाग्य तो मुझ पर प्रकट हो गया है अर्थात् मेरी तो जीवन की सारी इच्छाएं, ईश्वर मिलन के पश्चात् पूरी हो गई हैं। गुरु कृपा से जीवन का लक्ष्य मिल जाता है।

विशेष –

(i) संत काव्य परंपरा का पालन करते हुए जीव और जगत् को नश्वर माना गया है। जीवात्मा माया के भ्रम में उलझ कर ईश्वर से विमुख हो जाती है। गुरु का ज्ञान प्राप्त करके ईश्वर से मिलने वाले लोग बहुत ही कम होते हैं।

(ii) जीवात्मा को नारी और परमात्मा को पुरुष स्वरूप माना गया है।

(iii) सुन्दर प्रतीकात्मकता है।

(iv) रूपक, अनुप्रास, अपहनुति और पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

(v) फारसी के शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) उपदेशात्मक स्वर मुखरित हुआ है।

(vii) संतों ने 'बेगमपुर' शब्द का विशेष अर्थ में प्रयोग किया है। यह ईश्वर के धाम के रूप में है।

(3)

पीव क्यों ना लेव खबरिया हमारी।। टेक।।
निशि वासर मेटी पलक न लागै, बढ़ गई वेदन भारी।
अंगन भयो विदेस सखी री प्रीतम लई अटारी।
मैले भेष उनमने लोचन झुर-झुर हो गई कारी।
पलक-पलक मोहिं जुग सम बीते जब से नाथ बिसारी।
आप अगमपुर जाय विराजे, हम भवजल विच डारी।।
हमसे चूक या तुम ही चूके मोरे मित्र मुरारी।
नितानंद महबूब गुमानी, तुम जीते हम हारी।।

शब्दार्थ – पीव=प्रियतम, ईश्वर, खबरिया=खबर, निशि वासर=रात–दिन, वेदन=पीड़ा, अंगन=अंगों में, लोचन=नेत्र, आंखें, कारी=काली, जुग सम=युगों के समान, बिसारी=भुलना, भव–जल=संसार रूपी जल, विच=बीच में।

प्रसंग – प्रस्तुत ठुमरी संत नितानंद द्वारा रचित है जिसमें उन्होंने ईश्वर से न मिल पाने की अपनी व्यथा को प्रकट किया है। जीवात्मा प्रार्थना करती है कि परमात्मा उससे मिल जायें ताकि उसके प्राणों की जलन सदा के लिए मिट जाए।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि हे मेरे प्रियतम ! आप मुझ जीवात्मा की खबर क्यों नहीं लेते–मेरे सुख–दुःख में साझीदार क्यों नहीं बनते ? विरह वेदना और मिलनेच्छा के कारण दिन–रात हमारी आंख नहीं लगती, हमें किसी भी पल नींद नहीं आती। प्रियतम हम से दूर हो गये हैं और विषय–वासनाओं ने हमारे अंग–प्रत्यंग को प्रभावित कर लिया है। वस्त्र हमारे मैले हैं आंखें उन्मनी और शरीर सुख–सुख कर काला पड़ गया है। अर्थात् विरह ने अपना प्रभाव हमारे तन–मन पर स्पष्ट रूप से डाला है। जब से प्रियतम हमें भुलाकर दूर हुए हैं तब से एक–एक पल युगों के समान बीत रहा है। पल भर भी चैन नहीं मिलता। हे ईश्वर! आपका भी कैसा व्यवहार है ? आप स्वयं तो कभी प्राप्त

न होने वाले अगमपुर में जा बसे हैं और मुझ जीवात्मा को इस सांसारिकता में डाल दिया है। अपने गुरु गुमानी दास के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए नितानंद कहते हैं कि हे मित्र मुरारी ! मैं नहीं जानता कि आपके ऐसे व्यवहार के दोषी आप हैं या मैं, कुछ भूल मुझ से हुई है या आपसे–पर इतना निश्चित है कि भूल तो अवश्य हुई है। इसलिए तो मुझे वियोग की आग में झुलसना पड़ा है। हे भगवान् ! मैं जीवात्मा अपना दोष मानती हूँ आप जीते और मैं हारी। अतः अब तो आप मुझे दर्शन दीजिये; मेरे वियोग को समाप्त कर दीजिये। भक्त आराध्य के दर्शन का लालायित है।

विशेष –

(i) जीवात्मा की विरह और दीनता का भाव व्यंजित हुआ है। जीवात्मा को पत्नी और परमात्मा को पति माना गया है। संत–परंपरा का स्पष्ट पालन दृष्टिगत होता है।

(ii) लक्षणिकता से काव्य सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(iii) माधुर्य गुण की सुंदर व्यंजना है।

(iii) सुन्दर प्रतीकात्मकता है।

(iv) 'रूपक, अनुप्रास और पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का आकर्षक प्रयोग हुआ है।

(4)

होरी के खेल में गमान न कीजै, जाओ जी जाओ,
पिया घर अपने, तुम्हरो हंसन मेरो तन छीजै।। टेक।।
पहली मार प्रीत पिचकारी, खेल कहा अपनी बर खीजै।
डार अबीर अपन को राखै, ऐसे लंगर को कौन पतीजै।
गागर भरे भिजोवत औरन, मरद बदूँ जो सन्मुख भीजै।
रे चित चोर कहा मुख मोरत, लाख कहो कारो नहीं रीझै।
अजहुं समझ महबूब गुमानी, नितानंद को फगवा दीजै।।

शब्दार्थ – गमान=अभिमान, हंसन=हँसना, छीजै=कष्ट देना, प्रीत=प्रेम, बर=दाँव, बारी, खीजै=खीजना, अबीर=गुलाल, पतीजै=विश्वास करना, गागर=घड़ा, भीजै=भीगे, चितचोर=हृदय को चुराने वाला, मुख मोरत=दूर भागना, रीझै=प्रसन्न होना, फगवा=फाग।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियां संत नितानंद द्वारा रचित हैं। इनमें कवि ने अपने प्रिय के साथ खेले गए फाग का वर्णन किया है। वह प्रेम भाव में खो गया है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि हे प्रियतम ! होली के खेल में अभिमान मत कीजिये। तुम अब अपने घर जाओ क्योंकि तुम्हारे हँसने से मेरे शरीर को कष्ट पहुँचता है। भाव है कि परमात्मा रूपी प्रियतम तो जीवात्मा को मन चाहे रंग में अपने रंग में रंगने की क्षमता रखते हैं पर जीवात्मा तो ऐसा नहीं कर सकती है। परमात्मा रूपी प्रियतम, पहले तो तुम प्रेम भरी पिचकारी मारते हो फिर अपनी बारी आने पर खीज जाते हो, दृष्टि से दूर हो जाते हो। ईश्वर तो अलख निरंजन है। यह कैसा खेल हुआ ? हे प्रिय ! तुम मुझ पर तो गुलाल डाल देते हो और अपने आपको बचाकर रखते हो। ऐसे विश्वासघाती पर कौन विश्वास करे ? तुम गागर भरकर दूसरे को तो भिगो देते हो और स्वयं नहीं भीगते। मनुष्य तो वही है जो सामने आकर भीगे और भिगोए। हे मेरे हृदय को चुराने वाले, तुम इस प्रकार क्यों मुख मोड़ रहे हो। एक बार बुरा मान जाने पर तुम लाख मनाने पर भी प्रसन्न नहीं होते हो।

जीवात्मा अपने प्रिय की निकटता प्राप्त करना चाहती है और उन्हें अपने प्रेम–भक्ति रूपी रंग में रंगना चाहती है। नितानंद जी कहते हैं कि हे मेरे प्रिय गुरु गुमानी दास कृपा करके अब मुझे फगवा दें अर्थात् मेरे साथ मेरे प्रियतम को फाग खेलने का ढंग बताइये। जीवात्मा गुरु से ब्रह्म के रहस्य को जानना चाहती है। ज्ञानार्जन के लिए गुरु कृपा चाहिए।

विशेष –

(i) प्रतीकात्मकता से निर्गुण भक्ति के रूपक के माध्यम से फाग खेलने का सुंदर चित्रण किया गया है।

(ii) फाग खेलने का आनंद तभी है जब प्रिय और प्रियतमा दोनों एक–दूसरे को भिगोएं अन्यथा फाग का कोई महत्त्व नहीं है।

(iii) प्रियतम उस पर रंग डालकर स्वयं रंग नहीं लगवाता। कवि को यह अच्छा नहीं लगता है।

(iv) माधुर्य गुण सम्पन्न आकर्षक शैली का प्रयोग है।

(v) 'मुख मोरत' मुहावरे का सुंदर प्रयोग है।

(vi) अनुप्रास अलंकार पूरे पद में प्रभावी है।

(5)

कर महलों की सैल महल मतवारा है।
नौ दरवाजे प्रगट दीखै उसमें अनहद खेल सो हंगम तारा है।। टेक।।
कारीगर करतार उपाया, चिनकर गुप्त प्रगट कर ल्याया,
नर नारायण नाम धराया, भीतर निर्गुण खेल अरस उजियारा है।
पाँचों तत्त्व मिलाय बनाया नैन झरोखा खूब लगाया,
अंतरगत में आप समाया, झलके अवगत छैल जगत से न्यारा है।
स्वामी गुमानी राम बताया, महल मांहि महबूब दिखाया,
पांच पचीस उलट घर लाया, उतर गया सब मैल कर निरख नजारा है।
नितानंद कुछ अजब तमाशा, माँही धरनी माँहि अकाशा,
सूरज चंद्र असंख उजासा, भाज गया बदफैल मिला पीव पियारा है।।

शब्दार्थ – सैल=सैर, मतवारा=मतवाला, करतार=ब्रह्म, नैन झरोखा=नेत्र–रूपी खिड़कियाँ, अंतरगत=हृदय, छैल=छैला, न्यारा=अलग, महबूब=प्रिय, निरख=किखना, अजब तमाशा=विचित्र खेला, बदफैल=बुराइयाँ, पीव पियारा=प्यारा प्रियतम।

प्रसंग – प्रस्तुत पद नितानंद द्वारा रचित है। इसमें उन्होंने अपने शरीर रूपी महल में ही ब्रह्म के दर्शन करने के विषय में बताया है। उन्हें इसी स्थिति में दर्शन हुए हैं।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि मैंने मानवीय शरीर रूपी महलों की सैर की है। यह अत्यंत विचित्र महल है। इसमें नवद्वार रूपी नौ दरवाजे स्पष्ट दिखाई देते हैं। उस परमात्मा रूपी कारीगर ने अत्यंत यत्न से इस शरीर में आत्मा को प्रकाशित किया है। इसी के कारण ही नर और नारायण नाम रखे गये। इस शरीर के अंदर निर्गुण ब्रह्म का विचित्र खेल है तथा वही अत्यंत प्रकाशमान् है। परमात्मा ने पाँच तत्त्वों (पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, अग्नि) को मिलाकर हमारे शरीर का निर्माण किया है और इसमें दो नेत्रों रूपी खिड़कियाँ लगा दी हैं। वह और वह छैला इस संसार से बिल्कुल अलग और निराला है। नितानंद कहते हैं कि मेरे गुरु स्वामी गुमानीदास ने मुझे उस ब्रह्म के विषय में बताया और मेरे शरीर रूपी महल में ही ब्रह्म के दर्शन भी कराये हैं। पाँच इन्द्रियों को वश में करके और सभी पच्चीस प्रकार के विकारों को दूर करके मैंने यह अद्भुत दृश्य देखा है। नितानंद कहते हैं कि यह बड़ी विचित्र बात है कि इस शरीर रूपी महल में ही धरती और आकाश भी दिखाई दिये। मैंने असंख्य सूर्य और चंद्रमा को प्रकाशित देखा है जिससे मेरे मन का अँधेरा मिट गया है और मुझे मेरे प्रिय परमात्मा अर्थात् ब्रह्म के दर्शन हो गये हैं।

विशेष –

(i) शरीर को महल की संज्ञा देकर उसी में ही ब्रह्म का निवास बताया गया है।

(ii) ब्रह्म को कुशल कारीगर कहकर उसके द्वारा मानव शरीर की रचना के विषय में कहा गया है।

(iii) गुरु स्वामी गुमानीदास को ईश्वर से मिलाने वाला कहकर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की है।

(iv) अनुप्रास एवं रूपक अलंकार का सुन्दर प्रयोग है।

(v) 'पाँच', 'पच्चीस' में शाब्दिक प्रतीकात्मकता विद्यमान है।

(6)

बंगला अजब दिया करतार, जिसमें झलके जोत अपार।
करम गाल कर कंचन गारा, कदे न लागै काई।
बिन पारष के चिने चिनावट, मेहर छावनी छाई।
हीरा हेत सुबुद्धि जवाहर, लौ के लाल लगाए।
मन मनसा मोतिन की झालर, रतन जड़ाव जड़ाए।
जलें असंख्य तेज के दीपक, रोम रोम रत्ली कीन्हा।
चित में चंद करोड़ों चमकैं दृष्टी दिल दुरबीना।
त्रिगुण तिमिर की द्वंद्व न व्यापै, निर्गुण नूर नजारा।
आठों पहर अखंड रोशनी धन्य बनावनहारा।
स्वामी गुमानी सतगुरु मिलकर, जो जो चरणों लागे।
नितानंद तन भेंटा भीतर भाग तिन्हों के जागे।।

शब्दार्थ – बंगला=महल, शरीर, अजब=विचित्र, करतार=परमात्मा, जोत=ज्योति, पारष=पत्थर, मेहर=कृपा, छावनी=छत, रत्नी=मिल जाना, दुरबीना=दूरबीन, अखंड=जो खंडित न हो, रोशनी=प्रकाश, बनारवनहारा=बनाने वाला, भेंटा=भेंट होना, तिन्हों के=उनके।

प्रसंग – प्रस्तुत पद संत नितानंद ब्रह्म रचित है। इसमें शरीर के भीतर ही ब्रह्म के दर्शन करने पर होने वाली अनुभूति का वर्णन है। ईश्वर के प्रति विशेष श्रद्धा–भक्ति है।

व्याख्या – नितानंद कहते हैं कि परमात्मा ने मेरे इस शरीर को अति विचित्र प्रकार का बंगला बना दिय है। अब इसमें निरंतर एक ज्योति झलकती रहती है। मेरे कर्मों को गलाकर अपनी भक्ति रूपी सोने के गारे से ऐसा बना दिया है कि अब इसमें विषय–वासनाओं रूपी कोई काई नहीं लग सकती। उसने बिना पत्थरों के ही यह निर्माण किया है और अपनी कृपा रूपी छत मेरे ऊपर डाल दी है। परमात्मा ने भलाई और सद्बुद्धि रूपी हीरे और जवाहर मुझे दिये हैं और अपने प्रति लगन के लाल दिए हैं। मेरे मन और विचारों में मोतियों की झालर लगा दी है तथा रत्न रूपी जड़ाव जड़ दिये हैं। मेरे शरीर रूपी बंगले में प्रकाश के असंख्य दीपक जलने लगे हैं और मेरा रोम–रोम उस परमात्मा में एकाकार हो गया है। मेरे हृदय में अब करोड़ों शीतलता के चाँद चमकते हैं तथा मैं अपने दिल रूपी दूरबीन से अपने परमात्मा के दर्शन करता हूँ। जब से निर्गुण ब्रह्म के स्वरूप का अद्भुत दृश्य देखा है तब से तीनों प्रकार के तापों (दैहिक, दैविक, भौतिक) का अंधकार अब मुझे नहीं सताता है। अब तो आठों पहर अर्थात् दिन–रात हृदय के भीतर एक अखंड प्रकाश समाया रहता है। मेरे इस बंगले रूपी शरीर को बनाने वाला वह परमात्मा धन्य है। नितानंद कहते हैं कि मेरे गुरु स्वामी गुमानीदास अत्यंत कृपालु हैं जो भी इनके चरणों में जाता है, वह उसे शरीर में ही ब्रह्म के दर्शन करा देते हैं। इस प्रकार उनके भाग जाग जाते हैं अर्थात् उनका जीवन सफल हो जाता है।

विशेष –

(i) निर्गुण ब्रह्म की आराधना है।

(ii) निर्गुण ब्रह्म के दर्शन होने पर किसी वस्तु की कमी नहीं रहती।

(iii) 'दृष्टी दिल दूरबीना' से स्पष्ट है कि परमात्मा की दिल की दूरबीन से देखा जा सकता है। वह साधारण आँखों से दिखाई नहीं देता।

(iv) गुरु गुमानीदास के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की गई है।

(v) गुरु की कृपा से ही ईश्वर से भेंट की जा सकती है–यह तथ्य उद्घाटित हुआ है।

(vi) अनुप्रास एवं सांगरूपक अलंकार का सुंदर प्रयोग है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 नितानंद की दार्शनिकता पर प्रकाश डालिये।

उत्तर : नितानंद निर्गुण भक्ति परंपरा के संत हैं। जिन्होंने स्वयं ईश्वर–प्रेम को प्राप्त करने के लिए जीवन–पर्यन्त प्रयास किया और दूसरों को इसी मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। उन्होंने अपनी वाणी के माध्यम से अपने विचारों को नैसर्गिक अभिव्यक्त प्रदान की है। उनकी वाणी में ब्रह्म, जीव, जगत, माया की जीव आदि से सम्बन्धित जो विचार प्राप्त होते हैं वे उनकी अपनी मौलिक अनुभूतियाँ हैं। नितानंद की दार्शनिक विचारधारा गंभीर और प्रभावी है। उनके चिंतन को इस प्रकार प्रकट कर सकते हैं–

1. **ब्रह्म** – नितानंद ने जिस निर्गुण ब्रह्म की भक्ति की है, वह अत्यंत प्रकाशमान है। वह अजर–अमर तथा समस्त दुःखों से परे है। वह निराकार ब्रह्म अपने भक्त के लिए अत्यंत लुभावना है–

छवि निहार के छिक रही, मिले छबीले कंक्ष।
रूप लुभानी सुंदरी, उर में बनी बसंत।।

ब्रह्म का रूप अत्यंत आलौकिक है। उनके रूप में भक्त लीन हो जाता है। तन–मन और आंखें उसी में डूबी रहती हैं। उसके दर्शन कर लेने के बाद किसी प्रकार की कोई इच्छा नहीं रहती।

नैन भई तन मन हुआ, साहब की छवि ऐंन।
नितादंन आनंद में, रही दिवस और रैन।।

ब्रह्म का स्थान अत्यंत तेजोमय है जिसके सामने सूर्य, चंद्रमा, बिजली की चमक भी फीकी पड़ जाती है। उसका रूप अत्यंत आकर्षक है। वह सब गमों से दूर है–

ब्रह्म शून्य में पखा हुआ, चेतन चरण समाना।
निर्गुण सेज तेज की नगरी दे अवतगत अस्थाना।
वर्ष पदम दामिनी दमकै, हर हीरों की खाना।
गम से दूर अगम से आगे, अद्‌भुत अजब ठिकाना।।

उस ब्रह्म से एकाकार होने पर करोड़ों दीपक जल उठते हैं किंतु उसके स्वरूप को साधारण आँखों से नहीं अपितु हृदय की आँखों से देखा जा सकता है–,

जले असंख्य तेज के दीपक, रोम-रोम कली कीन्हा।
चित में चन्द करोड़ों चमके, दृष्टी दिल दुरबीना।।

इस प्रकार वह ब्रह्म निर्गुण, निराकार, अगम और अत्यंत प्रकाशमान है। उसके दर्शन पर भक्त का हृदय आनंद से खिल उठता है।

2. **जगत्** – नितानंद के अनुसार यह संसार मिथ्या है। केवल ब्रह्म ही सत्य है। मनुष्य का शरीर और यह संसार तो क्षणभंगुर है। यह तो शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाला है। काल का कुल्हाड़ा निरन्तर चल रहा है। मनुष्य उसका शिकार होकर भी स्वयं को ईश्वरोन्मुख नहीं करता। जब जीवात्मा शरीर को छोड़ जाएगी, तो मनुष्य का शरीर व्यर्थ पदार्थ की तरह यहाँ रह जाएगा–

नितानंद सोवे जगद, चढै काल का नीर।
महल लखणा ढह पड़ै, हंस उड़ेगा नीर।।

नितानंद की मान्यता है कि संसार के प्रति मोह छोड़ देने में ही भलाई है। संसार तो नश्वर है। इसमें कुछ भी अपना नहीं है। अतः संसार के प्रति मोह को त्यागकर ईश्वर की ओर उन्मुख होना चाहिए।

नितानंद इस जगत को देखा झाड़ विछोड़।
हरि बिना अपना को नहीं, बिखरी सुरत बहोड़।।

कवि का मत है कि यह संसार तो खिले फूलों वाले सेमल के पेड़ जैसा लुभावना है पर इसका कोई सार नहीं है।

बिना ज्ञान प्राप्त किए इस संसार के प्रति मोह को नहीं छोड़ा जा सकता। ईश्वर ने हमें अमूल्य शरीर प्रदान किया है। जिसे हमने दुष्कर्मों में लगाकर नष्ट कर दिया है।

3. माया – नितानंद माया का विनाश को कारण मानते हैं। उनके अनुसार मानव माया के भ्रम में पड़कर ईश्वर को भूल जाता है। उसे विषय–वासनाएं सच्ची प्रतीत होने लगती हैं। माया ही मनुष्य के समस्त दुःखों का कारण है। माया में काया भई, काया से सब भोग।

भागों को सथ से लग्या, जन्म मरन का रोग।।

माया हर–पल मनुष्य को विषय–वासनाओं रूपी लड्डू दिखाकर आकर्षित करती रहती है। यह मनुष्य को निरंतर ठगती रहती है किंतु अज्ञानी माया के प्रपंचों को नहीं समझ पाता।

ठाँव ठाँव ठगती फिरै, लिए पंच ठग लार।
लाडू लोभ दिखाय कर, लिये मुगद नर नार।।

नितानंद कहते हैं कि माया का प्रभाव इतना अधिक है कि मनुष्य इसमें फँसकर ईश्वर को भुला देता है। जब तक मनुष्य संसार में है तब तक माया का प्रभाव उसे दुःखी करता रहता है क्योंकि माया किसी को क्षमा नहीं करती है। माया तो मनुष्य के लिए कुत्ते की हड्डी के समान हैं जिससे कुछ प्राप्त नहीं होता है किंतु लगता यही है कि सब कुछ प्राप्त हो रहा है।

नितानंद हर छांक कर, माया से गलतान।
सभै चचोडें चित्त दें, ज्यों करंक को स्वान।।

अतः माया ही जीवात्मा को ईश्वर से विमुख करती है। यह माया ही समस्त दुःखों का कारण है।

4. जीव – नितानंद की मान्यता है कि साधारण जीव तो जगत् और माया में फंसा रहने के कारण ब्रह्म से नहीं मिल पाता किंतु जो जीवात्मा माया के बंधनों को तोड़कर परमात्मा से मिलने के लिए स्वयं को तैयार कर लेती है तो वह उसके विरह में तड़पती है। जीवात्मा की यह विरह–वेदना निरंतर बढ़ती ही जाती है। जीवात्मा तड़पकर कहती है कि चकवी तो अपने चकवे से प्रातः होने पर मिल जाती है किंतु जीवात्मा परमात्मा से कैसे मिले–

सजन विद्रोही नारियां जिसको दूभर रात।
नितानंद कैसे मिले, चकवी बिन परभात।।

जीवात्मा उस नगर में जाकर परमात्मा से मिलना चाहती है जहाँ प्रियतम रहते हैं। उसे ईश्वर की प्राप्ति न होने से तड़पन होती है और शरीर ढीला पड़ जाता है। जीवात्मा चाहकर भी परमात्मा से नहीं मिल पाती।

बालम बिछड़े हे सखी, रस में रस जो पाय।
नीर न राखै मीन को, कहो मीन कित जाय।।

जिस जीवात्मा को अपने ब्रह्म के दर्शन हो जाते हैं, तो वह हर पल उन्हीं के बारे में सोचती है और प्रसन्नता से भरी रहती है–

छवि निहार के छिक रही, मिले छबीले कंथ।
रूप लुभानी सुंदरी, उर में बनी बसंत।।

नितानंद के दार्शनिक विचारों में ज्ञान की उच्च वस्तु और निगूढ़ विद्यमान हैं। ब्रह्म, जीव, जगत तथा माया पर इन्होंने विस्तार से चर्चा की है। इन्होंने सत्य तत्त्व का उद्घाटन करने और कण–कण में उस ब्रह्म को खोजने की प्रेरणा दी हैं। इनके दार्शनिक विचार अत्यंत सहज और स्वाभाविक हैं क्योंकि ये इनकी अंतः प्रेरणा से फूटी मौलिक अनुभूतियाँ हैं। इनकी दृष्टि में रहस्यवादिता विद्यमान है। इनके दार्शनिक विचार रूपकों और प्रतीकों का सम्बल पाकर अत्यंत सशक्त बन पड़े हैं। इनका दार्शनिक चिंतन गंभीर और प्रभावी है।

प्रश्न 2 नितानंद की भाषा शैली की विवेचना कीजिये।

उत्तर : कहा जाता है कि हिंदी की निर्गुण भक्ति से सम्बन्धित संत अशिक्षित थे और उनकी भाषा अटपटी थी पर ऐसे कथन से नितानंद के साथ न्याय नहीं होता। इनकी वाणी में ऐसे स्थल हैं जो पाठक को रस विभोर कर देते

हैं। ये मस्ती और मादकता से युक्त हैं, उनमें सहज उद्‌गार हैं और इनमें अनुभव की गहराई और कल्पना की लोक गति है। इनकी वाणी में सरलता, स्पष्टता, निर्भीकता और अनुभूति की सघनता विद्यमान है। नितानंद अशिक्षित नहीं थे इसलिए इनकी भाषा अन्य संतों की अपेक्षा परिष्कृत है।

नितानंद की भाषा प्रयत्नपूर्वक प्रस्तुत की गई भाषा नहीं है। इसमें कहीं–कहीं खिंचाव, तनाव या फैलाव आया है, जो स्वाभाविक है क्योंकि ये कवि नहीं थे अपितु भक्त थे। इन्होंने लोक भाषा को अपनाया है। इनकी भाषा आस–पास के सम्पर्क से विकसित भाषा थी। अतः अत्यंत सरल, सहज, सरल और भावपूर्ण है। यद्यपि इसमें अनेक भाषाओं का मिश्रण है किंतु इसे खिचड़ी भाषा की संज्ञा नहीं दी जा सकती। इन्होंने अपनी भाषा में अनेक छंदों का सुंदर प्रयोग किया है। इनकी वाणी में पंजाबी, राजस्थानी, बांगरू आदि के शब्दों के साथ–साथ फ़ारसी की शब्दावली का भी प्रचुर प्रयोग मिलता है। प्रतीकात्मक के प्रयोग से इनके कथनों में चमत्कार उत्पन्न हो गया है। इन्होंने अलंकारों का भी स्वाभाविक प्रयोग किया है। इससे प्रभावी भावाभिव्यक्ति हुई है।

सतगुरु अंजन आंहजि कर खोलै नैन कपाट।
औंधे से सूधे किए, झलक उठी वह बाट।।

उपर्युक्त साखी में अनेक शब्द ऐसे हैं जिन पर देशज प्रभाव स्पष्ट है लेकिन स्थलों पर इन्होंने तत्सम शब्दावली को प्रमुखता दी है। भाषागत सौंदर्य हेतु इन्होंने बिंब–सृष्टि की है और तरह–तरह के प्रतीकों का प्रयोग किया है।

नितानंद की काव्य भाषा पर विचार करते समय स्पष्ट होता है कि ये जन भाषा के कवि हैं। हरियाणवी, राजस्थानी, पंजाबी और फारसी का इनकी भाषा पर विशेष प्रभाव है लेकिन इनकी भाषा कबीर की तरह नहीं है। इस में तत्सम शब्दावली काफल बड़ी मात्रा में है। इनकी भाषा में कृत्रिमता नहीं है; उसमें सहज सौंदर्य विद्यमान है। ये संत थे और एक स्थान पर टिक कर नहीं रहे थे इसलिए इन्होंने अनेक भाषाओं के शब्दों को ग्रहण कर लिया था। इन्होंने अलंकारों का प्रयोग सायास नहीं किया पर वे अनायास ही भाषा में समविष्ट हो गए हैं। इन्होंने अभिधा और लक्षणा शब्द शक्तियों का अपेक्षाकृत अधिक प्रयोग किया है। चूंकि ये कविता करना अपना उद्देश्य नहीं मानते थे, इसलिए इनके पक्ष की स्वाभाविकता स्वतः स्पष्ट है। समग्रतः इनकी वाणी में भाषायी सौंदर्य के सभी विधायक तत्त्व विद्यमान हैं।

शैली- नितानंद ने अपने समय में साधु समाज में प्रचलित शैली को ही अपनाया है। उस में स्पष्टता, वक्रता, व्यंग्यात्मकता और प्रेषणीयता है। इन्होंने 'साखी' और 'सबद' में अपने कथन को प्रस्तुत किया। इनकी वाणी को तानपूरे का साहित्य कह सकते हैं क्योंकि इनके शब्दों में राग–रागनियां मिलती हैं। राग–रागनियों की सरसता जन–साधारण के निकट पहुंचने की क्षमता रखती है। उसमें न शब्दाडम्बर है और न पांडित्य–प्रदर्शन। छंद–योजना, उक्ति वैचित्र्य और अलंकार विधान सब कुछ होते हुए भी उनका कथन स्वाभाविक और अत्यंत सरल है। उनकी सहज उक्तियों में छंद–अलंकार और रस सब उनके भावों का अनुगमन करते हैं। नितानंद का दार्शनिक चिंतन प्रभावी और प्रेरक है।

प्रश्न 3 नितानंद की भक्ति के स्वरूप की विवेचना स्पष्ट कीजिये।

उत्तर : हिंदी साहित्य में भक्ति की पतित–पावनी धारा विविध रूपों में मिलती है। नितानंद की भक्ति हिंदी साहित्य की ज्ञानाश्रयी शाखा पर आधारित है। इस पर वैष्णव विचारधारा का आंशिक प्रभाव दृष्टिगत होता है। इन्होंने अपनी भक्ति में जिस आराध्य का वर्णन किया है वह उपनिषदों की अद्वैती भावना से जुड़ा हुआ है। इनके ब्रह्म सृष्टि के कण–कण से जुड़े हुए हैं। वे मानवीय शरीर में होकर भी दूर दिखलायी देते हैं।

'आप अगमपूर जाय विराजे
हम भव जल बिच डारी।

ब्रह्म यद्यपि निराकार है पर भक्त के हृदय में उनकी छवि परम सुंदर है। वह छवि उसे आत्मिक आनंद प्रदान करती है–

छवि निहार के छिक रहे, मिले छबीले कंथ।
रूप लुभानी, सुंदरी, उर में बनी बसंत।।

नितानंद ने भक्ति को मुक्ति का एकमात्र साधन माना है। यदि मानव शुद्ध हृदय से भक्ति का मार्ग अनुसरण करे तो निश्चित रूप से उसे सांसारिक बंधनों से मुक्ति मिल सकती है–

भक्ति तेल यह हाथ में, करो काल से सार।
साहब को धर सीस पर, पांच मवासी मार।।

मनुष्य का शरीर तो कच्चे बर्तन की तरह है, इसमें स्थायित्व नहीं है, पता नहीं मानव सुख की नींद कैसे सो लेता है। काल का कुल्हाड़ा दिन रात चलता रहता है। यदि मनुष्य भक्ति करे तो निश्चित रूप से इस कुल्हाड़े की मार से वह बच सकता है। जो व्यक्ति हर समय भक्ति भाव से ईश्वर का स्मरण करता है वह यम की मार से बच जाता है। माया उसे हर पल भगवान् के नाम से दूर खींचती है–

माया तरवर सिमिर का, साखा भरम बिकार।
जन्म मरण फल विष भरा, अंधे भोगन हार।।

नितानंद की भक्ति–पद्धति का प्रमुख अंग विरह है। कवि आराध्य का दर्शन चाहता है–

सजन विछोही नारियाँ, जिसको दूभर रात।
नितानंद कैसे मिले, चकवी बिन परभात।।

प्रिय के वियोग में विरहिणी आत्मा रात–दिन तड़पती रहती है। इन्होंने विरह का जिस प्रकार से वर्णन किया है उससे लगता है जैसे इन का पौरुषत्व यहां समाप्त हो गया है। उन की आत्मा रूपी नारी परमात्मा रूपी पति को पाने के लिए बेचैन हो उठती है–

तन पीरा सीस बचन, और उनमने नैन।
जिब को जब तक लग रही नितानंद दिन रैन।।

भक्त नितानंद परमात्मा से भेंट के इच्छुक हैं। प्रभु दर्शन के अतिरिक्त उनका कोई स्वार्थ, इसमें छिपा हुआ नहीं है। भक्त चाह कर भी स्वयं परमात्मा से मिल नहीं सकता क्योंकि उसकी अपनी सीमायें हैं–

बालम बिछड़े हे सखी, राम में रीझ जो पाय।
नीर न राखे मीन को, कहो मीन कित जाय।।

वह त्रिगुणात्मक माया के बंधनों से मुक्त होकर भक्ति में लीन होना चाहता है लेकिन भक्ति के मार्ग पर चलना आसान थोड़े ही है। वह उलझनों में भी समर्पित भाव से बढ़ रहा है–

'तन मन अपना सर्वस सौंपे,
साहब हाथ बिकानै री।'

भक्ति मार्ग में साधक के पथ में अनेक बाधायें भी आती हैं, जो भक्त इन विपदाओं को अपने रास्ते से हटा कर आगे बढ़ता है, वही भक्ति का वास्तविक अधिकारी है। ज्ञान इस पथ में आगे बढ़ने में सहायक सिद्ध होता है–

काया खेत किसान जी, पंछी विषय विकार।
नितानंद सबहीं लुटैं, बिना ज्ञान की बार।।

नितानंद की भक्ति निर्गुण ब्रह्म की पुनीत भक्ति है जो भक्तों को आगे बढ़ने का सहारा देती है; भटकते मन को शांति प्रदान करती है।

प्रश्न 4 नितानंद के काव्य का जीवन संदेश स्पष्ट कीजिये।

उत्तर : नितानंद निर्गुण–भक्ति परम्परा के संत हैं, जिन्होंने स्वयं ईश्वर–प्रेम को प्राप्त करने के लिए जीवन पर्यन्त प्रयास किया और दूसरों को इसी मार्ग पर प्रवृत्त करने की चेष्टा की।

भक्त नितानंद अपने जीवन को ईश्वर की देन स्वीकार करते हैं, जिस माया के प्रपंचों ने बिगाड़ दिया है वह सांसारिकता में उलझ कर ईश्वर के नाम से विमुख हो गया है–

करता कंचन त्याग कर, किया कांच से हेत।
वै निर रीते रह गये, ज्यों कलर का खेल।।

मनुष्य का दुर्लभ और बहुमूल्य शरीर पाकर भी मानव ईश्वर को भूला रहा, जिसका दुष्परिणाम तो सामने आना ही

था। मनुष्य का शरीर और यह संसार तो क्षणभंगुर है। वह तो शीघ्र ही नष्ट हो जायेगा। काल का कुल्हाड़ा हर पल चलता रहता है। इंसान उसका शिकार होता रहता है पर फिर भी स्वयं को ईश्वरोन्मुख नहीं करता। जब जीवात्मा शरीर को छोड़ जायेगी तो मनुष्य शरीर व्यर्थ पदार्थ की तरह यहीं रह जायेगा–

नितानंद सोवे जगद, चढ़ै काल का नीर।

महल लखीणा ढह पड़ै, हंस उड़ेगा नीर।।

भक्त कवि का कथन है कि जब तक इंसान संसार में है तब तक माया का प्रभाव उसे परेशान करता रहेगा, क्योंकि माया तो किसी को क्षमा नहीं करती है, कोई उस के भ्रम से बच नहीं पाता। माया तो उसके लिए कुत्ते की हड्डी के समान है जिससे कुछ प्राप्त तो नहीं होता, पर लगता यही है कि सब कुछ इसी से प्राप्त हो रहा है। विषय–वासनायें माया का ही रूप है जो मनुष्य को भ्रम में डाले रहती हैं और उसे ईश्वर के नाम से दूर करती हैं। यह जगत् तो सेमल के पेड़ जैसा लुभावना है पर इसका कोई सार नहीं है। बिना ज्ञान प्राप्त हुए संसार की माया से मुक्ति संभव नहीं है। ईश्वर ने चादर सा शरीर हमें प्रदान किया था जिसे हमने दुष्कर्मों से बिगाड़ दिया है।

भक्त नितानंद ने अपनी वाणियों से संतों को संदेश दिया है कि वे माया के प्रपंच को समझें और स्वयं को माया के बंधन से मुक्त कर ईश्वरोन्मुख हों।

नितानंद इस जगत को देख्या झाड़ पिछोड़।

हरि बिन आपना को नहीं, बिखरी सुरत बहोड़।।

हमारा शरीर तो नश्वर है। इसमें कुछ भी सार्थक नहीं है। इसे पाकर घमण्ड नहीं करना चाहिए–

नितानंद बूढ़े हुए जोवन किया पयान।

खोखस खोखस रह गया, चून चून लिया छान।।

गुरु के ज्ञान को प्राप्त कर इस नश्वर शरीर और संसार में भी ईश्वर को पाया जा सकता है। मनुष्य को कभी घमंड नहीं करना चाहिए क्योंकि यह दुःख का कारण है–

नितानंद नहिं गरमिये, गर्व किए दुख होय।

काचे वासन जल भरा, सुख नींदड़ी न सोय।।

यदि सांसारिक कष्टों से पार होना है तो भक्ति रूपी तलवार का ही सहारा लिया जा सकता है क्योंकि कलियुग को वही पार करा सकती है।

प्रश्न 5 'चेतावनी का अंग' और 'माया का अंग' का सार लिखिये।

उत्तर : (क) चेतावनी का अंग – नितानंद संत परंपरा से संबंधित थे। जिन्होंने जीवात्मा रूपी नारी को बार–बार सचेत किया। उन्होंनें संसार को भली–भांति परखा है पर इसे सदा झूठा ही पाया है। बिना ईश्वर भजन के इससे मुक्ति पायी ही नहीं जा सकती। मानव चाहे अपने पर कितना भी घमण्ड क्यों न करे पर समय आने पर उसे बूढ़ा होना है; उसकी शक्ति का ह्रास होना ही है। वह सोने जैसे बहुमूल्य ईश्वर को छोड़कर विषय वासना रूपी कांच से प्रेम करता है। यदि मनुष्य का शरीर पाकर भी ईश्वर का नाम न लिया तो फिर क्या लाभ हुआ। यह शरीर तो खेत के समान है और विषय–वासनायें पक्षी के समान। यदि ज्ञान रूपी बाड़ न लगायी गयी तो मनुष्य के शरीर की रक्षा करने वाला कोई नहीं होगा। ईश्वर ने तो उसे बहुमूल्य चादर रूपी शरीर प्रदान किया है पर उसने कुकृत्यों से उसे नष्ट कर दिया है। नितानंद उपदेशात्मक स्वर में कहते हैं कि हे मानव ! यदि तू इसकी रक्षा कर सकता है तो कर ले।

(ख) माया का अंग – माया ईश्वर की निर्मित है जिसने इंसान को भ्रम में डाल कर लूट लिया है। माया से शरीर बनता है और उससे सभी प्रकार के भोग। भोगों के कारण ही वह जन्म मरण के बंधनों में पड़ जाता है। माया तरह–तरह के लालच दिखा कर जीवात्मा को भ्रम में डालती है। यह तो सेमल के पेड़ की तरह है जो दिखाई देने में तो सुंदर है पर इस का सार कोई नहीं है। जो सदा माया के बंधनों में पड़ा रहता है वह तो अंधे के समान है। माया तो इंसान के लिए कुत्ते की हड्डी के समान है जिससे उसे कुछ प्राप्त तो नहीं होता, पर लगता ऐसा है जैसे सब कुछ वही है। माया ने ही उसे ईश्वर के नाम से विमुख कर दिया है।

3. बाजे भगत

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर अनेक सरस्वती के पुत्रों ने साहित्य सृजन किया है। यहाँ सांग रचना की समृद्ध परंपरा रही है। हरियाणवी सांगों के रचयिताओं में बाजे भगत का नाम बहुत ऊँचा है। इनका वास्तविक नाम बाजे राम था पर सांगों के श्रेष्ठ गायन के कारण उन्हें 'बाजे भगत' के नाम से जाना जाने लगा था। वह अच्छे अभिनेता थे और सांग करते समय अपने अभिनय से सबके हृदय को मोह लेते थे। इनका जन्म संवत् 1855 में जिला सोनीपत के सिसाणा गांव में हुआ था। यह अच्छे व्यक्तित्व के स्वामी थे। अति आकर्षक बाजे भगत का स्वर बड़ा मधुर था। वह अपने मधुर सांगों से सबके हृदय को जीतने की क्षमता रखते थे। इसलिए डॉ० पूर्णचन्द शर्मा ने लिखा है, "बाजे भगत ने अपनी रंग भरी रागनियों से हरियाणा के जनमानस को बीन बजाने वाले सपेरे की तरह मंत्र–कीलित सा कर दिया। उनके सांगों में शृंगार की चास गहरी होती थी।" इन्होंने प्रसिद्ध सांगी हरदेवा को अपना गुरु माना था और छुटपन से राम लीलाओं में अभिनय करना आरम्भ कर दिया था। सांग गाने के साथ–साथ इनके स्वभाव में बहुत मृदुलता थी और सामाजिक कल्याण के कामों में सदा बढ़–चढ़ कर भाग लिया करते थे। दान–पुण्य का कार्य बड़े मनोयोग से किया करते थे। आस्तिकता के भाव इनमें बहुत गहरे थे। सांग करते समय यह नारी पात्रों की भूमिका बड़ी कुशलता से निभाते थे।

रचनाएं (सांग) – बाजे भगत के प्रसिद्ध सांग हैं – हीर–रांझा, नल–दमयंती, शकुंतला–दुष्यंत, महाभारत आदि पर्व, कृष्ण–जन्म, पदभक्ति, राजा रघबीर–धर्मकौर आदि।

साहित्यिक विशेषताएँ -

बाजे भगत सांगी थे और उन्होंने साहित्य के क्षेत्र को अपनी कोई विशेष मौलिक कृति तो प्रदान नहीं की, पर ऐतिहासिक, सामाजिक और पौराणिक विषयों पर आधारित सांगों के द्वारा अपने भावों और विचारों का प्रकाशन अवश्य किया। इन्हीं से अपने युग को वह दृष्टि प्रदान की जो कल्याण–भाव से युक्त थी। इनके सांगों में निहित प्रमुख विशेषताएँ हैं–

1. **मनोरंजकता** – बाजे भगत के सांगों का मूल भाव ही समाज का मनोरंजन था। अपनी मधुर आवाज और अभिनय से वह जनसमूह को चमत्कृत कर लेते थे। उनमें लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करने की शक्ति थी। इसलिए लखमीचंद ने इनका नाम 'बाजे–भांड' रख दिया था।

2. **प्रकृति-चित्रण** – बाजे भगत ने विभिन्न प्रसंगों के वातावरण–सृष्टि के लिए प्रकृति–चित्रण का अच्छा सहारा लिया था। उनके प्रकृति–चित्रण में कोई नवीनता या मौलिकता नहीं है पर उन्होंने शृंगार भाव को प्रकट करने के लिए इसकी चित्रात्मकता को वर्णित किया है–

सोभाए सघन बान की राणी देखन लागी फिर कै
कितै सरवाई में बूंटी थी खुशी सारस जोड़े चरकै
एक पहाड़ के नीच बहै जमना जल सुन्दर हुया नितरकै
कितै बुगले हाण्डै पानी में कितैं तैर रही थी मुरगाबी।

कवि के प्रकृति चित्रण में वर्णनात्मकता की अधिकता है और उन्होंने परिगणन–शैली को महत्ता दी है–

कितै आम, अमरुद, बेल पत्तर कितै बिड़े बाँस के भारी
कितै फुलवाड़ी में फूल कितै खिल रही थी केसर क्यारी।

कितै दादुर, मोर, पपीहा, कोयल, बोली लागैं प्यारी
इसी सुहाणी समयां देख उस राणी के मन भाई।

2. भक्ति-भाव – सांगी ने भक्ति और नीति का अपने सांगों के स्थान–स्थान पर प्रयोग किया है। ऐसा होना सहज–स्वाभाविक ही था। हरियाणा की भूमि पुण्य–चेतना से ओत–प्रोत रही है। इसलिए इसे 'रामभजननिया का देश' कहते हैं। राजा अपनी प्रजा को भक्ति भाव की ओर प्रेरित करने के लिए सद्कर्म करते थे। वे स्वयं श्रेष्ठ कार्य करते हुए जनता के लिए प्रेरणा का आधार बनते थे–

करै था धर्म का राज भूप छाणै था दूध और पाणी
जो लायक बेटा हो सै न कुल का होने दक कोड़ी काणी।

कवि ने नीति संबंधी विचारों को प्रसंग वश बार–बार प्रकट किया है। चरित्र की महत्ता को सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है। परोपकार, दान, दया, सत्य आदि जीवन मूल्यों का संदेश दिया है। यह तभी संभव होता है जब व्यक्ति स्वयं सद्चरित्र हो–

शूरवीर दातार क्षणी पर किसे बात की बौर नहीं,
प्रजा पालक दयावान बुरे काम में गौर नहीं,
चारों वर्ण बसै प्रेम तैं कोए बोलै वचन कठोर नहीं,
उड़ै ठग डाकू कोए चोर नहीं सांवै खुले किवाड़ा नर–नारी,
गऊ ब्राह्मण और हरि भगत उस राज में घणै निहाल हुए
कोए भूखा नंगा नहीं नृप गरीबों पै बड़े दयाल हुए।

4. शृंगारिकता – बाजे भगत ने शृंगारिक भावों को अपने सांगों में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। सांग का कार्य ही यदि मन में रस–भाव को प्रकट करना है तो शृंगार रस का उसमें समावेश अनिवार्य था। इनके सांगों में प्रेम और शृंगार का छिछला रूप कहीं नहीं है बल्कि उसमें गंभीरता और गहनता का स्वर है।

5. मिथकीय योजना – बाजे भगत ने मिथकीय आधार ग्रहण करके ही लोक का मनोरंजन किया था। नल–दमयंती, शकुंतला–दुष्यंत, कृष्ण–जन्म आदि प्रसंगों में मिथकों को सहजता से ग्रहण कर उन्हें जनरंजन के लिए प्रस्तुत किया है–

वासुदेव की राणी के आठवें श्री कृष्ण भगवान हुए
जब जन्मे थे प्रभु स्वर्ग में देवता खुशी महान हुए
किन्नर, गन्धर्व यक्ष देवता लगे रल मिल मंगल गावण।
सूरसैन राजा ने एक मारीस्सा राणी ब्याही थी।

युगों से समाज में चली आने वाली कथाओं को ग्रहण कर उनमें मनचाहे ऐसे परिवर्तन किए थे जो जनमानस को ग्राह्य थे।

6. भाषा-शैली – कवि ने खड़ी बोली का प्रयोग किया है जिसमें तत्सम और तद्भव शब्दावली का सहज समन्वय दिखाई देता है–

महाभारत के अंत में हुए श्री कृष्ण अन्तर्धान
पाण्डों हिमालय चल दि जोकै दुखी महान
पोते परीक्षित को दे गए हस्तिनापुर का राज
सिंह, बकरी एक घाट में किसे धर्म के काज।

उन्होंने उर्दू शब्दावली का प्रयोग किया है क्योंकि तत्कालीन समाज में बोलचाल के लिए इन्हें प्रयोग में लाया जाता था, जैसे–

मतना फिकर करै मन में आज सिद्ध होंगे तेरे काम राणी
तेरे आगै अपने मन का कहदूं भेद तमाम राणी
दुनिया में तेरी नहीं सनन्ध थी, सब्तरीया तकदीर मन्द थी।
तेरी कूख बन्द थी यो तनै फिर रहे था सुबह शाम राणी।

कवि ने अपने काव्य को जनमानस के मनोरंजन के लिए लिखा था इसलिए उसमें छंद अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक था। छंदों के उचित प्रयोग से लयात्मकता की सृष्टि की है तो अलंकारों के प्रयोग से भाषा–सौंदर्य में वृद्धि की है पर अलंकारों का प्रयोग ऐसा नहीं है जो भावों को दबा दे। उनके प्रयोग सहज स्वाभाविक हैं, जैसे–

अनुप्रास – सखी सहेली बैठ के रथ में सैर करण ने आई।

पुनरुक्ति प्रकाश – ठण्डी–ठण्डी हवा चलै थी राणी के मन भायो।

लोकोक्ति – होन हार कदे नहीं टलै चाहे लाख करो चतुराई।

अतिशयोक्ति – चारों वर्ण बसैं प्रेम तैं कोएबोलै वचन कठोर नहीं।

उपमा – कोयल–सी मीठी वाणी सती पतिव्रता पिया की प्यारी।

वास्तव में बाजे भगत भगत महान् सांगी थे। उनके सांगों में लोगों की वाणी और कौशल से जमाने की सामर्थ्य अवश्य रही होगी पर उनका कवि रूप सामान्य स्तर का ही है जिसमें लक्षणा और मौलिकता का पूर्ण अभाव है। इनके सांग लोक रंजक और जन–मन प्रेरक हैं।

कविता-सार

चर्चित सांगकार बाजे भगत ने श्रीकृष्ण के जन्म का वर्णन चमोला छंद में किया है। जिसके लिए उन्होंने मिथकीय आधार ग्रहण किया है। महाभारत के युद्ध के पश्चात् श्रीकृष्ण अन्तर्धान हो गए थे। पाण्डव भी राज्य अपने पोते परीक्षित को देकर हिमालय चले गए थे। श्री शुकदेव मुनि ने कृष्ण जन्म की कथा सुनाते हुए कहा कि यदु कुल में पहले राजा भजनमान हुए। उनके बाद पृथ, विद्रथ, शूरसैन और वासुदेन नामक राजा हुए। वासुदेन की राणी के आठवें पुत्र श्रीकृष थे। वासुदेव की पहली रानी मारीस्सा थी और सत्तरहवीं रानी देवकी थी। देवकी के भाई कंस ने उसे विवाह के बाद ही कारागार में बंद कर दिया था क्योंकि उसे ज्ञात हो गया था कि उसकी बहन की आठवीं संतान ही उसकी मृत्यु का कारण बनेगी। जेल में कृष्ण के जन्म के बाद उन्हें गोकुल पहुंचा दिया गया। कंस का जन्म राजा उग्रसैन की पत्नी रेखा के गर्भ से हुआ था। कंस राजा उग्रसैन की संतान नहीं था, अपितु वह एक राक्षस की संतान था। सांग की सरलता और लयात्मकता इनकी पहचान है।

व्याख्या

(1)

संगीत : कृष्ण जन्म

चमोला

महाभारत के अन्त में हुए श्रीकृष्ण अन्तर्धान,
पाण्डों हिमालय चल दिए होके दुखी महान
पोते परीक्षित को दे गए हस्तिनापुर का राज
सिंह, बकरी एक घाट में किसे धर्म के काज
एक दिन शिकार खेलने को जब राज बणखंड में धाया
गऊ बैल को दुख देता एक वहां पै शूद्र पाया
उस शूद्र के मारण नै राजा ने धनुष बाण ठाया

अपना काल देखकर कै वो शूद्र मन में घबराया
तो बैल गऊ को पुचकार्या, मैं दुख मेटूंगा थारा
क्या ब्राह्मण क्या देवता भेद बतला दो सारा।

शब्दार्थ – अन्तर्धान=लुप्त होना, गायब होना, पाण्डों=पांडव, होकै=होकर, काज=कार्य, धाया=भागा, गया, पै=पर ठाया=उठाया, मेटूंगा=दूर करूँगा, थारा=तुम्हारा, पुचकारना=मनाना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण सांग अवतरण हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से अवतरित किया गया है जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। सांगों के श्रेष्ठ गायक कवि ने अपने भावों को सांग–लेखन–शैली में प्रस्तुत करते हुए श्री कृष्ण के जन्म की कथा कही है। मिथकों की सहायता से कवि ने कथा को वर्णनात्मकता के आधार पर प्रतिष्ठित किया है। द्वापर युग में श्री कृष्ण का अवतरण हुआ था। कवि ने महाभारत के युद्ध के पश्चात् इसे स्पष्ट किया है।

व्याख्या – महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया था। श्री कृष्ण अपने कार्य को पूरा करने के पश्चात् लुप्त हो गए थे। युद्ध में भयंकर विनाश की पीड़ा से परेशान होकर पाण्डव भी हिमालय की ओर चल दिए थे। उन्होंने अपने पोते परीक्षित को हस्तिनापुर का राज–काज सौंप दिया था। सब ओर धर्म के आधार पर कार्य चलते थे। शेर और बकरी भी एक घाट पर पानी पीते थे, सब निर्भयतापूर्वक अपना कार्य करते थे। एक दिन राजा परीक्षित शिकार खेलने के लिए जंगली क्षेत्र में गया। वहां उसने एक शूद्र को गाय और बैल को दुख देते हुए देखा। उस व्यक्ति के कृत्य को देख राजा ने उसे मारने के लिए अपना धनुष बाण उठाया। अपनी मृत्यु निकट देखकर वह अपने मन में घबराया और उसने बैल और गाय को पुचकारा। मैं तुम्हारे दुःखों को मिटाऊँगा। ब्राह्मण क्या है और देवता क्या है–इस का सार भेद बतला दो।

विशेष –

(i) मिथक की सहायता से श्री कृष्ण के जन्म से पूर्व की घटना को प्रकट करने का प्रयास है।

(ii) खड़ी बोली में हरियाणवी की क्रियाओं और शब्दावली का स्पष्ट रूप दिखाई देता है।

(iii) तुकांत छंद के प्रयोग से लयात्मकता की सुन्दर सृष्टि हुई है।

(iv) प्रसाद गुण संपन्न शैली है।

(v) वर्णनात्मक शैली का प्रयोग है।

(vi) अनुप्रास का सुंदर प्रयोग है।

(2)

जवाब शुकदेव मुनी

श्री शुकदेव मुनी लगे राजा के कथा सुनावण। –टेक
यदु कुल में हे सुन राजन पहले राजा भजनमान हुए
भजमान के पृथु, पृथु के विदुरथ चतुर सुजान हुए
विदुरथ के सूरसैन, बड़े शूरवीर बलवान हुए
सूरसैन के वासुदेव, बड़े सत्यवादी गुणवान हुए
वासुदेन की राणी के आठवीं श्री कृष्ण भगवान हुए
जब जन्मे थे प्रभु स्वर्ग में देवता खुशी महान हुए
किन्नर, गन्धर्व यक्ष देवता लगे रत्न मिल मंगल गावण।
सूरसैन राजा ने एक मारीस्सा राणी ब्याही थी।

शब्दार्थ – जवाब=उत्तर, ने=को, यदु=यादव, कुल=वंश, परिवार, रत्न मिल=मिलजुल कर, मंगल=शुभ, कल्याण मारीस्सा=मारिसा, वासुदेव की मां का नाम।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्रीकृष्ण के जन्म से संबंधित मिथक को अपनी कथनी का आधार बनाया है।

व्याख्या – शुक़देव मुनि का उत्तर--

श्री शुकदेव मुनि राजा को कथा सुनाने लगे। वह बोले कि हे राजन, सुनो यादव कुल में पहले राजा भजनमान हुए थे। भजनमान से पृथु और पृथु से बुद्धिमान–चतुर, विदुरथ का जन्म हुआ। विदुरथ से सूरसैन हुए जो बहुत वीर थे, बलवान थे। सूरसैन से वासुदेव का जन्म हुआ जो सदा सच बोलने वाले गुणवान थे। वासुदेव की रानी की आठवीं संतान श्री कृष्ण भगवान थे। जब श्री कृष्ण का जन्म हुआ तब प्रसन्नता से भरकर किन्नर, गंधर्व, यक्ष और देवता सभी मंगल गीत गाने लगे। सूरसैन राजा ने मारिया नामक रानी से विवाह किया था।

विशेष –

(i) श्री कृष्ण की वंश परंपरा को भावात्मक रूप में प्रस्तुत किया है।

(ii) खड़ी बोली के प्रयोग में तद्भव और तत्सम शब्दावली के साथ हरियाणवी पुट का सहज समन्वित प्रयोग किया गया है।

(iii) प्रसाद गुण संपन्न रूप है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन को सरलता और सरसता मिली है।

(v) तुकांत छंद से कथन को लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(3)

उस राणी ने दस लड़के और पांच कन्या जाई थी
लड़का सूं बड़ा वासुदेव, लड़कियों में कुन्ती बड़ी बताई थी
वासुदेव ब्याहे राजा रोहण कै, नार राहणी आई थी
कुन्ती हस्तिनापुर में राजा पान्डु कै परणाई थी
जिसकी कथा महाभारत में व्यास सुनी नै गाई थी
फेर वासुदेव को जगह-जगह से लगे ब्याह सगाई आवण।
सूरसैन और वासुदव का था पिता पूत का ज्यादा प्यार
बड़ा लड़का वासुदेव वैसे भी इज्जत का था ही हकदार
आए नाई ब्राह्मण टीके ले ले जगह-जगह तै हौके तैयार

शब्दार्थ – जाई=उत्पन्न की, परणाई=शादी की, आवण=आने लगे, पूत=पुत्र, होकै=होकर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने सांग–शैली में रचित कविता में श्री कृष्ण के जन्म का उल्लेख किया है।

व्याख्या – सहज कवि कहता है कि मारिषा रानी ने दस लड़कों और पांच लड़कियों को जन्म दिया था। उनमें वासुदेव सबसे बड़ा लड़का था और लड़कियों में कुंती सबसे बड़ी थी। वासुदेव का विवाह राजा रोहण के घर हुआ और उसकी राहणी नामक पत्नी आई थी। कुंती का विवाह हस्तिनापुर में राजा पाण्डु से हुआ। जिसकी कथा महाभारत में व्यास मुनि ने स्वयं गाई थी। फिर वासुदेव के विवाह सगाई के लिए निमंत्रण बार–बार जगह–जगह से आने लगे। सूरसैन और वासुदेव में पिता–पुत्र का आपसी बहुत अधिक प्रेम–भाव था। वैसे भी बड़ा पुत्र वासुदेव सम्मान प्राप्त का अधिकारी था। स्थान–स्थान से नाई और ब्राह्मण वैवाहिक संबंध का तिलक ले और तैयारी कर उनके पास आए थे।

विशेष --

(i) राजाओं के द्वारा किए जाने वाले अनेक विवाहों की ओर संकेत किया गया है।

(ii) वैवाहिक संबंधों की पुरानी परंपरा की ओर संकेत किया गया है।

(iii) खड़ी बोली के प्रयोग में सामान्य हरियाणवी बोलचाल के शब्दों की अधिकता है।

(iv) वर्णनात्मकता विद्यमान है।

(v) तुकांत छंद से लय की सृष्टि हुई है।

(vi) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vii) अनुप्रास का सहज प्रयोग है।

(4)

घर आई लक्ष्मी ना फेरूं राजा नै यो किया विचार
बासदेव नै ब्याहण लागे करा-करा कै मंगलाचार
कोए दिनां के अर्से में हुई बासदेव के सोलहा नार
सतरहवीं पटरानी देवकी नै चले मथुरा में ब्याहण।
उग्र सैन ने बेदी ऊपर बहुत दिया था धन माल
बारात नै सब छोड़ण चाले मिलकै मथुरा के भोपाल
आकाशवाणी होने लगी राजा लोग करते ख्याल
जिसने रे कंस तूं रंग चाव से रहा घाल
देवकी के आठवें जन्मैगा तेरा काल।

शब्दार्थ – ना फेरू=वापिस न करो, अर्से=अन्तराल, समय बाद, नार=नारियां, पत्नियां, घाल=डाल, काल=मौत।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से अवतरित किया गया है जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। उन्होने मिथक के आधार पर श्री कृष्ण के जन्म संबंधी कहानी को भावात्मक रूप में प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – जब वासुदेव के विवाह संबंधी निमंत्रण बार–बार प्राप्त होने लगे तो राजा ने स्वयं विचार किया कि घर आई लक्ष्मी को वापिस नहीं लौटाना चाहिए। उन्होंने वासुदेव के बार–बार विवाह करवा कर मंगलाचरण करा दिए। कुछ दिनों के बाद वासुदेव की सोलह पत्नियां हो गई थीं। वह सतरहवीं महारानी देवकी से विवाह करने के लिए मथुरा में गए। राजा उग्रसैन ने अपनी बेटी देवकी के विवाह पर वर पक्ष को बहुत अधिक धन–सम्पत्ति दी थी। मथुरा के राजा सबसे साथ मिल कर बारात को विदा करने के लिए चले। उसी समय आकाशवाणी होने लगी जिसकी सभी राजा लोग ध्यान करने लगे। आकाशवाणी में कहा गया कि अरे कंस जिसे तू बड़े चाव और खुशी से विदा कर रहा है उसी देवकी की आठवीं सन्तान के रूप में तेरी मृत्यु जन्म लेगी। भाव है कि देवकी की आठवीं संतान ही तेरी मृत्यु का कारण बनेगी। पौराणिक संदर्भ की आकर्षक प्रस्तुति है।

विशेष –

(i) मिथक के आधार पर प्रचलित बात को भावात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

(ii) तुकांत छंद से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) खड़ी बोली के प्रयोग में तद्भव और विदेशी हरियाणवी शब्दावली की प्रचुरता विद्यमान है।

(iv) प्रसाद गुण और अभिधा शब्द शक्ति से कथन में सरलता और सहजता विकसित हुई है।

(v) पुनरुक्ति प्रकाश और अनुप्रास अलंकारों का सहज प्रयोग है।

(vi) दहेज प्रथा और बहु विवाह प्रथा की स्पष्ट स्वीकारोक्ति है।

(5)

इतनी सुणकै कंस दुष्ट मारण चाल्या वा चण्डाल
सूत लई तलवार देवता भी लागे घबरावण।

जब देवकी का सिर काटण लाग्या गया बारसदेव ने प्राण किया
इस शर्त पर कंस दुष्ट नै देवकी को छोड़ दिया
सारी उमर बिप्ता भोगी किन जीण्यां म्हैं माणस जिया
हवालात की कोठड़ी में प्रभु नै जन्म लिया
देवकी न्यूं बोली इसनै गोकल में पहुंचा दो पिया
श्री कृष्ण जन्म के छन्द लगे बाजे राम बनावण।

जवाब शुकदेव मुनी का राजा से–

मथुरा नगरी के म्हैं एक आहुक हुया छत्तरधारी
जिसके राजा में आनन्द से रहती थी प्रजा सारी।–टेक
उसे पहरे में आहुक किसा सत्यवादी राजा और नहीं।

शब्दार्थ – सुण कै=सुन कर, सूत लई=चलाने के लिए तैयार कर ली, बिप्ता=कष्ट, माणस=मनुष्य, हवालात=जेल, न्यूं=इस प्रकार, पिया=प्रियतम, पति, छत्तरधारी=शासक।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्री कृष्ण के जन्म से संबंधित मिथक को काव्य रूप में प्रकट किया है।

व्याख्या – देवकी के साथ वासुदेव के विवाह अवसर पर आकाशवाणी सुनकर दुष्ट कंस चंडाल की तरह उसे मार डालने के लिए चला। उसने अपनी तलवार से वार करने की तैयारी कर ली। उसकी इस करनी को देख देवता भी घबरा गए। जब वह देवकी का सिर काटने लगा तो बारस देव ने कसम ली और दुष्ट कंस ने देवकी को इस शर्त पर मार डालने से छोड़ दिया कि वह सारी उम्र उसकी जेल में रहेगी। उसने सारी उम्र कष्टों में व्यतीत की। जिस अवस्था में मानव (देवकी और वासुदेव) जेल में जियें यह भी कैसा जीना है। जेल की कोठरी में प्रभु ने जन्म लिया, श्री कृष्ण का जन्म हुआ। देवकी ने अपने पति वासुदेव से कहा कि हे प्रिय, इसे गोकुल गाँव में पहुँचा दो। कवि बाजे राम श्री कृष्ण के जन्म के छंदों की रचना करने लगा अर्थात् कवि उनका गुणगान करने लगा।

राजा से शुकदेव ने उत्तर दिया–

मथुरा नगरी में एक ऐसा छत्रधारी शासक हुआ है जिसके राज्य में सारी प्रजा बड़े आनन्द से रहती थी। उसे पहरे में इस प्रकार बंद कर दिया गया है। उस जैसा सत्यवादी राजा और कोई नहीं है।

विशेष –

(i) कंस की काल कोठरी में श्री कृष्ण के जन्म और कंस के पिता की प्रशंसा की है।

(ii) तद्भव शब्दावली का प्रभावी रूप में प्रयोग किया गया है।

(iii) तुकांत छंद–प्रयोग से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iv) प्रसाद गुण संपन्न रूप है।

(v) अभिधात्मक प्रयोग से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(6)

बसंत ऋतु सब फूल खिले पेड़ों पर हरियाली छाई
सखी सहेली बैठ कै रथ में सैर करण नै आई
पवन रेखा और सखी सहेली वन में आग्यी सारी
कितै आम, अमरुद, बेल पत्तर कितै बिड़े बाँस के भारी
कितै फुलवाड़ी में फूल कितै खिल रही थी केसर क्यारी।

कित्तै दादुर, मोर, पपीहा, कोयल, बोली लागैं प्यारी
इसी सुहाणी समयां देख उस राणी के मन भाई।
सोभा सघन बन की राणी देखन लागी फिरकै
कितै सरवाई में बूंटी थी खुशी सारस जोड़े चरकै
एक पहाड़ के नीच बहै जमना जल सुन्दर हुआ नितरकै
कितै बुगले हाण्डै पानी में कितै तैर रही थी मुरगाई।

शब्दार्थ – जवाब=उत्तर, कितै=कहीं, किधर, दादुर=मेंढक, मनमाई=मन में आया, फिर के=घूम घूम कर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्री कृष्ण के जन्म का वर्णन परंपरागत कथा के आधार पर किया है।

व्याख्या – रानी का उत्तर–

बसंत ऋतु में तरह–तरह के फूल खिले हुए थे। पेड़ों पर हरियाली छाई हुई थी। रथ में सारी सहेलियाँ–सखियाँ बैठकर सैर करने के लिए आई। पवन रेखा और सभी सखी–सहेलियां वन में आ गईं। बाग में कहीं आम लगे थे तो कहीं अमरूद। कहीं बेल पत्तर लगे थे तो कहीं बांस के भारी झुरमुट उगे हुए थे। कहीं फुलवाड़ी में तरह–तरह के फूल खिले हुए थे तो कहीं केसर–क्यारियां खिल कर अपनी शोभा को बिखरा रही थीं। कहीं मेंढक टरटर्रा रहे थे तो कहीं मोर बोल रहे थे। पपीहे और कोयलें बोल रहीं थीं जिनकी बोलियां बहुत प्यारी लग रहीं थीं। इसी सुहावनी घड़ी में रानी के हृदय में एक बात आई और वह रथ से नीचे उतर कर सैर करने लगी। रानी वन में इधर–उधर घूम कर सघन जंगल की शोभा को देखने लगी। कहीं सरवाई की बूटियां थीं तो कहीं सारस पक्षी के जोड़े खुशी में अपना पेट भर रहे थे। एक पहाड़ के नीचे यमुना का साफ–स्वच्छ निथरा हुआ पानी बह रहा था। कहीं बगुले पानी में खड़े थे तो कहीं मृगाबियां पानी पर तैर रही थीं।

विशेष –

(i) प्राकृतिक सौंदर्य को वर्णनात्मकता के आधार पर वर्णित किया गया है।

(ii) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iii) प्रसाद गुण विद्यमान है।

(iv) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(v) अनुप्रास और मानवीकरण का सराहनीय प्रयोग है।

(v) चाक्षुक बिंब की सुंदर योजना है।

(7)

ठण्डी-ठण्डी हवा चलै थी राणी के मन भागी
सैर करण लागी राणी सब आलस सुस्ती त्यागी
रास्ते का ना ख्याल रह्या इसी भूल गात में लागी
सब सखियां तै न्यारी राणी दूर एकली आगी
होन हार कदे नहीं टलै चाहे लाख करो चतुराई।
एक राक्षक के नज़र पड़ी वा नार एकली बन में
राणी का रूप देख के दुष्ट कै बाकी ना रही तन में
पवन रेखा का धर्म बिगाड़न की पक्की धारली मन में
राजा उग्र सैन कैसा रूप दुष्ट नै बणा लिया एक छण मैं

कह बाजे राम राणी धोरै खड़ा हुआ घेर कै राही।

शब्दार्थ – न्यारी=अलग, एकली=अकेली, आगी=आ गई, कदे=कभी, धार ली=ठान ली, धोरै=निकट।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्री कृष्ण के जन्म से संबंधी प्रसंगों को भावात्मक आधार प्रदान किया है।

व्याख्या – सहज कवि कहता है कि ठंडी–ठंडी हवा चल रही थी जो रानी के मन को बहुत अच्छी लग रही थी। रानी सैर करने लगी। उसने अपना आलस और सुस्ती शरीर से भगा दी, चुस्त हो गई। घूमते हुए उसे रास्ते का ध्यान ही नहीं रहा और वह रास्ता भूल कर आगे बढ़ती रही। रानी अपनी सहेलियों से अलग होकर अकेली ही दूर चली गई। चाहे कोई कितना भी चालाक हो, कितनी भी चालाकी करे पर होनहार तो होकर ही रहता है। जो भाग्य में लिखा है वह कभी नहीं टलता। वन में अकेले घूमती रानी पर एक राक्षस की दृष्टि पड़ गई। रानी के सुंदर–मोहक रूप को देखकर उस दुष्ट को अपने शरीर की भी सुध नहीं रही, वह कामातुर हो उठा। उस ने पवन रेखा का धर्म बिगाड़ने की बात पक्की तरह से अपने मन में धारण कर ली। पल भर में ही उस दुष्ट राक्षस ने अपना रूप राजा उग्र सैन जैसा बना लिया। कवि कहता है कि वह रानी का रास्ता रोक कर उसके निकट जा खड़ा हुआ।

विशेष –

(i) वर्णनात्मकता का सहारा लेकर मिथकीय प्रसंग को प्रभावी रूप में प्रकट किया है।

(ii) वर्णनात्मक शैली से कथा में प्रवाह उभरा है।

(iii) अभिधा शब्द शक्ति और प्रसार गुण से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iv) तुकांत छंद ने संगीतात्मकता की सृष्टि हुई है।

(v) गतिशील बिंब योजना है।

(vi) नाटकीयता की प्रभावी सृष्टि की गई है।

(8)

शूरवीर दातार क्षणी पर किसे बात की बौर नहीं,
प्रजा पालक दयावान बुरे काम में गौर नहीं,
चारों वर्ण बसै प्रेम तैं कोए बोलै वचन कठोर नहीं,
उड़ै ठग डाकू कोए चोर नहीं सांवै खुले किवाड़ा नर-नारी,
गऊ ब्राह्मण और हरि भगत उस राज में घणै निहाल हुए
कोए भूखा नंगा नहीं नृप गरीबों पै बड़े दयाल हुए।
छोटा देवक बड़ा उग्र सैन उदस राजा कै दो लाल हुए।
कर उग्र सैन को राज तिलक आहुक भूप अन्तकाल हुए
फेर मथुरा के भोपाल हुए उग्र सैन नृप न्यायकारी।

शब्दार्थ – शूरवीर=बहादुर, गौर=ध्यान, घणे=अत्यधिक, कोए=कोई, अन्तकाल=मृत्यु, फेरे=फिर, भोपाल=शासक, राजा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्री कृष्ण के जन्म का वृत्तांत प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – सहज कवि कहता है कि अत्यधिक वीर, दाता क्षत्रिय पर किसी भी बात का कोई प्रभाव नहीं था, वह पूर्ण रूप से कलंक रहित और श्रेष्ठ था। वह प्रजा की रक्षा करने वाला, दयावान था और किसी प्रकार के भी बुरे काम की ओर ध्यान नहीं देता था। उसके शासन काल में चारों वर्ण–ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य–प्रेमपूर्वक मिल जुलकर प्रेम से रहते थे। कौवे तक कठोर कर्कश ध्वनि उत्पन्न नहीं करते थे। उसके प्रभाव से ठग, डाकू और चोर उस देश से भाग गए थे। वे राजा के भय से वहां नहीं रहते थे। सभी नर–नारी निर्भयतापूर्वक अपने घरों के द्वार खुले छोड़ कर सो जाते थे। उन्हें किसी प्रकार का कोई भय नहीं सताता था। गाय, ब्राह्मण और परमात्मा के भक्त उसके राज्य

में अति प्रसन्न थे। उन्हें प्रत्येक वांछित वस्तु प्राप्त होती थी। राजा की गरीबों पर विशेष कृपा दृष्टि थी। इसलिए राज्य में कोई भी भूखा–नंगा नहीं था। उदस राजा के दो पुत्र थे–छोटा देवक और बड़ा उग्रसेन। वह राजा अपने बड़े पुत्र उग्रसेन का राजतिलक करके परलोक सिधार गया। फिर मथुरा के शासक उग्रसेन बन गए जो अति न्यायकारी थे।

विशेष –

(i) मथुरा के शासकों की न्याय–प्रियता और श्रेष्ठता का गुणगान किया गया है।

(ii) प्रसाद गुण संपन्नता है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) अभिधा शब्द शक्ति से कथन को सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(v) अनुप्रास, अतिशयोक्ति और स्वरमैत्री का सहज प्रयोग किया गया है।

(vi) तुकांत छंद के प्रयोग से गेयता की सृष्टि हुई है।

(9)

करै था धर्म का राज भूप छाणै था दूध और पाणी
जो लायक बेटा हो सै न कुल का होने दक कोड़ी काणी।
उग्रसैन के घर में थी पवन रेखा नाम की पटराणी
अच्छे कुल की शील स्वभाव अक्लबन्द चातर रयाणी
कोयल सी मीठी बाणी सती पतिव्रता पिया की प्यारी।
उस पवन रेखा राणी की कूख तै एक बड़ा खोटा अंश हुया
जब वो राक्षस जन्मा था मथुरा में बड़ा विध्वंस हुआ
अपरमपार प्रभु की माया किस तरीयां वो बंस हुया
हिरण्यकशिपु के प्रहलाद भगत और उग्र सैन कै कंस हुया
कितै बुगला कित हंस हुया गुरु हरदेव कथैं वेदाचारी।

शब्दार्थ – भूप=राजा, छाणै=छानना, अलग–अलग करना, पटराणी=महारानी, कूख=कोख, विध्वंस=विनाश, तरीयां=तरह।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने कंस के जन्म का प्रभावी वर्णन किया है।

व्याख्या – सहज कवि कहता है कि मथुरा का राजा उग्रसेन धर्म प्रिय था और धर्म के मार्ग पर चलता हुआ राज्य करता था। वह अति न्यायप्रिय था। वह दूध का दूध और पानी का पानी करने वाला न्यायी थी। यदि परिवार में पुत्र लायक हो तो कानी काड़ी की भी क्षति नहीं होती अर्थात् परिवार की कोई किसी प्रकार की हानि नहीं होती। उग्रसेन के घर उसकी पटरानी पवन रेखा थी। महारानी अच्छे कुल और शील स्वभाव की थी। वह बुद्धिमती और चतुर रानी थी। उसकी आवाज कोयल जैसी मीठी थी, वह पतिव्रता थी और अपने पति की प्यारी थी। उस पवन रेखा नामक रानी की कोख से एक खोटा, दुर्भाग्यशाली और बुरा अंश उत्पन्न हुआ। जब उस राक्षस का जन्म हुआ तब मथुरा में बड़ा नाश हुआ था। ईश्वर की माया है कि किस तरह वह श्रेष्ठ वंश कलंकित हुआ। दैत्यराज हिरण्यकशिपु के घर प्रहलाद जैसा भक्त पैदा हुआ था तो धर्मात्मा उग्रसेन के घर कंस जैसा राक्षस उत्पन्न हो गया। कवि कहता है कि मेरे गुरुदेव हरदेव वेदाचारी का कथन है कि वह बगुले–सा कंस कहां हंस से उग्रसेन के घर उत्पन्न हो गया।

विशेष –

(i) धर्मात्मा उग्रसेन के घर राक्षसी–स्वभाव के कंस के जन्म का उल्लेख किया गया है।

(ii) अभिधा शब्द शक्ति में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iii) प्रसाद गुण संपन्नता है।

(iv) तुकांत छंद है।

(v) दृष्टांत, अनुप्रास, स्वरमैत्री और उपमा अलंकारों का सहज सराहनीय प्रयोग है।

(10)

मतना फिकर करै मन में आज सिद्ध होंगे तेरे काम राणी
तेरे आगै अपने मन का कहदूं भेद तमाम राणी
दुनिया में तेरी नहीं सनन्ध थी, सब तरीया तकदीर मन्द थी
तेरी कूख बन्द थी यो तनै फिर रहे था सुबह शाम राणी
मतना मन में घणी डरै, आज तेरा बिगड़ा काम सरै
हो लड़का दशमें मास तेरे ना झूठे मेरे कलाम राणी
तूं मेरी बात पै कर ख्याल, मैं बहुत बड़ा था महीपाल,
द्यूं पिछले जन्म का सुना हाल, मेरा कालनेमी था नाम राणी।
कहै बाजे राम मनैं साच बताई, मैं आपै चल्या पाप की राही,
न्यूं राक्षस की जूनी पाई, करा विष्णु तै संग्राम राणी।

शब्दार्थ – जवाब=उत्तर, यतना=नहीं, फिकर=चिंता, तमाम=सारे, कूख=कोख, तनै=तुम ने, घनी=अत्यधिक, सरै=होना, ख्याल=विचार, महीपाल=राजा, जूनी=योनी, संग्राम=युद्ध।

प्रसंग – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियाँ हमारी पाठ्य पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिसके रचयिता बाजे भगत हैं। कवि ने श्री कृष्ण के जन्म से संबंधित घटनाओं को भावात्मक रूप से स्पष्ट किया है।

व्याख्या – द्रुमिल उत्तर देता है–

हे रानी, तू अपने मन में किसी प्रकार की चिंता न कर। तेरे सभी कार्य सिद्ध होंगे। रानी, मैं तेरे सामने अपने दृश्य की सारी बातें, सारे रहस्य प्रकट कर दूँ। संसार में तेरी पवित्रता और श्रेष्ठता का कोई मुकाबला ही नहीं था पर तेरा भाग्य सब तरह से मंद था। उसने तेरा साथ नहीं दिया। तेरी कोख बंद थी और तुम्हें दिन–रात, सुबह–शाम चिंता सताती रहती थी। तुम अपने मन में अधिक न डरो। आज तेरा बिगड़ा हुआ काम संवर जाएगा। दसवें महीने तेरे गर्भ से लड़का उत्पन्न होगा। हे रानी, मेरा कथन कभी झूठा नहीं होगा। तुम मेरी बात पर विचार करे। मैं बहुत बड़ा शासक था। मैं तुम्हें अपने पिछले जीवन का हाल सुना दू। रानी, मेरा नाम काल नेगी था। बाजे राम कवि कहता है कि मैंने सब बातें सच बताई हैं। मैं अपने आप पाप के रास्ते पर चला था और इस प्रकार राक्षस की योनि पाई थी। रानी, मैंने राक्षस रूप में विष्णु से युद्ध किया था, उसी के दुष्परिणाम के कारण मैं राक्षसत्व को प्राप्त हुआ था।

विशेष –

(i) मिथक के आधार पर दुरमलीक के जीवनव संबंधी रहस्य का उद्घाटन किया गया है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता और सरसता भरी है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) प्रसाद गुण और तुकांत छंद का प्रयोग किया गया है।

(v) उर्दू शब्दों का प्रचुर प्रभावी प्रयोग है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 पाठ्यांश के आधार पर कृष्ण जन्म की कथा का परिचय दीजिये।

उत्तर – 1. पांडवों का हिमालय पर्वत की ओर जाना – महाभारत के युद्ध के पश्चात् पांडवों ने हस्तिनापुर राज्य को सुख–समृद्धि प्रदान कराने में सफलता पाई थी। लंबे समय तक राज्य करने के पश्चात् वे स्वयं नष्ट होने के लिए द्रौपदी सहित हिमालय पर्वत पर चले गए थे। निरंतर वे पर्वत पर चढ़ते गए थे और बर्फ में गल–गल कर नष्ट हो गए थे। केवल युधिष्ठिर ही ऐसा था जो बर्फ से नहीं गला था और उसे स्वर्ग लोक की प्राप्ति हुई थी।

2. परीक्षित – अभिमंयु और उत्तरा का पुत्र जो कि अपने पिता की युद्ध में मृत्यु के बाद पैदा हुआ था। पांडवो ने इसे हस्तिनापुर का राज्य दिया था। बाद में इसकी मृत्यु सांप के काटने से हुई थी।

3. वासुदेव के अनेक विवाह – वासुदेव अपने पिता सूरसेन की बड़ी संतान थे। पिता को अपने पुत्र से बहुत स्नेह था। वासुदेव का पहला विवाह मारीस्सा नामक रानी से हुआ। इसके पश्चात् अनेक राजाओं ने अपनी पुत्रियों का विवाह इनसे करना चाहा। धन–मान की प्राप्ति के लिए पिता अपने पुत्र का बार–बार विवाह कराता चला गया। वासुदेव के सत्रह विवाह हुए थे।

4. कंस-जन्म – यह मथुरा का राजा उग्रसेन का पुत्र था। वास्तव में यह उग्रसेन का पुत्र न होकर द्रुमिल नामक दानव का पुत्र था जिसने बलपूर्वक उग्रसेन की पत्नी पवन रेखा से शारीरिक संबंध बनाया था। कंस बड़ा शूरवीर और शास्त्रों में पारंगत था। कंस ने जरासंध तथा अन्य कुछ असुरों की सहायता से अपने पिता उग्रसेन को कैद कर लिया था और स्वयं मथुरा का राजा बन बैठा था। कंस के चाचा देवक की कन्या देवकी का वासुदेव से विवाह सम्पन्न हुआ था।

5. देवकी बंदीगृह में – जिस समय वासुदेव देवकी को ब्याह कर वापिस लौट रहे थे तब स्वयं कंस उनका रथ हांकने लगा। उसी समय आकाशवाणी हुई कि जिस का रथ तुम हांक रहे हो उसी का आठवां गर्भ तुम्हारा वध करेगा। इस पर कंस ने वासुदेव और देवकी को कैदखाने में डाल दिया और एक–एक कर उनकी सात संतानें मार डाली। देवकी के गर्भ से आठवीं संतान कृष्ण पैदा हुए। उनका पालन–पोषण गोकुल में देवकी की दूसरी कन्या, देवकी की बहन, यशोदा ने किया। कंस ने जब श्री कृष्ण के गोकुल में पलने की सूचना प्राप्त की तो उसने उन्हें मरवाने के लिए कई असफल प्रयत्न किए। अंत में कृष्ण ने मथुरा आकर कंस का वध किया था। कृष्ण जन्म मे कितने एक मोड़ हैं।

प्रश्न 2 बाजे भगत की भाषा-शैली की विवेचना कीजिए।

उत्तर – बाजे भगत एक सांगी थे। उन्होंने मिथकीय, ऐतिहासिक और सामाजिक आधारों के ग्रहण कर सागों की रचना की थी जिसके लिए उन्होंने ऐसी भाषा का प्रयोग किया जो सामान्य जनमानस को सरलता से समझ आ सके और उनके मनोरंजन का कारण बन सके। उनकी भाषा सम्बन्धी प्रमुख विशेषताएं हैं :–

1. सरल भाषा – बाजे भगत ने शुद्ध साहित्यिक भाषा का प्रयोग नहीं किया बल्कि बोलचाल की खड़ी बोली का प्रयोग किया जिसे सरलता से अशिक्षित भी समझ सकें और आनन्द प्राप्त कर सकें। उनकी दृष्टि में व्याकरण की शुद्धि का कोई विशेष महत्त्व नहीं था–

उस शूद्र के मारण नै राजा ने धनुष बाण ठाया
अपना काल देखकर कै वो शूद्र मन में घबराया
तो बैल गऊ को पुचकार्या, मैं दुख मेटूंगा थारा
क्या ब्राह्मण क्या देवता भेद बतला दो सारा।

2. तरलता – कवि की भाषा में प्रवाहमयता है जिस कारण भाषा सजीव है। वह कवि के संकेतों के आधार पर निरंतर बदलती दिखाई देती है। भाषा उनके भावों की अनुगामिनी है। उससे कथा को प्रवाह मिला है–

घर आई लक्ष्मी ना फेरूं राजा नै यो किया विचार
बासदेव नै ब्याहण लागे करा–करा कै मंगलाचार
कोए दिनां के अर्से में हुई बासदेव के सोलहा नार
सतरहवीं पटरानी देवकी नै चले मथुरा में ब्याहण।

3. शब्द-शिल्प – कवि ने अपनी भाषा में तद्भव शब्दावली का अत्यधिक प्रयोग किया है। संभवतः जनसाधारण मे

प्रचलित शब्दावली को उन्होंने इसलिए अधिक प्रयोग किया ताकि अशिक्षित भी इसे सरलता से समझ सके। कहीं–कहीं देशज और सरल उर्दू शब्दों का प्रयोग भी सफलतापूर्वक किया है–

(क) **तत्सम शब्द** – जिसके राज्य में आनन्द से रहती थी प्रजा सारी।

(ख) **तद्भव शब्द** – सखियां तै न्यारी राणी दूर एकली आगी।

(ग) **देशज शब्द** – जो लायक बेटा हो सै ना कुल की होने तक कोडी काणी।

(घ) **विदेशी शब्द** – तेरे आगै अपने मन का कह दूं भेद तमाम राणी।

4. छंद-अलंकार-योजना – कवि ने संगीतात्मकता की सृष्टि के लिए तुकांत छंद का प्रयोग किया। सांग में गेयता का गुण सर्वोपरि है इसलिए छंदमयता अनिवार्य थी। भाषा को आलंकारिक बनाने के लिए स्वाभाविक रूप से अलंकारो का प्रयोग दिखाई देता है पर उनका प्रयोग कृत्रिम नहीं है। भाषा के प्रवाह में जहाँ वे स्वयं आ गए हैं कवि ने उनका वहीं प्रयोग किया है, जैसे–

पुनरुक्ति प्रकाश – ठण्डी–ठण्डी हवा चलै थी राणी के मन भायो।

अनुप्रास – कह बाजे राम राणी धोरै खड़ा हुआ घेर कै राही।

लोकोक्ति – करै या धर्म का राज भूण छाणै था दूध और पाणी।

उपमा – कोयल–सी मीठी वाणी सती पतिव्रता पिया की प्यारी।

5. चित्रात्मकता – कवि ने ऐसी सरल भाषा का प्रयोग किया, जिसमें चित्रात्मकता का गुण छिपा हुआ है। चाक्षुक बिंब प्रधान भाषा का श्रोता–पाठक के हृदय पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है–

कितै आम, अमरुद, बेल पत्तर कितै बिड़े बाँस के भारी
कितै फुलवाड़ी में फूल कितै खिल रही थी केसर क्यारी।
कितै दादुर, मोर, पपीहा, कोयल, बोली लागैं प्यारी
इसी सुहाणी समयां देख उस राणी के मन भाई।

6. हरियाणवी रंग – कवि ने सर्वत्र हरियाणवी शब्दों और क्रियाओं का प्रयोग किया है जिससे हरियाणवी के बदलते रूप के दर्शन होते हैं। इन प्रयोगों में सहजता है, कृत्रिमता नहीं।

वास्तव में कवि ने अपने भावों की प्रस्तुति के लिए ऐसी भाषा का प्रयोग किया जो जनसामान्य के बौद्धिक स्तर की थी। उसने अपनी विद्वता प्रदर्शन का प्रयत्न नहीं किया। इसी लिए डॉ० बाबू राम और डॉ० रामपत यादव ने लिखा कि "बाजे भगत की भाषा में माधुर्य और कोमलता के साथ–साथ ही हरियाणवी लोक भाषा का अभिनय रूप दिखाई देता है। उनके सांगों में तद्भव, तत्सम्, मिथकीय शब्दों और विभिन्न अलंकारों का प्रयोग मिलता है।"

निश्चय ही बाजे भगत की भाषा सरल, सहज और तरल है, शैली संवादात्मक और अभिनयात्मक है।

प्रश्न 3 बाजे भगत के सांगों के प्रकृति चित्रण का परिचय दीजिए।

उत्तर – प्रकृति चित्रण प्रत्येक साहित्यकार को निश्चित रूप से प्रभावित करती है, अपनी ओर आकृष्ट करती है। बाजे भगत सांगी थे और वे घटनाओं को जनता के समक्ष चित्र के रूप में प्रस्तुत कर उनकी स्वाभाविकता को उजागर करना चाहते थे। कवि ने अपने काव्य में प्रकृति चित्रण का वर्णनात्मक प्रयोग किया है जिससे घटनाओं की पृष्ठभूमि तैयार हुई है। कवि ने बसंत ऋतु का वर्णन करते हुए सर्वत्र हरियाली का उल्लेख किया है–

वसंत ऋतु, सब फूल खिले पेड़ों पर हरियाली छाई।

कवि ने कहीं–कहीं प्रकृति चित्रण करते समय परिगणन शैली को अपनाया है। ऐसे स्थानों पर प्रकृति की सुन्दरता के दर्शन नहीं होते–

कितै आम, अमरुद, बेल पत्तर कितै बिड़े बाँस के भारी
कितै फुलवाड़ी में फूल कितै खिल रही थी केसर क्यारी।

कितै दादुर, मोर, पपीहा, कोयल, बोली लागैं प्यारी
इसी सुहाणी समयां देख उस राणी के मन भाई।

कवि ने प्रकृति का प्रयोग अलंकार रूप में भी किया है जिससे अभिव्यंजना शैली को सजीवता की प्राप्ति होती है। कोयल की मीठी वाणी सती पतिव्रता पिया की प्यारी कवि ने कानव मन पर प्रकृति के प्रभाव को प्रकट किया है। जब रानी वन में भ्रमण करने गई तो प्रकृति के बदलते रूप ने उसे गंभीरता से प्रभावित किया और वह अपने मन पर नियंत्रण न रख पाई और घूमने के लिए निकल पड़ी–

ठण्डी-ठण्डी हवा चलै थी राणी के मन भागी
सैर करण लागी राणी सब आलस सुस्ती त्यागी।

वास्तव में कवि प्रकृति से उतना ही जुड़ा हुआ है जितना कोई भी सहृदय व्यक्ति। प्रकृति से वह जीवन–शक्ति प्राप्त कर काव्य का आधार प्राप्त करता रहा। इनके प्रकृति चित्रण में सहजता, स्वाभाविकता और अनुप्रेरक रूप है। प्रकृति–चित्रण इनके काव्य के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

4. लखमीचंद

जीवन परिचय

हरियाणा सांग साहित्य के पर्याय लखमीचंद का जन्म 15 जुलाई, सन् 1903 में हरियाणा के जोरी गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम उदमीराम था जो साधारण किसान थे। पं० लखमीचंद ने कोई विविधत् शिक्षा प्राप्त नहीं की। वे तो कबीर की भाँति 'मासि कागत छुवौ नहिं, कलम गही नहिं हाथ' कोटि के विद्वान् थे। इनका बचपन ग्वाल–बालों के साथ पशु चराने, गाने–बजाने और सांग देखने में व्यतीत हुआ। इन्होंनं अठारह वर्ष की आयु में पहली बार सोहन के अखाड़े में अपने मधुर कंठ का परिचय दिया। सन् 1924 में इन्होंने अपनी एक अलग सांग मंडली बना ली। ये एक प्रतिभावान् सांगी होने के साथ–साथ अच्छे अभिनेता भी थे। अपने सांगों में वे सदैव स्त्री–चरित्रों का अभिनय करते थे। उनका स्वर बड़ा मधुर और ऊँचा था। आज लखमीचंद सांग सम्राट् के रूप में जाने जाते हैं। इनके सांगों में हरियाणवी लोक साहित्य के मानक तत्त्वों को खोजा जा सकता है। वर्तमान में पं० लखमीचंद के सांगों पर प्रत्येक विश्वविद्यालय में शोध–कार्यों का सिलसिला जारी है। पं० लखमीचंद को हरियाणवी साहित्य के युग पुरुष की संज्ञा भी दी जाती है।

रचनाएँ – पं० लखमीचंद ने सांग के क्षेत्र में एक नई दिशा का उद्घाटन किया। उन्होंने सांगों को दैनिक जीवन से जोड़ा। इन्होंने प्रेम और यौवन का अच्छा संयोग अपने सांगों में किया। शृंगार के साथ वीरता का प्रदर्शन भी किया। पं० लखमीचंद के सांगों के वर्ण्य विषय को देखकर कहीं भी ऐसा नहीं लगता कि उन्होंने स्कूली शिक्षा और अध्ययन नहीं किया। इनके सांगों में ज्ञान और अनुभव के साथ–साथ दर्शन, पुराण और वेदान्त परम्परा को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सामाजिक सद्भाव, पारिवारिक सम्बन्ध और रीति–नीति इनके सांगों का अनिवार्य तत्त्व है। इनके प्रमुख सांग इस प्रकार हैं–

सेठ ताराचंद, शाही लकड़हारा, नौटंकी, सरणदे, भरथरी–पिंगला, चन्द्रहास, मीराबाई, जैमल–फत्ता, अंजनादेवी, सत्यवान सावित्री, हरिश्चन्द्र, बीजा सोरठ, पूरणमल, सरवर नीर, रूप बसन्त, चीरपर्व, गोपीचंद, शकुन्तला, ऊषा–अनिरुद्ध, धरु भगत, चापसिंह, हीर–रांझा, पुरंजन–पुरंजनी और पदमावत्।

साहित्यिक विशेषताएँ -

सांग सम्राट पं० लखमीचंद ने सांग साहित्य में एक नया आयाम दिया। उन्होंने सांगों को परम्परित रूढ़ियों से मुक्त करके उनमें प्रेम और यौवन का ऐसा ताना–बाना बुना कि देखने वाले दंग रह गए। लखमीचंद कबीर के ही समान लोकभाषा में वेदान्त तथा यौवन और प्रेम के मार्मिक चित्रण में अद्वितीय थे। इनके साहित्य की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

1. **जनजीवन चित्रण** – पं० लखमीचंद का साहित्य जन–जीवन से जुड़ा साहित्य है। इन्होंने अपने सांगों में सामान्य जन–जीवन की भावनाओं की अभिव्यक्ति दी है। प्रेम और यौवन हमारे ग्रामीण जीवन की दो विभूतियाँ हैं, उनका अच्छा संयोग इनके सांगों में मिलता है। जन–जीवन से जुड़ी अनेक ऐतिहासिक कथाओं और कहानियों को इन्होंने अपने सांगों में प्रस्तुत कर साधारण लोक जीवन को जोड़ने का प्रयास किया है। प्रायः साधारण जन ईश्वर में अधिक विश्वास रखने वाला तथा पुराणों और वेदान्त की परम्पराओं से बहुत प्रभावित होता है। इनके सांगों में हमारे लोक जीवन की आस्थाओं, विश्वासों और वेदान्त की परम्पराओं का सुन्दर चित्रण है। लोक में प्रचलित नल दमयन्ती, सत्यवान सावित्री, पूरणमल, भरथरी, सरवर–नीर आदि कथाओं से सम्बन्धित सांगों का निर्माण करके उन्होंने जनसाधारण को इन चरित्रों को समझने का अवसर प्रदान किया। इस प्रकार उनका साहित्य जन–जीवन से जुड़ा साहित्य था।

2. **आस्था-लोक-विश्वास** – पं० लखमीचंद का अनुभव संसार व्यापक था। जन–जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं

था जहां उनकी दृष्टि न गई हो। उनका साहित्य केवल मनोरंजन तक ही सीमित नहीं था अपितु इसमें जनसाधारण को शिक्षा भी प्रदान की है। उनके साहित्य पर लोक विश्वासों की गहरी छाप है। उन पर हरियाणा के संत काव्य और मध्यकालीन सन्त काव्य का प्रभाव था। उन्होंने अपने नीतिपरक दोहों में अनेक प्रकार की शिक्षाएं दी हैं। उदाहरणस्वरूप मन को वश में रखने के लिए वे कहते हैं–

मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक।
यू डोब्बै मझधार में, जिन वली लगे ना टेक।।

सामान्य जन के ईश्वर में अत्यधिक विश्वास को लखमीचंद यूँ व्यक्त करते हैं–

राम भरोसे बैठ के, इसवर के गुण गाव।
महिमा न्यारी राम की, कांटा लगै न पांव।।

लखमीचंद मनुष्य को दया और धर्म के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करते हुए कहते हैं–

दया धरम बिन जगत मैं मनुस-जन्म बेकार।
ये दो साथी जीव के, कर दै बेड़ा पार।।

लखमीचंद एक स्थान पर ब्रह्म को जानने की शिक्षा देते हुए अन्य कोरे ज्ञान को व्यर्थ बताते हैं–

और ज्ञान ज्ञानड़ी, ब्रह्म तान सो ज्ञान।
जैसे गोला तोप का करता साथ मदान।।

इस प्रकार लखमीचंद का साहित्य मनोरंजक होने के साथ–साथ शिक्षाप्रद भी है।

3. गुरु-महत्त्व – पं० लखमीचंद के साहित्य में सर्वत्र गुरु के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है। उनकी गुरु के प्रति अगाध निष्ठा और विश्वास था। वे अपने साहित्य में अनेक प्रकार से गुरु का स्मरण करते हुए हमारे सामने गुरु भक्ति का अनूठा आदर्श प्रस्तुत करते हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि गुरु की सेवा ही शिष्य को भवसागर से पार करा सकती है–

'भानसिंह सतगुरु की सेवा कर कै पार उतारिये।'

वे अपने 'सत्यवान–सावित्री' सांग में गुरु के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि गुरु की सेवा से ही मुक्ति का मार्ग मिल सकता है–

'कह लखमीचंद गुरु की सेवा कर मुक्ति मारग टोह गया।'

पं० लखमीचंद गुरु का महत्त्व एक अन्य सांग में प्रस्तुत करते हुए कहते हैं–

लखमीचंद न हांनिया मैं टालै।
सतगुरु बिन भला कूण सिम्भालै।।

इस प्रकार लखमीचंद के समग्र साहित्य में गुरु के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास स्पष्ट दिखाई देता है।

4. रहस्यवाद – पं० लखमीचंद के साहित्य में रहस्यवाद के भी दर्शन होते हैं। उनके साहित्य में रहस्यवाद की प्रमुख विशेषता आश्चर्य एवं कौतूहल की भावना को उन्होंने अपने साहित्य में व्यक्त किया है। प्रकृति के व्यापक उल्लास में अज्ञात सत्ता की कल्पना भी उन्होंने की है और संसार के प्रत्येक चेतन–अचेतन में उस परम सत्ता की सक्रियता को अनुभव किया है। उदाहरणस्वरूप–

किसकी रागिनी सुण कै भौरे
गूंज करै न्यारी न्यारी
किसके नाचते पिरवा–पिछवा
वात हिलै बारी–बारी
इसका रंग ले फूल खिलैं
सिंगार करै क्यारी–क्यारी
भूचर, जलचर, नभचारी
सब भरै उमंग मैं काया।

5. पारिवारिक चित्रण – पं० लखमीचंद ने अपने साहित्य में पारिवारिक संबंधो का चित्रण भी खूब किया है। पति–पत्नी

के रिश्तों के विषय में उन्होंने लिखा है कि यदि स्त्री पतिव्रत धर्म का पालन करती है तो पुरुष को जती होना चाहिए।

सती बीर और जती पुरुष का ओ ढंग ऋषि बतावै।
जती पुरुष और सती बीर ना गैर से नजर मिलावै।।

लखमीचंद ने माता–पिता एवं पुत्र और पुत्री के बीच रिश्ते का भी अत्यंत मर्मस्पर्शी चित्रण किया है। माँ अपनी बेटी को हर सम्भव दान–दहेज देकर उसके भावी दाम्पत्य जीवन के सुखी होने की कामना करती हुई कहती है–

बेटी मेरी आत्मा कहती फूलो–फलो सुहाग तेरा।
लेण–देण में कसर करूँ ना आगे बेटी भाग तेरा।।

इस प्रकार पिता–पुत्र, माँ–बेटी, देवर–भाभी, पति–पत्नी, माँ–बेटा, सास–बहू आदि सभी पारिवारिक संबंधों को लखमीचंद साहित्य में देखा जा सकता है।

6. भाषा-शिल्प – पं० लखमीचंद का अभिव्यंजना शिल्प बेजोड़ है। इन्होंने अपने साहित्य को प्रस्तुत करने के लिए जन भाषा को चुना। उनकी भाषा अत्यंत सरल, सहज और स्वाभाविक है। उनकी भाषा हरियाणा की मिट्टी का सौन्दर्य लेकर निर्मित हुई है। इनकी भाषा में अपनी लोकप्रियता, व्यंजना–शक्ति और प्रवाहमयता के कारण पाठकों और दर्शकों को बाँधने की भी अपूर्ण क्षमता रखती है। हरियाणवी लोक विश्वास, परम्पराएं, संस्कार, सामाजिक मनोविज्ञान तथा लोक जीवन से जुड़ी शब्दावली के प्रयोग ने इनकी भाषा को ऊँचाईयों तक पहुँचाया। उनके काव्य में उपमा, रूपक, अतिशयोक्ति, अनुप्रास, श्लेष, यमक, अन्योक्ति आदि अनेक अलंकारों का प्रयोग मिलता है। उपमा अलंकार के सार्थक एवं पूर्ण प्रयोग के कारण तो इन्हें हरियाणे का कालिदास भी कहा जाता है। अलंकारों के अतिरिक्त पं० लखमीचंद ने चौक लिया, रागनी, बहरे, तबील भैरवी, गज़ल, कव्वाली, दोहे, सोरठे आदि विविध छन्दों के साथ–साथ कुछ नए छन्द और नई धुनें भी अपनाई। इनकी 'डोली' बहुत प्रसिद्ध रही है।

पं० लखमीचंद का साहित्य हरियाणा की ही नहीं पूरे हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। रागनी के वर्तमान रूप के जन्मदाता पं० लखमीचंद ने अपनी प्रतिभा से हरियाणवी सांग को भी एक नया रूप दिया। राम नारायण अग्रवाल के शब्दों में, "कबीर की भांति लोकभाषा में वेदान्त तथा यौवन और प्रेम के मार्मिक चित्रण में लखमीचंद बेजोड़ थे। उन जैसा–जीवन का चितेरा स्वांगिया हरियाणा में दूसरा नहीं है।" पं० लखमीचंद को हरियाणा में युगपुरुष की संज्ञा भी दी जाती है।

कविता-सार

प्रस्तुत कविता में सांग सम्राट् पं० लखमीचंद के अलग–अलग सांगों में से लिए गए अंश हैं। पहला 'चीरपर्व' सांग में से, दूसरा 'नल दमयन्ती', तीसरा 'पूरणमल', चौथा 'सत्यवान सावित्री' तथा पांचवाँ 'मीराबाई' सांग में से उद्धृत किया गया है। इन सभी सांग अंशों में अनूठी अभिव्यक्ति है।

'चीरपर्व' सांग में जब दुःशासन द्रौपदी के केश पकड़कर उसे खींचता हुआ महल से बाहर लाता है तो द्रौपदी अपने इस अपमान के कारण क्रोधित होकर गांधारी से कहती है कि तुम्हारा पुत्र दुःशासन मुझे अपमानित कर रहा है। कोई भी मेरी मदद के लिए नहीं आ रहा है। अतः तुम ही मेरी सहायता करो द्रोपदी गांधारी को चेतावनी देती है कि यदि उसका अपमान हुआ तो निश्चित रूप से युद्ध होगा। इस युद्ध में भयंकर नरसंहार होगा और कौरवों का विनाश होगा। वह गांधारी से कहती है कि इस अपमान के कारण उनके पुण्यकर्म नष्ट हो जायेंगे किन्तु उसे दुःख है कि उसके अपमान को गांधारी ने एक नारी होते हुए भी नहीं समझा।

'नल दमयन्ती' सांग में राजा नल द्वारा दमयन्ती के त्याग दिए जाने पर दमयन्ती की करुण स्थिति का चित्रण है। दमयन्ती जीव–जन्तुओं और पेडों से नल का पता पूछती है। वह अपने विवाह के क्षणों को याद करते हुए अब नल द्वारा त्यागे जाने को बुरा कहती है। जंगल में इधर–उधर भटकती हुई दमयन्ती कहती है कि अब वह संसार की अनेक कठिनाईयों से परिचित हुई है। वह कहती है कि ईश्वर की माया विचित्र है और यदि ईश्वर की कृपा हुई तो उसके वंश में पुनः उजाला हो जायेगा।

'पूरणमल' सांग में अनेक दृष्टांतों के द्वारा सांसारिक आवागमन पर प्रकाश डाला गया है। कवि के अनुसार इस संसार

में मृत्यु निश्चित है। कोई घर तो कोई बाहर सबको मृत्यु ने घेरा है। दानवीर कर्ण, भक्त विभीषण, कुम्भकर्ण और महापराक्रमी रावण भी अन्ततः मृत्यु को प्राप्त हुआ। जिसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु अवश्यंभावी है। कवि स्पष्ट करता है कि भगवान् विष्णु के अवतार राम भी मृत्यु से नहीं बच सकते।

'सत्यवान सावित्री' सांग में सावित्री के पतिव्रत धर्म का वर्णन है। सावित्री कहती है कि वह सदा अपने पति के साथ–साथ चलेगी। जहां–जहां उसका पति जाएगा वह वहां–वहां उसके साथ पहुँचेगी। इसके साथ–साथ वह कहती है कि सदा ईश्वर का गुणगान करना चाहिए।

'मीराबाई' सांग में मीराबाई का श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम और उसकी अनन्य भक्ति व्यक्त हुई है। मीरा श्रीकृष्ण को आनन्द का आधार कहते हुए उनकी महिमा का गुणगान करती है। वह कहती है सभी ऋषि–मुनि सदा ही श्रीकृष्ण के चरणों में ध्यान लगाए रहते हैं। श्रीकृष्ण ने द्रौपदी और देवकी की सहायता की तथा भौमासुर का संहार भी किया। अन्त में पं० लखमीचंद कहते हैं कि श्रीकृष्ण ग्वाल बालों के बीच इस प्रकार सुशोभित हो रहे हैं जिस प्रकार तारों के बीच में चन्द्रमा सुशोभित होता है।

व्याख्या

(1)

री मेरी सासू सभा मैं जा सूं री तेरा दुशासन लेज्या। टेक।।
जुल्म किसा हस्तनापुर खेडे सै, यो थारे काल खिड़क भेड़ै सै।
यो तेरा दुशासन छेड़ै सै, मैं रही रो-रो रुधन मचा।।
अमृत बणता नहीं लहू का, खर तै के बच्चा बणै गऊ का।
तूँहै कुछ ले ले तरस बहू का, मेरी रही ना पार बसा।
ऊड़ै महफिल के लोग हंसैंगे, फेर आपस मैं बांस खसैंगे।
हस्तनापुर मैं काग बसैंगे, लोभ नै दीन्यां नाश करा।।
आज मेरे हुई कर्म की हाणी तुमनै कोन्या बात पिछाणी।
गुरु मानसिंह की बाणी सुण रहै लखमीचंद चित्त ला।।

शब्दार्थ – सासू=सास, जुल्म=अत्याचार, किसा=कैसा, खड़े=स्थान, गाँव से बाहर मन्दिर, थारे=तुम्हारे, रुधन=रुदन करना, रोना, खर=गधा, बणै=बनता, तूँहे=तू ही, तरस=दया, अड़ै=वहाँ, महफिल=सभा, फेर=फिर, बाँस खसेंगे=झगड़ा होगा, काग=कौए।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियां हरियाणा के प्रसिद्ध सांगी पं० लखमीचंद द्वारा रचित 'चीर पर्व' सांग का अश है। यहाँ सांगी स्पष्ट करता है कि जब दुःशासन द्रौपदी के केश पकड़कर खींचता हुआ उसे महल से बाहर लाता है और बुरी तरह अपमानित करता है। इस अपमान से द्रौपदी का विद्रोह जाग जाता है और वह गांधारी को स्पष्ट रूप में कहता है।

व्याख्या – हे मेरी सास ! तुम्हारा पुत्र दुःशासन मुझे घसीटता हुआ और अपमानित करता हुआ भरी सभा में लेकर जा रहा है। यह हस्तिनापुर राज्य में कैसा अन्याय हो रहा है। यह तुम्हारी काल से बचने की सभी खिड़कियाँ बन्द कर रहा है। तुम्हारा पुत्र दुःशासन मेरा अपमान कर रहा है। मैं अपमानित होकर करुण रुदन कर रही हूँ। किन्तु मेरे इस करुण–क्रन्दन का किसी पर भी प्रभाव नहीं पड़ रहा है। आप याद रखिए कि लहू को कभी भी अमृत में नहीं बदला जा सकता और गधे से कभी भी गाय का बच्चा पैदा नहीं हो सकता अर्थात् बुरे व्यक्ति का स्वभाव नहीं बदलता, वह बुरा ही रहता है। हे मेरी सास ! अब मेरा कोई भी बस नहीं चल रहा है अब तो आप ही मुझ पर दया करो और मुझे अपमानित होने से बचा लो। यदि ऐसा नहीं हुआ तो भरी सभा में मुझे अपमानित किया जाएगा। कुछ लोग मुझे अपमानित करके हँसेंगे किन्तु याद रखना बाद में मेरे पति पाण्डव इसका बदला अवश्य लेंगे और दोनों कुलों का युद्ध होगा। इस युद्ध में भारी नरसंहार होगा तथा हस्तिनापुर में लाशों पर चील–कौए मंडराएंगे। लोभ के कारण सबका विनाश होगा। आज मेरे अपमानित होने पर मेरे द्वारा संचित पुण्य कर्म नष्ट हो गए हैं किन्तु तुम मेरे इस अपमान को नहीं पहचान पा रही हो। लखमीचंद जी कहते हैं कि मैं गुरु मानसिंह की वाणी को बड़े ध्यान से

सुन रहा हूँ।

विशेष –

(i) महाभारत के 'द्रौपदी चीरहरण' प्रसंग को सांग के माध्यम से अत्यन्त मार्मिक और हृदयस्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया है।

(ii) 'अमृत बंगला नहीं लहू का, खर तै के बच्चा बणै गऊ का' से स्पष्ट किया है कि बुरा व्यक्ति तो बुरा ही रहता है, उससे अच्छे कार्य की आशा नहीं की जा सकती।

(iii) द्रौपदी अपमानित होने पर विद्रोहस्वरूप भावी युद्ध की चेतावनी देता है।

(iv) 'सांग' हरियाणवी लोकनाट्य जन रंजक विधा है।

(v) सांग में लोकभाषा का परिष्कृत रूप प्रस्तुत हुआ है।

(vi) गुरु मानसिंह का उल्लेख करके उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की है।

(vii) भाषा अत्यंत सरल, सहज और प्रभावशाली है।

(2)

इस बणखण्ड मैं दीखै से मनै दिन मैं घोर अंधेरा।
सारदूल जंगल के राजा कतै पति मिल्या हो मेरा।
तेरे बिना ना मेरी दहशत भागै, पिय मेरे इस मौकै मत त्यागै।
मनैं पिता के घरपै देवत्यां आगै पल्ला पकड्या तेरा।
इब जीवते जी क्यूकर भूलूं जब उनकै आगै टेरा।।
अपणे मन में मरकै चाली, ध्यान दरखती पै धर कै चाली।
फेर ऊपर नै मुंह करकै चाली कूआं मिलो चाहे झेरा।
हाथ जोड़ दरखतों से बोली नल का भी किते बेरा।।
जारग्यौ मै सबदुनिया की गुरबत, पीग्यी बिपत रूप का शरबत।
ऊंची चोटी वाले पर्वत तेरा लम्बा चौड़ा घेरा।
तेरी धज खिखर मैं जड़ चोए मैं ऊंचा बहुत घनेरा।।
ईश्वर तेरी माया अजब रंग की, तेरी रचना सै इसे ढंग की।
लखमीचंद गुरु मानसिंह की शरण समझ कै लेरा।
थारी मेर फिर इस वंश का फेर उजल्या डेरा।।

शब्दार्थ – बणखण्ड–वनखण्ड, जंगल, दीखै–दिखता है, मनै–मुझे, घोर–घनघोर, सरदूल–सिंह, शेर, कतै–कहीं, दहशत–डर, मौके–अवसर, धरपै–घर पर, क्यूकर–किस प्रकार, दरखत–वृक्ष, पेड़, बेरा–पता, झेरा–मुसीबत, जाणग्यी–जान गई, गुरबत–गरीबी, विपत–विपत्ति, कठिनाइयाँ, अजब–विचित्र, थारी मेर–आपकी कृपा, उजल्या–उज्ज्वल, उजला, डेरा–परिवार।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ सांग सम्राट पं० लखमीचंद जी के सांग 'नल–दमयन्ती' सांग से ली गई हैं। यहाँ उन्होंने उस प्रसंग का वर्णन किया है जब राजा नल दमयन्ती अपनी पत्नी दमयन्ती को जंगल में पेड़ के नीचे सोया हुआ छोड़कर चला जाता है और दमयन्तीदुःखी हो जाती है।

व्याख्या – सांग सम्राट पं० लखमीचंद लिखते हैं कि दमयन्ती दुःखी स्वर में कहती है कि अब अपने पति नल के बिना मुझे इस जंगल में दिन में भी घना अंधेरा दिखाई देता है। वह जीव–जन्तुओं और पशु–पक्षियों से नल के बारे में पूछती है। दमयन्ती जंगल के राजा शेर से पूछती है कि क्या कहीं उसका पति नल मिला है ? वह अत्यन्त करुण स्वर में कहती है कि हे मेरे प्रिय नल तुम्हें इस अवसर पर मुझे नहीं त्यागना चाहिए था क्योंकि तुम्हारे बिना इस जंगल में मेरे डर को मिटाने वाला कोई नहीं था। मैंनं अपने पिता के घर में सब देवताओं को साक्षी मानकर तुमसे विवाह किया था। अब मैं जीते जी यही किस प्रकार भूल जाऊँ कि मुझे–

हे प्रिय नल ! तुम्हारे द्वारा त्याग दिए जाने पर अपना मन मारकर जंगल में इधर–उधर भटक रही हूँ और मैं

सभी पेड़ों पर ध्यान रखकर चली जा रही हूँ। कभी मैं तुम्हें ढूंढ़ते हुए ऊपर की ओर मुँह करके चलती हूँ और रास्ते में आने वाले कुओं और मुसीबतों की भी परवाह नहीं करती हूँ। दमयन्ती कहती है कि कभी मैं जंगल में खड़े पेड़ों से हाथ जोड़कर विनम्र प्रार्थना करके उनसे नल के विषय में पूछ रही हूँ। अब मैं संसार की गरीबी को भली प्रकार से जान गई हूँ कि कोई किसी की सहायता नहीं करता यहाँ दूसरों की सहायता करने में सभी गरीब हैं और अब मैंने विपत्तियों रूपी कड़वा शरबत पी लिया है। दमयन्ती एक विशाल वृक्ष को देखकर कहती है कि हे ऊँची–ऊँची चोटियों जैसी शाखाओं वाले पर्वत जैसे वृक्ष ! तुम्हारा विस्तार बहत लम्बा और चौड़ा है। तेरा शिखर ध्वज के समान उच्च और फहराने वाला है तो जड़ से ऊपर चोटी तक फैला सारा भाग अति सघन है। हे ईश्वर ! तुम्हारी विचित्र माया है और तुमने यह निराला संसार बनाया है। यदि तुम्हारी दया और कृपा हो जाए तो इस कुल में पुनः उजाला हो सकता है। लखमीचंद जी कहते हैं कि मैं तो अपने गुरु मानसिंह की शरण में पूरी तरह से आ गया हूँ। वही मेरा उद्धार करने वाले हैं।

विशेष –

(i) 'नल–दमयन्ती' प्रसंग में नल द्वारा त्यागी गई दमयन्ती की करुणा की सुन्दर एवं मार्मिक अभिव्यक्ति की गई है।

(ii) नल द्वारा त्यागे जाने पर दमयन्ती स्वयं को अत्यन्त असहाय एवं दुःखी अनुभव करती है।

(iii) दमयन्ती विरह में डूबी हुई पेड़–पौधों और जीव–जन्तुओं से अपने पति नल का पता पूछती है।

(iv) 'पीग्यी विपत रूप का शरबत' में विरोधाभास है क्योंकि विपत्तियाँ कभी भी शरबत के समान मीठी नहीं हो सकतीं।

(v) गुरु मानसिंह का उल्लेख करके उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की है।

(vi) लोकनाट्य 'सांग' के जनसाधारण से जुड़े होने के कारण ही अत्यन्त सरल और सहज लोकभाषा का प्रयोग हुआ है।

(vii) करुण रस परिपाक है।

(3)

आवागमन रही लाग जगत मैं रात मर्‌या कोए दिन मरग्या।
बाहर मर्‌या कोए भीतर मरग्या घर्‌यौं मर्या कोए बन मरग्या। टेक।।
एक सती बिन्ता कश्यप के घरां हो कै गरुड़ अरुण मरग्ये।
महाप्रलय तक आयु पाई फिर भी बिना चरण मरग्ये।
भिक्षुक जाण दिया ना खाली करकै दान करण मरग्ये।
बहुत से राजा इस पृथ्वी पै अपणा बान्ध परण मरग्ये।
भक्ति विभीषण कुम्भकर्ण और लंका का रावण मरग्या।
श्री रामचन्द्र मर्याद बान्ध के बिना लड़ाई रण मरग्या।।

शब्दार्थ – आवागमन–आना और जाना, जन्म और मृत्यु, मरग्या–मर गया, बन–वन, जंगल, भिक्षुक–भिखरी, अपणा–अपना, परण–प्रण, प्रतिज्ञा, मर्याद–मर्यादा, रण–युद्ध, मरग्या–मर गया।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ सांग सम्राट पं० लखमीचंद जी के सांग 'पूरणमल' से उद्धृत है। इसमें उन्होंने अनेक उदाहरणों के माध्यम से संसार के आवागमन चक्र को स्पष्ट किया है।

व्याख्या – पं० लखमीचंद कहते हैं कि इस संसार में आवागमन अर्थात् जन्म और मृत्यु का चक्र निरन्तर चल रहा है। मृत्यु अवश्यम्भावी है। कोई रात में तो कोई दिन में मरता है, कोई विदेश में तो कोई अपने देश में मरता है, कोई घर में मृत्यु को प्राप्त होता है तो कोई जंगल में मरता है। इस प्रकार मृत्यु निरन्तर मनुष्य को अपना ग्रास बना रही है। बड़े–बड़े ऋषि–मुनि, राजा–महाराजा और महान् व्यक्ति भी इससे बच नहीं पाये हैं। बिन्ता कश्यप नामक सती के गरुण और अरुण हुए किन्तु वे भी मर गए। उन्हें महाप्रलय अर्थात् अनन्त काल तक जीवन का वरदान प्राप्त था किन्तु फिर भी उन्हें करना पड़ा। कर्ण महादानी था। उसने अपने द्वार पर आए किसी भिखारी को खाली हाथ नहीं लौटाया। वह अत्यन्त दानी कर्ण भी अन्ततः मर गया। इस धरती पर अनेक बड़े–बड़े राजा हुए जिन्होंने कई प्रतिज्ञाएं

पूरी कीं लेकिन अन्त में उन्हें भी मरना पड़ा। विभीषण जैसे भक्त, उसका बलशाली भाई कुम्भकरण और लंका का महापराक्रमी राजा रावण भी मारा गया। इसके अतिरिक्त मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने अनेक मर्यादाओं की स्थापना की किन्तु उन्हें भी इस संसार से जाना पड़ा। उन्होंने अनेक युद्धों में विजय पाई फिर भी बिना युद्ध के ही उनकी मृत्यु हो गई।

विशेष –

(i) विभिन्न दृष्टांतों के माध्यमों से आवागमन को अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

(ii) मृत्यु निश्चित है। यह संसार नश्वर है जिसने जन्म लिया है, उसकी मृत्यु अवश्य होगी।

(iii) मृत्यु को सबसे शक्तिशाली बताया है। इसके सामने बड़े–बड़े राजा, दानी और ऋषि भी धराशायी हो जाते हैं।

(iv) 'श्री मर्याद बान्ध के बिना लड़ाई रण मरग्या' के माध्यम से स्पष्ट किया है कि स्वयं भगवान् भी मृत्यु के प्रकोप से नहीं बच सके।

(v) सती बिन्ता, गरुड़, अरुण, कर्ण, विभीषण, कुम्भकर्ण, रावण और राम के दिए गए दृष्टान्त अत्यन्त सटीक और सार्थक हैं।

(vi) लोकभाषा का अत्यन्त सहज रूप है।

(vii) शान्त रस परिपाक है।

(4)

ईश्वर का कर ध्यान लखूँगी, सब रस्त्यां नैदेख सकूंगी।
चलती चलती नहीं थकूंगी पिया जी के साथ मैं।। टेक।।
जहां तक जाएं मेरे पति, वहां तक पहोंचै मेरी गति।
जती सती के गुण को गुणिए, देकर ध्यान प्रेम से सुणिए।
अक्षर अक्षर ले कै चणिए, कहं गण-ज्ञान की बात मैं।।

शब्दार्थ – रस्त्यां=रास्ते, पिया=प्रियतम, पति, पहोंचै=पहुँचे, सुणिए=सुनो, अक्षर=जो कभी नष्ट न हो, ईश्वर, गण–ज्ञान=गुण और ज्ञान।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ सांग सम्राट पं० लखमीचंद जी के सांग 'सत्यवान सावित्री' से ली गई हैं। जिसमें सावित्री ने निरन्तर अपने पति के साथ–साथ चलने की बात कही है।

व्याख्या – सावित्री कहती है कि मैं सदैव ईश्वर का नाम स्मरण करते हुए प्रत्येक रास्ते को ध्यान से देखकर चलूंगी। मैं अपने पति के साथ–साथ चलते हुए कभी भी नहीं थकूँगी। मेरे पति जहाँ–जहाँ तक जाएंगी, मैं भी उनके साथ वहाँ–वहाँ तक पहुंचूंगी। जती–सती के गुणों का सदा ही स्मरण करना चाहिए और अत्यन्त ध्यान एवं प्रेमपूर्वक सुनना चाहिए। सावित्री कहती है कि यह संसार नश्वर है, केवल परमात्मा का नाम ही अक्षर है, अर्थात् कभी समाप्त न होने वाला है। अतः ईश्वर के नाम का स्मरण करके चलना चाहिए। मैं यह गुण और ज्ञान की बात आप सबको बता रही हूँ।

विशेष –

(i) सावित्री निरन्तर अपने पति के साथ चलने की बात कर ही है।

(ii) जती–सती धर्म का पालन करने पर बल दिया गया है।

(iii) ईश्वर के नाम स्मरण का महत्त्व बताते हुए ईश्वर को 'अक्षर' कहा गया है।

(iv) 'लोकभाषा का अत्यंत सरल और सहज रूप है।

(v) अनुप्रास अलंकार है।

(vi) 'चलती–चलती' 'अक्षर–अक्षर' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(5)

प्रभु मीरा बाई थारे प्रेम मैं आनन्द।
है गोबिन्द श्री गोबिन्द आनन्द कन्द है गोविन्द।। टेक।।
वृन्दावन मैं धेनु चरैया, काली देह मैं नाग नथैया।
प्रभु बंशी के वजैया कन्हैया, थारी चाल मन्द-मन्द।।
थारे गुण गावै ध्यावै ऋषि मुनि, जिनकी थारे चरणन मैं धुनि।
तुमनै द्रौपदी की टेर सुणी काट दिए सब फन्द।
मैं थारी कब तल करूँ बढ़ाई, भौमासुर पै करी थी चढ़ाई।
तुमनै देवकी छुड़ाई जो थी कैद के मां बन्द।।
लखमीचंद कहे दास तिहारे, ग्वाल बाल गोकल के सारे।
वो ओरै-धौरै तारे तुम हो बीच के मां चंद।।

शब्दार्थ – थारे–तुम्हारे, आपके, आनन्द कन्द–आनन्द का आधार, गोबिन्द–श्रीकृष्ण, धेनु–गाय, नाग नथैया–नाग को वश में करने वाले, मन्द–मन्द–धीरे–धीरे, टेर–आवाज, पुकार, फन्द–बन्धन, चन्द–चन्द्रमा।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ सांग सम्राट पं० लखमीचंद जी के सांग 'मीराबाई' का एक अंश है। इसमें मीराबाई की कृष्ण के प्रति उनकी अनन्य भक्ति और प्रेम का परिचय मिलता है।

व्याख्या – सांग सम्राट के अनुसार मीरा कहती है कि श्रीकृष्ण ! मुझे आपके प्रेम में अपार आनन्द की अनुभूति होती है। आप समस्त प्रकार के आनन्द का आधार हो। आप वृन्दावन में गायें चराने वाले और कालीदह में कलिया नाग को नाथने वाले हो। तुम्हारी बांसुरी का मधुर स्वर और तुम्हारी मस्त मन्द चाल अत्यन्त मनोहर है। तुम्हारे गुणों को बड़े–बड़े ऋषि और मुनि गाते हैं और तुम्हारे चरणों में ही वे अपना ध्यान लगाते हैं। हे श्रीकृष्ण ! आपने सभा में अपमानित होती द्रौपदी की करुण पुकार सुनी और तुरन्त ही उसके समस्त दुःखों को दूर किया। मैं आपकी कब तक प्रशंसा करूँ अर्थात् आपकी महिमा अपरम्पार है। आपने भौमासुर पर विजय प्राप्त की थी और कंस की कैद में बन्द देवकी को भी मुक्त किया था। लखमीचंद जी कहते हैं कि हे श्रीकृष्ण ! मैं तो आपका दास हूँ। वे गोकुल के सभी ग्वाल–बाल अपने आस–पास तारों के समान लग रहे हैं और उन सबके बीच में चन्द्रमा के समान सुशोभित हो रहे हो।

विशेष –

(i) मीरा का श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम और भक्ति प्रकट की गई है।

(ii) श्रीकृष्ण के रूप बाल रूप, कल्याणकारी एवं ईश्वरीय रूप की व्यंजना हुई है।

(iii) श्रीकृष्ण की महिमा का गुणगान किया गया है।

(iv) 'वो ओरै–धौरै तारे तुम हो बीच के मां चंद' में ग्वाल–बाल रूपी तारों के बीच में श्रीकृष्ण की चन्द्रमा के रूप में की गई कल्पना अत्यंत आकर्षक एवं प्रभावशाली है।

(v) लोकभाषा का अत्यंत सरल और सहज रूप व्यक्त हुआ है।

(vi) भक्ति रस का परिपाक है।

(vii) उपमा अलंकार की सुन्दर योजना है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 लखमीचंद के सांगों की नारी चेतना स्पष्ट कीजिये।

उत्तर – सांग सम्राट लखमीचंद के सांग साधारण जन–जीवन से सम्बन्धित हैं। इन सांगों में रानी के कई रूपों के दर्शन होते हैं। नीर माँ, बहन, बेटी, पत्नी, प्रेमिका और विनाश करने वाली कृत्या के रूप में चित्रित हुई है। प्राचीन काल से ही 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता कहकर नारी को सदा ही आदर की दृष्टि से देखा जाता रहा है। कबीरदास नारी के पतिव्रता रूप पर करोड़ों नदियों को न्योछावर करने के लिए तैयार हैं। इसी प्रकार अन्य कवियों

ने भी नारी के आदर्श रूप की स्थापना करके उसे 'देवी' पद प्रदान किया है। पं० लखमीचंद का साहित्य भी इससे अछूता नहीं है। उन्होंने अपने सांगों में नारी के विभिन्न रूपों की अनूठे ढंग से स्थापना की है। पं० लखमीचंद के सांगों में उभरे नारी चेतना के विभिन्न रूपों में निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत देखा जा सकता है–

1. **दैन्य भाव** – पं० लखमीचंद ने अपने कई सांगों में नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण कर उसके प्रति सहानुभूति व्यक्त की है। उनके सांग 'नल–दमयंती' में राजा नल द्वारा जंगल में दमयन्ती को त्याग दिए जाने से उसकी स्थिति कारुणिक हो जाती है। वह अपने पति नल द्वारा त्यागने से अत्यन्त दुःखी होकर जंगल में इधर–उधर भटकने पर विवश हो जाती है। वह जंगल में अनेक विपत्तियों का सामना करते हुए भी अपने पति के विरुद्ध कुछ नहीं कहती। वह इतनी निराश हो उठती है कि उसे अब अपने जीवन में चारों ओर केवल अन्धकार दिखाई देता है। वह जंगल के जीव–जन्तुओं, पेड़ों से नल का पता पूछती फिरती है–

इस बणखण्ड मैं दीखै से मनै दिन मैं घोर अंधेरा।
सारदूल जंगल के राजा कतै पति मिल्या हो मेरा।
तेरे बिना ना मेरी दहशत भागै, पिय मेरे इस मौकै मत त्यागै।
मनैं पिता के घरपै देवत्यां आगै पल्ला पकड्या तेरा।

दमयन्ती राजा को जंगल में इधर–उधर ढूंढती है, परन्तु वह उसे नहीं मिलता। अन्ततः वह ईश्वर से अपने परिवार में पुनः उजाला करने की प्रार्थना करती है। इसी प्रकार एक अन्य सांग में बेटे रोहतास की मृत्यु पर विलाप करती उसकी माता मदनावत का कारुणिक दृश्य प्रस्तुत हुआ है। वह अपने पुत्र को साँप द्वारा काटे जाने की बात सुनकर करुणापूर्ण विलाप करने लगती है। वह दुःख से विह्वल हो उठती है। हृदयस्पर्धी रूप दर्शनीय है–

और किसे का दोष नहीं पर कर्म लिखे दुःख रोवण चाल्ली।
इन कांसी के बांगां के महां ल्यास कवंर की टोह्वण चाल्ली।
सुण बेटे के नाग लड़े की, जिन्दगानी नै खोवण चाल्ली।
रल्या रेत में टूट के मोती, ठा फिर लड़ मैं चाल्ली।।

2. **पतिव्रता रूप** – पं० लखमीचंद ने नारी के पतिव्रत रूप की प्रशंसा की है। 'सत्यवान सावित्री' सांग में जब यमराज सत्यवान के प्राण लेकर चलता है तो वह उसके पीछे–पीछे चलती है और अपने दृढ़ संकल्प तथा पतिव्रत धर्म के कारण अपने पति के प्राणों की रक्षा करती है। यमराज उसके पतिव्रत धर्म से प्रभावित होकर ही उसके पति के प्राणों को लौटाने पर मजबूर हो जाता है। सावित्री अपने पति के पीछे–पीछे चलने की बात दोहराते हुए कहती है–

ईश्वर का कर ध्यान लखूँगी, सब रस्त्यां नैदेख सकूंगी।
चलती-फिरती नहीं थकूंगी पिया जी के साथ मैं।।
जहां तक जाएं मेरे पति, वहां तक पहोंचै मेरी गति।

सांग सम्राट पं० लखमीचंद के अनुसार सच्ची पतिव्रता नारी सदैव प्रशंसनीय है। वह अपने पति के सुख मे ही सुख और दुःख में ही दुःख मानती है। वह पति के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने के लिए सदैव तत्पर रहती है। अपने सांग 'सावित्री' में वे पतिव्रता नारी के विषय में कहते हैं–

पतिव्रता की स्तुति लखमीचंद ने हित चित्त से गाई।
एक कभी दो च्यार कभी हर बार सती होती आई।
नहीं सती जो करे पति की रात-दिन ताबेदारी।
धर्म-पुत्र कहे नहीं दुःखी जिसी दुःखी त्रिया म्हारी।।

3. **विद्रोही रूप** –पं० लखमीचंद ने नारी के विद्रोही रूप का चित्रण अपने सांग 'चीर पर्व' में किया है। जब दुःशासन भरी सभा में अपमानित करने के लिए द्रौपदी को महल से लेकर जाता है तो उसका विद्रोह जाग उठता है। पहले वह गांधारी से अपनी सहायता की प्रार्थना करती है किन्तु किसी के द्वारा भी मदद न किए जाने पर क्रोधित हो उठती है। वह कौरवों को उनके विनाश का अभिशाप दे डालती है। वह गांधारी से स्पष्ट कहती है कि यदि आज उसका अपमान हुआ तो हस्तिनापुर में लाशों के ढेर लग जाएंगे और यहां चील–कौए मंडराएंगे। वह भावी भयंकर नरसंहार

की भविष्यवाणी कर देती है। वह गांधारी को एक नारी होने के नाते उसका पक्ष लेने की बात कहती है–

तूँहै कुछ ले ले तरस बहू का, मेरी रही ना पार बसा।
ऊड़ै महफिल के लोग हंसैंगे, फेर आपस मैं बांस खसैंगे।
हस्तनापुर मैं काग बसैंगे, लोभ नै दीन्यां नाश करा।।
आज मेरे हुई कर्म की हाणी तुमनै कोन्या बात पिछाणी।

4. ईश-भक्ति – पं० लखमीचंद के 'मीराबाई' सांग में मीरा के ईश्वर के प्रेम में डूबे होने का चित्रण मिलता है। मीराबाई अपने श्रीकृष्ण के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित नारी के रूप में चित्रित हुई है। वह श्रीकृष्ण की ईश्वर के रूप में भक्ति करती है और उनकी भक्ति में ही आनन्द का अनुभव करती है। वह श्रीकृष्ण के वंशी बजाने वाले और मस्त–मस्त चलने वाले रूप पर मोहित है। वह श्रीकृष्ण को सबका कल्याण करने वाले और ब्रह्म के रूप में देखती है। इस दृष्टि से 'मीराबाई' सांग से कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य हैं–

वृन्दावन मैं धेनु चरैया, काली देह मैं नाग नथैया।
प्रभु बंशी के बजैया कन्हैया, थारी चाल मन्द-मन्द।।
थारे गुण गावै ध्यावै ऋषि मुनि, जिनकी थारे चरणन मैं धुनि।
तुमनै द्रौपदी की टेर सुणी काट दिए सब फन्द।

5. मातृ-रूप – पं० लखमीचंद के सांगों में नारी के मातृ रूप के दर्शन भी होते हैं। माँ अपनी संतान को अण्डे की तरह सेने की बात कहती है और अपने पति से अपने पुत्र की चिंता न करने से आक्रोश प्रकट करती है। वह कहती है–

तनै ना दया करी जेठे की, मैं निर्भाग कर्म हेठे की।
ना तनै खबर लई बेटे की मैं सेऊँ अंडे की तरहा।।

एक अन्य स्थान पर माँ अपनी पुत्री के विवाह के लिए दिन–रात चिन्ता करती है। विवाह होने पर वह अपनी पुत्री के सुखी दाम्पत्य जीवन की कामना करती है। 'सेठ ताराचंद' सांग की निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

बेटी मेरी आत्मा कहती फूलो-फलो सुहाग तेरा।
लेण-देण मैं कसर करूँ ना आगे बेटी भाग तेरा।।

वस्तुतः लखमीचंद के सांगों में नारी–चेतना को विभिन्न रूपों में मुखरित होते देखा जा सकता है। इस सांगों में नारी का कहीं पतिव्रत रूप तो कहीं उसका विद्रोही रूप दिखाई देता है। नारी चेतना के रूपों की विभिन्नता की दृष्टि से लखमीचंद के सांगों का विशेष महत्त्व है।

प्रश्न 2. लखमीचंद-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – किसी भी संस्कृति के प्रचार–प्रसार की माध्यम उसकी भाषा हुआ करती है। भाषा के द्वारा ही भावों की अभिव्यक्ति होती है। यदि भाषा जनसामान्य से जुड़ी हो तो वह पूरे समाज को प्रभावित करने में सक्षम होती है। जनसाधारण अपनी ही भाषा में अपनी ही अनुभूतियों को जब साकार रूप लेता देखता है तो भावविभोर हो उठता है। उसे वह साहित्य आत्मीय सा लगता है जिसमें उसकी अपनी भाषा का प्रयोग हुआ हो। पं० लखमीचंद की भाषा भी कुछ ऐसी ही भाषा थी। उनके साहित्य में प्रयुक्त उनकी भाषा को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत देखा जा सकता है–

1. **लोकभाषा** – पं० लखमीचंद के साहित्य में सामान्य लोकभाष का प्रयोग हुआ है। उनकी भाषा हरियाणा की मिट्टी का सौंदर्य लेकर निर्मित हुई है। इनकी भाषा जनसाधारण तक अपनी बात पहुंचाने का माध्यम होने के कारण अत्यंत सरल, सहज और स्वाभाविक है। साधारण जनमानस जब अपने ही रीति–रिवाजों, रहन–सहन, देवी–देवताओं, वेशभूषा, परम्पराओं, संस्कारों से जुड़ी भाषा को देखता है उसका मन झूम उठता है। यही कारण है कि लखमीचंद की भाषा अत्यंत सशक्त और प्रभावशाली बन गई है। इनकी भाषा में लाक्षणिकता, व्यंजकता और ऐसी प्रवाहमयता है जिससे वह पाठकों और दर्शकों को अपने साथ बहा ले जाती है। इन्होंने हरियाणवी लोक विश्वासों, सामाजिक मनोविज्ञान तथा लोक जीवन से जुड़ी शब्दावली का प्रयोग किया है जिससे समाज का प्रत्येक वर्ग इनकी भाषा से प्रभावित हुआ

है। लखमीचंद की भाषा में आए छन्द, अलंकार, बिम्ब, प्रतीक अपनी विशिष्टता के कारण विशेष महत्त्व रखते हैं। इनकी भाषा में प्रयुक्त छन्द–विधान, अलंकार विधान, प्रतीक तथा बिम्ब विधान को निम्नलिखित ढंग से देखा जा सकता है–

2. छंद विधान – पं० लखमीचंद ने मुख्य रूप से चौकलिया चौकलिमा, रागनी, पहरेतवील, भॅरीव, गजल, कंठबाली, दोहे, सोरठे, ताटंक छंद के साथ–साथ कुछ नए छंदों का भी प्रयोग किया है। कनकी 'डोली' बहुत प्रसिद्ध है। "डोली' के विषय में कहा गया है–

लखमीचंद ने मार गेरे, जब लक्कड़हारा गावण लाग्या
मरगे मरगे दादा, भर भर डोली श्रावण लाग्या
बहुत सी दुनिया पीछे रहगी जब नए-नए सांग बनावण लाग्या
लखमीचंद का भाई चंद था काढ़ बहैल सी हाल्या करता।

पं० लखमीचंद ने 'रागिनी' में मात्रिक छन्दों का ही अधिकतर प्रयोग किया है। इनमें एक चरण एक चरण के साथ अलग मात्रा–प्रसार के चरणों के प्रयोग से विषम छंदों को अधिकता है। अनेक बार छंद में संगीत को लय के अनुरूप बनाने के लिए उसके शास्त्रीय नियमों को छोड़ दिया गया है। अतः लखमीचंद के छंदों को स्वतंत्र छंद ही कहा जाएगा। उनकी चौकलिया रागनियों में ताटंक और सार छंद का प्रयोग हुआ है। ताटंक छंद का उदाहरण देखिए–

इकलौता छः साल का लड़का। इसने गिरवी रख आओ
मनसा सेठ बसै हापड़ में उसके सुपुरद कर आओ
दो सौ रुपए मांग लिए जाकै। झट पल्ले धाल्लेगा।
दयावान पुरुष आदमी। नहीं आज्ञा को टालैगा।

इस प्रकार लखमीचंद का छन्द–विधन सशक्त है।

3. अलंकार-विधान -- पं० लखमीचंद के सांगों में अलंकारों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग मिलता है। यद्यपि उनका उद्देश्य अपने सांगों में अलंकारों की सायास भर्ती करना नहीं था, फिर भी भावों की सशक्त अभिव्यक्ति के कारण अनेक अलंकार अनायास ही उनके साथ जुड़ गए हैं। वे अलंकारों को तड़क–भड़क से दूर थे। इनके अलंकार सरल और सहज हैं। उदाहरणस्परूप उपमा अलंकार की निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

लखमीचंद कहे दान तिहरि, ग्वाल बाल गोकल के सारे।
वो ओरै-धोरै तारे तुम हो बीच के मां चंद।।

यहां ग्वाल–बालों के बीच में बैठे श्रीकृष्ण की तुलना तारों के बीच खिले चांद से की गई है। पं० लखमीचंद की उपमाएं बेजोड़ थीं। उन्हें उपमा अलंकार के सार्थक और पूर्ण प्रयोग के कारण यदि हरियाणे का कालिदास भी कहा जाए तो अतिश्योक्ति न होगी। उनके द्वारा मुँह की तुलना बटुवे से करते हुए यह कहना "मन्नै बोल लागै प्यारी तेरे मुँह बटवा से की" अत्यंत सार्थक है। मुंह के लिए बटुए का उपमान देना प्राचीनकाल के बटुओं की याद दिलाता है। पं० लखमीचंद द्वारा प्रयुक्त अन्य अलंकारों में अनुप्रास, यमक, श्लेष, अतिशयोक्ति, विरोधाभास, भाषासम, दृष्टान्त, संदेह आदि हैं। दृष्टांत अलंकार का एक उदाहरण देखिए–

भिक्षुक जाण दिया ना खाली करकै दान करण मरग्ये।
बहुत से राजा इस पृथ्वी पै अपणा बान्ध परण मरग्ये।
भक्ति विभीषण कुम्भकर्ण और लंका का रावण मरग्या।
श्री रामचन्द्र मर्याद बान्ध के बिना लड़ाई रण मरग्या।।

4. बिम्ब-योजना – 'बिम्ब' वह शब्द चित्र है जिसके माध्यम से कवि अपने काव्य में प्रयुक्त किसी चरित्र अथवा वर्ण्य विषय का चित्र सा प्रस्तुत करता है। इसमें कवि का जीवन अनुभव, रुचिया, विचारों के आसंग, मानसिक रुझान, विश्वास निष्ठाएं आदि अभिव्यक्त होती हैं। बिम्ब काव्य में भावों की अभिव्यंजना के साथ–साथ काव्य को सुंदर रूप भी प्रदान करे हैं। लखमीचंद के सांगों में बिम्ब–विधान प्रचूर मात्रा में उपलब्ध होता है। उदाहरणस्परूप–

कह लखमीचन्द बणैगी कैसे, राणी रुधन करण लगी ऐसे।

जैसे अंडा ठा लिया काग ने कोयल करती शोर।।

एक अन्य स्थान पर लखमीचंद एक नए प्रकार के बिम्ब की सृष्टि करते हुए कहते हैं–

लखमीचंद कर्म की छींट, या जिन्दगी रोटी पर का टींट।

5. प्रतीक-योजना – 'प्रतीक' का सामान्य अर्थ किसी ऐसी वस्तु या भाव के लिए किसी अन्य वस्तु या भाव की स्थापना करना होता है। काव्य में जब कवि स्वानुभूति को सामान्य शब्दावली से व्यक्त नहीं कर पाता तो वह सरल और बोधगम्य बनाने के लिए प्रतीकों का सहारा लेता है। पं० लखमीचंद के सांगों में भरपूर मात्रा में मिलते हैं। उन्होंने प्रतीकों में पिरोकर भावों को ऐसे मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है कि श्रोता उनकी प्रतीक–योजना पर वाह–वाह कर उठते हैं। उदाहरणस्वरूप उनके पूरणमल सांग की निम्नलिखित पंक्तियां देखिए–

(i) पूरणमल तू लटका ले ले ले इस जिन्दगी थोड़ी का।
कसी कसाई खड़ी ठाण पै हो चढ़निया घोड़ी का।

(ii) सेब संतरे अंगूर दाख क्यूं न सुआ बणकै खाता।
मैं पल्ला पसारूँ भीख घालदे मैं भिक्षुक तू दाता।।

सांग सम्राट पं० लखमीचंद की भाषा लोकभाषा होते हुए भी समाज के सभी वर्गों को अपने साथ जोड़ने मे सक्षम है। उनकी सरल सहज वाणी को छन्द, अलंकार, प्रतीत तथा बिम्बों ने उसे ऐसा रूप दिया है कि वह एक रमणी की भांति सबसे हृदय को आह्लादित करने वाली बन गई है। उनकी भाषा अपनी भावाभिव्यक्ति में पूर्ण रूप से सक्षम एवं बेजोड़ है।

प्रश्न 3 पं० लखमीचंद के साहित्य की नीति-योजना की विवेचना कीजिए।

उत्तर – सांग सम्राट पं० लखमीचंद का साहित्य सामान्य ज्ञान से जुड़ा ऐसा साहित्य है जो निरंतर लोगों की प्रेरणा और उन्हें जागरूक करने का स्रोत रहा है। उन्होंने अपने सांगों के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक विषयों पर चर्चा करने के साथ–साथ नीतिपरक साहित्य की भी रचना की। उनके नीतिपरक दोहे आज भी जनमानस में प्रचलित हैं और निरंतर समाज को एक नई दिशा की ओर ले जा रहे हैं। उनके नीति–कथन आज हरियाणा के ग्राम–जीवन के मार्गदर्शक, धैर्यदाता, शिक्षक, सहचर और बंधु बन गए हैं। इनके इन दोहों में उनकी सहज अनुभूति स्पष्ट झलकती है तथा इनके नीति–काव्य में संवेदनात्मक उष्मा भी पर्याप्त मात्रा में है। उनके इन दोहों में लोक विश्वासों और परम्पराओं की गहरी छाप होने के साथ–साथ हरियाणा के संत साहित्य तथा मध्ययुगीन संत–काव्य का प्रभाव भी है। उदाहरणस्वरूप अन्य संतों के समान लखमीचंद भी मन पर नियंत्रण की बात निम्नलिखितदोहे में कह रहे हैं–

मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक।
यू डोब्बै मझधार में, जिन वली लगे ना टेक।।

इस दोहे के माध्यम से उन्होंने स्पष्ट किया है कि मन की चंचलता मनुष्य को अनेक कठिनाइयों में डाल देती है। अतः मन का नियंत्रण में होन अति आवश्यक है।

1. मर्यादा – पं० लखमीचंद ने अपने दोहों में संतों के प्रति सम्मान भाव भी व्यक्त किया है। इसके साथ–साथ उन्होंने परनारी के साथ सबंध बनाने वालों को बहुत बुरा कहा है। उनमा मत है कि कभी भी समाज विरुद्ध आचरण नही करना चाहिए। मर्यादाओं को तोड़ने वाले और संतों की निंदा करने वाले व्यक्ति की बंजर भूमि के समान निरर्थक बताते हुए पं० लखमीचंद कहते हैं–

संता की निंदा करे, परनारी से हेत।
वो नर ऐसे जाएंगे, ज्यूं रण रेह का खेत।।

2. भक्ति – पं० लखमीचंद मनुष्य को ईश्वर का भजन करने की प्रेरणा देते हैं। उनके अनुसार इस भौतिक शरीर की सार्थकता ईश्वर का भजन करने में है। धर्म से धन की प्राप्ति होती है और राम भजन से मुक्ति को प्राप्त किया जाता है। वे समस्त प्राणियों को संदेश देते हैं–

धन चाहवै तो धरम कर, मुक्ती तैरह राम।
हाड मॉस का तुतला, आवैगा किस काम।।

3. ब्रह्म-ज्ञान – पं० लखमीचंद के अनुसार इस संसार में केवल ब्रह्म ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। उसी के द्वारा से लोभ, मोह, काम, क्रोध आदि बुराइयों को दूर किया जा सकता है। ब्रह्म ज्ञान के सामने बाकी सभी ज्ञान व्यर्थ हैं और तुच्छ हैं। उनका मत है कि जिस प्रकार तोप का गोला शत्रुओं को मारकर मैदान साफ कर देता है, उसी प्रकार ब्रह्म ज्ञान भी हमारे लिए समस्त विकारों को दूर कर देता है–

और ज्ञान सब ज्ञानड़ी, ब्रह्म ज्ञान सी ज्ञान।
जैसे गोला तोप का, करता साफ मदान।

4. व्यवहार – पं० लखमीचंद का अनुभव संसार बहुत व्यापक था। उनके अपने जीवन के अनुभवों को उनके नीतिपरक दोहों में देखा जा सकता है। सामान्य लोक में प्रचलित अनेक मार्मिक प्रसंगों को उन्होंने अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। उन्होंने मानव–जीवन के चार प्रमुख दुःखों का वर्णन करते हुए कहा है कि जन्मभूमि का छूटना, भ्राता, पत्नी तथा पुत्र की मृत्यु जैसे दुःख इस संसार के सबसे बड़े दुःख हैं–

भीम छुटण भैया मरण, तीजै घर की नार।
पुत्र-बिछोड़ा बाप से, ये दारुण दुःख अपार।।

5. विश्वास – पं० लखमीचंद आस्तिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। सामान्य तौर पर साधारण जनमानस का भी ईश्वर में गहरा विश्वास देखने को मिलता है। पं० लखमीचंद ने भगवद् भक्ति तथा नाम स्मरण पर विशेष बल दिया है। वह ईश्वर को ही 'सच्चा' और 'मालिक' कहते हैं। उनका मत है कि ईश्वर ही गिरते हुए व्यक्ति को थाम सकता है और वही इस संसार रूपी सागर से हमारा बेड़ा पार कर सकता है।

हर का प्यारा नाम है समस्या कर हर बार।
खटका फिर किस बात का, बेड़ा हो ज्या पार।

इसी प्रकार वे ईश्वर के नाम को ही सच्चा कहते हैं और उसे ही अपना सबसे बड़ा रक्षक मानते हैं–

खैर ज्मान की चाहता, ले माल्यक का नाम।
सच्चा उसका नाम है, वे गिरते नै थाम।।

6. सहजता – पं० लखमीचंद का मानना है कि इस संसार में आवागमन से मुक्ति उसके सत कर्म ही उसे दिला सकते हैं। यदि मनुष्य इस संसार में दया और धर्म के बिना जीवन–यापन करता है तो उसका जीवन बेकार है। दया और धर्म ही मनुष्य का कल्याण करने वाले हैं। वे मानव–मात्र को उपदेशात्मक स्वर में कहते हैं–

दया धरम बिन जगत में मनुख–जन्म बेकार।
ये ही सभी जीव के, कर दे बेड़ा पार।।

पं० लखमीचंद ने अपने नीतिपरक दोहों के माध्यम से समाज को नैतिकता के पथ पर अग्रसर होने की ओर प्रेरित किया। उन्होंने मनुष्य को एक शिक्षक की भांति नीति का पाठ पढ़ाने का कार्य किया। उनका यह प्रयास एकदम मौलिक था। उन्होंने जिस प्रकार सामान्य जनमानस को अपने दोहों के माध्यम से जागरूक किया, वह अत्यंत प्रभावशाली एवं प्रशंसनीय है। नीति योजना इनके सांगों के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

प्रश्न 2 लखमीचंद की गुरु-भावना की विवेचना कीजिए।

उत्तर – हरियाणवी लोकोक्ति 'निगुरे को ज्ञान कहां' का अर्थ है कि जिस व्यक्ति ने गुरु धारण न किया हो उसे ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। वैसे भी 'गु' का अर्थ अंधकार होता है और 'रु' क का अर्थ प्रकाश होता है। इस प्रकार जो अन्धकार को दूर करके प्रकाश की ओर ले जाता है, उसे गुरु कहाजाता है। प्रायः सभी संतों ने गुरु के महत्त्व पर प्रकाश डाला है। कबीर ने तो 'बलिहारी गुरु आपणो, जिन गोबिन्द दियो मिलाय' कहकर गुरु को ईश्वर से भी बड़ा माना है। गुरु के प्रति अगाध विश्वास और निष्ठा रखने से शिष्य का चौतरफा कल्याण होता है। भारतीय समाज एवं साहित्य में सदा से ही गुरु की महिमा का गुणगान प्रगाढ़ आस्था एवं निष्ठासे किया जाता रहा है। भारतीय समाज का अपने गुरु के प्रति अत्यधिक विश्वास सर्वथा अनुकरणीय होने के साथ–साथ एक आदर्श भी है।

1. गुरु भावना – पं० लखमीचंद के गुरु का नाम मानसिंह था। उनकी अपने गुरु के प्रति समर्पण भावना दृष्टव्य है। जब वे भावविभोर होकर अपने गुरु के प्रति अगाध निष्ठा और आस्था व्यक्ति करते हैं तो गुरु–भक्ति का एक अनूठा

आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

2. **गुण-गान** – लखमीचंद के गुरु मानसिंह अन्धे थे और अपने शिष्यों की मदद से घोड़े पर चढ़कर जगह–जगह भजन गाया करते थे। लखमीचंद ने एक बार उनसे प्रभावित होकर उन्हें गुरु धारण किया तो आजीवन उनके शिष्य बने रहे । उनके व्यक्तित्व की गहरी छाप लखमीचंद पर देखी जा सकती है। उनका दृढ़ विश्वास था कि गुरु की सेवा से ही इस संसार रूपी सागर से पार हुआ जा सकता है। उनके अनुसार "मानसिंह की सेवा कर कै पार उतरिये।" वे मोक्ष प्राप्त करने के लिए भी गुरु को ही आधार मानते हैं–'वह लखमीचंद गुरु की सेवा कर मुक्ति मारग टोह गया।' पं० लखमीचंद की गुरु के प्रति आस्था और श्रद्धा उनके द्वारा की गई गुरु की सेवा से स्पष्ट झलकती है–

लखमीचंद गुरु चरण दबावै
सतगुर जी को शीश झुकावै
हरि कीर्तन हरि गुण गा कै
कष्ट को हरण लगी मीरा जी।

3. **भक्ति** – पं० लखमीचंद ने अपने सांग 'मीराबाई' में मीरा के माध्यम से उन्होंने कृष्ण भक्ति के साथ–साथ अपने आप को हीन प्रदर्शित करते हुए अपने गुरु से पापों की क्षमा याचना भी की है–

सुरंग अंतरिक्ष नरक अंधेरा छाया धूप पति जी।
मानसिंह का दास म्हारा सेवक बेकूप पति जी।।
लखमीचंद की टेर सुणों बड़े–बड़े पापी तारे।
दया करो मुझ दासी पै तुम दूध पियो पिया प्यारे।

संग 'पदमावत्' में लखमीचंद गुरु की चरण रज को अपने माथे पर लगाने को गौरव कहते हैं–'गुरु मानसिंह के चरण को धरी मस्तक धूल।' उनका अटूट विश्वास है कि जो गुरु की सेवा करता है उसका बेड़ा अवश्य पार होता है–

जो तावेदार रहे सतगुर का,
उसका बेड़ा पार हो सै।

4. **कृपा पात्र** – पं० लखमीचंद अपनी समस्त विद्या और शिक्षा का श्रेय अपने गुरु मानसिंह को देते हैं। उनका मत है कि गुरु ने ही उन्हें धर्म और कर्म की राह दिखाई। इस राह को जिसने गुरु के अनुसार चलकर पाना चाहा, उसने पाया। गुरु की कृपा से ही उन्होंने ज्ञान प्राप्त कियां यदि गुरु न होते तो वे मूर्ख ही रहते। उनके अनुसार–

मानसिंह गुरु बतागे सब धर्म कर्म की राही।
भई लखमीचंद जिन्हें समझ के टोही, उन बंद्यां नै पाई।।
लखमीचंद ज्ञान की बात।
गुरु जी पै सीखा कर दिन–रात।।

5. **विनीत भाव** – लखमीचंद ने अपने गुरु के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के साथ अपने गुरु को ज्ञान देने की याचना भी की है। वे अत्यन्त विनीत भाव से अपने गुरु को ज्ञान का दान देने की प्रार्थना करते हैं–

लखमीचंद ने सहज समझा दियो।
गुरु जी बूटी ज्ञान की प्या दियो।।

लखमीचंद के समग्र साहित्य में गुरु भावना स्पष्ट झलकती है। उनके साहित्य में गुरु से संबंधित अनेक दोहे, पंक्तियां, यत्र–तत्र बिखरे पड़े हैं। उनका गुरु के प्रति अटूट विश्वास एवं श्रद्धा अवलोकनीय एवं प्रशंसनीय है। पं० लखमीचंद की गुरु के प्रति समर्पण भावना भारतीय संस्कृति के 'गुरु साक्षात् परमेश्वर' पंक्ति की पुनरावृत्ति करती प्रतीत होती है। इनके काव्य में गुरु भक्ति को विशेष महत्त्व दिया गया है।

5. माँगेराम

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा के उपासकों में माँगराम का नाम आदर से लिया जाता है। माँगेराम का जन्म सोनीपत जिले के सुसाणा गाँव में सन् 1905 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम अमर सिंह था। इनका अधिकांश समय सोनीपत के पाणची गाँव में व्यतीत हुआ था। माँगेराम ड्राइवर थे, परंतु जहाँ भी पंडित लखमीचंद के सांग होते थे ये वहाँ अवश्य ही पहुँच जाते थे। उनसे प्रेरणा लेकर इन्होंने ड्राइवरी छोड़ दी और अपनी सांग मंडली बना ली। उन्होंने सांगों में स्त्री पात्रों के लहंगे के स्थान पर 'सिलवार' का प्रचलन आरंभ किया था। माँगेराम की मृत्यु के संबंध में प्रसिद्ध है कि इन्होंने गंगा जी के किनारे प्राण त्यागने और गंगा जी में समा जाने की बात अपनी एक कविता में कही थी। 16 नवम्बर, 1967 ई० को ये गढ़गंगा स्नान के लिए गए थे कि वहीं उन्होंने सहसा अपने प्राण त्याग दिए और अपनी कल्पना को साकार रूप दे दिया।

रचनाएँ – हरियाणवी सांग परंपरा में माँगेराम का विशिष्ट स्थान है। इनके सांगों में विषय की विविधता प्राप्त होती है। इनकी प्रमुख रचनाएँ जयमल–फत्ता, कृष्ण जन्म, नल–दमयंती, शकुंतला–दुष्यंत, भरथरी, राजा अम्ब, ध्रुव भक्त, अमरसिंह राठौर, छैल बाला, अजीतसिंह राजबाला, खांडेराव परी आदि हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ -

माँगेराम के साहित्य की रेखांकन योग्य प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. **विषय-वैविध्य** – माँगेराम के अनेक विषयों में सांगों की रचना की है। जिसमें पौराणिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक समस्याओं से युक्त सांग प्रमुख हैं। इन्होंने राष्ट्रीय चेतना से युक्त सांगों की रचना की है जिनमें भारतीय संस्कृति पर अंग्रेजों के प्रभाव की कवि के तीव्र स्वर से आलोचना की है।

2. **प्रबंधात्मकता** – माँगेराम के काव्य में प्रबन्धात्मक का समुचित रूप से निर्वाह हुआ है। कवि ने कथा प्रवाह बनाये रखा है। शकुंतला–दुष्यंत सांग में प्रबंधात्मकता का सफलता से निर्वहण हुआ है। कथा के प्रारंभ में शकुंतला और दुष्यंत की भेंट होती है। परस्पर आकर्षित होकर दोनों गंधर्व विवाह कर लेते हैं। दुष्यंत शकुंतला को अपनी अंगूठी देकर यह कह कर हस्तिनापुर चला जाता है कि वह शीघ्र आयेगा। शकुंतला सदा दुष्यंत की स्मृति में खोई रहती है और आश्रम में आए दुर्वासा ऋषि की अवहेलना कर देती है। दुर्वासा ऋषि अपमानित होकर शकुंतला को श्राप देते हैं और दुष्यंत उसे भूल जाता है। कई वर्ष पश्चात् शकुंतला के पुत्र भरत को दुष्यंत हस्तिनापुर ले जाकर राजा बनाता है। इसी प्रकार से प्रबंधात्मकता का निर्वाह कवि की अन्य रचनाओं में भी प्राप्त होता है।

3. **सामाजिकता** – कवि ने अपनी रचनाओं के माध्यम से तत्कालीन समाज में राष्ट्रीय चेतना का स्वर मुखरित किया था तथा भारतीय संस्कृति पर अंग्रेजी सभ्यता के प्रभाव की आलोचना की थी। 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में कवि ने समाज में नारी की स्थिति स्पष्ट करते हुए लिखा है–

'बेटी बहू ठिकाणै अच्छी बिना ठिकाणै कुछ ना।
हस्तनापुर भेज दयो इसनै धरा विराणै कुछ ना।'

कन्या के जीवन को किसी न किसी के संरक्षण में रहना पड़ता है। इस तथ्य की ओर कवि ने इन पंक्तियों में संकेत किया है–

'बचपन गया मेरा खेल में। रहणा ऋषि की गेल में
दीपक जलै ज्यूं तेल मैं। भौंरा फिरै जैसे बेल में।'

4. **भावाभिव्यक्ति** – मॉगेराम के काव्य में मानव मनोविज्ञान की गहरी पकड़ दिखाई देती है। दुष्यंत को जंगल मे अकेला ही विचरण करते देख शकुंतला उसकी चिंता करने लगती है और कहती है–

'यू मेरा जी तेरी ज्या में। ये सोचै नै अपने ध्यान में।

तू तै एकला फिरै वियावान में। आड़े फिरै भगेरे शेर तेरी हद छाती।'

शकुंतला की दुष्यंत की इस प्रकार चिंता करना नारी मन की सहज प्रवृत्ति की परिचायक है। कण्व ऋषि बालब्रह्मचारी हैं फिर शकुंतला उनकी पुत्री कैसे हुई ? दुष्यंत के मन की यह दुविधा भी तर्क–संगत है। इसलिए वह शकुंतला से पूछता है–

'कण्व ऋषि तै बाल जाति सै तू क्यूकर हुई भला।

रै मनैं-यूं बता दे तू किस नै जन्मी शकुन्तला।'

5. **भाषा-शैली** – मॉगेराम ने अपने काव्य में तत्कालीन लोक प्रचलित हरियाणवी भाषा का प्रयोग किया है। जैसे–

'वो तै कण्ड ऋषि मेरा बाप साफ़ बतलाती।'

कवि ने तत्सम–नीर, ऋषि, दीपक, गीत आदि शब्दों के साथ कई उर्दू के दुनिया, ताज, सर्द, नाज आदि शब्दो का भी प्रयोग किया है। इन्होंने लोकमंच को सांग शैली को अपनाया है जिसमे पात्रों के संवादों के बीच में वार्ता भी दी गई है। जैसे–शकुंतला की इस सारी कथा को सुनकर राजा दुष्यंत को यकीन हो जाता है कि शकुंतला कण्व ऋषि की पुत्री नहीं बल्कि विश्वामित्र की है। विश्वामित्र राजा गादी के पुत्र थे और क्षत्री थे। अतः राजा दुष्यंत शकुंतला से शादी करने का प्रस्ताव रखते हैं तो शकुंतला राजा से तीन वचन लेती है और क्या कहती है–"इसके बाद शकुंतला का सांग में गीत प्रारम्भ हो जाता है–'या कथा पुराणी कण्व ऋषि नै बताई।'

'शकुंतला–दुष्यंत' सांग के सभी गीत विभिन्न छंदों तथा राग–रागनियों पर आधारित होने के कारण गय हैं। कवि ने यथास्थान मुहावरों का सटीक प्रयोग किया है। जैसे–'बेरा ना के लिख राख्या मेरी इस किस्मत फूटी मैं।' मुहावरों के प्रयोग से इन की भाषा में अर्थ गांभीर्य तथा कथन में चमत्कार उत्पन्न हो गया है। कवि ने अनुप्रास, उपमा, पुनरुक्तिप्रकाश, पदमैत्री अलंकारों के सुंदर प्रयोग किए हैं।

निश्चय ही मॉगे राम काव्य हरियाणवी सांग परंपरा में अपनी अलग पहचान रखता है तथा उसमें परंपरागत विषयों के साथ–साथ तत्कालीन समस्याओं का भी सहज रूप से निरूपण किया गया है।

कविता-सार

चर्चित कवि मॉगे राम द्वारा रचित 'शकुंतला–दुष्यंत' प्रसंग में कवि ने सुप्रसिद्ध शकुंतला और दुष्यंत की पौराणिक प्रेम कथा को प्रस्तुत किया है। दुष्यंत जंगल में भटकते हुए शकुंतला के आश्रम के द्वारा को खटखटाता है। वह बहुत प्यासा है। मानवं मात्र की सेवा करने का धर्म समझकर शकुंतला आश्रम का द्वार खोल देती है तथा दुष्यंत को पानी पिला देती है। दुष्यंत शकुंतला के रूप सौंदर्य पर मुग्ध होकर उस का परिचय पूछता है और यह जानकर कि वह ऋषि कन्या न होकर विश्वामित्र और मेनका की पुत्री है। उससे गंधर्व विवाह कर लेता है और उसे अपनी अंगूठी देकर तथा फिर आने का वादा कर हस्तिनापुर चला जाता है। शकुंतला दुष्यंत की स्मृतियों में इतना डूब जाती है कि उसे आश्रम में दुर्वासा ऋषि के आने का पता ही नहीं चलता। वे इसे अपना अपमान समझकर उसे श्राप देकर उसके भावी जीवन को कष्टमय बताते हैं। भरत के जन्म के बाद जब शकुंतला पुत्र को लेकर दुष्यंत के पास जाती है तो वह उसे पहचानता नहीं है। इस प्रकार शकुंतला को दिया हुआ दुर्वासा ऋषि का श्राप सत्य हो जाता है। कण्व ऋषि को विश्वास है कि भरत अवश्य ही एकदिन चक्रवर्ती सम्राट बनेगा क्योंकि उसकी कुंडली में यही लिखा है।

व्याख्या

(1)

जवाब शकुंतला का दुष्यंत से

वो तै कण्व ऋषि मेरा बाप साफ़ बतलाती।

२४ घण्टे गीत हरि के गाती।
जंगल में फल फूल तोड़ कै खाती। टेक।।
मैं कातूं बुणं दिन रात जी। मैं ढाहूं चिणूं दिन रात जी।
मैं मंत्र गिणुं दिन रात जी। मैं शास्त्र सुणुं दिन रात जी।
आड़ै ऋषि तपै दिन रात लगै झल ताती।
२४ घण्टे गीत हरि के गाती।। १।।
बचपन गया मेरा खेल में। रहणा ऋषि की गेल में।
दीपक जलै ज्यू तेल मैं। भौरा फिरै जेसे बेल में।
आड़ै बहै नदी का नीर तीन बै नहाती।
२४ घण्टे गीत हरि के गाती।। २।।
यू मेरा जी तेरी ज्यान में। ये सौचे नै अपने ध्यान में।
तू तै एकला फिरै वियावान में। आड़े फिरै भगेरे शेर तेरी हद छाती।
२४ घण्टे गीत हरि के गाती।। ३।।
मैं तै सारी तरह भरपूर सूं। दुनियां तै बिल्कुल दूर सूं।
और कण्व की पुत्री जरूर सूं। वो पं० माँगेराम मेरा पंचायती।
२४ घण्टे गीत हरि के गाती।। ४।।

शब्दार्थ – कातूं बुण–कातना बुनना, आड़ै–यहाँ, कस में, बै–बार, ताती–गर्मी, झल–आँच।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ माँगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं। इस सांग में कवि ने लोक प्रसिद्ध शकुंतला–दुष्यंत की प्रेम कथा, उनके गंधर्व विवाह, दुष्यंत के जाने के बाद शकुंतला का दुष्यंत की स्मृतियों में डूब जाने पर दुर्वासा ऋषि के श्राप और भरत के जन्म की कथा का वर्णन किया गया है। चित्रांकन प्रभावी है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि उस समय का वर्णन करता है जब कोई व्यक्ति शकुंतला का द्वार खटखटाता है तो वह मनुष्य मात्र का धर्म समझकर द्वार खोल देती है तथा द्वार पर आए हुए राजा को पानी पिला देती है। राजा दुष्यंत जब उससे उसका परिचय पूछते हैं तो शकुंतला उन्हें उत्तर देते हुए कहती है कि मैं आपको स्पष्ट बताती हँ कि मैं कण्व ऋषि की पुत्री हूँ और वे मेरे पिता हैं। मैं सदा प्रभु का गुणगान करती रहती हूँ। मैं जंगल से फल, फूल तोड़ कर खाती हूँ। मैं दिन–रात कातने–बुनने, गिरने–बनाने, मंत्र पढ़ने और शास्त्रों को सुनाने का कार्य करती हूँ। यहाँ दिन–रात ऋषि तपस्या करते रहते हैं इसलिए गर्म आँच लगती रहती है। मैं तो चौबीसों घंटे प्रभु के गीत गाती रहती हूँ।

शकुंतला कहती है कि मेरा बचपन खेल–खेल में व्यतीत हो गया है। मैं यहां ऋषि के साथ रहती हूँ। दीपक जैसे तेल से जलता है और भँवरा जैसे बेल पर मंडराता रहता है, उसी प्रकार से मैं यहाँ रहती हूँ। यहाँ पास में नदी में जल बहता है, जिसमें मैं दिन में तीन बार स्नान करती हूँ। मैं चौबीसों घंटे प्रभु के गीत गाती हूँ। इस प्रकार मेरा मन तुम्हारी चिंता करता है और मैं सोचती हूँ कि तुम अकेले ही सुनसान जंगल में घूमते रहते हो। यहाँ अनेक शेर घूमते रहते हैं। मैं चौबीसों घंटे प्रभु के गीत गाती रहती हूँ। मैं हर प्रकार से परिपूर्ण हूँ और दुनिया से दूर रहती हूँ। मैं कण्व ऋषि की पुत्री हूँ। कवि माँगेराम लिखता है कि वे कण्व ऋषि शकुंतला के संरक्षक हैं। शकुंतला चौबीस घंटे प्रभु के गीत गाती है।

विशेष –

(i) शकुंतला ने दुष्यंत को अपना परिचय देते हुए अपनी दैनिक क्रियाओं का भी उल्लेख किया है।

(ii) देशज, विदेशी, तद्भव, तत्सम शब्दों से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास उपमा पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) गेयता का मोहक गुण विद्यमान है।

(v) लोकमंच की सांग शैली का प्रेरक रूप है।

(2)

जवाब दुष्यंत का शकुंतला से।

कण्व ऋषि तै बाल जाति सै तू क्युकर हुई भला।
रै मनै न्यूं तै बतादे तू किसनै जन्मी शकुंतला।। टेक।।
लाख वर्ष तक भक्ति करकै जाणै ना रवि शशि नै।
ब्रह्मा विष्णु शिवजी तक की करदे सै इसी तिसी नै।
न्यूं भक्ति करकै ब्रह्मा ऋषि ने, दिए तीनों लोक हला।। १।।
एक पहर का बूझ रहा तनैं मन की जाणी कोन्या।
नदी नाव संजोग बतावै ता बात पुराणी कोन्या।
नदी के भीतर पाणी कोण्या, यू भूखा मरै मल्लाह।। २।।
बेरा ना के लिख राख्या मेरी इस किस्मत फूटी मैं।
हस्तनापुर का राज करूँ सूं लिए नाम देख गुट्ठी में।
इब आग्यी ज्यान तेरी मुठी में, लिए तीसों तीर चला।। ३।।
सारी दुनियां न्यूं बुझै तनै किस पै लिख्या गाणा।
माँगेराम बता कै छिक लिया जाटी मिल्या ठिकाणा।
इक रहूँ पाणची गाम सुसाणा, म्हारा रोहतक का जिला।। ४।।

शब्दार्थ – बालजाति–ब्रह्मचारी, गूट्ठी–अंगूठी, ठिकाना–स्थान।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ माँगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं। इस सांग में कवि ने सुप्रसिद्ध शकुंतला–दुष्यंत की प्रेमकथा को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि उस समय का वर्णन करता है जब दुष्यंत शकुंतला से उसका परिचय पूछता है तो शकुंतला उसे स्वयं को कण्व ऋषि की पुत्री बताती है। इस पर दुष्यंत उससे पूछता है कि कण्व ऋषि तो बालब्रह्मचारी हैं तुम उन की पुत्री किस प्रकार से हुई? तुम मुझे बताओ कि तुम्हें किसने जन्म दिया है ? लाखों वर्षों तक तपस्या और भक्ति कर के भी विधि के विधान का पता नहीं चलता है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी तक की इस ने ऐसी तैसी कर दी है। इस प्रकार भक्ति करते हुए ब्रह्म ऋषि ने तीनों लोकों को हिला दिया था। एक पहर से मैं तुम से पूछ रहा हूँ परंतु तुमने मेरे मन की दशा नहीं जानी है। लोग जो कहते हैं कि नदी–नाव संयोग ही जीवन है यह कोई पुरानी बात नहीं है आज भी ऐसा होता है। यदि नदी में पानी नहीं होगा तो मल्लाह को भूखा मरना पड़ेगा, क्योंकि नदी में पानी नहीं होगा तो नौका नहीं चल सकती। मुझे पता नहीं है कि विधाता ने मेरी फूटी किस्मत में क्या लिख दिया है ? मैं हस्तिनापुर का राजा हूँ। तुम मेरा नाम इस अंगूठी में लिखा हुआ देख सकती हो। अब मेरी जान तुम्हारे वश में है क्योंकि तुम ने मेरे ऊपर अपने सौंदर्य के अनेक तीर चलाकर मुझे अपने वश में कर लिया है। मुझे समस्त संसार ऐसा दिखाई दे रहा है जैसे तुमने इस पर अपने गीत लिख दिए हों।

कवि माँगेराम बताता है कि मुझे जाटी में आश्रय मिला है। मैं पाणची गाँव सुसाणा जिला रोहतक का रहने वाला हूँ।

विशेष –

(i) दुष्यंत की मन की दशा का चित्रण किया है। वह शकुंतला के सौंदर्य से प्रभावित होकर उसके प्रेमपाश मे आबद्ध

हो गया है।

(ii) हरियाणवी, देशज, तद्भव, तत्सम, उर्दू शब्दों का सहज रूप से प्रयोग हुआ है।

(iii) 'तीसों तीर' आदि में अनुप्रास अलंकार हैं।

(iv) नदी नांव संयोज, किस्मत फूटना, तीर चलाना आदि मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(v) गेयता का प्रभावी गुण विद्यमान है।

(vi) लोकमंच सांग शैली का अनूठा प्रयोग किया गया है।

(3)

जवाब शकुंतला का दुष्यंत से ?

या कथा पुराणी कण्व ऋषि नै बताई। टेक।।
विश्वामित्र राजऋषि भक्ति में लगाया ध्यान।
लाखों वर्ष बीत गये आत्मा को पूर्ण ज्ञान।
इन्द्र भी घबराये मन में मैनका नै राख्या मान।
फेर इन्द्र बोल्या मैनका से विश्वामित्र राज ऋषि।
जिस दिन भक्ति पूरी होज्या मेरा ले ले ताज ऋषि।
किसे की भी वश का कोन्या करता नखरे नाज ऋषि।
स्वर्णपुरी तै चलो मैनका उपवन के मांह आई।। १।।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ माँगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं। इस सांग में कवि ने लोकप्रसिद्ध सांग शकुंतला–दुष्यंत की प्रेम–कथा का चित्रण किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में शकुंतला दुष्यंत को बताती है कि उसका जन्म कैसे हुआ था। शकुंतला कहती है कि यह बहुत पुरानी कथा है जो उसके जन्म के संबंध में कण्व ऋषि ने उसे बताई थी। राजऋषि विश्वामित्र भक्ति करते हुए तपस्या में लीन हो गए थे। वे लाखों वर्षों तक तपस्या करते रहे और उन्हें पूर्ण आत्म ज्ञान हो गया। उनकी तपस्या से इंद्र भयभीत हो गया। उनकी इस घबराहट को मेनका ने दूर किया। इंद्र ने मेनका से कहा कि जिस दिन राजऋषि विश्वामित्र की भक्ति पूरी हो जाएगी वे उसका इंद्रासन ले लेंगे। यह राजऋषि किसी के भी वश में नहीं आता है। तब स्वर्गलोक से मेनका उस उपवन में आ गयी जहाँ राजऋषि विश्वामित्र तपस्या कर रहे थे।

विशेष –

(i) शकुंतला विश्वामित्र और मेनका की पुत्री थी। उसका पालन–पोषण कण्व ऋषि ने किया।

(ii) अनुप्रास तथा पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार का प्रयोग हैं।

(iii) हरियाणवी, में तद्भव, तत्सम, उर्दू तथा देशज शब्दों का भी प्रयोग हुआ है।

(iv) गेयता का गुण मोहक है।

(vi) लोकमंच की सांग शैली का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

(4)

जवाब शकुंतला का दुष्यंत से ?

तीन वचन भर लिए पिया वचनां तै नहीं फिरेगा।
जो मेरी कूख से हो लड़का हस्तानपुर राज करेगा। टेक।।
आज तै आग्गें पति समझ तेरे पां चचकारण लागै।

समझदार आगें की खातर समो विचारण लागै।
तेरे हस्तानपुर में आऊँगी कदे धक्के मारण लागै।
तेरे और भी राणी बहुत सी होंगी कदे इज्जत तारण लागै।
ईब देख राजी होर्‌या तू पाछै दोष धरेगा।। १।।
जला दे कैं जाल लिया करै सै जल देणा जलदारा नै।
मल दे कै कै मल लिया करै सै गल देणा गलदारां ने।
धर्मराज की महफिल में करणी का डण्ड भरेगा।। २।।
जाकित सती का आवस के मांह मिलते हीया सर्द हो सै।
जिंदगी भर तक मिटती कोन्या बोल की इसी कदै हो सै।
सर्द ठीक ना होणे की ठाड्डे की ठीक गर्द हो सै।
वीर प्रण पै ज्यान गवांदे दखे धोखे बाज मर्द हो सै।
करणी का दण्ड नहीं भोगना तै इस तै कोण डरेगा।। ३।।
मिलते-मिलते यहाँ तक मिलेगे थोड़ा बीच विचाला सै।
तू परदेशी मैं कंवारी जरा दाल में काला सै।
सारी दुनिया बंदी भ्रम की किसनै सांस सुखाला सै।
मैं केसर की क्यारी सूं मेरा कोय नहीं रुखाला सै।
मॉंगेराम जाणवी चौकस सुन्नी खुत चरेगा।। ४ ।।

शब्दार्थ – कूख–गर्भ, रुखाला–रखवाला, चौकस–होशियार, कँवयी–अविवाहिता।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ मॉंगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं। इस सांग में कवि ने सुप्रसिद्ध शकुंतला–दुष्यंत की प्रेम–कथा को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने उस समय का वर्णन किया है जब शकुंतला के जन्म की कथा सुनकर दुष्यंत को विश्वास हो जाता है कि शकुंतला कण्व ऋषि की पुत्री न होकर विश्वामित्र और मेनका की पुत्री है। दुष्यंत शकुंतला के सम्मुख विवाह का प्रस्ताव रखता है तो शकुंतला उससे तीन वचन मांगते हुए कहती है कि हे प्रियतम, मुझे आप तीन वचन दीजिए और प्रण कीजिए कि आप अपने वचनों से नहीं बदलेंगे। पहला वचन यह दो कि मेरे गर्भ से जो लड़का उत्पन्न होगा वह हस्तिनापुर पर राज्य करेगा। आज के बाद मैं आपको अपना पति समझ कर आपके चरणों की सेवा करूँगी। समझदार लोग भविष्य की पहले से चिंता करने लगते हैं। जब मैं आपके हस्तिनापुर आऊँ तो कहीं आप मुझे धक्के न मारने लग जाना। आपकी अन्य अनेक रानियां होगी कहीं वे मेरी बेइज्जती न करने लगे। अभी तक मुझे देख कर तथा मेरे सौंदर्य पर मुग्ध होकर आप हर वचन स्वीकार कर रहे हो बाद में मुझे दोष नहीं देना। जो व्यक्ति जैसा हो वैसा ही व्यवहार करता है और बदले में उसे भी वैसा व्यवहार मिलता है। जैसे जल की धारा का काम जल देना होता है। वहाँ से प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छ जल मिलता है तथा गंदे नाले से तो गंद ही मिलता है और मल देने वाले को भी मल मिलता है। यदि तुम अपने वचनों पर अडिग न रहे तो तुम्हें धर्मराज के सम्मुख अपने सभी कर्मों का दंड भरना पड़ेगा। योगी और सती का हृदय आवस के महीने में ठंडा हो जाता है। इस प्रकार के शब्दों की टीस जीवन भर बनी रहती है। सर्दियों में लगी हुई ठंड तो कभी ठीक नहीं होती परंतु सड़क की उठी धूल बैठ जाती है। वीर व्यक्ति अपने वचनों के लिए अपने प्राण भी गंवा देते हैं। धोखेबाज पुरुष ही दगा देते हैं। यदि व्यक्ति को अपने कर्मों का दण्ड भोगने का भय न हो तो वह इस से कैसे डरेगा कि वायदा करके तोड़ना नहीं चाहिए। हम लोग मिलते–मिलते यहाँ तक मिल गए कि हमारे बीच कोई अंतर ही नहीं रहा। तुम परदेशी हो और मैं एक कुंवारी कन्या, क्या हमारे मिलन को दुनिया के लोग दाल में कुछ काला है, नहीं समझेंगे ? समस्त संसार के लोग भ्रमों में फंसे हुए हैं और सबकी सांस सूख रही है। मैं तो केसर की क्यारी के समान हूँ तथा मेरा कोई रखवाला भी नहीं

है। माँगेराम कवि लिखता है कि मनुष्य को स्वयं ही होशियार रहना चाहिए अन्यथा स्थान को सुनसान देखकर कोई भी मुँह मारने आ जाएगा।

विशेष –

(i) शकुंतला दुष्यंत से विवाह करने से पूर्व उससे अपने पुत्र के लिए हस्तिनापुर का राज्य तथा अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने का वचन ले लेती है।

(ii) तद्भव, तत्सम, विदेशी और देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास और पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) सांस सूखना, दाल में काला, हिया सर्द होना आदि मुहावरों का सुन्दर प्रयोग किया गया है।

(v) गेयता, संवादात्मकता, सांग शैली और प्रवाहमयता है।

(5)

श्राँप दुर्वासा ऋषि का शकुंतला को

ब्राह्मण का अपमान कर्‌या तू सदा रोवती रहैगी।
हे तनै पति मिलै ना सदा टोहवती रहेगी। टेक।।
सारी दुनियां कहती आवै जोड़ा सती का।
किसे नै ना पता लागता माणस की पहुँच रति का।
जाम्यां कोन्या पार्वता का, सदा बीज बोवती रहैगी।। १।।
धन जोवन रंग रूप जवानी अणु जहर नाग फण में।
क्यां के ऊपर करै भरोसा ना पूणी कतली मण में।
उस दमयन्ती की तरियाँ बण में, सदा सोवी रहैगी।। २।।
सारी दुनियाँ कहती आई शर्म सभी का शस्त्र।
और किसे का दोष नहीं तेरे लग्या भूल का नस्तर।
मन्दोदरी की तरियां वस्त्र, सदा धोवती रहैगी।। ३।।
लखमीचन्द जमाना तेरा सदा झाड़ बण्या रहैगल का।
कण्व ऋषि तनै अच्छा लाग्या मैं लाग्या तनै हल्का।
माँगेराम जमाना छल का, सदा ढले ढोवती रहैगी।। ४।।

शब्दार्थ – टोहवती–ढूँढती, तलाशकरती, माणस–मनुष्य, नस्तर–चीरा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ माँगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं। इस सांग में कवि ने सुप्रसिद्ध शकुंतला–दुष्यंत की प्रेम–कथा का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि उस समय का वर्णन कर रहा है जब दुष्यंत शकुंतला से गंधर्व विवाह करने के बाद हास्तिनापुर चला जाता है। वह शकुंतला को अपने प्रेम की निशानी अपनी अंगूठी दे जाता है। शकुंतला दुष्यंत की स्मृतियों में डूबी रहती है। एक दिन दुर्वासा ऋषि वहाँ आते हैं, पर शकुंतला उनका स्वागत न कर अपने ही विचारों में लीन रहती है। तब दुर्वासा ऋषि इसे अपना अपमान समझ कर उसे श्राप देते हुए कहते हैं कि तुमने ब्राह्मण का अपमान किया है, इसलिए तुम सदा रोती रहोगी। तुम्हें तुम्हारा पति नहीं मिलेगा, तुम सदा उसकी प्रतीक्षा करती रहोगी। सारी दुनिया तो यह कहती है कि सती का जोड़ा सदा बना रहता है, परंतु किसी को भी मनुष्य की इस प्रेम भावना का पता नहीं चलता है कि वह कब, किसे और कहाँ प्रेम करने लगेगा। तुम इस प्रकार की कल्पनाएँ करती रहोगी जो कभी पूरी नहीं होगी जैसे पत्थर पर बोया बीज कभी भी नहीं उगता है। धन, यौवन, रंग–रूप, सौंदर्य आदि का

कभी गर्व नहीं करना चाहिए क्योंकि यह कभी स्थायी नहीं रहते हैं। यह तो मन की कल्पनाएँ मात्र हैं। तुम दमयंती के समान सदा बन में ही निवास करोगी। समस्त संसार यह कहता है कि लज्जा स्त्री का सबसे बड़ा शस्त्र है। इसमें किसी का अथवा तुम्हारा भी कोई दोष नहीं है क्योंकि तुम्हें तो विस्मृति रूपी चीरा लगा हुआ है। तुम तो मंदोदरी के समान सदा पछताती रहोगी। लखमीचंद तेरा यह संसार सदा रहैगल के पेड़ के समान बना रहेगा। दुर्वासा ऋषि शकुंतला को कहते हैं कि तुझे कण्व ऋषि श्रेष्ठ लगते हैं, मैं तुम्हें तुच्छ लगता हूँ। माँगेराम कवि लिखते हैं कि दुर्वासा ऋषि उसे श्राप देते हैं कि तुम सदा पत्थर ही ढोती रहोगी अथवा जीवन भर कष्ट सहन करती रहोगी।

विशेष –

(i) दुर्वासा ऋषि शकुंतला द्वारा अपना स्वागत न करने पर उसे जीवन भर दुष्यंत के वियोग में तड़पते रहने का शाप देते हैं।

(ii) तद्भव, तत्सम, देशज तथा उर्दू के शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास तथा उदाहरण अलंकार हैं।

(iv) गेयता, संवादात्मकता, सांग शैली और प्रवाहमयता है।

(v) लोकमंच की सांग शैली की रचना है।

(vi) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(6)

जवाब कण्व ऋषि का शिष्यों से

बेटी बहू टिकाणै आच्छी बिना ठिकाणै कुछ ना।
हस्तनापुर भेज द्यो इसनै घरां बिराणै कुछ ना।। टेक।।
ज्ञान ध्यान तै सोचूं सूं चार घड़ी हौज्या सै।
चन्दन के सत्संग से चंदन लीलबड़ी होज्या सै।
शकुंतला नै देखूं जब मेरी संग खड़ी होज्या सै।
पत्नि रहै पति कै धोरै बाहमै दाहणै कुछ ना।। १ ।।
नाज करेगी याणी बण कै याणी बण कै रहैगी।
मुहाज करेगी वाणी बण कै बाणी बण कै रहैगी।
ताज धरेगी स्याणी बण कै स्याणी बण कै रहैगी।
राज करेगी राणी बण कै राणी बण कै रहैगी।
बैठ तख़्त पै राज करण द्यो पति सिराणै कुछ ना।। २ ।।
प्रजा पालन करने से सेवा सूरती होगा।
मनुष्या ज्ञान का पालन करणा मनुस्मृति होगा।
चार वेद और छः शास्त्र का ध्यान कुदरती होगा।
इस छोरे का मेष लगन बड़ा चक्रवर्ती होगा।
चाल दुशाले ओढण द्यो आड़ै भगमाँ बाणै कुछ ना।। ३ ।।
इस दुनिया मैं आए का कुछ हीये में आनन्द भी ना था।
भाग सुवाया लेर्‌या था गुरु मति मन्द भी ना था।
गन्धर्व बण कै आया था म्हारा देश पसन्द भी ना था।

लोग कहै उनैं लखमीचन्द वो लखमीचन्द भी ना था।

माँगेराम पिछाण्यां हमनै बिना पिछाणे कुछ ना।। ४।।

शब्दार्थ – ठिकाणै–अपने–अपने घर, नाज–गर्व, याणी–रानी, पिछाणे–पहचान।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ माँगेराम द्वारा रचित सांग 'शकुंतला–दुष्यंत' से ली गई हैं जिसमें कवि ने सुप्रसिद्ध शकुंतला और दुष्यंत की प्रेमकथा का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने उस समय का वर्णन किया है जब आश्रम में शकुंतला भरत को जन्म देती है और भरत छः वर्ष का हो जाता है। तब कण्व ऋषि अपने शिष्यों से कहते हैं कि बेटी–बहू तो अपने–अपने घर ही अच्छी लगती हैं, बिना अपने घर के उनकी इज्जत नहीं होती है। मैं विचार करके देखता हूँ कि यदि कुछ समय तक चंदन के साथ रहा जाए तो चंदन जैसी सुगंध शरीर से अपने लगती है। जब मैं शकुंतला को अपने पास खड़ा देखता हूँ तो विचार आता है कि यदि पत्नी पति के पास रहे तो इसमें कष्ट की कोई बात नहीं है। यह वहां तो रानी के समान बन कर रहेगी और अपने पर गर्व करेगी। वहाँ उसके प्रत्येक कथन को पूरा किया जाएगा। वह अपने सिर पर मुकुट पहन कर समझदार बन कर रहेगी। वह वहा रानी बनकर राज करेगी। वह राजसिंहासन पर बैठ कर राज्य करेगी तथा प्रजा की सेवा करते हुए प्रजापालन करेगी। मनुस्मृति के आधार पर वह मनुष्य के लिए निश्चित नियमों का पालन करेगी तथा करवायेगी। उसे प्राकृतिक रूप से चारों वेदों और छहों शास्त्रों का ज्ञान हो जाएगा। यह जो इसका बेटा है वह मेष लग्न का होने के कारण चक्रवर्ती सम्राट बनेगा। वह शाल, दुशाले आदि ओढ़ने के लिए देगा। वहां भगवा वस्त्रों का कोई काम नहीं है। इस संसार में आकर हृदय में कोई आनंद नहीं था। वह स्वयं ही सवाया भाग्य लेकर आया है। ये तो गंधर्व बन कर आया था और इसे हमारा देश भी पसंद नहीं था। लोग उसे लखमीचंद कहते हैं परंतु लखमीचंद भी नहीं था। माँगेराम लिखताहै कि मैंने उसे पहचान लिया है और बिना पहचाने कुछ नहीं हो सकता।

विशेष –

(i) शकुंतला के पुत्र भरत के चक्रवर्ती सम्राट बनने की भविष्यवाणी की गई है।

(ii) तद्भव, उर्दू तथा तत्सम शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास तथा पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) गेयता तथा सांग शैली का सुन्दर रूप है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 माँगेराम की नारी भावना की विचेचना कीजिए।

उत्तर – भारतीय संस्कृति में रानी का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। महाभारत के शांतिपर्व में भीष्म पितामह युधिष्ठिर से कहते हैं–

'नास्ति भार्या समो बंधुर्नासित भार्यासमागतिः।

नास्ति भार्यासमो लोके सहायो धर्म संग्रहे।'

अर्थात् संसार में नारी के समान कोई बंधु नहीं है, नारी के समान कोई आश्रय नहीं है और नारी के समान धर्म संग्रह में सहायक भी नारी के समान दूसरा कोई नहीं है।' पुरुष की जीवन साधना में नारी पत्नी के रूप में उसकी सबसे बड़ी सहायिका होती है। वह उसके जीवन को जननी, जाया, माया, उद्धारिका और कल्याणकारिणी शक्ति के रूप में पोषित करती है। वही सृष्टि का आधार और वही हिरण्यगर्भा है। उसी में सारा ब्रह्माण्ड समाया हुआ है। 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में कवि माँगेराम ने नारी के इसी रूप को एक नए परिप्रेक्ष में प्रस्तुत किया है–

1. उच्च विचार – माँगेराम ने नारी को नर के लिए कल्याणकारी शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। वह सदा उसके कल्याण के लिए सोचती रहती है। जैसे ही आश्रम का द्वार खटकता है शकुंतला, अकेली होते हुए भी, मानव कल्याण की भावना के कारण आश्रम का द्वार खोलती है तथा प्यासे दुष्यंत को पानी पिलाती है। जब उसे दुष्यंत का परिचय

प्राप्त हो जाता है तो वह उसके जंगल में इस प्रकार अकेले भटकते रहने को उचित न समझ कर उसे कहती है--

'तू तै एकला फिरै बियावान में। आड़े फिरे भगेरे शेर तेरी हद छाती।'

शकुंतला के इस कथन से भी कल्याण की भावना ही व्यक्त होती है।

2. प्रेम-भावना – नारी सौंदर्य मानव मन में प्रेम का संचार कर देता है। दुष्यंत जब शकुंतला को देखता है तो उसके अपूर्व सौंदर्य को देखकर उस पर मुग्ध हो जाता है परंतु यह जान कर कि वह कण्व ऋषि की पुत्री है उसके प्रति अपना प्रेम व्यक्त नहीं करता। वह अपनी भावनाएं व्यक्त करते हुए शकुंतला से पूछता है--

'कण्व ऋषि तै बालजाति सै तू क्यूकर हुई भला।

रै मनैं-यूं बता दे तू किस नै जन्मी शकुन्तला।'

और जब शकुंतला उसे बताती है कि वह विश्वामित्र और मेनका की पुत्री है परंतु उसका पालन--पोषण कण्व ऋषि ने किया है तभी है उसके सम्मुख गंधर्व विवाह का प्रस्ताव करता है, जिसे शकुंतला भी स्वीकार कर लेती है। इस प्रकार दोनों ही प्रेम के सागर में डूब जाते हैं।

3. सहनशीलता – माँगेराम ने 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में शकुंतला को सहनशीलता के अपार भंडार से युक्त नारी बताया है। राजा दुष्यंत शकुंतला से गंधर्व विवाह कर फिर आने का वायदा कर के तथा अपनी अंगूठी शकुंतला को देकर हस्तिनापुर चले जाते हैं। शकुंतला उनकी स्मृतियों में ऐसे खो जाती है कि एक दिन आश्रम में आए दुर्वासा ऋषि का भी उसे पता नहीं चलता। वे इसे अपना अपमान समझ कर उसे भविष्य में कष्टों से भरा जीवनयापन करने का श्राप दे देते हैं। शकुंतला उनके श्राप को विभिन्न कष्ट सहन करके भी भोगती है। यहां तक कि जब वह अपने पुत्र को लेकर दुष्यंत से मिलने हस्तिनापुर जाती है तोवह भी उसे पहचानने से मना कर देता है।

4. वात्सल्य भाव – नारी में वात्सल्य भावना शाश्वत रूप से विद्यमान होती है। वह अपनी संतान का सदा कल्याण चाहती है। दुष्यंत के साथ गंधर्व विवाह के बाद शकुंतला आश्रम में ही रह कर भरत को जन्म देती है। दुष्यंत द्वारा ठुकराये जाने पर भी वह अपने पुत्र की अच्छी प्रकार से देखभाल करती है। उसे कण्व ऋषि के इन वचनों पर विश्वास है कि उसका पुत्र एक दिन अवश्य ही चक्रवर्ती सम्राट बनेगा–

'इस छोरे का मेष लगन बड़ा चक्रवर्ती होगा।'

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में कवि मांगेराम ने नारी को एक नए रूप में प्रस्तुत किया है। वह एक ऐसी शक्ति है जो समाज द्वारा अपनाये न जाने पर भी अपनी संतान को इस योग्य बनाती है कि वह भारत का चक्रवर्ती सम्राट ही नहीं बनता अपितु उसके पुत्र के नाम पर ही इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ता है। वह एक महान् नारी है। वह इस सृष्टि की कर्त्री, अक्षय और अनंत स्वरूपा तथा सृष्टि की दिव्य और महान जीवनी शक्ति भी है।

प्रश्न 2 माँगेराम की भाषा-शैली की विवेचना कीजिए।

उत्तर – कवि के हृदय में छिपे विविध–रंगी भाव भाषा के माध्यम से छटाएँ बिखेरते हैं। भाषा कवि के मन और पाठक के बीच वह कड़ी है जो एक दूसरे को भाव–दृष्टि से निकट ले आती है। माँगेराम द्वारा रचित 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में कवि की भाषा उसकी भावनाओं एवं अनुभूतियों को व्यक्त करने में पूर्ण रूप से सक्षम है। इनकी काव्य भाषा की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. शब्द-शिल्प – 'शकुंतला--दुष्यंत' सांग में माँगेराम ने व्यावहारिक हरियाणवी भाषा के शब्दों--आडै, बै, तै, कै, ढाहूं, चिणूं, सै, पै आदि के साथ–साथ उर्दू के बाप, साफ़, दुनिया, वियावान आदि के अतिरिक्त तत्सम, ऋषि, दीपक, नीर, गीत तथा तद्भव शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है जैसे--

'फेर इन्द्र बोल्या मैनका से विश्वामित्र राज ऋषि।

जिस दिन भक्ति पूरी होज्या मेरा ले ले ताज ऋषि।'

2. मुहावरा-प्रयोग – माँगेराम ने 'शकुंतला–दुष्यंत' सांग में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करके भाषा में

लाक्षणिकता और अर्थगांभीर्य की सृष्टि की है। इससे इनकी भाषा में अद्‌भुत शक्ति का संचार हुआ है तथा कथन में भी आकर्षण उत्पन्न हो गया है। जैसे–

'नदी नाव संजोग बतावै या बात पुराणी कोन्या।'

'जल दे कै जल लिया करै सै जल देणा जल दारा नै।'

'बेटी बहू टिकाणै अच्छी बिना टिकाणै कुछ ना।'

'तू परदेशी मैं क्वारी जरा दाल में काला सै।'

3. अलंकार-योजना – माँगेराम की भाषा आलंकारिक है। अलंकारों के प्रयोग से कवि के कथन में सुंदरता तथा रमणीयता आ गई है। इनमें भावों को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करने में भी सहायता मिली है। जैसे–उपमा, अनुप्रास के उदाहरण हैं–

'बचपन गया मेरा खेल में। रहणा ऋषि की गेल में

दीपक जलै ज्यूं तेल मैं। भौंरा फिरै जैसे बेल में।'

'किसे के भी वश का कोन्या करता नखरे नाज ऋषि।'

4. संगीतात्मकता – माँगेराम की काव्य भाषा विभिन्न छंदों तथा राग–रागनियों पर आधारित होने के कारण गेयता के गुणों से युक्त है। लोकमंच सांग के अनुरूप ही इसमें बीच–बीच में वार्ताओं का प्रयोग करके इसे रोचकता तथा प्रवाहमयता प्रदान की गई है।

भाषा की दृष्टि से माँगेराम का काव्य संप्रेषणीयता के गुणों से युक्त है तथा पाठक और दर्शक तक अपनी भावनाओं को सहजता से प्रेषित कर सकता है।

प्रश्न 3 माँगेराम द्वारा रचित 'शकुंतला-दुष्यंत' सांग की मूल संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – माँगेराम द्वारा रचित 'शकुंतला–दुष्यंत' सुप्रसिद्ध पौराणिक शकुंतला–दुष्यंत की प्रेम कथा पर आधारित है। प्रस्तुत प्रसंग में कथा वहां से प्रारंभ होती है जब जंगल में शिकार के लिए भटकता हुआ राजा दुष्यंत कण्व ऋषि के आश्रम का द्वार खटखटाता है। शकुंतला यह सोच कर द्वार खोल देती है कि मनुष्य मात्र की सहायता करना उसका धर्म है। दुष्यंत बहुत प्यासा था। वह उसे पानी पिलाती है। दुष्यंत जब उसका परिचय पूछता है तो वह स्वयं को कण्व ऋषि की पुत्री बतलाती है।

दुष्यंत जानता है कि कण्व ऋषि बाल ब्रह्मचारी हैं। इसलिए वह पुनः शकुंतला से उसे माता–पिता के विषय में पूछता है। शकुंतला उसे बताती है कि वह विश्वामित्र और मेनका की संतान है। दुष्यंत शकुंतला के रूप–सौंदर्य से आकर्षित होकर उसके प्रति अपना प्रणय निवेदन करते हुए उससे गंधर्व विवाह की अपनी इच्छा व्यक्त करता है। शकुंतला भी उससे प्रभावित होकर उससे तीन वचन लेकर उससे गंधर्व विवाह कर लेती है। दुष्यंत कुछ दिन वहाँ रह कर फिर लौटने की बात कह कर हस्तिनापुर चला जाता है और शकुंतला को अपनी अँगूठी दे जाता है।

शकुंतला दिन रात दुष्यंत की स्मृतियों में खोयी रहती है। एक दिन आश्रम में दुर्वासा ऋषि आते हैं। शकुंतला को उनके आने का पता ही नहीं चलता। दुर्वासा ऋषि इसे अपना अपमान समझ कर शकुंतला को भावी जीवन में कष्ट सहने का शाप देकर चले जाते हैं। कण्व ऋषि अपने शिष्यों को बताते हैं कि बहु–बेटी अपने–अपने घरों में ही रहकर शोभा पाती हैं। इस बीच शकुंतला एक सुंदर पुत्र की माता बन जाती है। कण्व ऋषि का कथन है कि यह बालक अवश्य ही चक्रवर्ती सम्राट् बनेगा। शकुंतला बच्चों के साथ दुष्यंत के पास जाती है। दुष्यंत इन्हें पहचानने से ही मना कर देता है। इस प्रकार दुर्वासा ऋषि का शाप सत्य होता है तथा शकुंतला को कष्ट में दिन व्यतीत करने पड़ते हैं।

कवि ने इस प्रसंग में बीच–बीच में वार्ताएँ दी हैं, जिनसे इस सांग को मंचित करने में सुविधा होती है तथा कथा की प्रबंधात्मकता बनी रहती है। शकुंतला का यही पुत्र बाद में हस्तिनापुर का राजा बनता है और उसी के नाम पर हमारे देश का नाम भारतवर्ष पड़ता है।

6. साधुराम

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर सरस्वती के उपासकों की महिमामयी परंपरा रही है। इनमें पं० साधुराम का विशेष स्थान रहा है। पं० साधुराज का जन्म हरियाणा के जिला कुरुक्षेत्र के पबनावा गाँव में सन् 1904 में हुआ था। इन्हें हरियाणा की नीति उपदेशक के रूप में अधिक जाना जाता है। इनका एक अन्य नाम स्वामी नारायण गिरि भी था। इनके गुरु भिक्षाराम जी थे। इन्हें अनेक भाषाओं का ज्ञान था। ये विद्वान व्यक्ति थे। पं० साधुराम संत होने के साथ–साथ एक चिंतनशील कवि थे। यद्यपि इन्होंने विधिवत् शिक्षा ग्रहण नहीं की थी, फिर भी इनका अनुभव संसार बहुत व्यापक था। इन्होंने सदा ही जन–कल्याण और आत्मपरिष्कार को महत्त्व दिया। इनका जीवन अत्यंत सरलता से बीता। वे छल–कपट और प्रपंचों से कोसों दूर थे। 19 नवम्बर सन् 1989 में कुरुक्षेत्र के साधुराम आश्रम में इनका देहावसान हुआ है।

रचनाएँ – पं० साधुराम ने अपनी अधिकांश रचनाओं में नीतिपरक या उपदेशात्मक विचार प्रकट किए हैं। इसी कारण उन्हें नीति उपदेशक के रूप में अधिक ख्याति मिली है। इनकी रचनाओं में सभी धर्मों को समान बताया गया है। इनके अनुसार मानव का धर्म है कि वह सदा ही जन–कल्याण के कार्यों तथा आत्मपरिष्कार को करता रहे। इनकी रचनाओं को समझने के लिए पाठक को गहरी सूझ–बूझ की आवश्यकता है। इनकी प्रमुख रचनाएँ उल्लेखनीय हैं– विचार तरंग भाग–1, विचार तरंग भाग–2, दशरथ–रामायण संकल्प शक्ति, कुरुक्षेत्र पथ प्रदर्शक, महाप्रयाण गीता, भजनोपदेशमाला, श्री मद्भगवद् गीता, कर्मयोग, सत्संग महिमा तथा राममिलन आदि।

साहित्यिक विशेषताएँ-

साधुराम का काव्य अत्यंत सरल एवं सहज है। यह सामान्य जीवन से जुड़ा काव्य है। इन्होंने मानव मात्र को उपदेश देने के लिए ही अधिकांश साहित्य की रचना की है। इनके साहित्य में सभी धर्मों को समान महत्त्व दिया गया है तथा मनुष्य को सद्मार्ग परचलने की प्रेरणा मिली है। इनकी साहित्यिक विशेषताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है–

1. **गुरु-महिमा** – प्रायः सभी संतों के समान साधुराम ने भी गुरु का विशेष महत्त्व बताया है। गुरु ही अपने शिष्य के अज्ञान को दूर करता है। वह उसे कुमार्ग से सद्मार्ग पर ले जाता है। गुरु अपने शिष्यों को सभी रहस्यों से परिचित करवाता है–

फेर देह न्यारी मैं हूँ न्यारा ऐसे मन संकल्प ठावेगा।
बतावेगा गुरु भेद ये सारा, तत्वमसी का लावै नारा।।
आकै दर्शन पाया कर।

कवि साधुराम के अनुसार इस संसार रूपी सागर से पार उतारने वाला भी गुरु ही है। जब मनुष्य पर अनेक कठिनाइयां आती हैं तो गुरु की शरण ही शिष्य का बेड़ा पार करता है–

रात अंधेरी नाव पुरानी कोई ना खेवनहार
डगमग डगमग डोल उठाया दिल किसे करुँ पुकार।
बादल गरजैं बिजली चमकैं बरसै मूसलाधार।
साधुराम शरण सत्गुरु की बेड़ा पार उतार।।

2. **सत्संग-महत्त्व** – कवि साधुराम के अनुसार सत्संग का बहुत महत्त्व है। मनुष्य को अपने समस्त कार्यों का त्याग

करके सत्संग में जाना चाहिए क्योंकि सत्संग से ही सच्चे मार्ग की पहचान होती है और ज्ञान प्राप्त होता है–

बिना सत्संग विवेक न होवे महापुरुषों का कहना है।

दो दिन का ये खेल तमाशा सदा नहीं यहाँ रहना है।।

कवि का मत है कि सत्संग से विवेक मिलता है और मनुष्य का अभिमान मिटता है। सत्संग से ही मनुष्य के जीवन का कल्याण संभव है।

3. **ईश्वर नामस्मरण** – कवि ने अपनी रचनाओं में ईश्वर भजन पर बल दिया है। उनका मत है कि ईश्वर का गुणगान करने से व्यक्ति की अज्ञानता दूर होती है। ईश्वर का भजन करने से व्यक्ति को ज्ञान का मार्ग मिल सकता है–

'भजन करने से ज्ञान का मार्ग सहज में पावेगा।'

कवि ने ईश्वर भजन के साथ–साथ ईश्वर के नामस्मरण पर भी विशेष बल दिया है। उनके अनुसार ईश्वर का नाम मनुष्य के दुःखों को दूर कर उसे सुखी बनाता है। जो ईश्वर के नाम रूपी रत्न को प्राप्त कर लेता है। वह लोक–परलोक पर विजय पा लेता है। ईश्वर का नाम ही सबसे सच्चा एवं नेक कमाई है। वे नामस्मरण पर बल देते हुए कहते हैं–

सच्चा नाम और सब झूठा-कर्म धर्म ठगुओं ने लूटा।

नाम का अंत ना आवै।

मौका मत चूको मेरे भाई-स्वांस स्वांस में करो कमाई।

साधु राम सुनावै।

4. **बाह्याडंबर खंडन** – कवि साधुराम ने अपने काव्य में अपने समकालीन साधुओं और संतों पर उनके आडंबरपूर्ण आचरण पर आक्षेप भी किया है। उनका मत है कि ऐसे साधु संसार को धोखा दे रहे हैं–

माई राम दुविधा में फिरै दुनिया धक्के खाती।

निक्का राम की मंडली गाती बांगर का गाणा।

5. **जन्मभूमि-गुणगान** – साधुराम ने अपनी जन्मभूमि कुरुक्षेत्र का गुणगान किया है। वे कुरुक्षेत्र को समस्त तीर्थों से श्रेष्ठ मानते हैं और कुरुक्षेत्र को सब प्रकार की मुक्ति का स्थल मानते हैं–

गंगा जी के जल में मुक्ति काशी के जल-थल में।

कुरुक्षेत्र में तीनों मुक्ति अन्तरिक्ष और जल थल में।

6. **उद्‌बोधन** – कवि के स्वर में चेतावनी की प्रबलता है। वे मनुष्य को चेतावनी देते हैं कि यदि वह ईश्वर से विमुख होकर सांसारिक बंधनों में फंसा रहेगा तो उसकी मुक्ति नहीं होगी। वे चेतावनी भरे स्वर में कहते हैं कि मृत्यु अवश्यंभावी है। इसलिए मनुष्य को शरीर पर अभिमान नहीं करना चाहिए।

दो दिन की जिन्दगानी मूर्ख क्यों होर्‌या मगरूर

काल बली का हुक्म टलै ना जाना पड़ै जरूर।

7. **भाषा-शैली** – कवि साधुराम ने जनभाषा को सहज रूप में अपनाया है। उन्होंने अत्यंत सरल भाषा में मानव मात्र को समझाने का प्रयास किया है। उनकी भाषा की सरलता और सहजता सर्वत्र दर्शनीय है। इनकी भाषा में तत्सम–तद्‌भव शब्दावली के अतिरिक्त हरियाणवी भाषा के स्वाभाविक शब्दों का प्रयोग मिलता है। उर्दू–फारसी के शब्दों का भी सुन्दर प्रयोग है। इसके अतिरिक्त इनकी भाषा में कहीं–कहीं गूढ़ज्ञान और हठयोग साधना से जुड़ी शब्दावली का भी प्रयोग हुआ है। अलंकारों के स्वाभाविक प्रयोग से इनकी भाषा के काव्यगत सौंदर्य में वृद्धि हुई है। इनकी भाषा में मिलने वाले मिथकीय प्रयोगों से भाषा सशक्त बन गई है। इनकी शैली अत्यंत प्रखर और धारदार है। उपदेशात्मक शैली में इन्होंने अपनी वाणी को सामान्य जन तक पहुंचाया है। इस प्रकार साधुराम लोकप्रिय जन–कवि हैं।

कविता-सार

साधुराम हरियाणा के सुप्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि थे। इन्होंने अपनी प्रस्तुत कविता में स्पष्ट किया है कि सत्संग का हमारे जीवन में विशेष महत्त्व है। मनुष्य जन्म कठिनता से प्राप्त हुआ है। अतः इसे ईश्वर–भजन और सत्संग में लगाना चाहिए। यह जीवन क्षणभंगुर है और केवल हरिभजन से समक्ष कार्य एवं ज्ञान का मार्ग प्राप्त किया जा सकता है। उन्होंने गुरु का महत्त्व स्पष्ट करते हुए कहा है कि गुरु ही ज्ञान के द्वारा हमारे मन में उठने वाले समस्त संकल्पों और विकल्पों का रहस्य समझाता है। कवि मानव को फटकारते हुए कहता है कि इस संसार में जन्म लेकर बचपन खेल में तथा जवानी अहंकार में व्यतीत कर दी। वह ईश्वर से विमुख होकर सांसारिक आकर्षणों में बंधा रहा, किंतु उसे याद रखना चाहिए कि मृत्यु अवश्यंभावी है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्यों का हिसाब–किताब देना पडता है।

कवि ने बताया है कि व्यक्ति प्रभु मिलन की आशा करते हैं वे घर फूंक तमाशा देखते हैं। वे सांसारिक मोहमाया और कुबुद्धि को त्यागकर ईश्वर के ध्यान में रम जाते हैं। वे पाँच ज्ञानेन्द्रियों को वश में करके सदा मस्त रहते हैं। कवि आगे कुरुक्षेत्र की महिमा का गुणगान करते हुए कहता है कि कुरुक्षेत्र की भूमि तीनों लोकों की माता है। विष्णु की नाभि से मिलकर ब्रह्मा ने ओंकार का उच्चारण् किया और चारों वेदों का प्रचार–प्रसार किया। कुरुक्षेत्र की भूमि मुक्ति–भक्ति का द्वारा होने के साथ–साथ धर्मभूमि है। यह भूमि व्यक्ति को सब पापों से मुक्त कराती है। कुरुक्षेत्र की भूमि पर मरने वाला व्यक्ति कभी भी नरक में नहीं जाता है।

कवि सागर के रूपक के माध्यम से समझाते हुए कहते हैं कि इस संसार रूपी सागर में गुरु के बिना कोई पार नहीं उतर सकता। इस सागर का इच्छाओं के समान कहीं अंत नहीं है। इसमें काम, क्रोध, मन, लोभ, मोह रूपी मगरमच्छ सदा संहार करते रहते हैं। मनुष्य को निरंतर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है किंतु सच्चा गुरु ही इस सागर से हमारी नाव को पार उतार सकता है। कवि ईश्वर के नामस्मरण पर बल देते हुए कहते हैं कि नाम स्मरण करने वाला व्यक्ति ही संसार में सुखी रहता है। ईश्वर नाम ही इस संसार में सच्चा है, बाकी सब कुछ झूठा है। अत यदि मानव शरीर मिला है तो हमें अपनी प्रत्येक सांस से ईश्वर का नाम स्मरण करके सच्ची कमाई करनी चाहिए। इस प्रकार इस कविता में प्रेरक श्रद्धा–भक्ति जगाई गई है।

व्याख्या

(1)

चार घड़ी मोर जाल तोड कै, घर के सारे काम छोड़ कै
सत्संग के मां आया कर।। टेक।।
बिना सत्संग के सत मार्ग की होती कोई जाण नहीं
गुरु वचनों को सुने बिना इस मन की छुटती बाण नहीं
अज्ञानता मैं क्युं समय बितावै, मानष देह मुश्किल तै पावे
ईश्वर के गुण गाया कर।

शब्दार्थ – चार घड़ी=चार घड़ियाँ अर्थात् थोड़ा समय, सत्संग के मां=सत्संग में, सत मार्ग= सच्चे मार्ग, जाण=पहचान, बाण=आदत, मानष देह=मनुष्य का शरीर, पावै=मिलता है।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने सत्संग के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए सत्संग और ईश्वर भक्ति पर बल दिया है।

व्याख्या – संत साधुराम मानव को गतिशील रहने के लिए उपदेश देते हुए कहते हैं कि तुम थोड़ी देर के लिए अपनी सारी मोह–माया को त्यागकर और घर के सभी कार्यों को छोड़कर सत्संग में आया करो। सत्संग के बिना सच्चे मार्ग की पहचान नहीं होती। सच्चे मार्ग की पहचान तो सत्संग के द्वारा ही हो सकती है। अतः सत्संग में जाना चाहिए। गुरु ही मनुष्य को ज्ञान देता है और उसके विकारों को दूर करता है और विचारो को शुद्ध करता है। गुरु के वचनों को सुने बिना हमारे मन की विषय–वासनाओं के प्रति आकर्षित होने की आदत नहीं छूटती। हे मनुष्य ! तुम्हे अपना

समय अज्ञानता में नहीं बिताना चाहिए। हमें यह मानव–जीवन बहुत कठिनता से प्राप्त हुआ है। इसकी सार्थकता सत्संग में जाने और ईश्वर के गुणों को स्मरण करने में है। अतः सत्संग में जाना चाहिए और मोहमाया को त्यागकर ईश्वर भक्ति में मन लगाना चाहिए।

विशेष –

(i) उपदेशात्मक स्वर में मानव को समझाया है कि ईश्वर की ओर उन्मुख होना चाहिए।

(ii) सत्संग ही सच्चे मार्ग की पहचान कराता है।

(iii) सच्चा गुरु मन के विकारों को दूर करके उसे दृढ़ बनाता है।

(iv) मानव देह कठिनता से प्राप्त होती है। अतः ईश्वर का गुण गाकर इसका सदुपयोग करना चाहिए।

(v) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vi) सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(2)

बिना सत्संग विवेक ना होवे महापुरुषों का कहना है।
दो दिन का ये खेल तमाशा सदा नहीं यहाँ रहना है।।
सब काम सिद्ध हो जांगे तेरे मूर्ख मन को शाम सुवेरे
हरि सुमरण में लाया कर।

शब्दार्थ – विवेक=ज्ञान, होवे=होता है, जांगे=जाएंगे, हरि सुमरण=ईश्वर के नाम का स्मरण।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने सत्संग की महिमा बताते हुए ईश्वर के नाम स्मरण पर बल दिया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि सत्संग से ज्ञान मिलता है। महापुरुष भी यही कहते हैं कि सत्संग के बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। सांसारिक आकर्षण तो दो–दिन के अर्थात् थोड़े समय के हैं। मनुष्य का शरीर नश्वर है। उसने हमेशा इस संसार में नहीं रहना है। मृत्यु अवश्यंभावी है और मनुष्य ने अंततः नष्ट होना है। कवि मनुष्य को संबोधित करते हुए कहता है कि हे मूर्ख मनुष्य ! तुम्हारे सभी कार्य ईश्वर के नाम स्मरण से ही सिद्ध हो सकते हैं। अतः प्रातः सायं ईश्वर के नाम का स्मरण करना चाहिए। नाम स्मरण शक्ति प्रदान करता है।

विशेष –

(i) सत्संग की महिमा के साथ–साथ ईश्वर के नाम–स्मरण पर प्रकाश डाला है।

(ii) ज्ञान की प्राप्ति सत्संग से ही संभव है।

(iii) ईश्वर के नाम–स्मरण से ही समान कार्यों की सिद्धि संभव है।

(iv) आकर्षक उपदेशात्मक स्वर है।

(v) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vi) 'दो दिन का ये खेल तमाशा' में संसार की नश्वरता की ओर संकेत करता है।

(vii) भाषा में सरलता, सहजता और सरसता है।

(viii) स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(3)

भजन करने से ज्ञान का मार्ग सहज में ही पावेगा।
फेर देह न्यारी मैं हूँ न्यारा ऐसे मन संकल्प ठावेगा।

बतावेगा गुरु भेद ये सारा, तत्वमसी का लावै नारा।।

आकै दर्शन पाया कर।

शब्दार्थ – सहज=आसानी से, फेर=फिर, न्यारी=भिन्न, अलग, ठावेगा=उठाएगा, भेद=रहस्य, तत्वमसी=तू ही, लावैं=लगाए, आकै=आकर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियो में उन्होंने ईश्वर–भक्ति और गुरु के महत्त्व को प्रतिपादित किया है।

व्याख्या – संत कवि साधुराम कहते हैं कि हे मनुष्य ! ईश्वर का भजन करने से ही तुम्हें ज्ञान का मार्ग सरलता से प्राप्त हो सकेगा। यदि ईश्वर का भजन नहीं करोगे तो तुम्हें ज्ञान का मार्ग नहीं मिलेगा। ज्ञान का मार्ग पाने के लिए ईश्वर का भजन आवश्यक है। जब तुम ईश्वर का भजन करोगे और तुम्हें ज्ञान का मार्ग मिल जाएगा तो फिर तुम्हारे मनव में इस प्रकार के अनेक संकल्प उठेंगे कि तुम्हारा शरीर अलग है और आत्मा अलग है। तुम्हारे इन सभी संकल्पों का समाधान गुरु ही कर सकता है। गुरु ही तुम्हें शरीर और आत्मा का रहस्य बताएगा। 'तू ही ब्रह्म है' का नारा लगाकर तुम गुरु के दर्शनों को पाने के लिए जाया करो।

विशेष –

(i) ईश्वर–भक्ति तथा गुरु के महत्त्व को स्पष्ट किया गया है।

(ii) ज्ञान के मार्ग को सरलता से पाने के लिए ईश्वर भजन आवश्यक है।

(iii) गुरु ही हमारे समस्त संकल्पों–विकल्पों का समाधान करता है।

(iv) भाषा की सरलता, प्रवाहमयता और लयात्मकता द्रष्टव्य है।

(v) प्रभावी उपदेशात्मकता मुखरित हुई है।

(vi) स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(4)

साधु राम बिना सत्संग के मिटता देह अभिमान नहीं

लाख जतन करने पर भी गुरु बिन होता ज्ञान नहीं

बस ये ही मेरी समझ में आया कण कण में है ब्रह्म समाया

ज्ञान गंग मैं नहाया कर।।

शब्दार्थ – देह अभिमान=शरीर का घमंड, जतन=यत्न, प्रयास, समाया=व्याप्त, ज्ञान–गंग=ज्ञान रूपी गंगा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने सत्संग एवं गुरु के महत्त्व पर बल दिया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि सत्संग के बिना अपने शरीर की सुंदरता और शक्ति का घमंड नहीं मिटता। सत्संग के द्वारा मिलने वाले ज्ञान से ही अभिमान नष्ट होता है। गुरु का हमारे जीवन में विशेष महत्त्व है। लाख प्रयास करने पर भी गुरु के बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। कवि का मत है कि इस संसार के कण–कण में ईश्वर समाया हुआ है। यह उसे भली प्रकार समझ में आ गया है। वे मनुष्य को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि उसे गुरु के ज्ञान रूपी गंगा में नहाना चाहिए। सच है, चिंतन से दिशा मिलती है।

विशेष –

(i) सत्संग से ही अभिमान को नष्ट किया जा सकता है।

(ii) गुरु के बिना ज्ञान की प्राप्ति असंभव है।

(iii) ईश्वर कण–कण में व्याप्त है।

(iv) आकर्षक उपदेशात्मक स्वर है।

(v) भाषा की सरलता, सहजता, सरसता और लयात्मकता द्रष्टव्य है।

(vi) 'ज्ञान–गंगा' में रूपक तथा 'कण–कण' में पुनरुक्तिप्रकाश अलंकार है।

(vii) शांत रंस का सुंदर परिपाक है।

(5)

चित्त की चिंता छोड़ पहरले चेतन का बाणा।
सोह सोह बोल छुट जैगा तेरा आणा जाणा।। टेक।।
नौ दस मास पाछै तू धरती पै आया।
पांच सात दस साल बालकां मैं खेल्या और खाया
चढ़ी जवानी मस्तानी मैं तु बणग्या कटखाण्याा।
चोरी जारी झूठ कपट कर फंस गया बैलां मैं
राम नाम ना याद रहा तौं रमग्या सैलां मैं
किसी गोरी की गैलां में तौं बणग्या गिरकाणा।

शब्दार्थ – चित्त=हृदय, पहरले=पहन ले, चेतन=चेतनता, बाणा=वेश, सोंह=सो+अहं (वह मैं ही हूँ), जैगा=जाएगा, आणा जाणा=आवागमन, पाछै=पीछे, बाद में, पै=पर, बालकां मैं=बच्चों में, खेलया=खेला। बणग्या=बन गया, कटखाणा=काट खाने वाला, अहंकारी, जारी=परस्त्रीगमन, रमग्या=लीन हो गया, सैलां=सैर सपाटा, गैला=के साथ।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने मनुष्य को जीवन में ईश्वर के नाम को भुलाकर अन्य बुरे कार्यों में लिप्त रहने के लिए फटकार लगाई है।

व्याख्या – संत कवि साधुराम कहते हैं कि हे मनुष्य ! तुम अपने हृदय की समस्त चिंताओं का त्याग करके ईश्वर को जानने के लिए जागरूक रहो। सदा ही 'सोऽहम्' अर्थात् 'वह ब्रह्म मैं ही हूं' का बार–बार उच्चारण करते रहो। इससे तुम्हारा इस संसार में आवागमन छूट जाएगा अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति हो जाएगी। कवि मनुष्य को समझाते हुए कहता है कि माँ के गर्भ में नौ–दस महीने के पश्चात् तुम्हारा जन्म हुआ और आयु के पाँच–सात वर्ष बच्चों के साथ खेलने में व्यस्त कर दिए। उसके बाद जवानी आने पर तुम निरंतर अहंकार में डूबे रहे और चोरी, परस्त्रीगमन, झूठ, धोखाधड़ी जैसे बुरे कर्मों में फंसे रहे। तुमने राम के नाम को भुला दिया और सैर–सपाटों में डूबे रहे अर्थात् ईश्वर–भक्ति को त्यागकर अन्य सांसारिक कार्यों में व्यस्त रहे। इसके साथ–साथ तुम किसी नारी के प्रेम में फंसकर अपने जीवन को नष्ट करते रहे।

विशेष –

(i) मनुष्य को जीवन में बुरे कार्यों में डूबे रहने के कारण लताड़ा है।

(ii) मनुष्य को अपने भीतर छिपे ब्रह्म को पहचानने की ओर प्रेरित किया है।

(iii) मनुष्य जवानी में अहंकारी होकर दूसरों से ईर्ष्या करने लगता है।

(iv) वह नारी के प्रेम में फंसकर ईश्वर को भुला देता है।

(v) सुन्दर प्रतीकात्मकता है।

(vi) भाषा में सरलता, सहजता और प्रवाहमयता है।

(vii) अनुप्रास अलंकार सुन्दर योजना है।

(viii) उद्‌बोधन शैली का प्रभावी रूप है।

(6)

दो दिन की जिन्दगानी मूर्ख क्यों होर्‌या मगरूर

काल बली का हुक्म टलै ना जाना पड़ै जरूर।
तेरे दफ्तर मैं लिखे कसूर घूर कै मनवा लेगा थाणा।
साधु राम भजन बिना तेरा कोई नहीं साथी।
माई राम दुविधा में फिरै दुनिया धक्के खाती।
निक्का राम की मंडली गाती बांगर का गाणा।।

शब्दार्थ – जिन्दगानी=जिन्दगी, जीवन, होर्‌या=हो रहा। मगरूर=अभिमानी, हुक्म=आदेश, कसूर=अपराध, बागर का गाणा=हरियाणा क्षेत्र के गीत।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने जीवन की नश्वरता को स्पष्ट करते हुए ईश्वर–भजन पर बल दिया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि हे मूर्ख मनुष्य ! तुम्हारा यह जीवन अत्यंत छोटा है। इस क्षणभंगुर जीवन पर अभिमान करना मूर्खता है। काल परमशक्तिशाली है। उससे कोई बच नहीं सकता। काल के आदेश को कोई टाल नहीं सकता और सभी को उसके आदेश पर संसार से जाना पड़ता है। तुम्हारे द्वारा किए गए सभी बुरे कार्यों और अपराधों को वह ईश्वर मनवा लेगा और तुम्हें उसका दंड भुगतना पड़ेगा। साधुराम जी कहते हैं कि यह बात भली प्रकार जान ली कि ईश्वर के भजन के अतिरिक्त इस संसार में तुम्हारा कोई भी अन्य मित्र नहीं है। माई राम भी दुविधा में हैं और संसार धक्के खाता फिर रहा है तथा निक्का राम की मंडली हरियाणवी सांग गा रही है।

विशेष –

(i) जीवन की क्षणभंगुरता पर प्रकाश डालते हुए मानव को ईश्वरोन्मुख होने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) काल की शक्ति पर प्रकाश डाला गया है।

(iii) ईश्वर भजन को ही सच्चा मित्र बताया गया है।

(iv) आडंबरी लोगों पर आक्षेप किया गया है।

(v) सुंदर उपदेशात्मक स्वर है।

(vi) उर्दू–फारसी शब्दावली का सहज प्रयोग है।

(vii) सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(7)

जिसकै खटकी खटक, भूल्या चटक, मटक,
गया झटक, पटक, घट मैं रटना लागी।। टेक।।
जिनके लाणी प्रभु मिलन की आशा वै करगे घर फूक तमाशा।
तजा घर वासा भूखा प्यासा भोग विलासा हो गयै वैरागी।
दुई हुई दूरधार लई समता त्याग दिया छोह द्रोह मोह ममता।
सबसे नमता धीजता छमता हो गया रमता चित कुमता त्यागी।।

शब्दार्थ – जिसकै=जिसमें, खटकी=खटक गई, भूल्या=भूल गया, चटक=चमक–दमक, झटक पटक=झटक देना, फैंकना, घट=शरीर, रटना=ईश्वर की लगन, वैं करगे=वे लोग कर गए हैं, घर फूक=घर को जलाकर, तजा=त्याग दिया, घर वासा=घर में निवास, वैरागी=विरक्त, संन्यासी, दुई=दुविधा, धार लई=धारण कर ली, समता=समानता, छोह=क्रोध, गुस्सा, द्रोह=वैरभाव, छमता=क्षमा, कुमता=कुमति, बुरे विचार।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इनमें उन्होंने बताया है कि जिसे प्रभु मिलन की लगन लग जाती है, वह समस्त सुखों और बुराइयों को त्याग कर प्रभु में ही तल्लीन

रहता है।

व्याख्या – संत कवि साधुराम जी कहते हैं कि जिस व्यक्ति के भीतर राम नाम की धुन लग जाती है वह चमक–दमक रूपी सांसारिक आकर्षणों को भूल जाता है। वह अपने समस्त विषय–विकारों को अपने से दूर झटककर फेंक देता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिन व्यक्तियों को प्रभु–मिलन की आशा की लगन लग जाती है, वे सदा घर फूंक कर तमाशा देखते हैं अर्थात् बिना किसी की परवाह किए सभी सांसारिक सुख–सुविधाओं को त्यागकर विरक्त हो गए हैं। उस व्यक्ति की आत्मा–परमात्मा संबंधी समस्त दुविधा दूर हो जाती है और वह समता धारण कर लेता है। वह क्रोध, वैर भाव, मोह और ममता को त्यागकर ईश्वर में लीन रहता है। वह सबके साथ विनम्रता का व्यवहार करता है। वह धैर्य और क्षमा की मूर्ति बन जाता है। उसका मन बुरे विचारों को त्यागकर ईश्वर में तल्लीन रहने लगता है। व्यक्ति का प्रभाव दर्शाया गया है।

विशेष –

(i) प्रभु मिलन की आशा की लगन लगे व्यक्ति की स्थिति का सजीव चित्रांकन है।

(ii) प्रभु मिलन के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करना पड़ता है।

(iii) ईश्वर–प्रेम के मार्ग की कठिनता की ओर संकेत है।

(iv) चटक, मटक, झटक, पटक में आकर्षक ध्वन्यात्मकता है।

(v) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vi) सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(vii) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(8)

शब्द स्पर्श रूप रस गंधा काट दिया इन पांचों का फंदा
खुल गया जंदा चमका चंदा आशिक बंदा अंदर धून लागी।
हो अलमस्त धार लई मस्ती आत्मा हरदम रहती हँसती
जंगल बस्ती महंगी सस्ती-साधु गृहस्थि करणी तै पागी।।

शब्दार्थ – फंदा=रस्सी, जंदा=ताला, चंदा=चंद्रमा, बंदा=मनुष्य, अलमस्त=मतवाला, बेफिक्र, हरदम=हर समय, प्रत्येक क्षण, करणी=कार्य, पागी=डूबना, रम जाना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने ईश्वर की ओर उन्मुख हुए व्यक्ति की स्थिति का प्रभावी चित्रण किया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि जो मनुष्य परमात्मा के रंग में रंग जाता है तो वह शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध अपनी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को पूर्णतः अपने नियंत्रण में कर लेता है। इसके आकर्षण रूपी फंदे को काट स्वयं को मुक्त कर लेता है। उसके भीतर के दरवाजों पर लगे सभी ताले खुल जाते हैं और उसे अपने भीतर ब्रह्म रूपी प्रकाश फैलाने वाले चंद्रमा के दर्शन हो जाते हैं। जीवात्मा परमात्मा के प्रति प्रेम भाव में निमग्न हो जाती है। वह प्रेमी बन जाती है और उस मनुष्य के भीतर एक विचित्र धुन सवार हो जाती है और वह उस ब्रह्म की ओर आकर्षित हो जाता है। वह मतवाला होकर मस्ती को धारण कर लेता है और उसकी आत्मा हर पल अपनी ही मौज में प्रसन्न रहने लगती है। वह पूर्ण रूप से प्रसन्नता से भर जाती है। साधु व्यक्ति को जंगल–बस्ती तथा महंगे–सस्ते से कोई सरोकार नहीं होता, किंतु गृहस्थी इन कार्यों में डूबा रहता है।

विशेष –

(i) प्रभु भक्त की तल्लीनता का चित्रण किया है।

(ii) ईश्वर की धुन में लगा व्यक्ति एक विचित्र मस्ती में मतवाला हो उठता है।

(iii) ईश्वर–मिलन से आत्मा को प्रसन्नता प्राप्त होती है।

(iv) अपने ही मन में ब्रह्म को पहचानने के कारण 'अहं ब्रह्मोऽस्मि' की अनुभूति व्यक्त हुई है।

(v) पांचाकें से अभिप्राय पाँच ज्ञानेन्द्रियों शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंध आदि से है।

(vi) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vii) सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(viii) शांत रस का परिपाक है।

(9)

निराकार साकार ब्रह्म का पार नहीं कोई पाता है।
कुरुक्षेत्र की शुद्ध भूमि तीन लोक की माता है।। टेक।।
विष्णु जल की नाभि कमल से ब्रह्मा जी का अवतार हुआ।
चतुर्मुखी ब्रह्मा के मुख से प्रकट शुद्ध ऊँकार हुआ।।
पद्मासन से करी तपस्या च्यार वेद विस्तार हुआ।
कमलासन कुरुक्षेत्रा भूमि मुक्ति का द्वार हुआ
कुरुक्षेत्र है धर्म क्षेत्र गीता में पहले गाता है।

शब्दार्थ – निराकार=आकार रहित, निर्गुण, साकार=आकार सहित, सगुण, तीन=तीनों, चतुर्मुखी=चार मुख वाले, पद्मासन=कमल का आसन, च्यार=चार।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने कुरुक्षेत्र का पौराणिक महत्त्व बताते हुए कुरुक्षेत्र की महिमा का गुणगान किया है।

व्याख्या – चर्चित संत साधुराम कहते हैं कि निराकार और साकार ब्रह्म की थाह लेना अत्यंत कठिन है। कुरुक्षेत्र की भूमि शुद्ध है तथा तीनों लोकों की माता है। यह कहा जाता है कि भगवान् विष्णु जी की नाभि से निकले कमल से इस सृष्टि के उत्पन्नकर्त्ता ब्रह्मा का अवतार हुआ था। चार मुख वाले ब्रह्मा जी के मुख से ही सर्वप्रथम शुद्ध और पवित्र ओंकार शब्द का उच्चारण हुआ था। उन्होंने अपने पद्मासन पर तपस्या की और चार वेदों की रचना करके उनका प्रचार–प्रसार इस पृथ्वी पर किया। कमल के आसन के समान पवित्र कुरुक्षेत्र भूमि भक्ति और मोक्ष का द्वार है। कुरुक्षेत्र धर्मभूमि है, यहां धर्म का बीज बोया गया और यहीं पर श्रीकृष्ण ने सर्वप्रथम गीता का उपदेश अर्जुन को दिया था।

विशेष –

(i) कुरुक्षेत्र को धर्म क्षेत्र कहते हुए इसकी महत्ता पर प्रकाश डाला है।

(ii) भगवान विष्णु की नाभि से ब्रह्मा जी का निकलना, ब्रह्मा द्वारा चार वेदों की रचना जैसे पौराणिक सदर्भों का उल्लेख है।

(iii) ब्रह्मा जी के मुख से सर्वप्रथम 'ओंकार' शब्द उच्चारित हुआ था।

(iv) कुरुक्षेत्र को मुक्ति और भक्ति का द्वार कहा गया है।

(v) तत्सम शब्दावली की प्रधानता है।

(vi) भाषा सरल, सहज और प्रवाहमयी है।

(vii) 'नाभि–कमल' में नाभि रूपक अलंकार है।

(viii) शांत रस का परिपाक है।

(10)

सब देशों के किए पाप गंगा में नहा कर कटते हैं
गंगा जी मैं करे पाप बद्रीनारायण मैं हटते हैं
श्री बद्रीनाथ के सभी पाप कांशी जी मैं छुटते हैं
कांशी जी के किया पाप कुरुक्षेत्र भूमि में मिटते हैं
धर्म बीज बोवण का खेत यह कुरुक्षेत्र कहलाता है।

शब्दार्थ – मैं=में, हटते हैं=दूर होते हैं, समाप्त होते हैं, धर्म बीज=धर्म रूपी बीज।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इनमें उन्होंने कुरुक्षेत्र की महिमा का गुणगान किया है।

व्याख्या – चर्चित संत साधुराम जी कहते हैं कि सभी देशों में किए गए बुरे कार्य और पापों से गंगा जी में स्नान करके मुक्ति मिलती है। जो व्यक्ति गंगा जी के स्थान पर पाप–कार्य करता है, उसके वे पाप बद्री नारायण तीर्थ पर जाकर समाप्त हो जाते हैं। जो बद्रीनाथ पर पाप करता है, उसको इन पापों से छुटकारा काशी में जाकर मिलता है किन्तु जो व्यक्ति काशी जी में भी पाप–कार्य करता है तो उसके सभी पाप कुरुक्षेत्र की भूमि पर आकर अपने आप ही समाप्त हो जाते हैं। कुरुक्षेत्र की महिमा का बखान करते हुए कवि कहते हैं कि कुरुक्षेत्र की भूमि धर्म–भूमि है। यह क्षेत्र धर्म के बीच बोने का खेत कहलाता है अर्थात् यहाँ धार्मिक कार्यों के फल की प्राप्ति हो जाती है।

विशेष –

(i) कुरुक्षेत्र को सभी तीर्थों से श्रेष्ठ सिद्ध करते हुए कुरुक्षेत्र की महत्ता पर प्रकाश डाला है।

(ii) कुरुक्षेत्र की भूमि को धर्म–भूमि तथा धर्म के बीच बोने का खेत कहा गया है।

(iii) भाषा में सरलता, सहजता और सरसता है।

(iv) 'धर्म–बीज' में रूपक अलंकार है।

(v) भाषा सरल, सहज और प्रवाहमयी है।

(vi) शांत रस का परिपाक है।

(v) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vi) प्रसार गुण सम्पन्न शैली है।

(11)

गंगा जी के जल में मुक्ति काशी के जल-थल मैं।
कुरुक्षेत्र में तीनों मुक्ति अन्तरिक्ष और जल थल मैं
सतरां गुणाकर्म फल मिलता कुरुक्षेत्र में पल पल मैं
काग नहीं कोई रह रात को कुरुक्षेत्र के जंगल में
महापापी नर्दक मैं मर कर नहीं नरक मैं जाता है।।

शब्दार्थ – मुक्ति=मोक्ष, जल–थल=जल और स्थल, सतरां=सत्रह, काग=कौआ।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इनमें उन्होंने कुरुक्षेत्र की महिमा का गुणगान किया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि पवित्र स्थान गंगा जी के जल में मुक्ति है और काशी जी के जल और स्थल में मुक्ति है किंतु कुरुक्षेत्र में तो अंतरिक्ष, जल और स्थल तीनों में ही मुक्ति–प्राप्ति का मार्ग विद्यमान् है। कुरुक्षेत्र की भूमि पर हमारे द्वारा किए गए पुण्य कर्मों का फल एक–एक पल में सत्रह गुणा मिलता है। कुरुक्षेत्र की भूमि पावन

भूमि है। यहाँ के जंगलों में कौए रात में भी नहीं रहते हैं अर्थात् कुरुक्षेत्र में दुष्प्रवृत्ति के लोग नहीं रहत हैं। यहां तो नर्दक में करने वाला महापापी भी नरक में जाने से बच जाता है।

विशेष –

(i) कुरुक्षेत्र की भूमि के महत्त्व पर प्रकाश डाला है।

(ii) कुरुक्षेत्र की भूमि पर अंतरिक्ष, अल और थल तीनों प्रकार की मुक्ति सरल है।

(iii) कुरुक्षेत्र की भूमि की पवित्रता के कारण ही यहां पुण्यों का फल कई गुणा मिलता है।

(iv) तत्सम शब्दावली का सुन्दर प्रयोग है।

(v) भाषा सरल, सहज और प्रवाहमयी है।

(vi) अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(vii) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(vi) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(12)

पल पल पल पल बहता जाऊं भवसागर मझधार,
गुरु बिन कौन लखावै पार।। टेक।।
भव सागर का अंत नहीं ज्यूं तृष्णा का विस्तार
काम क्रोध मद लोभ मोह मछ पल मैं करैं संघार
मन के मनोरथ खारा पानी लहरें मौज बहार
राग द्वैष की भौंरी पड़ रही डूब रहा संसार।

शब्दार्थ – भवसागर=संसार रूपी सागर, मझधार=धारा के बीच में, लखावै=लँघा सकता है, ज्यूँ=जैसे, तृष्णा=इच्छा, कामना, विस्तार=फैलाव, मछ=मगरमच्छ, संघार=संहार, मनोरथ=मन की इच्छाएं, भौंरी=भँवर, राग=लगाव, द्वेष=दुराव।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने सागर के माध्यम से सांसारिक मानव की स्थिति का सुंदर चित्रण किया है।

व्याख्या – कवि साधुराम जी कहते हैं कि मैं धीरे–धीरे इस संसार रूपी सागर की मझधार अर्थात् बीच मे बहता जा रहा हूँ। इस संसार रूपी सागर से गुरु के बिना कोई अन्य पार नहीं उतर सकता। गुरु ही अपने ज्ञान से संसार रूपी सागर से पार उतर सकता है। इस संसार रूपी सागर का उसी प्रकार अंत नहीं है जैसे मनुष्य की इच्छाओं का अंत नहीं होता। इस संसार रूपी सागर में काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह रूपी मगरमच्छ निरंतर मनुष्य का संहार करते रहते हैं अर्थात् मनुष्य सदैव इनमें उलझा रहता है। मनुष्य के मन में सभी मनोरथ खारे पानी के समान सदा विद्यमान रहते हैं। उनमें किसी प्रकार की कमी नहीं होती है। संसार रूपी सागर में उठने वाली लहरें उसे मस्त बनाकर रखती हैं। इस सागर में निरंतर अनुराग, द्वेष रूपी भंवर पड़ रहे हैं जिसमें सांसारिक मनुष्य डूब रहा है।

विशेष –

(i) मनुष्यों के संसार रूपी सागर में डूबे रहने का सुंदर चित्रण किय है।

(ii) गुरु के ज्ञान से ही भवसागर से पार उतरना संभव है।

(iii) मन के मनोरथों को 'खारा पानी' कहकर उनी निस्सारता को प्रकट किया है।

(iv) काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह को मगरमच्छ की संज्ञा दी गई है तथा परस्पर राग–द्वेष को सागर में उठने वाली भँवरें कहा गया है।

(v) सांगरूपक अलंकार का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) भाषा की सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(vii) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(vii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(13)

रात अंधेरी नाव पुरानी कोई ना खेवनहार
डगमग डगमग डोल उठाया दिल किसे करूँ पुकार।
बादल गरजैं बिजली चमकैं बरसै मूसलाधार।
साधुराम शरण सत्गुरु की बेड़ा पार उतार।।

शब्दार्थ – खेवनहार=मल्लाह, पथ प्रदर्शक, गरजै=गरज रहे हैं, चमकै=चमक रही है।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने गुरु को संसार रूपी सागर से पार उतारने वाला बताया है।

व्याख्या – संत साधुराम कहते हैं कि मेरे चारों ओर अज्ञान रूपी अंधकार छाया हुआ है। इस संसार रूपी सागर में मेरे शरीर रूपी नाव अब पुरानी हो चुकी है और इस सागर में कोई भी पथ प्रदर्शक नहीं है। मेरा मन डगमगा रहा है परंतु यह समझ नहीं आता कि ऐसे समय में किसके सामने पुकार करूँ। अब तो बादल भी गरजने लगे हैं और बिजली चमकने के साथ–साथ मूसलाधार वर्षा भी हो रही है अर्थात् चारों ओर से कठिनाइयों ने घेर लिया है। साधुराम जी कहते हैं कि हे सच्चे गुरु, मैं आपकी शरण में हूँ। आप ही मेरे जीवन रूपी बेड़े को पार उतार सकते हो। मैं तो असहाय हूँ, आप मुझ पर दया कीजिए।

विशेष –

(i) सागर के रूपक के माध्यम से मनुष्य को गुरु की शरण में जाने की ओर प्रेरित किया है।

(ii) अंधेरी रात 'अज्ञानता' तथा पुरानी नाव 'बूढ़े शरीर' का प्रतीक है।

(iii) सच्चा गुरु ही भवसागर से हमें पार उतार सकता है।

(iv) सुंदर प्रतीकात्मकता है।

(v) सांगरूपक सुन्दर योजना है।

(vi) 'डगमग–डगमग' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(vii) भाषा की सरलता, सहजता और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में अभिवृद्धि हुई है।

(viii) शांत रस का परिपाक है।

(viii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(14)

यू मनवा नाम बिना दुख पावै
कौन इसे समझावै।। टेक।।
नानक दुखिया सब संसारा-सो सुखिया जो नाम आधारा
नाम से प्रेम लगावै।।
नाम रत्न धन जिसने पाया-लोक जीत परलोक बसाया।
नित अमृत फल खावै।
सच्चा नाम और सब झूठा-कर्म धर्म ठगुवों ने लूटा

नाम का अंत ना आवै।।

मौका मत चूको मेरे भाई-स्वांस स्वांस में करो कमाई

साधु राम सुनावै।।

शब्दार्थ – मनवा=मन, दुखिया=दुःखी, सुखिया=सुखी, आधारा=आधारित, नित=प्रतिदिन, ठगुवों=ठगों, स्वांस–स्वांस=प्रत्येक सांस में।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ प्रसिद्ध कवि साधुराम द्वारा रचित हैं। इन पंक्तियों में उन्होंने ईश्वर के नाम–स्मरण पर बल दिया है।

व्याख्या – संत कवि साधुराम कहते हैं कि ये हमारा मन ईश्वर के नाम के बिना दुःख प्राप्त करता है। इसे कैसे समझाया जाए ? कवि कहता है कि गुरु नानक भी कह गए हैं कि इस संसार में सभी दुःखी हैं, किंतु जो व्यक्ति ईश्वर के नाम से प्रेम लगा लेता है और उन्हीं के नाम को अपने नाम को अपने जीवन का आधार बना लेता है, वही सुखी रह सकता है। जिस व्यक्ति को ईश्वर के नाम का रत्न रूपी धन प्राप्त हो जाता है, वह व्यक्ति इस संसार को जीत लेता है और मरने के बाद स्वर्ग में निवास करता है तथा वहां प्रतिदिन अमृत फल रूपी ईश्वर के दर्शनों को प्राप्त करता है। इस संसार में केवल ईश्वर का नाम ही सच्चा है और बाकी सब व्यर्थ और झूठा है। धर्म और कर्म को धर्म के ठेकेदारों रूपी ठगों ने लूट लिया है किंतु ईश्वर के नाम को कोई नहीं मिटा सकता, उसका कभी अंत नहीं होता। साधुराम कवि मानव को सुनाते हुए कहते हैं कि हे मानव, तुम्हें जन्म पाकर यह मौका नहीं चूकना चाहिए। तुम अपने जीवन की प्रत्येक सांस में ईश्वर का नाम बसा कर भक्ति की सच्ची कमाई करो।

विशेष –

(i) ईश्वर के नाम–स्मरण की महिमा पर प्रकाश डाला है।

(ii) 'नानक दुखिया..... जो नाम आधारा से स्पष्ट है कि कवि पर गुरु नानक की वाणी का प्रभाव है।

(iii) कवि का नाम स्मरण को ही सच्चा एवं सच्ची कमाई बताया है।

(iv) भाषा सरल, सहज और सरस है।

(v) अनुप्रास एवं रूपक अलंकार का सुंदर प्रयोग है।

(vi) लयात्मकता द्रष्टव्य है।

(vii) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(viii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 "साधुराम के काव्य में ज्ञान, भक्ति और दर्शन का अद्‌भुत समन्वय मिलता है"- कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – साधुराम हरियाणा के प्रसिद्ध संत एवं चिंतनशील कवि थे। उनका काव्य ज्ञान, भक्ति और दर्शन का भंडार है। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से ज्ञान, भक्ति और दर्शन की चर्चा की है। उनके काव्य में उपलब्ध ज्ञान, दर्शन एवं भक्ति के समंवय को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत देखा जा सकता है–

1. **ज्ञान** – जीवन को गतिशील बनाने का आधार ज्ञान है। साधुराम काव्य में ज्ञान का विपुल भण्डार है। उन्होंने मानव को ज्ञान के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी है। उनके काव्य में ज्ञान भरी बातें उनके अपने अनुभवों पर आधारित हैं। उन्होंने मानव को समझाया है कि वह सांसारिक बंधनों को छोड़कर ईश्वर की ओर उन्मुख हो। उन्होंने अत्यंत सरल एवं सहज उदाहरणों से मानव को संसार में उसकी स्थिति बताकर उसे सत्मार्ग पर चलने की ओर प्रेरित किया है–

नौ दस मास पाछै तू धरती पै आया।

पांच सात दस साल बालकां मैं खेल्या और खाया

चढ़ी जवानी मस्तानी मैं तु बणग्या कटखाण्या।
चोरी जारी झूठ कपट कर फंस गया बैलां मैं
राम नाम ना याद रहा तौं रमग्या सैलां मैं
किसी गौरी की गैलां में तौं बणग्या गिरकाणा।

कवि साधुराम ने मानव को चेताया है कि यदि यह सांसारिक बंधनों में बंधा रहेगा और अपने नश्वर जीवन को ही सब कुछ समझकर उसी में फँसा रहेगा तो उसकी मुक्ति नहीं होगी। वे मानव को मृत्यु का भय दिखाते हुए समझाते हैं–

दो दिन की जिन्दगानी मूर्ख क्यों होर्‌या मगरूर
काल बली का हुक्म टलै ना जाना पड़ै जरूर।
तेरे दफ्तर मैं लिखे कसूर घूर कै मनवा लेगा थाणा।

कवि साधुराम का मत है कि संसार रूपी सागर में मनुष्यों की इच्छाओं का कोई अंत नहीं है। मनुष्य इन सांसारिक आकर्षणों में उलझा रहता है। उसे इनसे बचने का प्रयास करना चाहिए–

भव सागर का अंत नहीं ज्यूं तृष्णा का विस्तार
काम क्रोध मद लोभ मोह मद पल मैं करैं संघार

2. भक्ति –कवि साधुराम ने ईश्वर–भक्ति पर विशेष बल दिया है। उन्होंने ईश्वर भजन को ही इस संसार में सच्चा जीवन साथी बताया है और बाकी सब कुछ व्यर्थ कहा है। उन्होंने मानव को सत्संग में जाने का महत्त्व बताया है। उनका मत है कि सत्संग में जाने से व्यक्ति का अंतर्मन निर्मल हो जाता है और उसे सच्चे ज्ञान की प्राप्ति होती है–

बिना सत्संग विवेक न होवे महापुरुषों का कहना है।
दो दिन का ये खेल तमाशा सदा नहीं यहाँ रहना है।।
सब काम सिद्ध हो जांगे तेरे मूर्ख मन को शाम सुवेरे
हरि सुमरण में लाया कर।

साधुराम की मान्यता है कि ईश्वर की भक्ति करने से ही ज्ञान के मार्ग को सरलता से प्राप्त किया जा सकता है। उनका मत है कि अन्य पाखंडी साधु तो हमें सच्चे मार्ग से हटा सकते हैं। अतः हमें केवल ईश्वर को अपना सच्चा साथी मानते हुए स्वयं उसकी भक्ति करनी चाहिए।

साधु राम भजन बिना तेरा कोई नहीं साथी
माई राम दुविधा में फिरै दुनिया धक्के खाती।

साधुराम के अनुसार इस संसार से आवागमन में मुक्ति का मार्ग केवल, ईश्वर की भक्ति है–

चित्त की चिंता छोड़ पहरले चेतन का बाणा।
सोह सोह बोल छुट जैगा तेरा आणा जाणा।।

उन्होंने भक्ति के अंतर्गत ईश्वर के नाम–स्मरण पर विशेष बल दिया है। उनका मत है कि ईश्वर का नाम स्मरण ही सच्चा धन है और उसका कभी अंत नहीं होता जबकि बाकी सब नश्वर हैं–

नाम रत्न धन जिसने पाया-लोक जीत परलोक बसाया।
नित अमृत फल खावै।
सच्चा नाम और सब झूठा-कर्म धर्म ठगुवों ने लूटा
नाम का अंत ना आवै।।

3. दार्शनिकता – कवि साधुराम ने दर्शन के अंतर्गत ब्रह्म, जीव, जगत्, माया आदि पर भी विचार प्रकट किए हैं।

उनका मत है कि ब्रह्म अर्थात् ईश्वर हमारे मन के भीतर ही छिपा है। जो व्यक्ति उस ब्रह्म को जान लेता है वह समस्त दुविधा को त्यागकर उसी में लीन हो जाता है। उसे अपने भीतर एक विचित्र प्रकाश का अनुभव होता है और उसकी आत्मा हर पल प्रसन्न रहने लगती है। कवि ईश्वर–मिलन की आशा लगाए व्यक्ति का वर्णन करते हुए कहता है–

दुई हुई दूरधार लई समता त्याग दिया छोह द्रोह मोह ममता।
सबसे नमता धीजता छमता हो गया रमता चित कुमता त्यागी।।
शब्द स्पर्श रूप रस गंधा काट दिया इन पांचों का फंदा
खुल गया जंदा चमका चंदा आशिक बंदा अंदर धून लागी।

इसके अतिरिक्त उन्होंने जगत् की निःसारता को भी स्पष्ट किया है। उनका मत है कि मनुष्य 'का जीवन क्षणभगुर है। उसे अपने इस जीवन पर अभिमान नहीं करना चाहिए। जीवन की नश्वरता को उन्होंने अपने काव्य में 'दो दिन का ये खेल तमाशा सदा नहीं यहाँ रहना है' तथा 'दो दिन की जिंदगानी मूर्ख क्यों होरया मगरूर' के माध्यम से स्पष्ट किया है।

वास्तव में कवि साधुराम का काव्य मानव के लिए प्रेरणा स्रोत है। उन्होंने अपने उपदेशात्मक स्वर में मानव को सन्मार्ग पर चलने की ओर प्रेरित किया है। उनके काव्य में ज्ञान, भक्ति और दर्शन की जो त्रिवेणी प्रवाहित हुई है उससे अनेक की पिपासा शांत हुई है और होगी। इस प्रकार स्पष्ट है कि साधुराम के काव्य में ज्ञान, भक्ति और दर्शन का सुंदर और प्रेरक समन्वय है।

प्रश्न 2 साधुराम की भाषा-शैली की विवेचना कीजिए।

उत्तर – भाषा भावाभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। भावों में निखार लाने का कार्य भाषा करती है। कवि साधुराम ने भाषा के सरल और सहज रूप को अपनाया है। उन्होंने अपनी अधिकांश रचनाओं में नीतिपरक एवं उपदेशात्मक बातें कहीं हैं। अतः मानव मात्र को समझने के लिए उन्होंने भाषा की सरलता, सहजता तथा भावात्मकता की ओर अधिक ध्यान दिया है। साधुराम की भाषा में कहीं भी पांडित्य–प्रदर्शन की भावना दिखाई नहीं देती। उन्होंने तो जनसामान्य की भाषा में ही उपदेश दिए हैं। कहीं–कहीं इनकी भाषा में गूढ़ ज्ञान और हठयोग साधना से जुड़ी शब्दावली का भी प्रयोग है। साधुराम की भाषा की श्रेष्ठता निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है–

1. **सरल भाषा** – साधु राम की भाषा सरलता एवं सरसता से ओतप्रोत है। उन्होंने अपनी भाषा में साधारण जन जीवन से जुड़ी शब्दावली का प्रयोग किया है। उनके काव्य में भाषा अत्यंत सरल एवं बोधगम्य है। पाठक को पढ़कर इससे रस की प्राप्ति भी होती है। इनके द्वारा लिखे भजनों से एक विशेष आनंद मिलता है। इनकी भाषा की सरलता और सरसता के कारण ही जनसामान्य पर इनकी वाणी का शीघ्र प्रभाव है। जनसाधारण से जुड़े सरल उदाहरणों के प्रयोग ने इनकी भाषा की सरलता और सरसता में वृद्धि की है। इनकी भाषा की सरलता और सरसता निम्नलिखित पंक्तियों में द्रष्टव्य है–

बिना सत्संग विवेक न होवे महापुरुषों का कहना है।
दो दिन का ये खेल तमाशा सदा नहीं यहाँ रहना है।।
सब काम सिद्ध हो जांगे तेरे मूर्ख मन को शाम सवेरे
हरि सुमरण में लाया कर।

2. **चित्रात्मकता** – साधुराम की भाषा में चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है। कहीं–कहीं उन्होंने शब्दों के माध्यम से ऐसा चित्र खींचा है कि वह हमारे मस्तिष्क में तुरंत साकार हो उठता है। चित्रात्मकता के कारण उनकी भाषा में प्रभावोत्पादकता बढ़ गई है। उनके द्वारा खींचे गए चित्र से पाठक एवं श्रोता प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता। उदाहरणस्वरूप मझधार में फंसी जीवन–नैया का चित्र देखिए–

रात अंधेरी नाव पुरानी कोई ना खेवनहार
डगमग डगमग डोल उठाया दिल किसे करुँ पुकार।

बादल गरजैं बिजली चमकैं बरसै मूसलाधार।
साधुराम शरण सत्गुरु की बेड़ा पार उतार।।

3. शब्द-शिल्प – साधुराम की भाषा में तत्सम शब्दों की भी प्रधानता है। यद्यपि ये जनसाधारण से जुड़े कवि थे फिर भी इनके काव्य में प्रभावी तत्सम शब्दावली का प्रयोग देखने को मिलता है। इनके काव्य में प्रयुक्त तत्सम शब्दावली का निम्नलिखित उदाहरण द्रष्टव्य है–

विष्णु जल की नाभि कमल से ब्रह्मा जी का अवतार हुआ।
चतुर्मुखी ब्रह्मा के मुख से प्रकट शुद्ध ऊँकार हुआ।
पद्मासन से करी तपस्या च्यार वेद विस्तार हुआ।
कमलासन कुरुक्षेत्रा भूमि मुक्ति का द्वार हुआ।

4. अलंकार-योजना – साधुराम जी के काव्य में आए अलंकारों ने उनकी भाषा को सशक्त बना दिया है और उसके काव्य सौंदर्य में वृद्धि की है। उनके द्वारा प्रयुक्त अलंकार सायास लाए नहीं गए हैं अपितु वे सहज और स्वाभाविक रूप से आकर उसकी शोभा को बढ़ाने वाले बन गए हैं। उन्होंने अनुप्रास, रूपक, उदाहरण, पुनरुक्ति प्रकाश तथा उपमा जैसे अलंकार का खूब प्रयोग किया है। उनके काव्य में प्रयुक्त सांगरूपक का एक उदाहरण देखिए–

पल पल पल पल बहता जाऊं भवसागर मझधार,
गुरु बिन कौन लखावै पार।।
भव सागर का अंत नहीं ज्यूं तृष्णा का विस्तार
काम क्रोध मद लोभ मोह मछ पल मैं करैं संघार
मन के मनोरथ खारा पानी लहरें मौज बहार
राग द्वैष की भौंरी पड़ रही डूब रहा संसार।

5. लाक्षणिकता – साधुराम के काव्य में लाक्षणिक प्रयोग भी मिलते हैं। इनकी भाषा सर्वत्र तीर की भांति सधे हुए, सीधे और लाक्षणिक प्रयोग करती है। सांसारिक धंधों में फंसे लोगों के विषय में कवि कहता है–

चोरी जारी झूठ कपट कर फंस गया बैलां मैं
राम नाम ना याद रहा तौं रमग्या सैलां मैं
किसी गोरी की गैलां में तौं बणग्या गिरकाणा।

6. विदेशी भाषा-प्रभाव – साधुराम की भाषा में विदेशी शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। जनसामान्य में प्रचलित साधारण उर्दू–फारसी, अरबी के शब्दों का प्रयोग उनकी भाषा में मिलता है। इन शब्दों के प्रयोग से उनकी भाषा की प्रवाहमयता में वृद्धि हुई है। जैसे–

दो दिन की जिन्दगानी मूर्ख क्यों होर्या मगरूर
काल बली का हुक्म टलै ना जाना पड़ै जरूर।
तेरे दफ्तर मैं लिखे कसूर घूर कै मनवा लेगा थाणा।

वास्तव में कवि साधुराम की भाषा अत्यंत सरल, सहज और प्रवाहमयी है। इनकी भाषा में तत्सम, तद्भव के साथ–साथ विदेशी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। इनकी भाषा में प्रयुक्त अलंकारों ने भाषा के सौंदर्य में वृद्धि की है। इनके द्वारा प्रयुक्त लाक्षणिक प्रयोगों से भावाभिव्यक्ति तीव्र हो गई है। भाषा की दृष्टि से कवि साधुराम का काव्य उत्तम कोटि का कहा जा सकता है। इनकी भाषा–शैली भावानुकूल है।

प्रश्न 3 साधु राम ने 'देश-प्रेम' पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर – 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' अर्थात् जननी जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर है। जिस वस्तु से मनुष्य

का क्षणिक सम्पर्क होता है उसे भी वह कभी नहीं भूल पाता। जिस व्यक्ति के उपकार से उसका कल्याण होता है उसके प्रति वह सदा कृतज्ञ रहता है तो जहाँ उसका जन्म हुआ है, जिस मिट्टी में लोट–पोट कर वह बड़ा हुआ है, जिस धरती के अन्न–जल ने उसे पुष्ट किया है–उस जन्मभूमि को वह कैसे भूल सकता है। वह तो उसके लिए सबसे प्यारी धरती होती है। कवि साधुराम को भी अपनी जन्मभूमि कुरुक्षेत्र से बेहद लगाव है। उन्हें वह भूमि अत्यंत शुद्ध और तीनों लोकों की माता के समान प्रतीत होती है। वे कुरुक्षेत्र की भूमि को मुक्ति और भक्ति का द्वार कहकर इसका गुणगान करते हैं। उनके अनुसार कुरुक्षेत्र धर्म भूमि है–

निराकार साकार ब्रह्म का पार नहीं कोई पाता है।
कुरुक्षेत्र की शुद्ध भूमि तीन लोक की माता है।
\+ + + +
कमलासन कुरुक्षेत्रा भूमि मुक्ति का द्वार हुआ
कुरुक्षेत्र है धर्म क्षेत्र गीता मैं पहले गाता है।

कवि साधुराम कुरुक्षेत्र की भूमि की महिमा का बखान करते हुए कहते हैं कि गंगा, बद्रीनारायण और काशी जी जैसे तीर्थ स्थलों से भी श्रेष्ठ तीर्थ कुरुक्षेत्र की भूमि हैं। यहाँ आकर व्यक्ति को उसके समस्त पापों से छुटकारा मिलता है। यह भूमि वास्तव में धर्मक्षेत्र है–

सब देशों के किए पाप गंगा में नहा कर कटते हैं
गंगा जी मैं करे पाप बद्रीनारायण मैं हटते हैं
श्री बद्रीनाथ के सभी पाप कांशी जी मैं छुटते हैं
कांशी जी के किया पाप कुरुक्षेत्र भूमि में मिटते हैं
धर्म बीज बोवण का खेत यह कुरुक्षेत्र कहलाता है।

कवि साधुराम जी कुरुक्षेत्र की भूमि को स्वर्ग का द्वार मानते हैं। उनका मत है कि यदि गंगा जी के जल में स्नान करने से मुक्ति मिलती है और काशी जी के जल–थल में मुक्ति है तो कुरुक्षेत्र की पावन भूमि में तो अंतरिक्ष, जल और थल तीनों प्रकार की मुक्ति प्राप्त होती है। कुरुक्षेत्र की भूमि का इतना महत्त्व है कि यहाँ हमारे पुण्यों का सत्रह गुणा फल मिलता है। इस भूमि पर मरने वाला महापापी भी नरक में नहीं जाता–

गंगा जी के जल में मुक्ति काशी के जल-थल मैं।
कुरुक्षेत्र में तीनों मुक्ति अन्तरिक्ष और जल थल मैं
सतरां गुणाकर्म फल मिलता कुरुक्षेत्र में पल पल मैं
काग नहीं कोई रह रात को कुरुक्षेत्र के जंगल में
महापापी नर्दक मैं मर कर नहीं नरक मैं जाता है।।

इस प्रकार कवि साधुराम ने अपने काव्य के माध्यम से अपनी जन्मभूमि की महिमा का गुणगान करके उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट की है। उन्होंनें कुरुक्षेत्र की भूमि को अत्यंत पावन, स्वर्गदायिनी, तीनों लोकों की माता तथा मुक्तिदायिनी कहकर उसे समस्त तीर्थों से श्रेष्ठ बताया है। निश्चय ही साधुराम के काव्य में देश–प्रेम का उत्कृष्ट रूप चित्रित किया गया है।

7. बस्तीराम

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर सरस्वती के उपासकों की एक स्थली है। इनमें पं० बस्तीराम का विशेष स्थान है। श्री बस्तीराम हरियाणा के ऐसे कवि थे जो किसी विशेष मत–मतान्तर से बंधे हुए नहीं थे। उन्होंने विविध विषयों पर अपने भावों को प्रस्तुत किया। रोहतक जिले की झज्जर तहसील के अन्तर्गत खेड़ी सुलतान गांव में इनका जन्म सन् 1841 ई० में हुआ था। यह ब्राह्मण परिवार से संबंधित थे। इनके पिता श्री राम लाला धर्मपरायण व्यक्ति थे। श्री बस्तीराम ने अपनी प्रारंभिक शिक्षा श्री हरसुरत से प्राप्त की थी। इन्होंने कुछ समय तक वाराणसी में रहकर शिक्षा और अनुभव प्राप्त किया था। जीवन के आरंभ से ही यह मोह–माया के बंधनों में नहीं पड़े थे। ये विरक्ति का जीवन पसंद करते थे। स्वामी दयानंद सरस्वती के जीवन से बहुत प्रभावित हुए थे। उनकी शिक्षाओं को इन्होंने ग्रहण ही नहीं किया था बल्कि उनका प्रचार–प्रसार भी किया था। वैदिक धर्म के प्रति इन्हें विशेष मोह था। इन्होंने जगह–जगह घूमते हुए वैदिक धर्म का प्रचार किया था। लोगों को ज्ञान देने के साथ इन्होंने सामाजिक कुरीतियों पर चोट की थी। इनका देहावसान सन् 1958 ई० में हुआ था।

रचनाएँ – कवि की रचनाओं को भजनों के दो संग्रहों में प्रकाशित किया गया है।

साहित्यिक विशेषताएँ -

कवि ने दर्शन और भक्ति का अद्‌भुत समन्वय अपनी रचनाओं में किया है जिस कारण इन्हें प्रसिद्धि प्राप्त हुई थी। इनके हरियाणवी भजन जनमानस को प्रभावित करने वाले थे जिस कारण ये अभी भी लोगों में प्रचलित हैं। इनके काव्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **वैदिक चेतना** – श्री बस्तीराम पर स्वामी दयानंद का प्रभाव था। इसलिए इनके भजनों में वैदिक चेतना बार–बार प्रकट होती दिखाई देती है। कवि को इस बात की चिंता है कि वैदिक धर्म जनमानस को अब पहले की तरह प्रभावित नहीं करता जिस कारण उनका जीवन स्तर नीचे गिरता जा रहा है–

वैदिक धर्म लोप हुए सारे, विप्र फिरें यहाँ मारे-मारे।
नज़र पड़े चमकते कटारे, देख-देख कपि खड़ी गैया।।

वेदों में वर्णित निर्गुण ब्रह्म ही सब सुखों का प्रदाता है, वही गुणों की खान है–

आनंद के नित्य सिंध सुख भंडार गुण की खान जो।
अगम निगम अपार अद्‌भुत वेद विहित विधान जो।
निकट ते अति निकट निशदिन दूर ते अति दूर जो।
नित्य पवित्र निर्दोष निर्गुण सकल निधि भरपूर जो।

कवि की दृष्टि में परमात्मा ही सब सुख–दुखों को देने वाला है और वही जीव के बंधनों को काटकर उसे मुक्ति के मार्ग पर बढ़ा सकता है।

2. **सामाजिकता** – कवि की सारी रचनाएं समाज के कल्याण के लिए ही हैं। उनमें लोकोन्मुखता की भावना प्रमुख है। वह चाहता है कि सभी लोग शिक्षा की प्राप्ति कर देश को विकास मार्ग पर प्रवृत्त करें। शिक्षा के अभाव में ही व्यक्ति मूर्ख बन जाता है और देश को नीचे की ओर ले जाता है–

उठो भाइयो पढ़ो विद्या यही विनती हमारी है,

बिना विद्या के पढ़ने से बुरी हालत तुम्हारी है।
तुम्हीं रक्षक थे भारत के तुम्हीं में होते थे योद्धा।
तुम्हारे ही मूर्ख होने से हुआ भारत भिखारी है।।

कवि चाहता है कि लोग आपस में लड़ाई–झगड़ा न करें, मिलजुल कर रहे। वे बुरे रीति–रिवाजों का त्याग करें तथा सज्जनतापूर्वक व्यवहार करें–

करो सब मेल आपस में कपट छल को जरा त्यागो।
मिलो तुम प्रेम से सज्जन यही विनती हमारी है।।

3. **दोष-निवारण** – कवि ने समाज में बुराई की जड़ वेश्यावृत्ति और मद्यपान को माना है। जिस समाज में लोग वेश्यावृत्ति में लिप्त रहते हैं, मदिरा–सेवन करते हैं, पशुओं का वध मांस–प्राप्ति के लिए करते हैं, वे समाज के अहित का कारण बनते हैं–

विवाह आदि के उत्सव में बुला वेश्या नचाते हो।
नहीं तुम शर्म करते हो यह क्या दिल में बिचारी है।।
गंवा के धन अपने को पीवो मदिरा के पियाले।
हतो हो जीव क्यों नाहक जान अपनी सी प्यारी है।।

4. **आस्तिकता** – कवि में ईश्वर के प्रति आस्था का गहरा भाव विद्यमान है। ईश्वर ही जीव के सभी कार्यों को पूरा करने वाला है। वही उसे दुःख के सागर से बाहर निकालने का कार्य करता है। जब कष्टों की लहरियाँ जीव को परेशान करती हैं और उसे कोई और सहारा अपने आस–पास भी दिखाई नहीं देता तब ईश्वर ही एकमात्र उसकी भवसागर से पार कराने वाला बनता है–

उठे गुबरे गहरे जल के, भंवर पड़े नाना विधि छलके। हरे
इस अवसर पर हम निर्बल के, तुम्हीं हो पिता जी तुम्हीं मैया।

काम–क्रोध के घेरे में घिरा हुआ मानव स्वयं को पूरी तरह असहाय पाता है। उसे अपने चारों ओर निराशा का घोर अंधेरा फैला हुआ प्रतीत होता है तब ईश्वर ही उसे उस अंधकार से बाहर निकालता है। वही जीवन देता है और वही जीवन लेता है। कवि प्रार्थना करता है कि परमात्मा जीव को बंधनों से मुक्ति दिला दे–

मुझ को इस तन रूप किले से, निकाल दो मृत्यु के जिले से,
हरि बिन तेरे मिले से, किस बिध उतरूँ पार,
मिलो प्रभु करो मत देरी।

5. **हरियाणा-चित्रण** – कवि को अपने हरियाणा के प्रति अगाध स्नेह है। इसके प्रति अपनेपन का भाव ही नहीं है बल्कि इसके प्रति गर्व भी है। यह वह भूमि है जो सभी को खाने के लिए अनाज प्रदान करती है तथा आवश्यकता की अन्य वस्तुएँ देती है। विश्व के सारे देश सहायता के लिए इसकी ओर आशा भरी दृष्टि से देखते हैं। लंबे समय तक यह अपने महत्त्व को नहीं पा सका। कवि हरियाणा के पुनर्गठन से पहले चल बसा था पर उसे पूरा विश्वास था कि यह अपने पुराने रूप को प्राप्त कर विश्व भर में प्रतिष्ठित होगा–

हरियाणा तेरी हरियाली आना चाहती है बुलाय ले।
क्या कहूं तेरी बात पुरानी, कहत सुनत आवे नेत्रों में पानी।

6. **बाल विवाह-विरोध** – कवि ने सच्चे समाज सुधारक की तरह देश में बाल विवाह का विरोध किया है। वह कदापि नहीं चाहता कि छोटी आयु में बच्चों के विवाह हों। इससे कमजोर और बुजदिल संतान उत्पन्न देश को कमजोर बनाती है–

तजा ब्रह्मचर्य विद्या को विवाह बच्चों के हैं जारी

तभी कमजोर और बुजदिल हुए यह आज भारी हैं।
उठो अब होश में आओ बुरी रस्मों को तुम छोड़ो
नहीं दिन ब दिन सबकी अवश्य होगी ख्वारी है।

7. **भाषा-शैली** – स्वामी दयानंद सरस्वती हिंदी भाषी राज्य के न होकर भी हिंदी के गुणगायक थे। कवि ने उनकी मान्यताओं का पालन करते हुए खड़ी बोली का प्रयोग अपने काव्य के लिए किया है। उसने तत्सम और तद्भव शब्दावली का समन्वित प्रयोग किया है पर कहीं–कहीं उर्दू शब्दावली का प्रयोग भी दिखाई दे जाती है–

(क) तभी कमजोर और बुजदिल हुए यह आज भारी है।

ख) नहीं दिन ब दिन सबकी होगी ख्वारी है।

(ग) बस्तीराम को फक्त भरोसा, ना कुछ गुनी ना है गवैया।

कवि ने छंद–अलंकारों का सहज प्रयोग किया है जिस कारण भाषा के अलंकरण के साथ संगीतात्मकता का समावेश हुआ है पर कहीं भी अलंकारों का अनावश्यक रूप दिखाई नहीं देता। स्वाभाविक रूप से उन्होंने अपनी छटा दिखलाई है–

(क) अनुप्रास– आगम निगम अपार अद्भुत वेद विहित विधान जो।

(ख) पुनरुक्ति प्रकाश – देवन पति महादेव गुणनिधि रोम–रोम में रमे रहें।

(ग) उपमा – हतो हो जीव क्यों नाहक जान अपनी सी प्यारी है।

कवि ने स्थान–स्थान पर प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता का प्रयोग किया है जिससे उसके कथन को गहनता–गंभीरता की प्राप्ति हुई है। कवि ने लोकभाषा के शब्दों को भावों में गूंथ कर सरसता प्रदान की है। निश्चय ही कवि श्रेष्ठ अनुप्रेरक साहित्यकार है।

कविता-सार

आर्य समाजी विचारों से प्रभावित श्री बस्तीराम ने जिस भावना को प्रस्तुत किया है वह लोकोन्मुखी है और समाज सुधार की भावना से ओत–प्रोत है। कवि आस्तिकता के स्वर से परिपूर्ण है। यह संसार कठोर स्थितियां उत्पन्न करने वाले सागर के समान है। इसकी ऊंची–ऊंची उठती तरंगें जीवन रूपी नौका को डूबो देना चाहती हैं। कवि ईश्वर से प्रार्थना करता है कि बस वही सहारा है जो उसके जीवन की रक्षा कर सकता है। सारे देश से वैदिक धर्म के भाव लुप्त हो चुके हैं, लोग लड़ते–झगड़ते हैं। इनसे केवल ईश्वर ही बचा सकता है, वही सहायक बन सकता है। भगवान् शिव देवों के भी देव हैं। अन्य सभी देवी–देवता भी उनका स्मरण करते हैं। जिन्हें वेद भी 'नेति नेति' कहते हैं वही सभी की जीवनी शक्ति बनते हैं, सूर्य–चांद–तारों के प्रकाश के आधार बनते हैं। वही मानव के कष्टों को दूर करते हैं। कवि ने अपने हरियाणा राज्य का गुणगान करते हुए माना है कि युगों से विश्व के सारे देश इसकी ओर सहायता प्राप्त करने के लिए हाथ बढ़ाये खड़े हैं। समय ने इसे विपरीत स्थितियों में डाल दिया था पर यह फिर अपनी पुरानी स्थिति को प्राप्त कर लेगा। सारा विश्व फिर इसकी ओर सहायता के लिए देखेगा। ईश्वर ने सब प्राणियों का तन बनाया, गुण दिए हैं पर कवि उस तन से मुक्ति प्राप्त करना चाहता है। वह तो ईश्वर को शरण में चला जाना चाहता है। कवि का समाज सुधारक रूप काव्य के माध्यम से प्रकट हुआ। वह अशिक्षा–वेश्यावृत्ति, नशा, बाल–विवाह के विरोध में भाव व्यक्त करता है। इस प्रकार कविता में सामाजिकता, भक्ति और जीवन के लक्ष्य की ओर गतिशील रहने के अनूठे भाव हैं।

व्याख्या

(1)

भवसागर की धार अझारे-छूट रही नवका निर्धारे। हरे
कठिन भव और दूर किनारे-तुम बिन कोई न खिवैया।।

भवंर लपेटे में आ रही है, झकतर तोल भी खा रही है। हरे
पल पर पल बही भी जा रही है, जल्दी संभालो गहे बैया।।
वैदिक धर्म लोप हुए सारे, विप्र फिरें यहाँ मारे-मारे। हरे
नज़र पड़े चमकते कटारे, देख-देख कपि खड़ी गैया।।
उठे गुबरे गहरे जल के, भंवर पड़े नाना विधि छलके। हरे
इस अवसर पर हम निर्बल के, तुम्हीं हो पिताजी तुम्हीं मैया।
हरिसिंह भुजबल धन कोषा, किसी तरह का भी नाहे तोषा। हरे
'बस्तीराम' को फक्त भरोसा, ना कुछ गुनी ना है गवैया।। १।।

शब्दार्थ – भवसागर=दुनिया रूपी सागर, नवका=नौका, निर्धारे=बिना सहारे के, खिवैया=नाविक, मल्लाह, झकतर=झकझोर, गहे=पकड़ना, बैया=बाजू, विप्र=ब्राह्मण, नाना विधि=अनेक प्रकार के, तोषा=प्रसन्नता, फक्त=केवल, भरोसा=आश्रय।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पद्य भाग से अवतरित किया गया है जिसके रचयिता श्री बस्तीराम हैं जो आर्य समाज के प्रभाव में डूबकर जनजागृति का कार्य करते रहे थे। उन्हें इस भौतिक संसार में दुःखों के निवारण के लिए केवल ईश्वर पर ही विश्वास है इसलिए वे उससे प्रार्थना करते हैं।

व्याख्या – कवि कहता है कि इस दुनिया रूपी सागर की कष्टदायक धाराएँ अनियंत्रित होकर निरंतर आगे बढ़ रही हैं और जीवन रूपी नौका इसमें संभल नही रही। हे ईश्वर रक्षा करो। भंवर बहुत कष्टकारी है और मंजिल बहुत दूर है। तुम्हारे बिना हमारी नौका को चलाने वाला कोई नहीं है। सागर की लहरें ऊपर की ओर उठती हुई निरंतर आगे बढ़ रही हैं और हमारी नौका इसमें झंकोरे खा रही है, डगमगा रही है। यह हर पल प्रवाह में बहती जा रही है इसलिए हे स्वामी, अपने बाजू बढ़ाकर इसे डूबने से बचा लो, इसे संभालो। इस संसार से वैदिक धर्म मिट गया है और विद्वान् ब्राह्मण मारे–मारे इधर–उधर भटक रहे हैं। हे भगवान रक्षा करो। जगह–जगह विनाश की प्रतीक बनी कटारें और तलवारें दिखाई दे रही हैं। बंदर रूपी दुष्टों को देख धर्म की प्रतीक गऊएं सहम कर खड़ी हो गई हैं। जल धारा में बड़े–बड़े बुलबुले उठते दिखाई देते हैं और तरह–तरह से भंवर छलक रहे हैं। हे ईश्वर बचा लो। इस अवसर पर हम कमजोर हैं और ईश्वर आप ही हमारे रक्षक पिता हैं, माता हैं। हरि सिंह ने अपनी भुजाओं के बल से अपारा धन संग्रह किया है पर उससे किसी प्रकार का सुख नहीं मिलता। धन आत्मिक सुख नहीं खरीद सकता। कवि बस्तीराम कहता है कि हे प्रभु, मुझे तो केवल आप पर ही भरोसा है। मुझे न तो गुणगानों और न ही गाने वालों पर विश्वास है। हे ईश्वर रक्षा करो।

विशेष –

(i) ईश्वर के प्रति गहरा विश्वास प्रकट कर उनसे अपनी रक्षा की प्रार्थना की गई है।
(ii) प्रसाद गुण संपन्न शैली है।
(iii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता का विकास हुआ है।
(iv) रूपक, अनुप्रास, स्वरमैत्री, पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का सहज प्रयोग है।
(v) सुंदर प्रतीकात्मकता है।
(vi) आकर्षक गेयता है।

(2)

आनंद के नित्य सिंध सुख भंडार गुण की खान जो।
अगम निगम अपार अद्‌भुत वेद विहित विधान जो।
निकट ते अति निकट निशदिन दूर ते अति दूर जो।

नित्य पवित्र निर्दोष निर्गुण सकल निधि भरपूर जो।
देवन पति महादेव गुणनिधि रोम-रोम में रमे रहें।
करत धरत अकरत भरता हरत दुःख सुख नहीं सहैं।
वरुण इंद्र कुबेर शक्ति गणेश शारद स्मरहीं।
"नेति नेति" पुकार श्रुति शुभ संत गुरुमुख उचरहीं।।
अनंत लोक ब्रह्माण्ड ऋतु दक् करत अंतर वास हैं।
अग्नि उडुगण भक्त रवि शशी तड़ित् लेत प्रकाश हैं।
भक्त मति भूमि सुहावनी प्रेम धन कर गाइये।
प्रीति प्रभु सुंदर घटा शुभ मेघ गुण बरसाइये।
मल अविद्या दूर करके अमल उर दरशइये।
मिलत रूप स्वरूप सुंदर दुःख वियोग नशाइये।
जान जन अति निर्बल निज प्रभु मन मंदिर में आइये।
"बस्तीराम" स्वकाम धर्मार्थ मोक्ष फल पाइये।। २।।

शब्दार्थ – नित्य=सदा रहने वाला, सिंधु=सागर, अगम=जिस तक पहुंचा न जा सके, वेद विहित=वेदों के द्वारा बताए गए, निशदिन=रात–दिन, सकल=सारी, निधि=संपत्ति, भरपूर=पर्याप्त, नीति–नेति=निर्गुण ब्रह्म, श्रुति=वेद, उडुगण=नक्षत्र, रवि=सूर्य, शशी=चंद्रमा, तड़ित=बादलों में चमकने वाली बिजली, उर=हृदय।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से लिया गया है जिसके रचयिता श्री बस्तीराम हैं। कवि ने भगवान् शिव को देवाधिदेव मानते हुए उनके प्रति अपने हृदय के भावों को वाणी प्रदान की है।

व्याख्या – चर्चित कवि कहता है कि हे प्रभु, आप आनंद प्रदान करने वाले शाश्वत सागर हैं, सभी सुख आपके कारण ही प्राप्त होते हैं। आप सुख के भंडार हैं तथा सभी गुणों की खान हैं। वेदों निगमों में प्रकट विधान के अनुसार आप अगम हैं, अपार हैं, अद्भुत हैं। आपकी लीला अपरंपार है। आप प्राणियों के निकट से भी निकट हैं और रात–दिन आप दूर से भी दूर हैं। भगत लोगों के आप निकटतम हैं तो दुष्टों की पहुंच से बहुत दूर हैं। आप सदा पवित्र–भावो से पूर्ण हैं, निर्दोष हैं, आप का रूप–आकार कोई नहीं है, आप निर्गुण्या स्वरूप हैं और सब प्रकार की संपत्तियों से परिपूर्ण हैं। हे देवाधिदेव भगवान् शिव आप गुणों के भंडार हैं। आप मेरे शरीर के रोम–रोम में सदा बसे रहे। हमारे जीवन के अपूर्ण कार्यों के कर्त्ता–धर्त्ता आप ही हैं, आप ही सब दुःखों को दूर करने वाले हैं और आपके कारण ही हम उन सुखों की प्राप्ति करते हैं जो कभी भी प्राप्त नहीं किए थे। आपको वरुण देव, इंद्र, धन के देवता कुबेर, दुर्गा (शक्ति), गणेश, सरस्वती, स्मरण करते हैं। वेद आपको नेति–नेति कहकर पुकारते हैं और कल्याण करने वाले संत अपने मुख से आपको पुकारते हैं। भाव है कि ईश्वर निर्गुण है, जिसका अंत नहीं होता तभी तो उसे 'न इति' कहते हैं। ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है। वह अनंत लोक और ब्रह्मांड में विद्यमान है, वह सभी ऋतुओं में छिपा हुआ है, वह दसों दिशाओं में है और वही सभी प्राणियों में वास करता है। वह प्रकाशवान है इसीलिए अग्नि, सभी नक्षत्र, भक्त, सूर्य, चंद्रमा और बादलों में कौंधने वाली बिजली उसी से प्रकाश प्राप्त करते हैं और अपनी चमक के रूप में उसे ही प्रकट करते हैं। भक्तों की बुद्धि की श्रेष्ठता के आधार भूमि उसी का प्रभाव है इसीलिए उस परमात्मा के प्रेम को प्राप्त कर उसका यश गाओ। प्रभु का प्रेम सुंदर घटाओं के समान है। हे प्रभु, आप कल्याणकारी मेघों के माध्यम से अपने सद्गुणों की वर्षा कीजिए। आप हम जीवों के अकल्याणकारी बुरे अज्ञान को दूर कर अपने पवित्र हृदय के दर्शन कराइये। आप अपने सुंदर स्वरूप से युक्त हो हमें अपने रूप की छवि दिखाकर हमारे दुख और वियोग को मिटा दीजिये। हम प्राणियों को अति कमजोर समझ कर हे प्रभु, हमारे मन मंदिर में आइए। बस्तीराम कवि कहते हैं कि उस परम ब्रह्म की वंदना कर अपने कार्य और धर्म की प्राप्ति के लिए मोक्ष फल को प्राप्त कीजिए।

सच है, ईश्वर ही हम प्राणियों के कष्टों को दूर करने का आधार है। उसके बिना हम जीवन में किसी प्रकार सुख

प्राप्त नहीं कर सकते।

विशेष –

(i) परमात्मा के प्रति हृदय के भक्ति भावों को प्रकट किया है।

(ii) शांत रस का परिपाक है।

(iii) अभिधात्मकता के प्रयोग से कवि के कथन में सरलता–सरसता उभरती है।

(iv) माधुर्य गुण का प्रयोग किया गया है।

(v) खड़ी बोली के प्रयोग में तत्सम–तद्भव शब्दावली का सहज समन्वय किया है।

(vi) रूपक, अनुप्रास, स्वरमैत्री, विरोधाभास, पदमैत्री, पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का सहज–सुंदर प्रयोग सराहनीय है।

(vii) तुकांत प्रयोग से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(3)

टेक–हरियाणा तेरी हरियाली आना चाहती है बुलाय ले।
कली–क्या कहूं तेरी बात पुरानी, कहत सुनत आवे नेत्रों पानी।
हरि.....
आज देखे तू बाट बिरानी, बेशक पुरानी,
पोथी खुलयाले तूने सबको भिक्षा डाली। हरियाणे तेरी।।
जितने देश दुनिया में सारे, हाथ की ओर देखने हारे।
हरि.....
सब लेकर खाते थे विचारे, इसे कांटे धरके तुलायले।
सब थे बाग तू था माली। हरियाणे तेरी।।
सदा प्रशंसा तेरे वंश की, सब में ताकत तेरे अंश की।
हरि.....
काग करे कब होड हंस की, चाहे कितनी ही पांखें फैलायले।
आखिर तू सब का पाली।
सबका कमल खिलता था तुझसे, सबका काम चलता था तुझसे।
सबको अन्न मिलता था तुझसे, पर तू चादर घुलायले।
जो सब मैली कर डाली। हरियाणे तेरी।।
सब बल पौरष खो गये तेरे, सारे सहायक सो गये तेरे।
हरि.....
सफल मनोरथ कर दे मेरा, अपना दूर कर ले अंधेरा।
हरि.....
"बस्तीराम" ब्राह्मण है तेरा, इसे चाहे कितना डुलायले।
नहीं पड़ेगी ये बात ख्याली।
हरियाणे तेरी हरियाली आना चाहती है बुलायले।। ३।।

शब्दार्थ – हरियाली=शोभा, सुंदरता, नेत्रों=आंखों, बाट=प्रतीक्षा, बेशक=चाहे, पौथी=पुस्तक, कांटे धर के=तराजू पर रख कर, पाँखें=पंख।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण श्री बस्तीराम के द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। हरियाणा ने अनेक ऊचे–नीचे रास्ते देखे हैं। कवि ने देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इसके पुनर्गठन से पहले इसके यश–मान की प्रतिष्ठा का सपना देखा था जो अब पूरा हो चुका है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हे हरियाणा राज्य, तेरी शोभा फिर से बस आने ही वाली है। तू इसे बुला ले। मैं क्या कहूँ–तेरी पुरानी बातें किस प्रकार प्रकट करूँ ? उन्हें कहते और सुनते समय कष्ट होता है। आँखों में आँसू भर आते हैं। आज तू अपनी खुशहाली की प्राप्ति की प्रतीक्षा कर रहा, जो अब वीरान पड़ा है–चाहे यह बहुत पुरानी है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि कभी तू बहुत सम्पन्न था, खुशहाल था। पुरानी पुस्तकों को खुलवाकर चाहे जांच ले। कभी तूने सब को भीख दी थी–सब की सब प्रकार की सहायता की थी। हरियाणा की भूमि, तेरी पुरानी शोभा बस फिर से आने ही वाली है। विश्व में जितने भी देश हैं वे सभी तुमसे सहायता पाने के लिए मन में इच्छा रख तेरी ओर देखते हुए थक गए। भाव है कि वे लंबे समय से तेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तेरी धरती अनाज की बड़ी मात्रा में उत्पन्न करती है। वे बेचारे सब तुझ से लेकर खाते थे। चाहे तो इस बात को तराजू पर तुलवा ले, जांच–पड़ताल करवा ले, अन्य सभी तो बाग के समान थे पर उनकी देखभाल, साज–संवर करने वाला माली तो तू ही था। सभी सदा तेरे वंश की प्रशंसा करते रहे हैं और सब में तेरे द्वारा दी गई सहायता के अंश की ताकत है। कौवे कब हंस से मुकाबला कर सकते हैं। वे चाहे कितने भी अपने पंख फैला लें, अपने गुणों को प्रकट करने का प्रयत्न कर लें। तेरा मुकाबला कोई राज्य नहीं कर सकता। अरे हरियाणा, तू तो आखिर सब का पालन–पोषण करने वाला है। सभी के मन रूपी कमल तेरे कारण खिलते थे। सभी के कार्य तेरे ही कारण पूरे होते थे। सभी को पेट भरने के लिए अनाज की प्राप्ति तुझ से ही होती थी। तूने जिस चादर को मैला कर रखा है अब उसे धुलवा ले ताकि तू अपना अच्छा समय आने पर पुनः सब की सहायता कर सके। तू अपने अवगुण दूर कर ले। तेरा सारा बल–पौरुष खो गया और तेरे सारे सहायक सो गए हैं। कवि कहता है कि तू मेरे मन की इच्छा को पूरा कर दे और अपना अंधकार दूर कर दे। आशा के भावों से भरे मेरे हृदय को तभी सुख मिलेगा जब तू पहले की तरह सब का सहायक बन जाएगा। कवि बस्तीराम तेरा ही ब्राह्मण है। तू इसे अपनी सेवा में जब चाहे बुला ले, कितना भी काम करवा ले। मेरी यह बात काल्पनिक नहीं है। हे हरियाणा, तेरी हरियाली, तेरी शोभा, तेरी समृद्धि तो बस लौटने वाली है। तू इसे बुला ले।

विशेष –

(i) हरियाणा के उस धन वैभव और समृद्धि की ओर संकेत किया है जो युगों से इसके पास था।

(ii) खड़ी बोली के प्रयोग में तत्सम और तद्भव शब्दावली का समन्वित प्रयोग सराहनीय है।

(iii) तुकांत छंद ने लयात्मकता की सृष्टि की है।

(iv) प्रसाद गुण विद्यमान है।

(v) अतिशयोक्ति, अनुप्रास, मानवीकरण और स्वरमैत्री अलंकारों का सहज प्रयोग सराहनीय है।

(vi) प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता का प्रयोग कवि के कथन को गहनता–गंभीरता प्रदान करने में समर्थ सिद्ध हुआ है।

(vii) शांति रस का परिपाक है।

(4)

काम क्रोध ने मुझ को घेरा, धारा बीच पड़ा है बेड़ा।
केवल भरोसा हैगा तेरा, महा घोर अंध्यार में।।
नहीं बुद्धि काम दे मेरी।।
सबको तुम्हीं बनाने वाले जन्म मरण में न आने वाले।
सबको सुख पहुंचाने वाले, रखने वाले प्यार में।।
दो काठ दुखों की बेड़ी।।

कैसे उदर में तन को बनाया, नहीं हथोड़ा हाथ उठाया
क्या सुथरा क्या साफ ढलाया, किस सांचे एकसार में
क्या गलाके धातु मेरी।।
मुझको इस तनरूप किले से, निकाल दो मृत्यु के जिले से
हरि बिन तेरे मिले से, किस विध उतरूं पार मैं।
मिलो प्रभो करो मत देरी।।

शब्दार्थ – काम=काम वासना, उदर=पेट, विध=तरीका।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कवि श्री बस्तीराम की कविताओ से अवतरित किया गया है जिसमें कवि ने परमात्मा से प्रार्थना की है कि वह उसकी सहायता करें और संसार के कष्टों से मुक्त कराएं।

व्याख्या – कवि कहता है कि हे प्रभु ! मुझे काम–वासना और क्रोध ने चारों ओर से घेर रखा है। जीवन रूपी मेरा बेड़ा धारा के बीचों बीच पड़ा है। इसके पार निकल जाने का कोई आसार नहीं है। मुझे केवल आपका ही भरोसा है। मेरे जीवन में तो घना अंधकार फैला हुआ मुझे दिखाई देता है और इससे बच निकलने में मेरी बुद्धि मेरा साथ नहीं दे रही है। जन्म–मरण के बंधनों से दूर हे परमात्मा, तुम्हीं तो सब को जन्म देने वाले हो, तुम्हीं सुख देने वाले हो। तुम्हीं सबको प्यार से रखते हो। तुम मेरे दुखों की बेड़ियां भी काट दो, मुझ पर कृपा करो। तुमने किस प्रकार मेरी मां के पेट में मेरे शरीर को बनाया ? मेरे तन को बनाने में तुमने हथोड़ा नही उठाया और बिल्कुल साफ–सुथरा ढला हुआ मेरा शरीर बना दिया। इसे एक सार किस सांचे में ढाल कर तैयार किया ? किस पदार्थ को गला कर तुमने मेरे शरीर की त्वचा रूपी धातु का निर्माण किया। हे प्रभु, मुझे इस जन्म–मरण के बंधन से मुक्त कर मोक्ष प्रदान कर दो। मैं तुमसे मिले बिना किस प्रकार दुनिया रूपी सागर से पार निकल जाऊं। हे भगवान, तुम मुझ से मिलो। मिलने में देरी न करो। मैं तुम्हें पाने को आकुल–व्याकुल हूँ।

विशेष –

(i) परमात्मा से मुक्ति प्रदान करने के लिए प्रार्थना की है और माना है कि यह शरीर कष्टों का कारण है।

(ii) खड़ी बोली में तत्सम–तद्भव शब्दावली का समन्वित प्रयोग किया गया है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) प्रसाद गुण ने सरसता प्रदान की है।

(v) प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता ने कवि के कथन को गहनता प्रदान की है।

(vi) अनुप्रास, प्रश्न, रूपक और स्वरमैत्री अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

(5)

उठो भाइयो पड़ो विद्या यही विनती हमारी है।
बिना विद्या के पढ़ने से बुरी हालत तुम्हारी है।।
तुम्हीं रक्षक थे भारत के तुम्हीं में होते थे योद्धा।
तुम्हारे ही मूर्ख होने से हुआ भारत भिखारी है।।
विवाह आदि के उत्सव में बुला वेश्या नचाते हो।
नहीं तुम शर्म करते हो यह क्या दिल में बिचारी है।
गंवा के धन अपने को पीवो मदिरा के पियाले।
हतो हो जीव क्यों नाहक जान अपनी सी प्यारी है।।

तजा ब्रह्मचर्य विद्या को विवाह बच्चों के हैं जारी
तभी कमजोर और बुजदिल हुए यह आज भारी हैं।
उठो अब होश में आओ बुरी रस्मों को तुम छोड़ो
नहीं दिन ब दिन सबकी अवश्य होगी ख्वारी है।।
करो सब मेल आपस में कपट छल को जरा त्यागो।
मिलो तुम प्रेम से सज्जन यही विनती हमारी है।।
खुलाओ विद्या की शाला महाराज के चरणों में।
पढ़ावो लड़की लड़कों को यही अर्जी हमारी है।।
यही है हमारी विनती कि जब तक न पढ़ो विद्या।
तभी तक यह बुरी हालत हमारी और तुम्हारी है।। ५ ।।

शब्दार्थ – विनती=प्रार्थना, बिचारी=सोची, मदिरा=शराब, हतो=मार डालो, नाहम=व्यर्थ, तजा=छोड़ कर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पद्य भाग से अवतरित किया गया है जिसके रचयिता श्री बस्तीराम हैं। कवि ने समाज के कल्याण के अति उपयोगी बातों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हे भाइयो, उठो और पढ़ाई करो। हमारी आप से यही प्रार्थना है। बिना शिक्षा प्राप्त किए तुम्हारी हालत बहुत बुरी हो गई, अज्ञान ने तुम्हें घेर लिया है। तुम्हीं तो भारत देश की रक्षा करने वाले हो और तुम्हीं इसके योद्धा हो। तुम्हारी अशिक्षा के कारण ही मूर्खता ने तुम्हें घेरा और हमारा देश भारत भिखारी बन गया। समाज में व्याप्त कुरीतियों की ओर संकेत करते हुए कवि कहता है कि विवाह आदि उत्सवों में तुम वेश्याओं को बुला कर उन्हें नचवाते हो। तुम्हें ऐसे करते हुए शर्म नही आती। तुम अपने दिन में यह क्या सोचते हो कि ऐसा बुरा काम करने को विवश हो जाते हो। अपना धन गंवा कर शराब के प्याले भर–भर कर पीते हो। मांस खाने के लिए पशुओं की हत्या न करो। उनकी जान को अपनी जान–सी प्यारी समझा करो। ब्रह्मचर्य के ज्ञान को छोड़कर बाल–विवाह अभी भी देश में जारी है, इसीलिए तो ये अधिक कमजोर और बड़े बुजदिल हो गए हैं। अरे देशवासियों, अब उठो, होश में आओ और इन बुरी रस्मों को छोड़ दो। नहीं तो दिन–प्रतिदिन हमारी अवस्था और अधिक दयनीय होती जाएगी, हमें अपमानित होना पड़ेगा। सारे देशवासी आप में प्रेमपूर्वक मिल–जुलकर रहो और छल–कपट को त्याग दो। तुम एक–दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक सज्जनों की तरह मिला करो–यही हमारी आप से प्रार्थना है। शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए तुम गुरुओं के चरणों में शिक्षण संस्थान खुलाओ। लड़कों और लड़कियों को पढ़ाने का प्रबंध करो–यही हमारी आपसे प्रार्थना है, हमारी यही विनती है कि जब तुम विद्या की प्राप्ति नहीं करोगे, पढ़ने–पढ़ाने से बचोगे, तब तक हमारी और तुम्हारी हालत ऐसी ही बुरी बनी रहेगी, हम जीवन में सुख की प्राप्ति नहीं कर पायेंगे, गरीबी और कंगाली हमारा पीछा नहीं छोड़ेगी।

विशेष –

(i) कवि ने समाज–सुधारक बनकर जनजागृति लाने की प्रेरणा दी है।

(ii) खड़ी बोली में तत्सम–तद्भव शब्दावली का समन्वित प्रयोग किया गया है।

(iii) अभिधा शब्द शक्ति के प्रयोग ने कथन को सरलता–सरसता प्रदान की है।

(iv) प्रसाद गुण का परिपाक है।

(v) उद्बोधन शैली ने कवि के भावों को स्पष्टता दी है।

(vi) तुकांत छंउ ने गेयता की सृष्टि की है।

(vii) शांत रस विद्यमान है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 "बस्तीराम ने अपने काव्य में सामाजिक कुरीतियों पर तीखा प्रहार किया है"- कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – कवि ने समाज सुधारक के गुण विद्यमान हैं जो उसे आर्य–समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानंद से प्राप्त हुए थे। उसने देश में जगह–जगह घूमकर अंधविश्वासों को समाज से दूर करने का प्रयत्न किया था तथा सामाजिक कुरीतियों को जनमानस के सामने प्रकट किया था। कवि को समाज की बुराइयां समाज के समक्ष प्रकट करने में कोई झिझक नहीं थी। उसने उन पर तीखे प्रहार किए हैं जिन्हें निम्नलिखित आधारों पर स्पष्ट किया जा सकता है–

1. **अशिक्षा** – देश में अनेक कारणों से पढ़ाई से समाज दूर भागता रहा है। अशिक्षा की व्यापकता के कारण लोगों का अज्ञान पीड़ा की सीमा तक देश को खींच कर ले गया है। हमारा देश सदियों तक गुलामी की बेड़ियों में इसी कारण जकड़ा रहा। अशिक्षा ने हमारी बुद्धि को कुंठित कर दिया है। हम अच्छे–बुरे के बीच ठीक प्रकार भेद ही नहीं कर पाते। विदेशियों ने हमारी इस मूर्खता को समझ कर हमें अपने चंगुल में कर लिया था। कवि ने इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है–

उठो भाइयो पढ़ो विद्या यही विनती हमारी है।
बिना विद्या के पढ़ने से बुरी हालत तुम्हारी है।।
तुम्हीं रक्षक थे भारत के तुम्हीं में होते थे योद्धा।
तुम्हारे ही मूर्ख होने से हुआ भारत भिखारी है।।

कवि का विचार है कि देश में नये विद्यालय खोले जाने चाहिएं जिनमें शिक्षा का उचित प्रबंध हो। इसी से देश की अगली पीढ़ी ज्ञानवान होकर देश को विकास पथ पर अग्रसर कराएगी–

खुलाओ विद्या की शाला महाराज के चरणों में।
पढ़ावो लड़की लड़कों को यही अर्जी हमारी है।।
यही है हमारी विनती कि जब तक न पढ़ो विद्या।
तभी तक यह बुरी हालत हमारी और तुम्हारी है।।

2. **वेश्यावृत्ति** – देश में वेश्यावृत्ति का चलन युगों से है जो समाज के विकास के लिए अति बाधक है। सभी लोगों का अधिकार और शक्ति यदि समान है तो किसी का शारीरिक और मानसिक शोषण क्यों होता है। राजाओं–महाराजाओ के समय से चली आने वाली झूठी रूढ़ियों–परंपराओं को नष्ट होना ही चाहिए। कवि कहता है–

विवाह आदि के उत्सव में बुला वेश्या नचाते हो।
नहीं तुम शर्म करते हो यह क्या दिल में बिचारी है।

3. **मद्य-निषेध** – कवि ने शराब के व्यापक प्रचार–प्रसार के प्रति विरोध भाव प्रकट किया। शराब व्यक्ति का पैसा ही नष्ट नहीं करती, समय ही नहीं गंवाती बल्कि सामाजिकता के लिए भी बहुत बुरी है। यह व्यक्ति को पल–भर में जानवर बना देती है। कवि कहता है–

गंवा के धन अपने को पीवो मदिरा के पियाले।

4. **बाल-विवाह का विरोध** – कवि ने बाल–विवाह का विरोध किया है और माना है कि ब्रह्मचर्य की अवस्था में विवाह नहीं होना चाहिए। इससे व्यक्ति को ही हानि नहीं पहुंचती अपितु सारे समाज के लिए यह अहितकर है। छोटी आयु में विवाह हो जाने से उत्पन्न संतान बलहीन होती है जो भावी जीवन में दुखों का मुख्य कारण बन जाती है–

तजा ब्रह्मचर्य विद्या को विवाह बच्चों के हैं जारी
तभी कमजोर और बुजदिल हुए यह आज भारी हैं।

5. **मांस-भक्षण** – कवि ने मांस–भक्षण को बुरा माना है। मानव स्वयं को सभ्य और सामाजिक मानता है पर फिर भी दूसरे प्राणियों का वध कर उन्हें पशु की तरह व्यवहार करता हुआ खा जाता है। यह पाशविक वृत्ति दुखदायी है।

कवि ने इसे उचित नहीं माना–

हतो हो जीव क्यों नाहक जान अपनी सी प्यारी है।

6. धन और बल की अधिकता का अभिमान – मनुष्य परिश्रम तथा अनेक अन्य तरीकों से धन इकट्ठा कर लेता है। धन से मानसिक सुख की प्राप्ति कभी नहीं हो सकती। शारीरिक बल और जोड़ा हुआ धन सदा साथ नहीं देते। कवि ने माना है कि ईश्वर का साथ ही अधिक महत्त्वपूर्ण है–

हरिसिंह भुजबल धन कोषा, किसी तरह का भी नाहे तोषा।

'बस्तीराम' को फक्त भरोसा, ना कुछ गुनी ना है गवैया।।

कवि ने सदा ही अपने जीवन काल में सामाजिक कुरीतियों का तीखा विरोध किया था और इनका निवारण करने के लिए समाज को प्रेरित किया था।

प्रश्न 2 बस्तीराम की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर - 1. भाषा रूप – बस्तीराम ने अपनी लोकोन्मुखी प्रवृत्ति को जनसाधारण की भाषा में प्रस्तुत किया था। खड़ी बोली का सारे उत्तर भारत में प्रसार इनके समय तक हो चुका था। पद्य में अबाध रूप से इसका प्रयोग होने लगा था। इसने अपनी विशेषताओं के कारण अपनी काव्योपयुक्तता सिद्ध कर दी थी। इसलिए कवि ने इसे ही अपने भाव प्रकाशन के लिए प्रयुक्त किया था। कवि ने भावानुकूल शब्द चयन किया था। उसके काव्य में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी सभी प्रकार के शब्द सहज रूप से प्रयुक्त हुए हैं। कभी भी उनका असहज प्रयोग काव्य में दिखाई नहीं दिया। उन्हें निम्नलिखित उदाहरणों से दिखाया जा सकता है–

तत्सम – अनंत लोक ब्रह्मांड ऋतु दक् करता अंतर वास है
अग्नि उडुगण भक्त रवि शशी तड़ित लेत प्रकाश है।

तद्भव – क्या सुथरा क्या साफ ढलाया, किस सांचे एकसार में
क्या गला के धातु मेरी।

देशज– आज देखे तू बाट बिरानी, बेशक पुरानी।
पोथी खुलायले तूने सबको भिक्षा डाली।।

विदेशी – नहीं तुम शर्म करते हो यह क्या दिल में बिचारी है।

2. क्रिया-रूप – कवि ने हिंदी और हरियाणवी के क्रिया रूपों का सुंदर प्रयोग किया है। उसकी सभी कविताओं में हरियाणवी क्रियाओं का प्रयोग नहीं है पर जहां हरियाणवी शब्दावली का प्रयोग किया गया वहां क्रियाओं में भी परिवर्तन दिखाई देता है–

सबको अन्न मिलता था तुझसे, पर तू चादर घुलाये ले।
जो सब मैली कर डाली।
हरियाणे तेरी हरियाली आना चाहती है बुलाय ले।

कवि का सामान्य क्रिया प्रयोग छंदों के आधार पर गतिशील हुआ है। उसमें कहीं भी अस्वाभाविकता नहीं है–

निकट ते अति निकट निशदिन दूर ते अति दूर जो।
नित्य पवित्र निर्दोष निर्गुण सकल निधि भरपूर जो।।

3. प्रतीकात्मकता – कवि ने भावों को गहनता प्रदान करने के लिए प्रतीकात्मकता का प्रयोग किया है पर उन प्रतीकों में कहीं भी संत काव्य की तरह जटिलता नहीं है। वे अर्थ का बोध कराने में पूर्ण रूप से सक्षम हैं; जैसे–

(क) सफल मनोरथ कर दे मेरा अपना दूर कर ले **अंधेरा**।

(ख) तू **चादर** धुलाये ले।

(म) चाहे कितनी ही **पाँखें** फैलायले।

4. लाक्षणिकता – कवि ने अधिकतर अभिधात्मकता का प्रयोग किया है पर कहीं–कहीं उसमें लाक्षणिकता विद्यमान है जिससे कवि के कथन को दोहरा अर्थ प्राप्त होने के कारण गुणवत्ता की प्राप्ति हुई है जैसे–

निकट ते अति निकट निशदिन दूर ते अति दूर जो।

लाक्षणिकता के रूप को प्रकट करने के लिए कहीं–कहीं मुहावरों का रूप भी दिखाई देता है–

कहत सुनत आवे नेत्रों में पानी।

5. छंद और अलंकार-योजना – कवि ने छंदों और अलंकारों का प्रयोग किया है पर उनका प्रयोग प्रयत्नपूर्वक नहीं है। उनकी योजना अनायास ही हो गई है। लय की सृष्टि के लिए तुकांत छंद सर्वत्र विद्यमान हैं। इनके द्वारा प्रयुक्त अलंकार परंपरागत हैं–

अनुप्रास – नित्य पवित्र निर्दोष निर्गुण सकल निधि भरपूर जो।

प्रश्न – क्या सुथरा क्या साफ ढलाया।

उपमा – जान अपनी–सी प्यारी है।

इनकी भाषा का प्रभावी रूप भावानुकूल है। भाषा की बोधगम्यता से सूक्षम भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है।

8. फौजी मेहर सिंह

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर सरस्वती के अनेक महान उपासकों की गौरव गाथा मिलती हैं। इनमें हरियाणवी के ठाट रूप में मेहर सिंह का नाम लिया जाता है। श्री मेहरसिंह ठेठ हरियाणवी लहजे में भाव–प्रकाशन करने वाले कवि के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इनका जन्म सन् 1918 में जिला सोनीपत के गाँव बरोना में हुआ था। इन्होंने अपनी युवावस्था में नेता जी सुभाष चंद्र बोस की आजाद हिंद सेना में कार्य किया था। इन्हें पंडित लखमीचंद का शिष्य माना गया है। इनका देहावसान केवल 27 वर्ष की आयु में सन् 1945 में हो गया था।

रचनाएँ – फौजी मेहर सिंह ने अपने छोटे–से जीवन काल में विभिन्न सामाजिक रंगों का साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की थी। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं – सरवर–नीर, सत्यवान–सावित्री, अजीत सिंह–राजबाला, शाही लकड़हारा, अंजना–पवन, सुभाष चंद्र बोस आदि।

साहित्यिक विशेषताएँ -

फौजी मेहर सिंह का साहित्य विविध मुखी है। उनकी प्रमुख साहित्यिक विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. **सामाजिकता** – कवि ने अपने काव्य के माध्यम से समाज–चित्रण किया है जिसमें व्यक्ति और समाज का सजीव चित्रण हुआ है। कवि ने खेत और युद्ध क्षेत्र में कार्य करते हुए मानव जीवन के इन दोनों क्षेत्रों को खुली आँख से देखा था, इसलिए इनका स्वाभाविक चित्रण करने में उन्हें पूर्ण सफलता की प्राप्ति हुई है। इनके द्वारा रचित शृंखला संबंधों में इनका सामाजिक ज्ञान ही प्रकट होता है–

अश्क बिना ईश्क, ईश्क बिना आशिक, आशिक बिन संसार नहीं।
शर्म बिना लाज, लाज बिन मतलब, मतलब बिन कोए यार नहीं।
धन बिन दान, दान बिन दाता, दाता बिना जर सुन्ना है।
सुत बिन मर्द, मर्द बिन तिरिया, तिरिया बिन घर सुन्ना है।

कवि ने किसान के जीवन का वर्णन करते हुए ग्रामीण–परिवेश का चित्रण करने में सफलता प्राप्त की है, जिसके साथ पारिवारिक रंगों की छटा भी दिखाई देती है। किसान की पत्नी ने अपने लगाव के भाव और कर्म को प्रकट किया है–

एक मील तै रोटी लै कै बड़ी मुश्किल तैं आई,
हाली गेल्यां ब्याह करवा कै बहोत घणी दुःख पाई मैं।

पत्नी के हृदय में अपने पति के प्रति लगाव का भाव है। जब वह तपती लू में काम करता है तो अपनत्व भाव के कारण उसे कष्ट होता है–

गर्मी पड़ती लू चालैं सै पड़े कसाई घाम किसा
दोफारी म्हं भी टीकता कोन्या जुल्मी सै तेरा चाम किसा।

2. **वीर और शृंगार भाव-समन्वय** – वीर और शृंगार रसों को परस्पर विरोधी माना जाता है पर कवि ने इन दोनों का एक साथ सफल प्रयोग किया है। यद्यपि कपि के काव्य में अन्य रसों का प्रयोग समान रूप से दिखाई देता है पर शृंगार और वीर रस का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक है जो इनके स्वभाव और कर्म को परिलक्षित करता है। शृंगार के अंतर्गत संयोग और वियोग दोनों पक्षों का अंकन किया गया है। संयोग शृंगार चित्रण में इन्होंने अश्लीलता या फूहड़ता

का समावेश नहीं होने दिया है। इसमें अपनेपन का भाव झलकता है–

मैं कद की रुक्के दे रही तूं रोटी खा लिए हाली।
दिन ढलज्या जब फेर खेत ने बाह लिए हाली।
बोल दिये जब बोल्या कोन्या दे लिए बोल हजार मनै
रोटी पाणी भर्‌या छाबड़ा मुश्किल तार्‌या न्यार मनै।

3. आडंबर-विरोध – कवि ने आडंबरों का विरोध करते हुए सच्चे मन से ईश्वर की भक्ति करने पर बल दिया है। ईश्वर का नाम लेने का ढोंग रचने वाले को बुरा–भला कहते हुए भक्ति की पवित्रता को महत्त्वपूर्ण माना है-

भगवा कपड़े भष्म रमालो ईकतारा सा ले कै
बेरा ना न्यूं कित चाले जां जग का सहारा ले कै
इन भगतां का नाम मेटण लागे काफर आरा ले कै।
भजन कर्‌या जिनै भगवान का सच्चा सहारा ले कै।

जो व्यक्ति आडंबररहित भक्ति भावना में लीन होता है उसे फल की प्राप्ति हो जाती है। मन की माला जपने से पाप दूर हो जाते हैं–

मन मणिये की माला ते अपराध करण की हो सै
मन अंदर घर मंदिर जित जगह रहण की हो सै।

4. कृषक-चित्रण – किसानों के जीवन में दुःख का बड़ा कारण पूंजीपति व्यवस्था है। परिश्रम कोई करता है और फल की प्राप्ति किसी और को होती है। किसान–मजदूर को खाने के लिए रोटी भी प्राप्त नहीं होती और पूंजीपति धन संग्रह करते हैं और अपने लिए सुख बटोरते हैं–

पाट्टे कपड़े टूट्टे लित्तर गंदा रोटी भाग म्हं
साहूकार कै छौंक लगे तेरे आलण पड़ै ना साग म्हं
तेरी बीर ज्वारा ढोवै सिठाणी सूंघै फूल बाग म्हं
तनै सोवण नै खाट न्या दे ना उनकै रूई के सै पहल लागरे।

फसल उगाता किसान है और बेचता साहूकार है। वह अपनी तिजोरियां भरता है और परिश्रम करने वाले को रोटी तक नसीब नहीं होती।

5. लोक संस्कृति चित्रण – कवि ने हरियाणवी लोक–संस्कृति का सुंदर चित्रांकन किया है। यहाँ के वासियों के रहन–सहन की पद्धति, वेशभूषा, खानपान, भक्ति–पद्धति, पारिवारिक संबंध आदि को सुंदर ढंग से प्रकट किया है। अभी भी गाँवों में दोपहर का भोजन खेतों में पहुँचाने का प्रचलन है। कवि इसी को प्रकट करते हुए कहता है कि–

एक मील तै रोटी लै कै बड़ी मुश्किल तैं आई,
हाली गेल्यां ब्याह करवा कै बहोत घणी दुःख पाई मैं।

गाय के प्रति पूजनीय भाव, पशुओं के प्रति प्रेम आदि यहाँ की संस्कृति के हिस्से हैं जिन्हें कवि ने भी अपने काव्य में प्रकट किया है–

सत के बैल प्रेम तैं जोड़ो स्वर्ग म्हं बास करोगे
गऊ माता की सेवा तज कै आपणा नास करोगे
ज्वावा दुःखी करोगे ता तम बी दुःख की सांस भरोगे
घी, दूध, दही, अन्न कितै आवै फेर के घास चरोगे।

6. उपदेशात्मकता – फौजी मेहर सिंह ने अपनी छोटी आयु में ही उपदेशात्मकता का स्वर अपना कर मानव को

शिक्षा दी है। कवि ने अच्छा–मीठा बोलना, सुनने को बुद्धि से तोलना–परखना, मन को नियंत्रित करना आदि सिखाया है–

एक जीभ इंद्री प्यारी हो सै मिठा बोलण सीखो
कान इंद्री शब्द सुणन नै बुद्धि तै तोलण सीखो
नैन इंद्री धर्म जगह पै घूमण और डोलण सीखो
इस मन पापी नै बस मैं करले और लगा दे ताला।

7. **भाषा-शैली** – कवि ने ठेठ हरियाणवी का प्रयोग करते हुए अपने मन के भावों को प्रकट किया है। उसने हिंदी के 'न' को 'ण' ध्वनि में प्रकट किया है–बोलण, तोलण, डोलण, घूमण, कटण, रटण, बटण, डटण, मेटण, बणां, घणी, पाणी, जाणें, सेठाणी, बेचण, आपणी।

'ड़' के स्थान पर 'ड' का प्रयोग किया है–

पढ़ना > पढणा, पड़ना > पडा, फाड़ना > पाडणा,

खड़ा > खडा (खड्या), गड़ा > गडा।

कवि ने 'इ' ध्वनि का आगम किया है, जैसे–

अब > इब, जब > जिब, कब > किब

खड़ी बोली से प्रभावित हरियाणवी में वैसे खड़ी बोली के समान ही संज्ञा रूप मिलते हैं पर कवि ने बहुवचन में उनके रूप बदल दिए हैं–

घोड़े > घोड़ाँ, दिन > दिनाँ, नाम > नामाँ।

ढांगर > डांगराँ, खेत > खेताँ।

कवि ने मुहावरों का सटीक प्रयोग किया है जिससे कवि के कथन को लाक्षणिकता का गुण प्राप्त हुआ है–

(क) इस मन पापी नै **बस मैं कर ले** और लगादे ताला।

(ख) दुखिया **बिना पुकार नहीं।**

(ग) **मत रेते बीच रलावै।**

(घ) भारत की **किस्मत सोगी।**

(ङ) म्हं तेरी **अंखियां फड़कै।**

कवि ने अपने भावों को प्रकट करने के लिए प्रायः अभिधा शब्द भक्ति का प्रयोग किया है पर अनेक स्थानों पर लक्षणा और व्यंजना का प्रयोग दिखाई दे जाता है। छंद प्रयोग के कारण लयात्मकता का स्वर तो सर्वत्र प्रधान है। अलंकारों के प्रति कवि के मन में कोई मोह दिखाई नहीं देता। जहाँ कहीं सहज रूप से अलंकारों का प्रयोग हुआ है वह सराहनीय है। डॉ० बाबू राम के शब्दों में, "इनकी भाषा, अलंकार–योजना, रस–योजना, मुहावरे और बिंबों में हरियाणा की लोक–संस्कृति का यथार्थ चित्रण मिलता है।" निश्चय ही मेहरसिंह लोक जीवन के अमर गायक हैं।

कविता-सार

प्रस्तुत कविता में कवि ने हरियाणा के किसान की दीन–हीन दशा का मार्मिक चित्रण किया है। वह अत्यंत परिश्रमी है पर फिर भी उसकी दशा शोचनीय है। गर्मियों की प्रचंड दोपहरी में भी वह फटी–पुरानी धोती और टूटे देशी जूते पहन कर परिश्रम करता है। आधी रात तक पसीना बहाकर फिर सुबह–सवेरे उठ जाता है, पर उसकी गरीबी दूर नहीं होती। वर्षा ऋतु में जब खेतों में भरे पानी साँप, बिच्छू स्वतंत्रतापूर्वक घूमते हैं तब भी वह घुटनों भरे पानी में निर्भयतापूर्वक काम करता रहता है। माघ–पोष की थरथरा देने वाली सर्दी भी फटे–पुराने कुर्ते में काट देता है। शरीर ढाँपने के लिए उसके पास कुछ नहीं होता। सारी सरकारें, छोटे–बड़े व्यापारी और लोग उसी के आश्रय पर होते हैं। पर फिर भी कोई उसे प्यार नहीं करता। उसे तो सूखी रोटी प्याज के साथ निगलनी पड़ती हैं जबकि पूँजीपति उसका

शोषण कर अपनी तिजोरियां भरते हैं। उसकी पत्नी खाना लेकर खेत में पहुँचती है; घंटों प्रतीक्षा करती है पर फिर भी किसान को अपने काम से फुरसत नहीं मिलती। कवि ने कुछ संबंध संदर्भ प्रकट किए हैं। उसका मानना है कि हर मानव को अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर पूरा नियंत्रण होना चाहिए और मन पर काबू होना चाहिए। मन की पवित्रता से ईश्वर की ओर उन्मुख हुआ जा सकता है। भक्ति के नाम से आडंबर बढ़ता जा रहा है। ईश्वर तो सच्ची भक्ति से प्राप्त होता है। हमें एकाग्र मन से ईश–भक्ति करनी चाहिए।

व्याख्या

(1)

देख रोंगटे खड़े होगे या मेरी छाती धडकै
गरीब किसान की जिंदगी क्युकर बितै सै मर पड़कै।। टेक।।
गर्मी म्हं आकाश तपै सै कोरी आग बरसती
निचै धरती आग उगलती दुनिया पड़े तरसती
पाट्टी धोती टूट्टे लित्तर पेट म्हं आग सिलगती
शिखर दुफारी पड़े पसीना छातां कैड ना दिखती
आधी रात तक पाणी बाहवै फेर भी उठै तड़कै।

शब्दार्थ – बितै=व्यतीत हो, पट्टी=फटी हुई, टूट्टे लीत्तर=टूटे हुए जूते, दुफारी=दोपहरी, तडकै=सुबह, भोर।

प्रसंग -- प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने अभावग्रस्त किसान के जीवन की शोचनीय दशा का वर्णन करते हुए उनकी गतिविधियों और कष्टों का वर्णन किया है।

व्याख्या – हरियाणा का चर्चित लोक–कवि कहता है कि गरीब किसान की दशा को देखकर रोंगटे खड़े हो जाएंग या भय से मेरी छाती धड़क उठेगी–मैं नहीं जानता। गरीब किसान का जीवन किस प्रकार मर–पड़ कर व्यतीत होगा। गर्मी में आकाश सूर्य की प्रचंड किरणों से तप जाता है और उससे धरती पर आग बरसती है। धरती तप कर नीच से आग उगलती है। सारी दुनिया उस तपन की पीड़ा से तड़पती है, व्याकुल होती है। बेचारे किसान की धोती फटी हुई है, देसी जूता टूटा हुआ है और भूख के कारण पेट में आग सुलगती रहती है। वह भूख के कारण व्याकुल रहता है। मध्य दोपहरी के समय वह पसीना बहाता है; कहीं भी छाया दिखाई नहीं देती। आधी रात तक वह परिश्रमपूर्वक काम करता हुआ पसीना बहाता है और भोर होते ही परिश्रम करने के लिए फिर से उठ बैठता है। भाव यह है कि गरीब किसान बड़ी कठिनाई से किसी प्रकार बस जी रहा है। उसका जीवन बड़े दुःख से बीत रहा है। कवि के मन में किसान के प्रति सहानुभूति है।

विशेष –

(i) किसान की पीड़ा को प्रकट किया है और माना है कि वह बस किस प्रकार जी रहा है।

(ii) हरियाणवी भाषा का प्रभावी रूप है जिसमें तद्भव और देशज शब्दावली का अधिकता से प्रयोग किया गया है।

(iii) तुकांत छंद के प्रयोग से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iv) करुण रस का परिपाक है।

(v) अभिधा शब्द शक्ति से कथन में सरलता और सरसता विकसित हुई है।

(vi) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(vii) चित्रात्मकता का प्रयोग किया गया है।

(viii) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(2)

सामण भादवा और क्यर म्हं बादल जोर के छारे
बिजली चमकै बादल गरजै शोर मचारे
गेंडवे मिंढक कान सुलाई फिरै खेत म्हं सारे
सांप सपोलिया बिच्छू बिसीयर फन उपर नै ठारे
कांधे कस्सी हाथ म्हं रस्सी चालै गोडया पाणी म्हं बडकै।

शब्दार्थ – सामण=सावन, भागवा=भादों, क्यार=कंवार, गेंडवे=केंचुए, मिंढक=मेंढक, कान सुलाई=कानखजूरे, फिर=घूमते हैं, म्हं=में, सपोलिया=साँप के बच्चे, बिसीयर=विषधर, ठारे=उठाए हुए।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने किसान की मेहनत और कठिन जीवन का वर्णन किया है।

व्याख्या – चर्चित लोक–कवि कहता है कि सावन, भादों और कंवार के महीनों में बादल सारे आकाश में छा जाते हैं। बादल चमकते हैं, बादल गरजते हुए शोर मचाते हैं। सारे खेत में केंचुए, मेंढक और कानखजूरे घूमते रहते हैं। साँप, उनके नन्हें–नन्हें बच्चे, बिच्छु और विषधर ऊपर फन फैलाकर खड़े रहते हैं; जगह–जगह दिखाई देते हैं। किसान कंधे पर कस्सी रख, हाथ में रस्सी लेकर पानी भरे खेत की गुड़ाई करने के लिए घुटने–घुटने तक भरे पानी में आगे बढ़ जाता है।

विशेष –

(i) किसान के जीवन का सजीव चित्रण किया है।

(ii) प्रसाद गुण और अभिधा शब्द से शक्ति कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दावली का सहज प्रयोग है।

(iv) तुकांत छंद का प्रयोग किया गया है।

(v) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(3)

मंगसर पोह म्हं बर्फ पडै सै आक तलक मुरझावै
पाट्या कुड़ता दोहर पुराणी खेत्ता म्हं पैदल जावै
ऊपर पाला निचै पाणी हाथ म्हं कस्सी ठावै
थर-थर कापैं जाड़ी बाजै जाड्डा पाड़ कै खावै।
सुख का सांस कदे ना आवै खाट म्हं पड़ै अकड़ कै।

शब्दार्थ – मगसर=माघ, पोह=पोष, तलक=तक, पाट्या=फटा हुआ, जाड़ा=सर्दी, खाट=चारपाई, पड़ै=लेट जाता है।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने गरीब किसान की दीन–हीन अवस्था और कठोर परिश्रम का वर्णन किया है।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि माघ और पोष में बर्फ सी ठंड पड़ रही है। इतनी सर्दी में आक तक मुरझा जाते हैं पर किसान फटा कुरता और पुरानी दोहर लेकर पैदल खेत में जाता है। ऊपर से पड़ता पाला और नीचे खेत में भरे पानी में किसान हाथ में कस्सी लिए ठंड में थरथराता हुआ काम करता है। भयंकर सर्दी तो सब को फाड़ कर खा जाने की तैयारी करती है। किसान को सुख की सांस कभी नहीं आती, वही कभी आराम नहीं कर पाता। चारपाई पर वह ठंड से अकड़ा लेट जाता है, पड़ जाता है। हृदयस्पर्शी चित्रण है।

विशेष

(i) किसान के जीवन में आने वाले कष्टों और उसकी असहाय अवस्था का सजीव चित्रण किया है।

(ii) चित्रात्मकता और गतिशील बिंब योजना है।

(iii) करुण रस का परिपाक है।

(iv) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(v) तुकांत छंद है।

(vi) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(4)

राज काज सब इसके ऊपर जो शासन सरकार करै
सारी मंडी मील तिजारत छोटा बड़ा व्यापार करै
कपड़ा लत्ता नाज दाल और धनियां मिर्च तैयार करै
एक मिनट बी सरै ना इस बिन फेर बी न कोई प्यार करै
कवि जाट मेहर सिंह सोच फिकर म्हं तेरी अंखियां फड़कै।

शब्दार्थ – मील=मिल, फैक्टरी, तिजारत=व्यापार, नाज=अनाज, कोए=कोई, फिकर=चिंता।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से उद्धृत हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने किसान को समाज में महत्ता को प्रतिपादित किया है।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि सारा राजकाल इसके सहारे चलता है। सरकार जो शासन चलाती है उसका आधार तो किसान है। सारी मंडी, मिल–कारखाने, व्यापार, छोटा–बड़ा व्यापारिक काम, कपड़ा–लत्ता, अनाज, दाल, धनिया, मिर्च आदि का व्यापार करने वालों का काम इसके बिना एक मिनट भी न चल सके। सारे कार्यों का आधार यही है पर फिर भी इससे कोई प्यार नहीं करता। जाट कवि मेहर सिंह किसान की अवस्था के विषय में सोच कर परेशान है और वह कहता है कि हे किसान, कुछ न सूझ पानें के कारण तेरी चिंता में आंखें फड़क रहीं हैं। जीवन की संघर्षशीलता का मार्मिक चित्रण है।

विशेष –

(i) किसान की असहायता के प्रति पीड़ा के भाव को व्यक्त किया गया है।

(ii) करुण रस का परिपाक है।

(iii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iv) मुहावरे का सटीक प्रयोग किया है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रचुर प्रयोग है।

(vi) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(5)

राजा रईयत लखपति सब देख तेरी गैल लागरै
हल छूट्ग्या तै सब मिट ज्यांगे जितने फैल लागरे।। टेक।।
तने भोले पन म्हं धन खोया तेरी मिचगी आँख जाग म्हं
पाट्टे कपड़े टूट्टे लित्तर गंदा रोटी भाग म्हं
साहूकार कै छौंक लगै तेरै आलण पड़ै ना साग म्हं
तेरी बीर ज्वारा ढोवै सिठाणी सूंघै फूल बाग म्हं

तनै सोवण नै खाट न्या दे ना उनकै रुई के सै पहल लागरे।

शब्दार्थ – रईयत=रजवाड़े, गंडा=प्याज, बीर=पत्नी, आलण=साग में डाली जाने वाली सामग्री।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से उद्धृत हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने किसान की पीड़ा की ओर संकेत किया है और उसकी दयनीय दशा के प्रति करुणा का भाव प्रकट किया है।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि राजा, प्रजा और सभी लखपति तेरी मेहनत की राह के साथ लगे हैं अर्थात् तेरी मेहनत का फल खा रहे हैं। यदि तेरा हल छूट जाए तो ये जितने भी फैल रहे हैं सब मिट जाएंगे। तूने अपने भोलेपन के कारण धन खो दिया है। तेरी आँखें बंद हैं, ज़रा तू जाग। तेरे पास है ही क्या ? फटे हुए कपड़े, टूटे देशी चमरौंध ो के जूते, प्याज और रोटी ही तेरे भाग्य में है। साहूकार के घर तो छौंक लगते हैं, तरह–तरह के व्यंजन बनते हैं और तेरे घर साग में डाले जाने वाली सामग्री भी नहीं है। तेरी पत्नी परिश्रम करती हुई ज्वार ढोती है और सेठानी बाग–बगीचे में फूलों की सुगंध प्राप्त करती है। सोने के लिए तुम्हें चारपाई तक नहीं मिलती और उन्हें रूई के कोमल बिस्तर प्राप्त होते हैं।

विशेष –

(i) किसान की दीन–हीन दशा का सजीव चित्रण कर उसकी असहाय अवस्था को प्रकट किया गया है।

(ii) करुण रस का परिपाक है।

(iii) अभिधा शब्द शक्ति का प्रयोग किया गया है।

(iv) सुन्दर चित्रात्मकता है।

(v) देशज शब्दों का प्रयोग है।

(vi) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(6)

घर घर वेद उचारण तनै फूट बिमारी खोगी
बैलां ऊपर फैल भारत की किस्मत सोगी
तनै रोटी तक ना मिलै खाण नै इसी दुर्गति होगी
टोटे म्हं फेर करी नौकरी उड़े यो मुसीबत भोगी
बिन आई मौत फौज म्हं मरे मरण छैल लागरे।

शब्दार्थ – फूट=कलह, आपसी लड़ाई–झगड़ा, टोटे=कमी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने किसान की दीन–हीन अवस्था पर अपनी पीड़ा के भाव व्यक्त किए हैं।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि घर–घर में वेद–पाठ होता है पर तुम्हें अपनी फूट और बीमारी खा गई है। ऐसा लगता है कि खेतों में जुताई के लिए प्रयुक्त बैलें के ऊपर फैल कर सारे भारत देश का भाग्य सो गया है। ऐसी बुरी हालत पैदा हो गई है कि तुम्हें खाने के लिए रोटी तक नसीब नहीं होती। अभावों के फैर में पड़ कर तुम्हें खेती छोड़ नौकरी करनी पड़ी और तुमने यह मुसीबत भी भोगी। विवशता के कारण नवयुवकों को सेना में भर्ती होकर बिना आई मौत भी मरना पड़ता है। भाव यह है कि किसानों को अपने खेतों से पूरा फल न मिल पाने के कारण उन्हें त्याग कर नौकरी करने के लिए विवश होना पड़ता है।

विशेष –

(i) किसानों की विवशता का प्रभावी वर्णन है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iii) प्रसाद गुण और करुण रस परिपाक है।

(iv) तुकांत छंद–प्रयोग ने लयात्मकता की सृष्टि की है।

(v) 'बैलां ऊपर' में प्रतीकात्मकता है।

(7)

आवै साढ फेर माणस मिलै ना तम हाली खातर दौड़ौ
के कागज नै फुक्कोगे कै आपणी किस्मत फोडो
ऐडी तक थारै आव पसीना बल्दां की पूंछ मरोडो
पूंजी पति की हल बहावै कर सेठाणी नै जोड़ो
90 रुपये मन तोल तुला तम बेचण बैल लागरे।।

शब्दार्थ – हाली=हल चलाने वाले, खातर=के लिए, फूक्कोगे=आग लगाओगे, बल्दां=बैलों, लागरे=लगे हुए।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने किसान की पीड़ा और उसके शोषण का वर्णन किया है।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि आषाढ का महीना लग जाने पर खेत मे काम करने वाले लोग नही मिलते और तुम हल चलाने के कार्य में सहायता के लिए हालियों के लिए दौड़ते फिरते हो। अरे, तुम साहूकार के द्वारा लिखे कागजों को क्या आग लगाओगे या अपना भाग्य फोड़ोगे। खेत में काम करते हुए तुम सिर से पांव की एडी तक पसीने से भीग जाते हो और बैलों की पूंछ मरोड़ उन्हें काम करने के लिए निरंतर उकसाते हो। पूंजीपति और साहूकार भी तुम पर हल जोतने के नाम से कर लगाते हैं। सेठानियां तुम्हारे परिश्रम के फल को अपने स्वार्थ के लिए धन के रूप में जोड़ते हैं। तुम तो गरीबी की विवशता के कारण अपने बैल बेच रहे हो और वे 90 रुपये मन तुम्हारे द्वारा उगाये अनाज को तराजू में तोल–तोल बेच रहे हैं, लाभ कमा रहे हैं।

विशेष –

(i) किसान की विवशता और अमीरों के शोषण को प्रस्तुत किया गया है।

(ii) करुण रस का परिपाक है।

(iii) अभिधात्मक प्रयोग है।

(iv) देशज और तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(v) भाषा सरल बोधगम्य है।

(vi) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(8)

सत के बैल प्रेम तैं जोड़ो स्वर्ग म्हं बास करोगे
गऊ माता की सेवा तज है आपणा नास करोगे
ज्यावा दुःखी करोगे ता तम बी दुःख के सांस भरोगे
घी दूध दही अन्न कितै आवै फेर के घास चरोगे
गुरु ज्ञान का सामण ल्याया मेहरसिंह काटण मैल लागरे।

शब्दार्थ – म्हं=में, तज=छोड़, लाग रे=लगे हुए हो, ज्यावा=अधिक।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने भारतीय किसान की दीन–हीन दशा का वर्णन किया है।

व्याख्या – लोक–कवि कहता है कि हे भाइयो, तुम त्य के बैलों को प्रेमपूर्वक जोड़ो। ऐसा करने से तुम पाप कमाओगे

और अपना नाश कर लोगे। यदि अधिक परेशान करोगे तो तुम भी जीवन भर दुःखों में लंबी–लंबी पीड़ा भरी सांसें लोगे–तुम्हारा जीवन सुखी नहीं होगा। घी, दूध, दही और अनाज फिर कहाँ से आयेगा। तुम्हें फिर से पेट भरने के लिए घास चरना पड़ेगा। फौजी मेहर सिंह कहते हैं कि गुरु के ज्ञान रूपी सामग्री को ला वह तुम्हारे अज्ञान की मैल को काट रहा है। भाव यह है कि उचित ज्ञान की प्राप्ति से तुम अपना जीवन संवार सकते हो।

विशेष –

(i) किसान के प्रति उपदेशात्मक स्वर अपनाया गया है।

(ii) अभिधात्मकता का प्रयोग किया गया है।

(iii) सुंदर उपदेशात्मक स्वर है।

(iv) तुकांत छंद से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(v) हरियाणा की संस्कृति का प्रभावी चित्रण है।

(9)

मैं कद की रुक्के दे रही तूं रोटी खा लिए हाली।
दिन ढलज्या जब फेर खेत ने बाह लिए हाली।
बोल दिये जब बोल्या कोन्या दे लिए बोल हजार मनै
रोटी पाणी भर्‌या छाबड़ा मुश्किल तार्‌या न्यार मनै।
बारा बज कै दो बजगे जाणे नै हो सै बार मनैं
सारे पड़ोसी जा लिए ईब तूं भी चालिए हाली।

शब्दार्थ – कदकी=कब से, रूक्के=आवाजें, हाली=हल चलाने वाला, बाह लिए=जुताई कर लेना, ईब=अब।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से अवतरित किया गया है जिसकी रचना फौजी मेहर सिंह ने की है। कवि ने किसान के जीवन का वर्णन किया है।

व्याख्या – *कवि लिखता है कि किसान की पत्नी उससे कहती है कि मैं कब से आवाजें लगा रही हूँ कि ओ हल* चलाने वाले, तूं आ कर रोटी खा ले। जब दिन ढल जाएगा, शाम हो जाएगी तब तुम खेत की जुताई कर लेना। अरे, मैंने तो हजार बार कह लिया पर तुम तो मेरी आवाज सुन कर भी नहीं बोलते। रोटी–पानी से भरा बर्तन रखा है जिसे मैंने कठिनाई से तैयार किया है। बारह बज गए, दो बज गए पर तूं खाने के लिए आ ही नहीं रहा। मेरा मत तो सौ बार जाने को तैयार हो चुका। सारे पड़ौसी तो जा चुके हैं। ओ हल चलाने वाले, अब तू भी चल।

विशेष –

(i) गाँव की परंपरा का निर्वाह करते हुए किसान तक रोटी पहुँचा कर उसे खाने का आग्रह किया है जिसमें आत्मीयता का भाव है।

(ii) अभिधा शब्द शक्ति और प्रसाद गुण विद्यमान है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) *संवादात्मकता से 'नाटकीयता' विकसित* हुई है।

(v) तद्‌भव और देशज शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(10)

एक मील तै रोटी लै कै बड़ी मुश्किल तैं आई,
हाली गेल्यां ब्याह करवा कै बहोत घणी दुःख पाई मैं।
मत रेते बीच रलावै पिया पन्नेदार मिठाई मैं

तेरे मरते बैल तिसाये तूं पाणी प्या लिए हाली।।

शब्दार्थ – मुश्किल=कठिनाई, बहोत=बहुत।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से ली गई हैं जिसक रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। किसान की पत्नी अपने पति के लिए खेत में उसका खाना लेकर गई और उसे रोटी खाने का आग्रह करते हुए कहती है–

व्याख्या – मैं एक दूर से बड़ी मुश्किल से रोटी लेकर यहाँ आई हूँ। हल चलाने वाले से विवाह करवा कर मैंने बहुत कष्ट पाये हैं। अरे, तुम मुझे रेत में मत मिला। मेरे जीवन और यौवन को समझ। मैं तो पन्नेदार कोमल मिठाई के समान सुंदर और मीठी हूँ। अरे सुन, अब तो तेरे बैल भी प्यास से मर रहे हैं, तूं उनको ही पानी पिला दे। भाव यह है कि आज तो काम रोक के खाना खा ले, कुछ आराम कर ले।

विशेष –

(i) किसान के कठोर जीवन की ओर संकेत किया है। जी तोड़ परिश्रम करते हुए उसके पास रोटी खाने की फुरसत नहीं होती।

(ii) संवादात्मकतासे नाटकीयता विकसित हुई है।

(ii) करुण रस का परिपाक है।

(iii) अभिधात्मकता से सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iv) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रचुर प्रयोग है।

(v) रूपक, अनुप्रास और स्वरमैत्री का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया गया है।

(11)

गर्मी पड़ती लू चालैं सै पड़े कसाई घाम किसा
दोफारी म्हं भी टीकता कोन्या जुल्मी सै तेरा चाम किसा।
फूंक दिया से गात मेरा जुल्मी सै तो राम किसा
तू मेहर सिंह की सीख रागनी गा लिए हाली।

शब्दार्थ – दोफारी=दोपहर के समय, टोकता=रुकता, आराम करता, चाम=चमड़ी, त्वचा, गात=शरीर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण फौजी मेहर सिंह द्वारा रचित है जिसे हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित किया गया है। किसान की पत्नी अपने पति के परिश्रम से परेशान है क्योंकि उसे रोटी खाने की फुरसत नहीं है।

व्याख्या – किसान की पत्नी कहती है कि गर्मी पड़ रही है, लू चल रही है। तू कैसा कसाई है, रे। दोपहर में भी तू टिकता नहीं है। अरे, ओ जुल्मी तेरी चमड़ी कैसी है। हे राम, इसने तो मेरे शरीर को इस भयंकर गर्मी में फूंक डाला है। अरे ओ हल चलाने वाले तू मेहरसिंह की सीखी हुई रागनी गा ले, कुछ देर विश्राम कर ले। तू बैठ जा।

विशेष –

(i) स्वाभाविक रूप से किसान की पत्नी की पीड़ा को प्रकट किया है।

(ii) अभिधा शब्द शक्ति और प्रसाद गुण का सुन्दर रूप है।

(iii) देशज शब्दावली का अधिकता से प्रयोग सराहनीय है।

(iv) संवादों से कथन में नाटकीयता आयी है।

(12)

अश्क बिना ईश्क, ईश्क बिना आशिक, आशिक बिन संसार नहीं।

शर्म बिना लाज, लाज बिन मतलब, मतलब बिन कोए यार नहीं।।टेक।।
धन बिन दान, दान बिन दाता, दाता बिना जर सुन्ना है
सुत बिन मर्द, मर्द बिन तिरिया, तिरिया बिन घर सुन्ना है
रण बिन सूरा, सूरे बिन तेगा, तेगे बिन कर सुन्ना है
तप बिन कर्म, कर्म बिन किस्मत, क़िस्मत बिन नर सुन्ना है
हठ बिन हार, हार बिन हाणी, हाणी बिन हुश्यार नहीं।।

शब्दार्थ – अश्क=आँसू, ईश्क=प्रेम, आशिक=प्रेमी, जर=धन, तिरया=नारी, सूरा=वीर, तेगा=तलवार।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से लिया गया है जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने विभिन्न संबंधों को आकर्षक ढंग से आपस में जोड़ा है।

व्याख्या – कवि कहता है कि आँसुओं के बिना प्रेम, प्रेम के बिना प्रेमी और प्रेमी के बिना यह संसार नहीं है। शर्म के बिना लाज, लाज के बिना मतलब और मतलब के बिना कोई किसी का दोस्त नहीं है। धन के बिना दान, दान के बिना दाता और दाता के बिना धन व्यर्थ है। पुत्र के बिना आदमी, आदमी के बिना स्त्री और स्त्री के बिना घर सूना है। युद्ध के बिना योद्धा, योद्धा के बिना तलवार और तलवार के बिना हाथ सूना है। तप के बिना कर्म, कर्म के बिना भाग्य और भाग्य के बिना मानव व्यर्थ है। हठ के बिना हार, हार के बिना हानि और हानि के बिना निपुणता नहीं आती।

विशेष –

(i) मानवीय गुणों और वस्तुओं के बीच संबंध श्रृंखला तैयार की है।

(ii) अभिधात्मक प्रयोग है।

(iii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(iv) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(13)

शशि बिन रैन, रैन बिनतारे, तारां बिन गगन सुन्ना है
मोह बिन मेर, मेर बिन ममता ममता बिन मन सुन्ना है
गुल बिन बाग, बाग बिन बुलबुल, से सब गुलशन सुन्ना है
रंग गिन रूप, रूप बिन जोबन, जोबन बिन तन सुन्ना है
हक बिन हुक्म, हुक्म बिन हाकिम, हाकिम बिन हकदार नहीं।

शब्दार्थ – शशि=चंद्रमा, रैन=रात, गगन=आकाश, गुल=फूल, गुलशन=बाग, जोबन=यौवन, हक=अधिकार, हाकिम=मालिक।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से लिया गया है जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने विभिन्न भावों, वस्तुओं और प्रसंगों को आपस में जोड़ा है।

व्याख्या – कवि कहता है कि चांद के बिना रात, रात बिना तारे और तारों के बिना आकाश सूना है। मोह बिना मेल, मेल बिना ममता और ममता बिना मन सूना है। फूलों के बिना बाग, बाग के बिना बुलबुल हो तो सारा बाग सूना है। रंग के बिना रूप, रूप के बिना जवानी और जवानी के बिना शरीर सूना है। अधिकार के बिना आदेश, आदेश के बिना मालिक और मालिक के बिना हक जमाने वाला सूना है।

विशेष –

(i) विभिन्न वस्तुओं और गुणों को श्रृंखला स्थापित किया है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(iv) उर्दू और तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(14)

मन बिन मेल, मेल बिन प्यारा, प्यारे बिन किन दो बात नहीं
जन बिन जार, जार बिन जारी, जारी बिन उत्पात नहीं
छल बिन द्वेष, द्वेष बिन कातिल, कातिल बिन कुलघात नहीं
सजनी बिन साजन, साजन बिन सजनी, सजनी रह एक साथ नहीं
दुःख बिन दर्द, दर्द बिन दुखिया, दुखिया बिन पुकार नहीं।

शब्दार्थ – जन=लोग, जार=व्यभिचार, पर नारी से प्रेम करना, जारी=व्यभिचार करने वाला, कातिल=हत्यारा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने विभिन्न वस्तुओं का आपस में संबंध किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि मन के बिना मेल, मेल के बिना प्यारा और प्यारे के बिना दो बात नहीं हो सकती। लोग के बिना व्यभिचार और व्यभिचार के बिना व्यभिचारी और व्यभिचारी के बिना उत्पात नहीं हो सकता। धोखे के बिना द्वेष, द्वेष के बिना कातिल और कातिल के बिना कुलघात नहीं होता। सजनी के बिना साजन, साजन के बिना सजनी हो तो सजनी एक साथ नहीं हो सकती। दुःख के बिना दर्द, दर्द के बिना दुःखिया तो दुःखिया के बिना पुकार संभव नहीं हो सकती।

विशेष –

(i) विभिन्न संदर्भों को आपस में शृंखलाबद्ध किया है।

(ii) अभिधा शब्द शक्ति का सुंदर प्रयोग है।

(iii) सहज रूप से प्रसाद गुण प्रकट किया है।

(iv) उर्दू और तद्भव शब्दों का प्रयोग है।

(v) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(15)

मोह बिन काम, काम बिन क्रोध, क्रोध बिन अभिमान नहीं
गुण बिन कदर, कदर बिन शोभा, शोभा बिन सम्मान नहीं
भजन बिन भगत, भगत बिन भगति, भगति बिन सम्मान नहीं
सुर बिन साज, साज बिन गाणा, गाणे बिन तुकतान नहीं
गुरु बिन ज्ञान, ज्ञान बिन मेहरसिंह, दहिया का सत्कार नहीं।

शब्दार्थ – कदर=इज्जत।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने विभिन्न प्रसंगों को शृंखलाबद्ध किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि मोह के बिना काम, काम के बिना क्रोध और क्रोध के बिना अभिमान नहीं होता। गुण के बिना इज्जत, इज्जत के बिना शोभा और शोभा के बिना सम्मान नहीं मिलता। भजन के बिना भगत, भगत के बिना भक्ति और भक्ति के बिना सम्मान नहीं होता। सुर के बिना साज, साज के बिना गाना और गाने के बिना तुमतान संभव नहीं हे। गुरु के बिना ज्ञान, ज्ञान के बिना मेहरसिंह दहिया का सत्कार नहीं होता।

विशेष –

(i) विभिन्न गुणों की शृंखला स्थापित की है।

(ii) अभिधा शब्द शक्ति और प्रसाद गुण का आकर्षक प्रयोग किया गया है।

(iii) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) लय की सृष्टि हुई है।

(viii) आकर्षक यथार्थ चित्रण है।

(16)

मन का मणिया सांस की डोर चुपचाप रटन की माला।
पांचों इन्द्री बस म्हं करके बणज्या रटने वाला।।
एक जीभ इंद्री प्यारी हो सै मिठा बोलण सीखो
कान इंद्री शब्द सुणन नै बुद्धि तै तोलण सीखो
नैन इंद्री धर्म जगह पै घूमण और डोलण सीखो
इस मन पापी नै बस में करले और लगा दे ताला।

शब्दार्थ – बोलण=बोलना, सुणन=सुनना, घूमण=घूमना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से ली गई हैं जिसमें फौजी मेहर सिंह ने ज्ञानेन्द्रियों से श्रेष्ठ कार्यों को प्राप्त करने का आग्रह किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि यदि तुम्हें अपनी जिह्वा प्यारी है तो उसे मीठा बोलना सीखो। कान इंद्री से दूसरों की वाणी को सुनकर उसे अपनी बुद्धि से तोलना सीखो। आँख नामक इंद्री यदि धर्म जगह पर है तो घूमना और डोलना सीखो; क्रियाएं और गति करना सीखो। अपने पापी मन को नियंत्रण में कर लो और इस पर ताला लगा दो ताकि इधर–उधर भटक कर तुम्हें अस्थिर न कर दे।

विशेष –

(i) शरीर की इंद्रियों पर नियंत्रण कर उनसे श्रेष्ठ बातों और क्रियाओं की प्राप्ति का उपदेश दिया है।

(ii) उपदेशात्मकता स्वर प्रधानता है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रचुरता से प्रयोग किया गया है।

(iv) भाषा सरल सहज है।

(17)

मन मणिये की माला ते अपराध कटण की हो सै
मन अन्दर घर मंदिर जित जगह रटण की हो सै
बिन दीपक प्रकाश बिजली बिना बटण की हो सै
बैकुंठ धाम एक नगरी साधु संत डटण की हो सै
तू उनके चरण म्हं शीश राक्ख जहां दया की धर्मशाला।

शब्दार्थ – जित=जहाँ, म्हं=में, पर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से लिया गया है जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने ईश्वर की सृष्टि में श्रेष्ठता के मार्ग को प्राप्त करने के लिए उपदेशात्मकता का सहारा लिया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि मन रूपी मणियों की माला से अपराध अपने आप कट जाते हैं; श्रेष्ठता प्राप्त हो जाती

है। जिसके हृदय में ही मंदिर की रचना हुई हो; हृदय पवित्र हो वहाँ ईश्वर स्मरण स्वतः हो जाता है। वहाँ बिना दीपक और बिना बटन के ही बिजली का प्रकाश हो जाता है। जहाँ साधु–संत टिके हुए हों वह नगरी तो अपने आप ही बैकुंठ धाम बन जाती है। हे मानव, तू उनके चरणों में श्रद्धापूर्वक अपना सिर रख दे क्योंकि वहाँ तो दया की धर्मशाला ही स्थापित हो चुकी होती है। तुम्हें सब प्रकार के सद्‌गुण प्राप्त हो जाएंगे।

विशेष –

(i) उपदेशात्मक स्वर में मानव को सद्‌गुण प्राप्त करने हेतु साधुसंगत की महत्ता बताई गई है।

(ii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(iii) अभिधा से कथन में सरलता आई है।

(iv) तद्‌भव शब्दों की बहुलता है।

(v) भाषा सरल सहज है।

(18)

एक ध्रूव भगत जी बालक से कहैं भक्ति करगे भारी
गुरु गोरखनाथ जती कहलाए शिष्य पूर्व ब्रह्मचारी
धन्ना भगत रविदास भगत नै पांचू इंद्री मारी
मीरां बाई सदन कसाई भक्ति नै पार उतारी
तीन लोक प्रवेश कबीर एक सबसे भगत निराला।

शब्दार्थ – ध्रूव=ध्रूव।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से लिया गया है जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने ईश्वर उन्मुखता की महत्ता स्थापित की है और प्रेरणा दी है कि सभी मानव ईश्वर के नाम की ओर प्रवृत्त हों।

व्याख्या – कवि कहता है कि बालक रूप में ध्रुव भगत ने ईश्वर की बड़ी भक्ति की। गुरु गोरखनाथ ने ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए मत्स्येन्द्र नाथ के शिष्य के रूप में परमात्मा के प्रति स्वयं को लगाने के कारण जती का पद लिया था। धन्ना और रविदास ने भगत के रूप में ईश्वर के प्रति भावों के कारण अपनी–अपनी पांचों इन्द्रियों पर नियंत्रण पा लिया था। मीरा बाई और सदन कसाई ने भक्ति के कारण संसार–रूपी सागर को पार कर लिया था। कबीर दास सबसे निराले भगत थे जिन्होंने अपनी भक्ति के प्रभाव से दैविक, भौतिक और दैहिक तीनों तापों को सहकर स्वर्ग, मर्त्य और पाताल नामक तीनों लोकों में स्वयं को प्रतिष्ठित कर दिया था। भाव यह है कि भक्ति का क्षेत्र मानव को हर फल प्रदान कर देता है।

विशेष –

(i) भक्ति के क्षेत्र की प्रतिष्ठा की गई है।

(ii) शांत रस विद्यमान है।

(iii) प्रसाद माधुर्य गुण सम्पन्न शैली है।

(iv) मिथकीय प्रयोग किए गए हैं।

(v) तद्‌भव शब्दों की अधिकता है।

(19)

भगवां कपड़े भष्म रमाले ईकतारा सा लै कै
बेरा ना न्यूं कित चाले जां जग का सहारा लै कै

इन भगतां का नाम मेटण लागे काफर आरा लै कै
भजन कर्‌या जिनै भगवान का सच्चा सहारा लै कै
इस मेहरसिंह नै बी हंस बणां द्‌यो सै कागा म्हं काला।

शब्दार्थ – भष्म=भस्म, बेरा ना क्यूं=पता नहीं क्यों, कागा=कौवा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्‌यपुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता से लिया गया है जिनके रचयिता फौजी मेहर सिंह हैं। कवि ने भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश कर चुके आडंबरों का विरोध करते हुए सच्ची भक्ति की महत्ता की प्रतिष्ठा की है।

व्याख्या – कवि आडंबरों का विरोध करते हुए कहता है कि भगवे वस्त्र पहन, शरीर के अंगों पर भस्म मलकर, हाथ में एकतारा–सा लेकर पता नहीं कहां चले जा रहे हैं ? इस संसार का सहारा लेकर वे प्रपंच रच रहे हैं। ये नास्तिक भक्ति का नाटक करते हुए उन भक्तों का नाम आडंबर रूपी आरा लेकर मिटा रहे हैं जिन्होंने ईश्वर का सच्चा सहारा लेकर भजन किया था; भक्ति की थी। भाव है कि प्रपंच करने वाले झूठे भक्तों को देखकर सामान्य लोग सच्चे भक्तों के प्रति भी अश्रद्धा करने लगे हैं। कवि मेहर सिंह कहता है कि मैं तो कौवों में अवगुणी काला और निकृष्ट हूँ। मुझे भी हे ईश्वर, अपनी भक्ति वत्सलता के प्रभाव से इसके समान पवित्र ओर गुणवान बना दो। आप तो कुछ भी कर सकते हैं।

विशेष –

(i) आडंबर रचाने वाले झूठे–मक्कार साधुओं का विरोध करते हुए सच्चे संतों की प्रतिष्ठा की है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन में सरलता–सरसता विकसित हुई है।

(iii) प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(iv) शांत रस का परिपाक है।

(v) तद्‌भव शब्दावली का आकर्षक प्रयोग किया गया है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 फौजी मेहरसिंह द्वारा हरियाणवी किसान की व्यथा-कथा के चित्रण की विवेचना कीजिए।

उत्तर – ग्रामीण परिवेश से संबंधित फौजी मेहर सिंह का सीधा संबंध किसानों से है। उन्होंने कृषकों की सभी गतिविधियों, कार्य प्रणालियों, पारिवारिक परिवेश, सामाजिक परिस्थितियों को खुली आँख और अति निकटता से देखा है। वो उनके सुख–दुःख के साथी थे। इसलिए हरियाणवी किसान की व्यथा–कथा को उन्होंने एक नहीं अपितु अनेक रूपों में देखा है। जिन्हें निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. **अभावग्रस्तता** – हरियाणा का किसान अभावग्रस्त है। उसके पास धन–धान्य तो क्या सामान्य जीवन जीने के साधन भी नहीं हैं। उसके शरीर पर न तो पूरे वस्त्र हैं और न ही पाँव में जूता। सर्दी–गर्मी को झेल सकने के लिए उसके पास कुछ भी तो नहीं है–

निचै धरती आग उगलती दुनिया पड़े तरसती
पाट्टी धोती टूट्टे लित्तर पेट म्हं आग सिलगती।

जब भयंकर सर्दी पड़ती है। ठंड के प्रभाव से हर चीज जमने लगती है। तब भी किसान उस सर्दी को अपने शरीर पर झेलने के लिए विवश है। उसके पास इतना धन नहीं है कि पोष–माघ की सर्दी से खुले खेत में रात के समय टकराने के लिए अपना शरीर भी ढाँप सके–

मंगहर पोह म्हं बर्फ पडै सै आक तलक मुरझावै
पाट्‌या कुड़ता दोहर पुराणी खेता म्हं पैदल जावै
ऊपर पाला निचै पाणी हाथ म्हं कस्सी ठावै

थर-थर कापैं जाड़ी बाजै जाड्ळा पाड़ कै खावै।

2. परिश्रमी – हरियाणा का किसान बहुत परिश्रमी है। वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपने काम में डटा रहता है। किसी प्रकार की स्थिति उसे परेशान करती प्रतीत नहीं होती। वह डट कर सब का सामना करता है। गर्मी हो या सर्दी – वह तो सदा काम करता है–

गर्मी पड़ती लू चालैं सै पड़े कसाई घाम किसा
दोफारी म्हं भी टीकता कोन्या जुल्मी सै तेरा चाम किसा।

उसके रात–दिन एक समान हैं।

3. निडर – किसान के हृदय में डर नाम का कोई भाव नहीं है। वह किसी जीव से नहीं डरता। जिन कीट–पतंगों, जीव–जंतुओं के नाम से ही सामान्य प्राणी सहम जाते हैं, उनसे इसे कोई डर नहीं लगता। वर्षा ऋतु आते ही खेत पानी से भर जाते हैं। साँप, बिच्छू, कनखजूरे निकल आते हैं पर किसान उनमें घूमता–फिरता अपने काम में लीन रहता है–

सामण भादवा और क्यर म्हं बादल जोर के छारे
बिजली चमकै बादल गरजै शोर मचारे
गेंडवे मिंढक कान सुलाई फिरै खेत म्हं सारे
सांप सपोलिया बिच्छू बिसीयर फन उपर नै ठारे
कांधे कस्सी हाथ म्हं रस्सी चालै गोडया पाणी म्हं बडकै।

4. शोषित – किसान ही वह नागरिक है जिसके कार्यों पर टिक कर कोई सरकार राज्य चलाती है। सभी मिल–मालिकों को धन उगलने वाली फैक्ट्रियों का आधार वही है। उसी के कारण कपड़ा प्राप्त होता है, अनाज, दालें, मसाले आदि सभी को प्राप्त होते हैं और फिर भी उसे कोई प्यार नहीं करता। यदि उसके हाथ से हल निकल जाए तो सब लोग भूख से ही मिट जाएं। वह सभी को रोटी देता है पर उसके पास कुछ नहीं होता। वह तो सूखी रोटी प्याज के साथ किसी प्रकार निगल लेता है। सब को वस्त्रों के लिए कपास देने वाला किसान स्वयं अपने लिए बिस्तर का भी प्रबंध नहीं कर पाता–

तने भोले पन म्हं धन खोया तेरी मिचगी आँख जाग म्हं
पाट्टे कपड़े टूट्टे लित्तर गंदा रोटी भाग म्हं
साहूकार कै छौंक लगे तेरे आलण पड़ै ना साग म्हं
तेरी बीर ज्वारा ढोवै सिठाणी सूंघै फूल बाग म्हं
तनै सोवण नै खाट न्या दे ना उनकै रूई के सै पहल लागरे।

5. बेरोजगारी – किसान कभी–कभी विवश हो जाते हैं कि वे जगह–जगह मजदूरी ढूँढे। सेना में नौकरी करे और असमय अपना जीवन खो दें या कहीं किसी के समक्ष गिड़गिड़ाये। रोटी प्राप्त करने के लिए वह दर–दर भटकता हुआ अपनी दुर्गति करता है–

बैलां ऊपर फैल भारत की किस्मत सोगी
तनै रोटी तक ना मिलै खाण नै इसी दुर्गति होगी
टोटे म्हं फेर करी नौकरी उड़े यो मुसीबत भोगी
बिन आई मौत फौज म्हं मरे मरण छैल लागरे।

6. अवहेलना – किसान को कठोर परिश्रम करते हुए अपने परिवार के प्रति अवहेलना करनी पडती है। वह तो अपनी पत्नी के प्रति भी उदासीन–सा दृष्टिकोण अपना लेता है। वह परेशान होती है; पति के प्रेम को पाना चाहती है पर वह तो अपने खेतों में ही लीन रहता है–

एक मील तै रोटी लै कै बड़ी मुश्किल तैं आई,
हाली गेल्यां ब्याह करवा कै बहोत घणी दुःख पाई मैं।
मत रेते बीच रलावै पिया पन्नेदार मिठाई मैं
तेरे मरते बैल तिसाये तूं पाणी प्या लिए हाली।।

वास्तव में हरियाणा का किसान अति परिश्रमी है पर उसे अपने द्वारा किए गए परिश्रम का फल नहीं मिल पाता। वह समाज के शोषण की चक्की में निरंतर पिसने वाला निरीह जीव बनकर रह गया है। उसके प्रति किसी की संवेदना नहीं; प्रेम नहीं–

देख रोंगटे खड़े होगे या मेरी छाती धडकै
गरीब किसान की जिंदगी क्युकर बितै सै मर पड़कै।

प्रश्न 2 फौजी मेहर सिंह की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – हरियाणवी कवि फौजी मेहर सिंह ने अपने हृदय के भावों को कविता के माध्यम से व्यक्त किया है। जिसकी भाषा ठेठ हरियाणवी है। इनकी भाषागत विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **शब्द भंडार** – कवि का शब्द–भंडार बहुत समृद्ध नहीं है। वह सामान्य स्तर का है जिसमें उसने अपने भावों की अभिव्यक्ति की है। उसने तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी सभी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है पर तत्सम शब्दों की संख्या बहुत अधिक नहीं है। जो तत्सम शब्द भाषा प्रयोग में हैं भी तो वे सामान्य स्तर के हैं। जैसे–गुरु, ज्ञान, दाता, शशि, द्वेष, दुःख, गुण अदि। कवि ने तद्भव और देशज शब्दों की अधिकता से प्रयोग किया है। देशज शब्द हरियाणवी बोलियों के बिगड़े हुए रूपों से मेल खाते हैं। विदेशी शब्दावली में कुछ अरबी–फारसी के शब्द हैं, जैसे–जार, जारी, कातिल, दर्द, कदर, गुल, बाग, गुलशन, हुकम, हाकिम, हकदार, आशिक, अशक, ईश्क, शर्म, जुल्मी आदि।

2. **मुहावरा-प्रयोग** – कवि ने भावों को लाक्षणिकता प्रदान करने के लिए मुहावरों का सहज, सुंदर और सटीक प्रयोग किया है, जैसे–

(क) देख **रोंगटे खड़े होगे** या मेरी **छाती धडकै।**

(ख) गरीब किसान की जिंदगी क्युकर **बितै सै मर पड़कै।**

(ग) गर्मी म्हं आकाश तपै सै **कोरी आग बरसती।**

(घ) निचै धरती **आग उगलती** दुनिया **पड़े तरसती।**

(ङ) पाट्टी धोती टूट्टे लित्तर **पेट म्हं आग सिलगती।**

(च) कवि जाट मेहर सिंह सोच फिकर म्ह तेरी **अंखियां फड़कै।**

(छ) बैलां ऊपर फैल भरत की **किस्मत सोगी।**

(ज) इन भगतां का **नाम मेटण लागे** कायर आरा लै कै

3. **चित्रात्मकता** – कवि ने चित्रात्मकता का प्रयोग करते हुए दृश्य बिंब उभारे हैं। किसान की दीन–हीन दिशा का सफल चित्रण इसलिए हो पाया है कि कवि ने शब्दों की सहायता से चित्र उभार दिए हैं और पाठक उन्हें पढ़ कर किसान को देखे बिना ही अपने मन में उसकी छवि देख सकता है। फटे हुए कपड़े, टूटे जूते, विषैले जीवों में काम करना, पत्नी के द्वारा लाई रोटी न खा सकना, अपने काम में लगे रहना, साफा–साफ पाठक और श्रोता को दिखाई देता है।

सामण भादवा और क्वर म्हं बादल जोर के छारे
बिजली चमकै बादल गरजै शोर मचारे
गेंडवे मिंढक कान सुलाई फिरै खेत म्हं सारे

सांप सपोलिया बिच्छू बिसीयर फन उपर नै ठारे
कांधे कस्सी हाथ म्हं रस्सी चालै गोडया पाणी म्हं बडकै।

4. सरलता – कवि ने अपनी कविता में भावों को अति सरलता और सरसता से प्रकट किया है। उसने चुन–चुन कर ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिसमें जटिलता न हो। कवि की कविता सामान्य लोगों की कविता है। उसमें बुद्धि का खिलवाड़ नहीं है बल्कि सरल हृदय को सरलता से प्रकट किया गया है। कवि ने जहाँ बुद्धि कौशल दिखाने के लिए शृंखला शब्दों का प्रयोग किया है वहाँ भाव और शब्दों का समन्वय किया है, जैसे–

मोह बिन काम, काम बिन क्रोध, क्रोध बिन अभिमान नहीं
गुण बिन कदर, कदर बिन शोभा, शोभा बिन सम्मान नहीं
भजन बिन भगत, भगत बिन भगति, भगति बिन सम्मान नहीं
सुर बिन साज, साज बिन गाणा, गाणे बिन तुकतान नहीं
गुरु बिन ज्ञान, ज्ञान बिन मेहरसिंह, दहिया का सत्कार नहीं।

5. रस-योजना – कवि ने अपनी कविता में शृंगार, वीर और वात्सल्य रस की योजना सफलतापूर्वक की है। सेना में कार्यरत होने के कारण वीरता के भावों के दर्शन नहीं होते। कवि ने बड़े संयमपूर्वक भावों को प्रकट किया है। जहाँ कहीं पति–पत्नी ने अपने शृंगारिक भावों को प्रकट भी किया है तो लाक्षणिकता का प्रयोग कर लिया है।

वास्तर में फौजी मेहर सिंह ने सामान्य ढंग से अपने भावों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनकी भाषा भावानुकूल सरल और बोधगम्य है।

प्रश्न 3 कवि के भक्ति भाव पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर – कवि ने अपने मम की आस्तिकता और आस्था के भाव पदों के माध्यम से प्रकट किए हैं जिन्हें निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. भक्ति-महत्ता – कवि पूर्ण रूप से आस्तिक है। उसने स्थान–स्थान पर भक्ति की महत्ता प्रतिपादित की है। भगवान् तो भक्त–वत्सल हैं। वे अपने भक्त को हर कष्ट से छुटकारा दिला देते हैं। जब कभी कोई भी भक्त उनकी सहायता के लिए पुकारता है तो, वे इस भेद को भूलकर कि भक्त पापी है या पुण्यात्मा, उसकी सहायता करते हैं। ईश्वर की दृष्टि में तो सभी बराबर हैं; कोई छोटा या बड़ा नहीं है। मन की शुद्धता से प्राणियों के सभी पाप कट जाते हैं–

मन मणिये की माला ते अपराध कटण की हो सै
मन अन्दर घर मंदिर जित जगह रटण की हो सै
बिन दीपक प्रकाश बिजली बिना बटण की हो सै
बैकुंठ धाम एक नगरी साधु संत डटण की हो सै
तू उनके चरण म्हं शीश राक्ख जहां दया की धर्मशाला।

2. आडंबर-खंडन – ईश्वर को प्राप्त करने के लिए मार्ग में आडंबरों का कोई औचित्य नहीं है। भगवा पहनने, भस्म लगाने और इकतारा बजाने से ईश्वर नहीं मिलता। नकली संत बनकर इंसान को धोखा तो दिया जा सकता है पर परमात्मा को नहीं। इससे असली और नकली संत में पहचान करने की समस्या भी आती है–

भगवां कपड़े भष्म रमाले ईकतारा सा लै कै
बेरा ना न्यूं कित चाले जां जग का सहारा लै कै
इन भगतां का नाम मेटण लागे काफर आरा लै कै
भजन कर्‌या जिनै भगवान का सच्चा सहारा लै कै।

3. निरापद-पथ – कवि के अनुसार भक्ति सब के लिए है। इसमें किसी प्रकार का कोई बंधन नहीं होता। छोटी आयु या कम शिक्षा का भक्ति के क्षेत्र में कोई महत्त्व नहीं है। ध्रुव ने छोटी–सी आयु में भगवान् को पा लिया था

तो सदना कसाई ने पाप कर्म करते हुए भी ईश्वर की शरण पा लिया था–

एक धूव भगत जी बालक से कहैं भक्ति करगे भारी
गुरु गोरखनाथ जती कहलाए शिष्य पूर्व ब्रह्मचारी
धन्ना भगत रविदास भगत नै पांचू इंद्री मारी
मीरां बाई सदन कसाई भक्ति नै पार उतारी
तीन लोक प्रवेश कबीर एक सबसे भगत निराला।

वास्तव में कवि के लिए ईश्वर की प्राप्ति के लिए मन की पवित्रता और गहरी आस्था ही प्रमुख है जिसमें आडंबरों का कोई स्थान नहीं है। उनका कहना है कि भक्ति से मन में शांति और जीवन में सुख मिलता है।

9. तारादत्त विलक्षण

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर सरस्वती के उपासकों की लंबी परंपरा रही है। इनमें तारादत्त विलक्षण का नाम श्रद्धा से लिया जाता है। तारादत्त विलक्षण का जन्म सन् 1917 में हरियाणा के अलेवा ग्राम में हुआ था। इनक पिता का नाम माईराम था जो अपने समय के श्रेष्ठ कवि थे। तारादत्त जी ने अपनी आरंभिक शिक्षा अलेवा में ही प्राप्त की। तत्पश्चात् कैथल के निकट पाई गांव से इन्होंने आठवीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। इन्होंने जींद जिले से प्रभाकर की शिक्षा पूरी की। इन्हें अनेक भाषाओं का ज्ञान था। तारादत्त जी रेडियो से भी जुड़े रहे। इनके द्वारा रचित गीतों को आकाशवाणी के अनेक केंद्र निरंतर प्रसारित करते रहते हैं। इनका हरियाणवी भाषा और संस्कृति से विशेष लगाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

रचनाएँ – तारादत्त विलक्षण का हरियाणवी लोक काव्य परंपरा में विशेष स्थान है। इन्होंने अपनी रचनाओं में राष्ट्रीय एकता पर विशेष बल दिया है। इनकी नीति और दर्शन से संबंधित रचनाओं में मानव जीवन को परिष्कृत करने की मूल संवेदना मिलती है। इनकी रचनाओं में जीवन, मृत्यु तथा जनजीवन से जुड़े अनेक प्रतीक उपलब्ध होते हैं। इनके द्वारा रचित रचनाओं में एकांकी हरियाणी गीत, हरियाणवी भाषा और व्याकरण की ध्वन्यात्मक संरचना आदि प्रमुख हैं। हरियाणा के प्रति इनका प्रेम म्हारा बसै देश हरियाणा नामक रचना में स्पष्ट दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त इन्होंने श्रीमद्भगवद गीता का हरियाणवी में अनुवाद किया है।

साहित्यिक विशेषताएँ

तारादत्त विलक्षण का साहित्य जीवन में निरंतर चलते रहने की प्रेरणा देने वाला है। इनके साहित्य में समाज को एक नई दिशा देने की शक्ति है। मातृभूमि के प्रति प्रेम तथा सम्मान, शहीदों को नमन, राष्ट्रीय ध्वज के प्रति आदर भाव से इनकी देशभक्ति, देश–प्रेम की भावना और राष्ट्रीय एकता संबंधी भावों की झलक मिलती है। इनकी साहित्यिक विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **मातृभूमि का अर्चन** – तारादत्त जी ने मातृभूमि को स्वर्ग से भी महान् बताया है। उन्होंने मातृभूमि की मां के साथ तुलना करते हुए मातृभूमि की वंदना की है। उनके अनुसार मातृभूमि माँ के समान स्वयं कष्ट सहन कर पालन पोषण करती है। अतः मातृभूमि को उन्होंने माता–पिता, बंधु–सखा, इष्ट देव और भगवान् कहा है–

मैरे कांडा लग्या तू तड़पी मेरा ए तन्नै ख्याल रहा सै।
पड़ा पसीना जड़ै मेरा माँ ! ओडै ए तेरा लहू बहा सै।।
तू हे पिता मात सै, तू हे बंधु-सखा-तात सै।
तू हे मेरा इष्ट देव तू हे मेरा भगवान सै।।

2. **एकता का आह्वान** – कवि तारादत्त जी ने अपने काव्य में देशवासियों को एकजुटता के लिए आह्वान किया है। वे पूरे राष्ट्र को एकता के सूत्र में बाँधना चाहते हैं। वे भाषा, प्रांत, जाति, धर्म की दीवार को तोड़ कर सभी भारतवासियों को एक देखना चाहते हैं। उनका मत है कि हमें भिन्न–भिन्न विचारधाराओं और देश को खंडित करने वाली परंपराओं को जड़ से उखाड़ फैंकना चाहिए–

भाषा-प्रांत-जात-मजहब की भीत नै नहीं चिणन द्यांगे।
सांप्रदायिक द्वेष के गढ़ भारत मैं नहीं बणन द्यांगे।

न्यारी-न्यारी डफली न्यारे-न्यारे गीता नां गावणरधां।

खंडित करै देश नै कोन्या ऐसी रीत चलावद्यां।।

3. शहीद-सम्मान – तारादत्त जी की रचनाओं में शहीदों को बार–बार नमन करते हुए उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजली व्यक्त की गई है। उन्होंने शहीदों द्वारा किए गए बलिदान को स्मरण करते हुए उनके द्वारा दी गई आजादी रूपी ध रोहर की रक्षा करने का संदेश दिया है। इसके लिए चाहे हमें अपने प्राणों की भी आहुति क्यों न देनी पड़े। कवि ने उन शहीदों को नमन किया है जिन्होंने देश के लिए अपना बलिदान दिया। वे फांसी के तख्तों पर झूल गए किंतु उन्होंने राष्ट्रीय ध्वज को झुकने नहीं दिया--

सीस कटे पर राष्ट्र ध्वज को झुकणे नहीं दिया था।

फांसी का तख्ता तै सामण-झूला समझ लिया था।।

कूण-कूण मैं आज़ादी का पौंहचाया पैगाम।

शहीदों ! तमनै मेरा प्रणाम।।

4. राष्ट्रीय ध्वज-सम्मान --कवि ने राष्ट्रीय ध्वज को सबसे सुंदर, श्रेष्ठ और ऊँचा बताते हुए उसके प्रति सम्मान का भाव व्यक्त किया है। राष्ट्रीय ध्वज हमारी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है तथा यह सम्राट् अशोक के धर्म चक्र से सुशोभित है। कवि का मत है कि हमें सदा अपने राष्ट्रीय ध्वज की आन और शान पर मिटने के लिए तैयार रहना चाहिए--

हम इसनै नहीं झुकण द्यांगे और ऊँचा लहरावांगे।

कदम बधँगे आगै मिलकै गीत जीत के गावांगे।।

एक थे-एक सां-एकै रहांगे विलक्षण एक ही नारा सै।

सबतै ऊँचा, सब तै सुन्दर झण्डा म्हारा सै।।

5. सौंदर्य-चित्रण – तारादत्त जी ने अपने काव्य में सौंदर्य का भी चित्रण किया है। मातृभूमि की वंदना करते हुए उन्होंने भारतभूमि के प्राकृतिक एवं मानवीय सौंदर्य को एक साथ चित्रित किया है। जैसे–

ऊँचे पर्वत-सागर नदियाँ बहती होई बल खावै सै।

हरे भरे रूखां की चोटी पै पंछी चहचावैं सैं।।

धरती घास गऊ बछड़ नै चाटती दूध पिलावै सै।

अल्लड़ मस्त किशोरी झूम झूम कै नाचै गावैं सै।

थिरक रहा जोहन अलबेला-प्यार बखेरै प्रातः की बेला।

6. भाषा-शैली – तारादत्त विलक्षण की भाषा अत्यंत सरल और सहज है। इनकी भाषा की सरलता और सरसता से इनके काव्यगत सौंदर्य में वृद्धि हुई है। भाषा में प्रवाहमयता, चित्रात्मकता, लयात्मकता तथा भावात्मकता का गुण विद्यमान है। जीवन, मृत्यु तथा जनजीवन से संबंधित अनेक प्रतीक इनकी भाषा में मिलते हैं। जिससे जनसामान्य इनके साहित्य से जुड़ गया है। इनका शब्द चयन अत्यंत सुंदर है। भाषा भावानुकूल है। तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों के मिश्रण से बनी इनकी भाषा जनसामान्य के अधिक निकट है। अलंकारों का सुंदर प्रयोग इनके काव्य में मिलता है। मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा सशक्त एवं प्रभावशाली बन गई है। तारादत्त जी की शैली गीति शैली है। इन्होंने कहीं–कहीं उद्बोधन शैली का भी प्रयोग किया है। निश्चय ही तारादत्त हरियाणवी के लोकप्रिय कवि हैं।

कविता-सार

हरियाणा के प्रसिद्ध कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'के गुण गाऊँ माटी का' में मातृभूमि की वंदना की गई है। कवि ने जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से बढ़कर बताते हुए कहा है कि उसे अपनी मातृभूमि पर गर्व है। मातृभूमि माँ के समान स्वयं कष्ट सहकर अपनी संतान रूपी निवासियों का पालन–पोषण करती है। मातृभूमि को ही माता–पिता,

तात, सखा, बंधु तथा इष्टदेव और भगवान कहा गया है। कवि कहता है कि वह अपनी मातृभूमि की रक्षा क लिए हरदम मर–मिटने को तैयार है। वह अपनी मातृभूमि के आंगन में खुशियों के फूल खिलाना चाहता है और समता की सुगंध बिखेरना चाहता है। कवि मातृभूमि के प्राकृतिक और मानवीय सौंदर्य का चित्रण करते हुए कहता है कि यहाँ ऊँचे–ऊँचे पर्वत, नदियाँ, सागर और बल खाती नदियाँ सुंदर लगती हैं। वृक्षों की चोटियों पर चहचहाते पक्षी सुशोभित होते हैं। भोली–भाली किशोरियाँ मस्त होकर गाती और नाचती हैं। कवि समस्त विभिन्नताओं को दूर करके एकता लाना चाहता है। वह अपने देश की ओर उठने वाले प्रत्येक हाथ और शत्रु की बुरी नज़र को कुचल देना चाहता है। कवि अपनी मातृभूमि को ही अपने भाव, भाषा, स्वर, छंद, लय, ताल और अपने जीवन को परिभाषा बताता है।

'एक रहोगे' कविता में कवि ने सांप्रदायिकता से दूर रहकर एकता का आह्वान किया है। कवि की मान्यता है कि हम सदा एक थे, एक हैं और एक ही रहेंगे। हम संकटों में भी मधुर गीत गाना जानते हैं। कवि ने प्रबल शब्दों से कहा है कि चाहे हमारे सिर कट जाएँ किंतु राष्ट्र का शीश कभी भी झुकने नहीं देंगे। हम इस देश को सदा प्रगति के पथ पर आगे ले जाएंगे। कवि भाषा, प्रांत, जाति और मजहब की दीवार तथा सांप्रदायिकता द्वेष को भारत में न पनपने देने की बात कहता है। वह देश को खंडित करने वाली सभी परंपराओं और इस देश में फैली विभिन्नताओं को दूर करके देश को एकता के सूत्र में बाँधना चाहता है।

'शहीदों को श्रद्धांजलि' कविता में कवि शहीदों को बार–बार प्रणाम करता है। भारत के अमर शहीदों को स्मरण करते हुए कवि कहता है कि शहीदों ने सदा ही राष्ट्रीय ध्वज को ऊँचा रखा और देश की आजादी के लिए फांसी के तख्तों पर झूल गए। कवि उनके बलिदान की शपथ लेकर कहता है कि चाहे हमें अपने प्राणों को न्यौछावर ही क्यों न करना पड़े, किंतु उनके द्वारा दी गई आजादी रूपी धरोहर की सदा रक्षा की जाएगी। वह राष्ट्र के अमर शहीदों का राष्ट्र का गौरव मानता है। शहीदों को स्मरण करते हुए कवि कहता है कि उनकी याद में इसकी आँखें नम हो जाती हैं और वह दिल को थामकर बैठ जाता है।

'म्हारा झण्डा' कविता में कवि ने अपने राष्ट्रीय ध्वज को सबसे ऊँचा, श्रेष्ठ तथा सुंदर बताया है। यह ध्वज हमारी राष्ट्रीय एकता का परिचायक है। इसमें दिखाई देने वाला हरा रंग हरियाली, सुख, समृद्धि एवं ऐश्वर्य का प्रतीक है। सफेद रंग प्रेम और शांति, सर्वधर्म समभाव तथा आशा रूपी प्रकाश का प्रतीक है तथा केसरिया रंग हमारे शहीदों के बलिदान, शक्ति और तेज़ का सूचक है। कवि कहता है कि हम अपने इस राष्ट्रीय ध्वज को कभी भी झुकने नहीं देंगे और सदा ऊँचा रखने का प्रयास करते रहेंगे। कविता विशेष आकर्षक है।

व्याख्या

के गुण गाऊँ माटी के

(1)

के गुण गाऊं माटी का, तिलक लगाऊं माटी का।
मेरे देस की माटी मन्नै तेरे पै अभिमान सै।
जननी जन्म भूमि मेरी तूं सुरग तै घणी महान सै।
मन्नै जन्म तेरी इस पावन माटी तै ए पाया सै।
मीठी लोरी दै मन्नै छाती का दूध पिलाया सै।
ममता के पलणे मैं जननी तन्नै मुझक झुलाया सै।
मेरे सिर पै राखी हरदम तन्नै आंचल की छाया सै।।
तन्नै ए परवान चढ़ाया, तन्नै जीणा मुझे सिखाया।
अपणी गोदी में बैठा कै दिया प्रेम ज्ञान सै।
सुरग तै घणी.....।

शब्दार्थ – के=क्या, माटी=मिट्टी, देस=देश, मन्नै=मुझे, सै=है, सुरग तै=स्वर्ग से भी, घणी=बहुत, पावन=पवित्र, तै ए=से ही, पले ग=पलना, झूला, तन्नै=तुने, राखी=रखी, हरदम=हर पल, परवान चढ़ाया=अत्यधिक उन्नति तक पहुंचाना, जीणा=जीना, अपणी=अपनी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'के गुण गाऊँ माटी का' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने मातृभूमि की अनेक प्रकार से वंदना की है। इन पंक्तियों में कवि ने अपनी जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी महान् बताते हुए उसकी महिमा का गुणगान किया है।

व्याख्या –कवि कहता है कि मैं अपनी मातृभूमि की मिट्टी के गुणों का जितना भी गुणगान करूं, वह कम है। मैं इस मिट्टी का तिलक अपने मस्तक पर लगाता हूँ। मुझे अपने देश की मिट्टी पर गर्व है। हे मेरी जन्म भूमि, मुझे तू स्वर्ग से भी अधिक महान लगती है। मेरा जन्म तुम्हारी इस पवित्र मिट्टी पर प्राप्त हुआ है। तुमने मुझे माँ के समान मीठी लोरियां सुनाकर और अपनी छाती का दूध पिलाकर बड़ा किया है अर्थात् तुमने ही मेरा पालन–पोषण किया है, तुमने मुझे अपने ममता रूपी झूले में झुलाकर सुख प्रदान किया है। तुमने ही एक माँ के आशीर्वाद के समान सदा मेरे सिर पर अपने आँचल की छाया रखकर मेरी रक्षा की है। तुमने ही मुझे जीवन में उन्नति के शिखर पर पहुँचाया और सही मायनों में जीना सिखाया। हे मातृभूमि ! तुमने अपनी ही स्नेहमयी गोद में बैठाकर मुझे ज्ञान प्रदान किया है।

विशेष –

(i) मातृभूमि की महिमा का गुणगान किया गया है।

(ii) 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' का भाव व्यक्त हुआ है।

(iii) मातृभूमि को माता के समान सम्मान दिया गया है।

(iv) मातृभूमि के प्रति गर्व का भाव प्रकट किया गया है।

(v) देश–प्रेम का भाव व्यंजित हुआ है।

(vi) उन्नति का एकमात्र श्रेय जन्मभूमि को जाता है। उसी ने ही उसे जीने का उचित मार्ग दिखाया है।

(vii) भाषा की सरलता, सहजता और सरसता ने काव्यगत सौंदर्य में वृद्धि की है।

(2)

मैं सोऊं था तूं जागै थी हंस हंस भारी कष्ट सहा सै।
मल मूत्तर तक सहन करा मूंह तै उफः तक नहीं कहा सै।।
मेरे कांडा लग्या तू तड़पी मेरा ए तन्नै ख्याल रहा सै।
पड़ा पसीना जड़ै मेरा माँ ! ओड़ै ए तेरा लहू बहा सै।।
तू हे पिता मात सै, तू हे बंधु-सखा-तात सै।
तू हे मेरा इष्ट देव तू हे मेरा भगवान सै।।
सुरग तै घणी.....

शब्दार्थ – जागै थी=जाग रही थी, सहा सै=सहन किया है, मेरे=मुझे, कांडा=काँटा, लग्या=लगा, जड़ै=जहाँ, ओड़ै=वहाँ।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी के प्रसिद्ध कवि तारादत्त विलक्षण की कविता 'के गुण गाऊँ माटी का' से उद्धृत हैं। इस कविता में उन्होंने मातृभूमि की महिमा का गुणगान किया है। इन पंक्तियों में मातृभूमि को एक स्नेहमयी माँ के समान चित्रित किया गया है।

व्याख्या –जननी जन्मभूमि ही माँ है। जिस प्रकार एक स्नेहमयी माँ स्वयं कष्ट उठाकर पालन–पोषण करती है। कवि कहता है कि हे मातृभूमि ! जब मैं सोता था तो तुम एक ममतामयी माँ के समान जागती रहती थी। तुमने सभी कष्टों को हँस–हँस कर सहन किया है। तुमने मेरे मलमूत्र आदि को भी चुपचाप अपने ऊपर सहन किया और कभी उफ् तक नहीं की अर्थात् थकान या घृणा का भाव प्रदर्शित नहीं किया। यदि मुझे कभी काँटा भी लगा तो तुम एक ममतामयी

माँ के समान तड़प उठी और सदा तुमने मेरा ख्याल रखा। हे माँ ! जहाँ पर भी मेरा पसीना बहा है वहीं पर तुमने अपना खून बहाया है। अब तो तुम ही मेरी माता और पिता हो तथा मेरी बंधु, सखा और....भी तुम ही हो। तुम ही मेरा इष्टदेव तथा तुम ही मेरी भगवान हो। मैं सदा तुम्हारी ही पूजा करना चाहता हूँ।

विशेष –

(i) मातृभूमि के रूप में माँ के रूप में चित्रित करके अपने मन के भाव व्यक्त किए गए हैं।

(ii) मातृभूमि माँ के ही समान स्वयं कष्ट उठाकर सबका पालन–पोषण करती है।

(iii) 'मेरे कांडा लग्या तू तड़पी' में एक ममतामयी माँ का सजीव रूप प्रकट हुआ है।

(iv) मातृभूमि को ही अपना माता–पिता, बंधु–सखा तथा इष्टदेव भगवान कहकर उसकी पूजा करने की भावना को व्यक्त किया गया है।

(v) देश–प्रेम की भावना व्यंजित हुई है।

(vi) भाषा अत्यंत सरल, सहज और सरल है।

(vii) अनुप्रास अलंकार की सुंदर योजना है।

(3)

तेरी माटी के कण कण नै अपणै सीस चढ़ाऊंगा।
प्राण संजो तेरे मैं अपणे मैं सोना उपजाऊंगा।
तेरे कोटि कोटि पुतरां संग मैं शक्ति बण जाऊंगा।
तेरे आंगण मैं खुशियां के जननी फूल खिलाऊंगा।
सुगंध समता की विखरैगी, जन जन की आभा निखरैगी।
कितणी पावन-मनभावन तेरी निष्छल मुस्कान सै।।

शब्दार्थ – अपणै=अपने, सीस=सिर, कोटि–कोटि=करोड़ों, पुतरां संग=पुत्रों के साथ जननी=माँ, समता=बराबरी, समानता, मनभावन=मन को अच्छी लगने वाली।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित 'के गुण गाऊँ माटी का' शीर्षक कविता से ली गई हैं। इस कविता में उन्होंने मातृभूमि की विभिन्न रूपों में वंदना की है। इन पंक्तियों में कवि ने मातृभूमि पर हरियाली और खुशहाली की कामना की है।

व्याख्या –कवि कहता है कि हे मातृभूमि ! तेरी इस मिट्टी के एक–एक कण पर मैं अपना शीश चढ़ाने के लिए तैयार हूँ अर्थात् मैं स्वयं को तुम पर न्यौछावर कर देना चाहता हूँ। तुम्हारी इस मिट्टी में जी–तोड़ मेहनत करके सोना दारू पी फसलें पैदा करूंगा। मैं तुम्हारी करोड़ों संतान रूपी निवासियों के साथ में मिलकर एक अपूर्व शक्ति बनना चाहता हूँ। इस मिट्टी पर रहने वाले सभी एक होंगे तो समानता की खुशबू फैलेगी तथा प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व में अधिक निखार आएगा। हे मातृभूमि तुम्हारी छल रहित मुस्कान अत्यंत पवित्र और मन को अच्छी लगने वाली है।

विशेष –

(i) मातृभूमि पर स्वयं को न्यौछावर करने का भाव प्रकट किया गया है।

(ii) मातृभूमि की सोना रूपी फसलें उपजाने की विशेषता बताई गई है।

(iii) मातृभूमि पर खुशहाली एवं समानता रूपी सुगंध बिखेरने की सुंदर कल्पना की गई है।

(iv) देशभक्ति का प्रेरक भाव व्यक्त हुआ है।

(v) भाषा की सरलता, सहजता और प्रवाहमयता द्रष्टव्य है।

(vi) अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(vii) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

(4)

ऊँचे पर्वत-सागर नदियाँ बहती होई बलखावै सै।
हरे भरे रूखां की चोटी पै पंछी चहचावैं सैं।।
धरती घास गऊ बछड़ नै चाटती दूध पिलावै सै।
अल्लड़ मस्त किशोरी झूम झूम कै नाचै गावैं सै।
थिरक रहा जोहन अलबेला-प्यार बखेरै प्रातः की बेला।
मचल रहा अंगड़ाई ले कै संगठित हिंदोस्तान सै।।

शब्दार्थ – बलखावै=बलखाती, द्व खां की=पेडों की, वृक्ष की, गऊ=गाय, बछड़ नै=बछड़े को, अल्हड़=भोली, नाचैं गावैं सै=नाचती और गाती हैं, जोबन=यौवन, अलबेला=सुंदर, अनूठा, बेला=समय, संगठित=पूर्ण रूप से गठित ।

प्रसंग -- प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'के गुण गाऊँ माटी का' से उद्धृत हैं। इसमें उन्होंने मातृभूमि की विभिन्न रूपों में वंदना की है। इन पंक्तियों में मातृभूमि की प्राकृतिक एवं मानवीय सुंदरता का चित्रण किया है।

व्याख्या –कवि कहता है कि मेरी मातृभूमि पर ऊँचे–ऊँचे पर्वत हैं। अनेक सागर हैं और बल खाती हुई नदियाँ अत्यंत सुंदर लगती हैं। हरे–भरे पेड़ों की चोटियों पर चहचहाते हुए पक्षी सुशोभित हो रहे हैं। घास चरती हुई गाय अपने बछड़े को चाटकर प्रेम करती हुई उसे दूध पिलाती हैं। यहाँ की भोली–भाली किशोरियाँ मस्त होकर झूमकर नाचती और गाती हैं और उनका अत्यंत सुंदर यौवन थिरकता प्रतीत होता है। यहाँ प्रातःकाल की बेला चारों ओर प्रेम बिखेरती हैं। कवि कहता है कि मेरा पूर्ण रूप से संगठित हिंदुस्तान मुझे अंगड़ाई लेकर मचलता–सा दिखाई देता है।

विशेष –

(i) मातृभूमि के प्राकृतिक एवं मानवीय सौंदर्य पर प्रकाश डाला गया है।

(ii) मातृभूमि पर प्रातःकाल की बेला सदा प्रेम का संदेश बिखेरती हुई आती है।

(iii) 'चरती घास गऊ बछड़ नै चाटती दूध पिलावै सै' में गाय का बछड़े के प्रति प्रेम अत्यंत हृदयग्राही है।

(iv) सरल शब्दों का आकर्षक चयन है।

(v) चित्रात्मक का गुण विद्यमान है।

(vi) भाषा सरल, सहज एवं सरस है।

(5)

तेरी आन शान की ओड़ जो हाथ उठैंगे तोड़ दूंगा मैं।
बुरी नज़र तै देखैगी जो आंख उसे नै फोड़ द्यूंगा मैं।।
तेरी सौगंध खा कै कहता बैरी का मूंह मोड़ द्यूंगा मैं।
एक सूत में चुण-चुण न्यारे-न्यारे मोती जोड़ द्यूंगा मैं।।
तूं हे भाव और भाषा मेरी जीवन की परिभाषा मेरी।
तूं हे विलक्षण तेरी कविता की लय छंद स्वर ताल सै।।

शब्दार्थ – ओड़=तरफ, बैरी=शत्रु, सूत=पुत्र, चुण–चुण=चुन–चुनकर, न्यारे–न्यारे=अलग–अलग।

प्रसंग -- प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'के गुण गाऊँ माटी का' से ली गई हैं। इन पंक्तियों में कवि ने अपनी मातृभूमि के प्रति अपनी समर्पण भावना के साथ–साथ राष्ट्रीय एकता पर बल दिया है।

व्याख्या –कवि कहता है कि हे मातृभूमि ! तेरी आन और शान की तरफ बढ़ने वाले प्रत्येक हाथ को मैं तोड़ दूंगा अर्थात् तुम्हारी प्रतिष्ठा और मान पर आँच नहीं आने दूंगा। जो आँख तुम्हें बुरी नज़र से देखेगी मैं उस आँख को ही फोड़ डालूँगा। मैं तुम्हारी कसम लेकर कहता हूँ कि जो शत्रु तुम्हारी ओर मुख करेगा मैं उसका मुँह मोड़ दूँगा। कवि कहता है कि मैं विभिन्न मोतियों को चुनकर एक सूत्र में पिरोने का प्रयास करूँगा अर्थात् संपूर्ण देश को एकता के सूत्र में बाँधूंगा। हे मातृभूमि ! तुम ही मेरी भावना और भाषा तथा मेरे जीवन की परिभाषा हो। मेरी कविता की लय, छंद, स्वर और ताल भी तुम ही हो।

विशेष –

(i) मातृभूमि पर मर–मिटने की भावना व्यक्त की गई है।

(ii) देश को एकता के सूत्र में बाँधने की इच्छा है।

(iii) मातृभूमि को ही भाव, भाषा, छंद, लय, स्वर और ताल कहा गया है।

(iv) राष्ट्रीय एकता का भाव व्यंजित हुआ है।

(v) आरंभिक पंक्तियों में वीर रस का परिपाक है।

(vi) भाषा की सरलता, सहजता और लयात्मकता से भावाभिव्यक्ति सुंदर हो गई है।

(vii) अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार की योजना है।

एक रहांगे

(1)

हम सदा एक थे–ईब एकसां–एकै रहांगे।
नां गंदे धन्दे संप्रदा फंदे मैं फहांगे।।
बांके बीर हिंद के पहरेदार सां हम मरदाने
संकट मैं भी गा जाणां सां प्यार के मधुर तराने
शीश कटो बेशक पर राष्ट्र का सिर नहीं झुकैगा।
प्रगति पथ पै कदम धरा जो कद्दे नहीं रुकैगा।।
सांस आखिरी तक हम जय जय हिंद कहांगे।
सदा एक थे.....।।

शब्दार्थ – ईब=अब, एकसां=एक हैं, एकै रहांगे=एक ही रहेंगे, सम्प्रदा=सांप्रदायिकता, फहांगे=फँसेंगे, सां=है, जाणां सां=जानते हैं, तराने=गीत, धरा=रखा, कद्दे=कभी भी, कहांगे=कहेंगे।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित 'एक रहांगे' शीर्षक कविता से उद्धृत हैं। इस कविता में कवि ने सांप्रदायिकता से दूर रहकर एकजुट रहने का आह्वान किया है। इन पंक्तियों में कवि ने स्वयं को देश पर मर–मिटने के लिए तैयार बताया है।

व्याख्या –कवि कहता है कि हम भारतवासी सदा एक थे, एक हैं और सदा एक ही रहेंगे। अब हम सांप्रदायिकता जैसी बुराइयों के फंदे में नहीं फसेंगे। हम अपने देश के वीर, शक्तिशाली पहरेदार हैं और हम संकटों में भी प्रेम के मधुर गीत गाना जानते हैं अर्थात् विपरीत परिस्थितियों में भी प्रसन्न रहना जानते हैं। कवि ओजपूर्ण शब्दों में कहता है कि अब चाहे हमारा सिर कट जाए कभी भी राष्ट्र का सिर नहीं झुकने देंगे। हमने प्रगति के पथ पर जो कदम आगे बढ़ाया है वह कभी भी नहीं रुकेगा अर्थात् हम निरंतर प्रगति के पथ पर आगे बढ़ेंगे। कवि देश के प्रति अपनी समर्पण भावना को व्यक्त करते हुए कहता है कि वह अपने जीवन की अंतिम सांस तक देश की जय–जयकार करता रहेगा। अपूर्व देश–प्रेम व्यक्त है।

विशेष –

(i) सांप्रदायिकता को त्याग कर एकता के सूत्र में बँधने की ओर प्रेरित किया गया है।

(ii) स्वयं को देश का पहरेदार कहा गया है तथा वह इसकी रक्षा के लिए प्राणों को न्यौछावर कर देना चाहता है।

(iii) कवि आखिरी सांस तक देश की जय–जयकार करना चाहता है।

(iv) देश–भक्ति की भावना व्यंजित हुई है।

(v) भाषा की सरलता, लयात्मकता एवं प्रवाहमयता द्रष्टव्य है।

(vi) वीर रस का सुंदर परिपाक है।

(2)

ब्रह्मा बण कै सकल जगत नै सत्य का ज्ञान दिया सै।
विष्णु बण कै अन-धन लक्षमी का वरदान दिया सै।।
शंकर बण कै संकट का विष हंस कै पान करा सै।
शक्ति बण कै शत्रू रक्त का माथै तिलक धरा सै।
राम के रूप मैं रावण की लंका नै दहांगे।।
हम एक थे.....।।

शब्दार्थ – बा कै=बन कर, सकल=संपूर्ण, अन–धन=अन्न और धन्न, विष=जहर, दहांगे=जला देंगे।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'एक रहांगे' से ली गई हैं। इस कविता ने सांप्रदायिकता से दूर रहकर एकजुट रहने का आह्वान किया है। इन पंक्तियों में भारत के विश्वगुरु एवं परोपकारी रूप की वंदना की है।

व्याख्या –कवि कहते हैं कि भारतभूमि विश्वगुरु है। भारत ने ही ब्रह्म बनकर संपूर्ण जगत् को सत्य का ज्ञान दिया है। इसने विष्णु बनकर हमें अन्न धन और लक्ष्मी से परिपूर्ण बनाया है। यही भारतभूमि भगवान शकर भी है और इसने भगवान् शिव के समान हमारे समसत संकटों रूपी विष को हँसकर पिया है। इसी ने ही शक्ति का अवतार देवी बनकर शत्रुओं के रक्त से अपने मस्तक पर तिलक लगाया है। इसी भारतभूमि पर ही हुए मर्यादा पुरुषोत्तम राम के समान हम रावण की लंका को जलायेंगे अर्थात् समाज में बुराइयों को समाप्त करेंगे। कवि का मत है कि हम सदा एक थे, एक हैं और एक ही रहेंगे।

विशेष –

(i) भारतभूमि की तुलना ब्रह्मा, विष्णु और महेश से की गई है।

(ii) भारत ने ही समस्त विश्व को सत्य का ज्ञान कराया है।

(iii) कवि ने स्वयं को राम के रूप में देखकर समाज की बुराइयों को दूर करने का संकल्प लिया है।

(iv) देश–भक्ति का स्वर स्पष्ट है।

(v) भाषा की सरलता, लयात्मकता और प्रवाहमयता ने काव्य सौंदर्य में अभिवृद्धि की है।

(vi) अनुप्रास अलंकार की सुंदर योजना है।

(3)

भाषा-प्रांत-जात-मजहब की भीत नै नहीं चिणन द्यांगे।
सांप्रदायिक द्वेष के गढ़ भारत मैं नहीं बणन द्यांगे।
न्यारी-न्यारी डफली न्यारे-न्यारे गीता नां गाव णरधां।

खंडित करै देश नै कोन्या ऐसी रीत चलावणघां।।

नों हम करते ओरां तै नफर नां सहांगे।

हम एक थे.....

शब्दार्थ – जात=जाति, मज़हब=धर्म, भीत=दीवार, विणन द्यांगे=बनने देंगे, गढ़=किले, बन द्यांगे=बनने देंगे, कोन्या=कभी नहीं, रीत=परंपरा, ओरां तै=दूसरों से, नफरत=घृणा, सहांगे=सहन करेंगे।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित 'एक रहांगे' शीर्षक कविता से उद्धृत हैं। इस कविता में उन्होंने सांप्रदायिकता से दूर रहकर एकजुट होने का आह्वान किया है। इन पंक्तियों में कवि ने भारत की राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने पर बल दिया है।

व्याख्या –कवि कहता है कि हम इस देश में भाषा, प्रांत, जाति और धर्म की दीवार को कभी नहीं बनने देंगे। भारत देश में कभी भी सांप्रदायिकता और द्वेष के हानिप्रद किलों को नहीं बनने देंगे। भिन्न–भिन्न विचारधारा के लोगों को एक विचारधारा का बनाने का प्रयास करेंगे। जिन विचारधाराओं और परंपराओं से देश की एकता खंडित होगी उस विचारधारा और परंपरा को कभी भी चलने नहीं देंगे। हम कभी भी दूसरों से घृणा नहीं करते और न ही दूसरों की घृणा को कभी सहन करेंगे। हम सदा एक थे, एक हैं और एक ही रहेंगे।

विशेष –

(i) भारत देश की अखंडता के लिए प्रयास करने पर बल दिया है।

(ii) विभिन्न विचारधाराओं को एकता के सूत्र में बाँधने का सुन्दर परिपाक है।

(iii) परंपराओं का विरोध है जो देश को खंडित करती हैं।

(iv) देश–भक्ति का स्वर मुखरित हुआ है।

(v) भाषा अत्यंत सरल, सहज और सरस है।

शहीदों को श्रद्धांजलि

(1)

तमनै मेरा प्रणाम–शहीदों तमनै मेरा प्रणाम।

भारत के इतिहास मैं थारा अमर रहैगा नाम।।

शहीदो.....

जब तक रहैगे चांद सितारे धरती अर आकास।

जब तक देता रहेगा भानु भी निर्मल प्रकास।।

उसे वखत तक जणा जणा रटै रोज सुबह अर शाम।

शहीदो.....

शब्दार्थ – तमनै=तुम्हें, थारा=तुम्हारा, अर=और, भानु=सूर्य, प्रकास=प्रकाश, बखत=समय, जणा–जणा=एक–एक व्यक्ति, रटै=रटेगा, याद करेगा, रोज़=प्रतिदिन।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित 'शहीदों को श्रद्धांजलि' शीर्षक कविता से ली गई हैं। इसमें उन्होंने देश पर न्यौछावर होने वाले शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि व्यक्त की है। इन पंक्तियों में कवि ने स्पष्ट किया है कि देश के शहीदों का नाम सदा अमर रहेगा।

व्याख्या – चर्चित कवि कहता है कि हे मेरे देश के शहीदो ! मैं तुम्हें बार–बार प्रणाम करता हूँ। भारत के इतिहास में तुम्हारा नाम सदा अमर रहेगा। इस संसार में जब तक चाँद, सितारे, धरती और आकाश रहेंगे तथा जब तक सूर्य इस पृथ्वी को अपना निर्मल प्रकाश देता रहेगा तब तक देश का प्रत्येक व्यक्ति सुबह और शाम तुम्हारे नाम का स्मरण

करता रहेगा। भाव यह है कि शहीदों का नाम सदा अमर होता है।

विशेष –

(i) देश पर प्राण न्यौछावर करने वाले शहीदों को स्मरण किया गया है।

(ii) सूर्य, चाँद, सितारे, धरती और आकाश के समान शहीदों का नाम भी सदा अमर रहेगा।

(iii) देश भक्ति की भावना व्यंजित हुई है।

(iv) भाषा की सरलता, सहजता और सरसता द्रष्टव्य है।

(v) 'जणा–जणा' में पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(2)

भारत मां की खाति तम नै कर दी खतम् जवानी।
याद करेगी आवण आली पीढ़ी थारी कुरबानी।
देश की खाति जिये सदा तम आए देश कै काम।
शहीदो.....
सीस कटे पर राष्ट्र ध्वज को झुकणे नहीं दिया था।
फांसी का तख्ता तै सामण-झूला समझ लिया था।।
कूण-कूण मैं आज़ादी का पौंहचाया पैगाम।
शहीदो.....

शब्दार्थ – खातिर=लिए, तम नै=तुमने, आवण आली=आने वाली, थारी कुरबानी=तुम्हारी शहादत, तुम्हारा बलिदान, तम=तुम, सीस=सिर, झुकणे=झुकने, सामण–झूला=सावन के महीने में पड़ने वाला झूला, कूण–कूण में=कोने–कोने में, पहुँचाया=पहुँचाया, पैगाम=संदेश।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'शहीदों को श्रद्धांजलि' से उद्धृत हैं। इन पंक्तियों में देश के शहीदों के बलिदान को स्मरण किया है।

व्याख्या – कवि शहीदों को संबोधित करते हुए कहता है कि तुमने भारत माता के लिए अपना यौवन अर्पित कर दिया। तुम्हारे इस बलिदान को आने वाली पीढ़ियाँ सदा याद करेंगी। तुम सदा ही देश के लिए जिए और तुमने देश के लिए ही अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया। तुमने अपने सिर कटा लिए किंतु राष्ट्र ध्वज को कभी भी झुकने नहीं दिया। तुमने फाँसी के तख्त को भी हँसते–हँसते स्वीकार किया। तुम तो फाँसी के तख्ते पर सावन के झूले के समान झूल गए। तुमने देश के कोने–कोने में स्वतंत्रता का संदेश पहुँचाया। देश पर मर मिटने वाले शहीदों, तुम्हें मेरा बार–बार प्रणाम है।

विशेष –

(i) देश के वीरों की शहादत का मनभावन वर्णन किया है।

(ii) शहीद फाँसी के तख्त पर सावन के झूले के समान चढ़कर झूल गए।

(iii) शहीदों द्वारा स्वतंत्रता के लिए किए गए बलिदानों की सुंदर अभिव्यक्ति है।

(iv) देशभक्ति का आकर्षक स्वर है।

(v) भाषा सरल, सहज एवं प्रवाहमयी है।

(vi) वीर रस का सुंदर परिपाक है।

(vii) 'काम आना' मुहावरे का सुंदर एवं सार्थक प्रयोग है।

(3)

कसम सै थारे लहूकणां की प्राण चहे लुट ज्यावैं।
आंच नहीं आवणद्यां आजादी पै चहे हम मिट ज्यावैं।
पी ज्यावांगे हंसते-हंसते हम भी मौत का जाम।
शहीदो.....
संभाल कै राखांगे धरोहर थारे बलिदानां की।
देणी पड़ो चाहे आहूति हमनै अपने प्राणां की।।
जननी जन्मभूमि भारत की सुरग तै उत्तम धाम।
शहीदो.....

शब्दार्थ – लहूकणां की=लहू के कणों की, चहे=चाहे, आवणद्यां=आने देंगे, पै=पर, ज्यावैं=जाएं, ज्यांवांगे=जाएंग, जाम=प्याला, राखांगे=रखेंगे, धरोहर=अमानत, थारे=तुम्हारे, देणी पड़ी=देनी पड़े, सुरग=स्वर्ग, तै=से।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'शहीदों को श्रद्धांजलि' से ली गई हैं। इन पंक्तियों में कवि ने जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से उत्तम बताते हुए उस पर स्वयं को न्यौछावर करने की भावना को प्रकट किया है।

व्याख्या – चर्चित कवि देश के शहीदों को बार–बार प्रणाम करते हुए कहता है कि हमें तुम्हारे द्वारा बहाए गए खून की कसम है कि चाहे हमारे प्राण ही लुट जाएं और चाहे हमारा नामोनिशन ही क्यों न मिट जाए हम अपने देश की आजादी पर आँच नहीं आने देंगे। हम भी अपने देश के लिए हँसते–हँसते मौत के प्याले को पीने के लिए तैयार हं अर्थात् हम भी देश पर बलिदान होने के लिए तैयार बैठे हैं। हम तुम्हारे बलिदानों द्वारा प्राप्त हुई आजादी रूपी धरोहर को सदा संभाल कर रखेंगे। इसके लिए चाहे हमें अपने प्राणों की भी आहुति क्यों न देनी पड़े। कवि कहता है कि हमारी जननी जन्मभूमि भारत स्वर्ग से भी श्रेष्ठ है।

विशेष –

(i) देश पर बलिदान होने के लिए सदैव तैयार रहने का संदेश दिया गया है।

(ii) आजादी को शहीदो की धरोहर बताया है।

(iii) अंतिम पंक्ति में 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' का भाव व्यक्त हुआ है।

(iv) देश–भक्ति की भावना की सुंदर अभ्यिंजना है।

(v) भाषा की सरलता, सहज और सरसता से काव्यगत सौंदर्य में वृद्धि हुई है।

(vi) वीर रस का सुंदर परिपाक है।

(4)

ऐ राष्ट्र के गौरव अमर शहीदां के सेनानी।
याद तेरी आते ही भरज्या सै आंख्यां मैं पानी।
शब्द नहीं मिलते बस रहज्यांवां सां दिल नै थाम।
शहीदो.....
राष्ट्र ध्वज सै हम नै अपणे प्राणां तै भी प्यारा।
राष्ट्र का सै सब कुछ यूहे ऊंचा झंडा म्हारा।।
कितणी ठंडी सुखदाई सै विलक्षण इसकी छाम।
शहीदो ! तमनै मेरा प्रणाम।

शब्दार्थ – भरज्या सै=भर जाता है, आंख्यां मैं=आंखों में, रहज्यांवा सां=रह जाते हैं,थाम=रोक कर, यूहे=यही, म्हारा=हमारा, सुखदायी=सुख प्रदान करने वाली, छाम=छाया।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोक काव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'शहीदों को श्रद्धांजलि' से उद्धृत हैं। इन पंक्तियों में कवि ने शहीदों को स्मरण करते हुए राष्ट्रीय ध्वज का गुणगान किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि मेरे देश के अमर शहीदो मैं तुम्हें बार–बार प्रणाम करता हूँ। तुम ही इस राष्ट्र के गौरव तथा अमर सैनिक हो। तुम्हारी याद आते ही मेरी आँखों में पानी भर आता है अर्थात् आँसू आ जाते हैं। हे मेरे देश के शहीदो ! तुम्हारे प्रति कृतज्ञता प्रकट करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं होते और मैं अपना दिल थामकर रह जाता हूँ। कवि राष्ट्रीय ध्वज पर विचार प्रकट करते हुए कहता है कि हमें यह राष्ट्रीय ध्वज अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है। हमारे देश का सर्वस्व यही हमारा ऊँचा राष्ट्रीय ध्वज ही है। इसकी छाया हमें अत्यंत सुखदायक प्रतीत होती है।

विशेष –

(i) देश के शहीदों और राष्ट्रीय ध्वज के प्रति अपनी भावनाएँ व्यक्त की हैं।

(ii) कवि शहीदों की शहादत का वर्णन करते हुए भावुक हो उठा है।

(iii) राष्ट्रीय ध्वज को प्राणों से भी प्रिय बताया गया है।

(iv) देशभक्ति की भावना की व्यंजना की गई है।

(v) भाषा अत्यंत सरल, सहज एवं प्रवाहमयी है।

(vi) 'आँखों में पानी आना' तथा 'दिल थामकर रह जाना' जैसे मुहावरों का प्रभावी प्रयोग है।

(vii) सूक्ष्म भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

म्हारा झंडा

(1)

सब तै ऊँचा सब तै सुंदर झण्डा श्रेष्ठ म्हारा सै।
जणे-जणे की आँख का उज्ज्वल भाग का तारा सै।
देश की गौरगाथा सै यू हिंद देश की शान तिरंगा।
सूत्र एकता का भारत की चक्करदार महान तिरंगा।
धर्म चक्र से अशोक सारे जग तै न्यारा सै।
सबतै ऊँचा.....

शब्दार्थ – सब तै=सबसे, म्हारा सै=हमारा है, जणे–जणे=प्रत्येक व्यक्ति, गौरवगाथा=गौरव की गाथा, यू=यह, जग=संसार, न्यारा=अलग।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोककाव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'म्हारा झंडा' से उद्धृत हैं। इस कविता में कवि ने अपने राष्ट्रीय ध्वज को सुंदर श्रेष्ठ बलिदानों का सूचक बताया है। इन पंक्तियों में राष्ट्रीय ध्वज को भारत की एकता का सूत्र तथा संपूर्ण विश्व से अलग कहा गया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हमारा राष्ट्रीय ध्वज सबसे ऊँचा, सुंदर और सबसे श्रेष्ठ है। यह भारत के प्रत्येक व्यक्ति की उज्ज्वल आँख का तारा है। यह राष्ट्रीय ध्वज ही हमारे अतीत के गौरव की गाथा का बखान करता है तथा यह तिरंगा झण्डा हमारे देश की शान है। हमारा महान राष्ट्रीय ध्वज हमारी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है और परिचायक है। निरंतर प्रगतिशील के प्रतीक अशोक के धर्म–चक्र से सुशोभित हमारा राष्ट्रीय ध्वज पूरे संसर से अलग अपनी पहचान रखता है।

विशेष –

(i) राष्ट्रीय ध्वज की महिमा का गुणगान किया है।

(ii) राष्ट्रीय ध्वज भारत के प्रत्येक व्यक्ति को अत्यंत प्यारा है। यह भाव व्यक्त हुआ है।

(iii) राष्ट्रीय ध्वज भारत की राष्ट्रीय एकता का प्रतीक एवं देश की शान है।

(iv) भाषा अत्यंत सरल, सहज और सरस है।

(v) 'आँख का तारा' मुहावरे का रोचक प्रयोग है।

(2)

रंग हरा राष्ट्र जीवन में फैलावे सै हरियाली।
बिखरावै महकार सुखां की घर घर ल्यावै खुशहाली।
सदा बहाता रहता समरिद्धी की धारा सै।
सबतै ऊँचा.....
रंग सफेद सभी के मन मैं शांति प्रेम जगावणियां।
सर्वधर्म समभाव का निर्मल शीतल नीर बहाबणियां।।
अंधेरी बीहड़ राहयां मैं करता उजियारा सै।
सबतै ऊँचा.....

शब्दार्थ – फलावै सै=फैलाता है, बिखरावै=बिखेरता है, महकार सुखां की=सुखों की खुशबू, ल्यावै=लाता है, समरिद्धी=समृद्धि, वैभव, जगाबणियां=जगाने वाला है, नीर=जल, बहाबणिया=बहाने वाला है, भीड़=सुनसान, निर्जन, राहयां मैं=राहों में, उजियारा=प्रकाश, उजाला।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोककाव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'म्हारा झंडा' से ली गई हैं। इन पंक्तियो में कवि ने राष्ट्रीय ध्वज के हरे रंग को समृद्धि और खुशहाली का प्रतीक बताते हुए ध्वज के सफेद रंग के महत्त्व पर भी प्रकाश डाला है।

व्याख्या – हमारे राष्ट्रीय ध्वज के तीन रंग हैं–केसरिया, सफेद एवं हरा। कवि हरे रंग के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहता है कि हमारे राष्ट्रीय ध्वज का हरा रंग हमारे राष्ट्रीय जीवन में हरियाली फैलाता है। यह चारों ओर सुखों की सुगंध बिखेरता है तथा घर–घर में खुशहाली लाता है। हरा रंग सदैव हमारे वैभव की धारा को प्रवाहित करता प्रतीत होता है। हरे रंग के साथ–साथ राष्ट्रीय ध्वज के बीच में जो सफेद रंग है, वह सभी भारतवासियों के मन में शांति और प्रेम को जागृत करता है। यह सभी धर्मों के प्रति समान भाव रखने को हमारी भावना द्व पी स्वच्छ एव शीतल जल को बहाने वाला है। हमारे राष्ट्रीय ध्वज का सफेद रंग जीवन की सुनसान, अंधेरे रास्तों रूपी निराशाओं में हमें आशा रूपी प्रकाश से प्रकाशित करता है। हमारा राष्ट्रीय ध्वज सबसे ऊंचा, श्रेष्ठ एवं सुंदर है।

विशेष –

(i) राष्ट्रीय ध्वज के रंगों की विशिष्टता को स्पष्ट किया है।

(ii) राष्ट्रीय ध्वज का हरारंग सुख एवं समृद्धि का प्रतीक है।

(iii) राष्ट्रीय ध्वज का सफेद रंग प्रेम, शांति, सर्वधर्म समभाव तथा उजाले का प्रतीक है।

(iv) प्रतीकात्मकता विद्यमान है।

(v) भाषा की सरलता, सहजता, प्रवाहमयता और सरसता द्रष्टव्य है।

(vi) अनुप्रास अलंकार का प्रभावी प्रयोग है।

(3)

नख नख पै जणे का मन गरभावै सै।
अमर शहीदों के बलिदान की याद दिवावै सै।।
शक्ति-तेज का सूचक रंग केसरिया प्यारा सै।
सबतै ऊँचा.....
हम इसनै नहीं झुकण द्यांगे और ऊँचा लहरावांगे।
कदम बधँगे आगै मिलकै गीत जीत के गावांगे।।
एक थे-एक सां-एकै रहांगै विलक्षण एक ही नारा सै।
सबतै ऊँचा, सब तै सुन्दर झण्डा म्हारा सै।।

शब्दार्थ – गरभावै सै=गर्व होता है, दिवावै सै=दिलाता है, झुकणे द्यांगे=झुकने देंगे, लहरावांगे=लहराएंगे, गावांगे=गाएंगे, रहांगै=रहेंगे।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हरियाणवी लोककाव्य परंपरा के प्रमुख कवि तारादत्त विलक्षण द्वारा रचित कविता 'म्हारा झंडा' से उद्धृत हैं। इन पंक्तियों मे कवि ने केसरिया रंग की विशेषता पर प्रकाश डालते हुए देश की राष्ट्रीय एकता का आह्वान किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि अपने राष्ट्रीय ध्वज को देखकर भारत के लोगों का मन गर्व से भर जाता है। इसका केसरिया रंग हमारे देश के अमर शहीदों के त्याग और बलिदान की याद दिलाता है। यह प्यारा केसरिया रंग हमारी शक्ति और तेज का प्रतीक है। केसरिया, सफेद और हरे रंग के मिश्रण अपने राष्ट्रीय ध्वज तिरंगे को हम कभी भी झुकने नहीं देंगे तथा सदा ऊँचा लहरायेंगे अर्थात् देश को उन्नति के मार्ग पर ले जायेंगें। हम कदम मिलाकर चलेंगे और विजय के गीत गायेंगे। कवि कहता है कि हमारा एक ही नारा है–हम एक थे, एक हैं और एक ही रहेंगे और हमारा यह राष्ट्रीय ध्वज सबसे ऊँचा और सुंदर है।

विशेष –

(i) राष्ट्रीय ध्वज के केसरिया रंग के महत्त्व और राष्ट्रीय एकता पर प्रकाश डाला है।

(ii) राष्ट्रीय ध्वज के केसरिया रंग को शक्ति और तेज का सूचक कहा गया है।

(iii) एकता का आह्वान किया है और 'एक थे, एक हैं और एक रहेंगे' का नारा दिया है।

(iv) भाषा की सरलता, प्रवाहमयता और सरसता से काव्यागत सौंदर्य में वृद्धि हुई है।

(v) 'नख–नख' में पुनरुक्ति अलंकार का प्रयोग है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 तारादत्त विलक्षण के काव्य की राष्ट्रीय चेतना पर अपने विचार व्यक्त कीजिये।

उत्तर – किसी भी व्यक्ति का अपने देश के प्रति समर्पण भाव पवित्र सलिला भागीरथी के समान है जिसमें स्नान करने से शरीर ही नहीं अपितु मन और अंतर्रात्मा भी पवित्र हो जाती है। राष्ट्र की रक्षा और उन्नति के लिए अपना तन–मन और धन देश के चरणों मे समर्पित कर देना ही राष्ट्र भक्ति है। अपनी जननी जन्मभूमि के प्रति निष्ठा रखना मनुष्य का नैसर्गिक गुण है। जिस वस्तु से मनुष्य का क्षणिक संपर्क होता है, उसे भी वह कभी नहीं भूल पाता और जिस व्यक्ति के उपकार से उसका कल्याण होता है, उसके प्रति वह सदा कृतज्ञ रहता है तो जहाँ उसका जन्म हुआ है, जिसकी मिट्टी में लोट–पोट कर वह बड़ा हुआ है, जिस धरती के अन्न–जल ने उसे पुष्ट किया है – उस जन्मभूमि को वह कैसे भूल सकता है। अपनी जन्मभूमि अर्थात् राष्ट्र के प्रति चेतनता का भाव ही राष्ट्रीय चेतना है। अपने राष्ट्र की भाषा, संस्कृति और स्वर्णिम अतीत का गुणगान अनेक कवियों ने किया है। तारादत्त विलक्षण जी के काव्य में भी राष्ट्रीय उनकी चेतना विभिन्न रूपों में मुखरित हुई है जिसे हम निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत देख सकते हैं।

1. मातृभूमि-वंदना – कवि ने अपनी जननी जन्मभूमि को स्वर्ग से भी महान बताया है। उसे अपनी इस मातृभूमि पर अभिमान है। वह अपने देश की मिट्टी का तिलक अपने मसतक पर लगाकर स्वयं को गौरवांवित अनुभव करता है। मातृभूमि माँ के समान स्वयं कष्ट सहकर पालन–पोषण करती है। अतः कवि ने अपनी मातृभूमि की वंदना की है। वह मातृभूमि की महिमा का गुणगान करते हुए कहता है–

मन्नै जन्म तेरी इस पावन माटी तै ए पाया सै।
मीठी लोरी दै मन्नै छाती का दूध पिलाया सै।
ममता के पलणे मैं जननी तन्नै मुझे झुलाया सै।
मेरे सिर पै राखी हरदम तन्नै आंचल की छाया सै।।
तन्नै ए परवान चढ़ाया, तन्नै जीणा मुझे सिखाया।
अपणी गोदी में बैठा कै दिया प्रेम ज्ञान सै।

2. उत्सर्ग की भावना – कवि ने नवयुवकों को आत्मबलिदान की प्रेरणा दी है। उनका मत है कि हमें सदा देश के लिए अपने प्राणों को न्यौछावर करने के लिए तैयार रहना चाहिए। हमारा जीवन केवल देश के लिए होना चाहिए और हम अपने जीवन की आखिरी साँस तक देश की जय–जयकार करते रहें–

बांके बीर हिंद के पहरेदार सां हम मरदाने
संकट मैं भी गा जावां सां प्यार के मधुर तराने
शीश कटो बेशक पर राष्ट्र का सिर नहीं झुकैगा।
प्रगति पथ पै कदम धरा जो कद्दे नहीं रुकैगा।।
सांस आखिरी तक हम जय जय हिंद कहांगे।
सदा एक थे – ईब एकसां – एकै रहांगे।।

3. देश-प्रेम – कवि ने देशवासियों को स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तत्पर और एकजुट रहने का आह्वान किया है। कवि कहता है कि अपने देश की ओर उठने वाले प्रत्येक हाथ और बुरी नजर को फोड़ना प्रत्येक देशवासी का कर्त्तव्य होना चाहिए–

तेरी आन शान की ओड़ जो हाथ उठैंगे तोड़ द्यूंगा मैं।
बुरी नज़र तै देखैगी जो आंख उसे नै फोड़ द्यूंगा मैं।।
तेरी सौगंध खा कै कहता बैरी का मूंह मोड़ द्यूंगा मैं।
एक सूत में चुण-चुण न्यारे-न्यारे मोती जोड़ द्यूंगा मैं।।

4. राष्ट्रोन्नयन – कवि ने अपने राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य की कामना की है। कवि अपने राष्ट्र में चारों ओर समानता की खुशबू फैलाना चाहता है और खुशियां ही खुशियां लाना चाहता है। वह प्रत्येक व्यक्ति की आभा में निखार लाना चाहता है–

प्राण संजो तेरे मैं अपणे मैं सोना उपजाऊंगा।
तेरे कोटि कोटि पुतरां संग मैं शक्ति बण जाऊंगा।
तेरे आंगण मैं खुशियां के जननी फूल खिलाऊंगा।
सुगंध समता की विखरैगी, जन जन की आभा निखरैगी।

5. शहीदों को श्रद्धांजलि – कवि ने देश पर प्राणों को न्यौछावर करने वाले शहीदों को भी स्मरण किया है। कवि ने शहीदों को श्रद्धांजलि देते हुए कहा है कि जब तक चाँद, सितारे धरती, सूर्य और आकाश रहेंगे तब तक हमारे देश का प्रत्येक व्यक्ति इन शहीदों को स्मरण करता रहेगा। शहीदों द्वारा दिए गए बलिदान को आने वाली पीढ़ियां सदा याद रखेंगी–

भारत मां की खातिर तम नै कर दी खतम् जवानी।
याद करेगी आवण आली पीढ़ी थारी कुरबानी।
देश की खातिर जिये सदा तम आए देश कै काम।
शहीदों तमनै मेरा प्रणाम।।

6. राष्ट्रीय ध्वज-महत्त्व – कवि ने राष्ट्रीय ध्वज को राष्ट्रीय एकता का प्रतीक मानते हुए इसका गुणगान किया है। कवि का मानना है कि हमारा राष्ट्रीय ध्वज सबसे ऊंचा, सुंदर एवं श्रेष्ठ है। यह हमारे देश की गौरवगाथा एवं शान को प्रदर्शित करता है। हमारा राष्ट्रीय ध्वज हम सबकी आँखों का तारा है–

सब तै ऊँचा सब तै सुंदर झण्डा श्रेष्ठ म्हारा सै।
जणे-जणे की आँख का उज्ज्वल भाग का तारा सै।
देश की गौरगाथा सै यू हिंद देश की शान तिरंगा।
सूत्र एकता का भारत की चक्करदार महान तिरंगा।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि कवि ने अपने काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न रूप मुखरित किए हैं। कवि ने कहीं तो मातृभूमि की स्तुति की है तो कहीं नवयुवकों को आत्मबलिदान के लिए प्रेरित किया है। कवि ने स्वतंत्रता के लिए तत्पर रहने का आह्वान करते हुए राष्ट्रीय एकता पर बल दिया है। उन्होंने शहीदों के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए अपने राष्ट्रीय ध्वज का भी गुणगान किया है। इस प्रकार इनके काव्य में राष्ट्रीय चेतना के विभिन्न रूपों की झलक मिलती है।

प्रश्न 2. तारादत्त विलक्षण की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिये।

उत्तर – भाषा भावाभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम है। कोई भी रचनाकार भाषा के माध्यम से ही अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। भाषा रचनाकार के भावों को वहन करके पठक अथवा श्रोता तक पहुंचाती है। किसी भी रचना की सफलता या असफलता काफी हद तक इसमें प्रयुक्त भाषा पर निर्भर करती है। भाषा के माध्यम से ही कवि या लेखक अपने उद्देश्य को जन–सामान्य तक पहुंचाता है। हरियाणा के प्रसिद्ध कवि तारादत्त विलक्षण के काव्य में प्रयुक्त भाषा अत्यंत सरल, सहज और सरस है। इनकी भाषा पाठक के हृदय पर सीधा प्रभाव डालती है। इनकी भाशा को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है।

1. सरल-भाषा – कवि तारादत्त विलक्षण ने जनसामान्य से जुड़ी भाषा का प्रयोग अपने काव्य में किया है। उन्होंने अत्यंत सरल शब्दावली के माध्यम से अपने भावों को अभिव्यक्ति दी है। उनकी भाषा में जनसामान्य से जुड़े प्रतीकों और भावनाओं का प्रयोग हुआ है। इसी कारण जनसाधारण सरलता से उनकी भाषा को समझ लेता है। उनकी भाषा की सरलता द्रष्टव्य है–

के गुण गाऊं माटी का, तिलक लगाऊं माटी का।
मेरे देस की माटी मन्नै तेरे पै अभिमान सै।
जननी जन्म भूमि मेरी तूं सुरग तै घणी महान सै।

2. चित्रात्मकता – तारादत्त जी की भाषा में चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है। उन्होंने शब्दों के माध्यम से कई स्थलों पर सुंदर चित्र खींचे हैं। उनके द्वारा प्रस्तुत शब्द–चित्र एकदम सजीव हो उठे हैं। उदाहरणस्वरूप–

ऊँचे पर्वत-सागर नदियाँ बहती होई बलखावै सै।
हरे भरे रूखां की चोटी पै पंछी चहचावैं सैं।।
चरती घास गऊ बछड़ नै चाटती दूध पिलावै सै।
अल्लड़ मस्त किशोरी झूम झूम कै नाचै गावैं सै।।

3. प्रभावोत्पादकता – तारादत्त जी की भाषा की एक अन्य विशेषता उसकी प्रभावोत्पादकता है। यद्यपि उन्होंने सरल

शब्दों का प्रयोग किया है फिर भी उनकी भाषा काफी प्रभावशाली है। वह सीधे हृदय पर प्रभाव डालती है। पाठक इसे पढ़कर इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता–

भाषा-प्रांत-जात-मजहब की भीत नै नहीं चिणन द्यांगे।
सांप्रदायिक द्वेष के गढ़ भारत मैं नहीं बणन द्यांगे।
न्यारी-न्यारी डफली न्यारे-न्यारे गीता नां गावणधां।
खंडित करै देश नै कान्या ऐसी रीत चलावणधां।।

4. लाक्षणिकता – तारादत्त जी की भाषा में लाक्षणिकता के भी दर्शन होते हैं। उनके द्वारा प्रयुक्त लाक्षणिक प्रयोगों से उनकी भावाभिव्यक्ति अधिक सटीक और सशक्त बन गई है। उनकी लाक्षणिकता में अप्रत्यक्ष अर्थ को स्पष्ट करने की पूर्ण क्षमता है। उदाहरणस्वरूप कवि ने राष्ट्रीय एकता के लिए निम्नलिखित लक्षण प्रस्तुत किया है–

एक सूत में चुण–चुण न्यारे–न्यारे मोती जोड़ द्यूंगा मैं।

एक अन्य स्थान पर कवि कहता है–

फाँसी का तख्ता तै सामण–झूला समझ लिया था।

5. मुहावरे एवं लोकोक्ति का प्रयोग – कवि ने अपनी भाषा में मुहावरे एवं लोकोक्तियों का सुंदर एवं सार्थक प्रयोग किया है। मुहावरों के प्रयोग से उनकी भाषा में निखार आ गया है और भाषाभिव्यक्ति तीव्र हो गई है। उनके द्वारा प्रयुक्त मुहावरों एवं लोकोक्तियों का प्रयोग द्रष्टव्य है।

(i) देश की खातिर जिये सदा तम आए देश के काम (काम आना)

(ii) जणे–जणे की आँख का उज्ज्वल भाग का तारा सै (आँखों का तारा)

(iii) न्यारी–न्यारी डफली, न्यारे–न्यारे गीत ना गावणरधां (अपनी–अपनी डफली अपना–अपना गीत)

6. वीर रस – कवि ने अपनी भाषा में वीर रस का भी समावेश किया है। जिनकी भाशा में वीर रस यत्र–तत्र बिखरा पड़ा है। देश–प्रेम की कविता में जहाँ कवि ने आत्मबलिदान की बात कही है वहीं वीर रस स्वयं की आ गया है। उदाहरणस्परूप–

तेरी आन शान की ओड़ जो हाथ उठैंगे तोड़ द्यूंगा मैं।
बुरी नज़र तै देखैगी जो आंख उसे नै फोड़ द्यूंगा मैं।।
तेरी सौगंध खा कै कहता बैरी का मूंह मोड़ द्यूंगा मैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि तारादत्त विलक्षण की भाषा अत्यंत सरल, सहज और स्वाभाविक है। इसमें चित्रात्मक लाक्षणिकता एवं प्रभावोत्पादकता का समावेश हो गया है। इसके अतिरिक्त इनकी भाषा में भावात्मकता, प्रवाहमयता तथा लयात्मकता भी है। मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भावाभिव्यक्ति बन गई है

प्रश्न 3. 'के गुण गाऊं माटी का' कविता में चित्रित राष्ट्रीय भावना की विवेचना कीजिए।

उत्तर – 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' अर्थात् जननी जन्मभूमि स्वर्ग से भी बढ़कर होती है। जन्मभूमि के प्रति निष्ठा रखना मनुष्य का नैसर्गिक गुण है। मनुष्य तो विचारवान और ज्ञानवान प्राणी है। छोटे–छोटे अज्ञानी पशु–पक्षी भी अपने जन्म–स्थान से अनंत स्नेह करते हैं। पक्षी दिन भर न जाने कहाँ–कहाँ उड़ते–फिरते हैं परंतु संध्या होते ही वे दूर–दूर दिशाओं से पंख फड़फड़ाते हुए अपनी नीड़ों को लौट आते हैं। मनुष्य का अपनी जन्मभूमि से विशेष लगाव होता है। जिस मातृभूमि की रज में वह पलता–बढ़ता है उसे वह भूमि अपनी माँ की गोद के समान सुखदायी लगती है। 'के गुण गाऊं माटी का' कविता में कवि ने माँ समान अपनी मातृभूमि की महिमा का गुणगान किया है। उसे अपनी मातृभूमि पर गर्व है। वह मातृभूमि को माता के समान मानता है। वह कहता है कि–

मन्नै जन्म तेरी इस पावन माटी तै ए पाया सै।
मीठी लोरी दै मन्नै छाती का दूध पिलाया सै।

ममता के पलणे मैं जननी तन्नै मुझे झुलाया सै।

मेरे सिर पै राखी हरदम तन्नै आंचल की छाया सै।।

कवि की मान्यता है कि मातृभूमि माँ के समान स्वयं कष्ट सहकर पालन–पोषण करती है। जिस प्रकार बच्चे को कांटा भी चुभ जाए तो माँ का हृदय चीत्कार कर उठता है उसी प्रकार मातृभूमि भी अपने निवासियों का सदा ध्यान रखती है–

मेरे कांडा लग्या तू तड़पी मेरा ए तन्नै ख्याल रहा सै।

पड़ा पसीना जड़ै मेरा माँ ! ओड़ै ए तेरा लहू बहा सै।।

कवि अपनी मातृभूमि के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है। वह चाहता है कि चारों ओर एकता का साम्राज्य हो। वह भारत माता के आंगन में खुशियों के फूल खिलाना चाहता है तथा समानता की सुगंध बिखेरना चाहता है। वह अपनी मातृभूमि की पवित्र और छल रहित मुस्कान पर बलिहारी जाता है–

तेरे आंगण मैं खुशियां के जननी फूल खिलाऊंगा।

सुगंध समता की विखरैगी, जन जन की आभा निखरैगी।

कितनी पावन-मनभावन तेरी निष्छल मुस्कान सै।।

कवि अपनी मातृभूमि की प्राकृतिक सुंदरता पर रीझ उठता है। उसे इसकी बलखाती नदियां तथा वृक्षों पर चहचहाते पक्षी अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इसके अतिरिक्त बछड़े को दूध पिलाती और उसे स्नेह करती गाय उस पर गहरा प्रभाव डालती है।

ऊँचे पर्वत-सागर नदियाँ बहती होई बल खावै सै।

हरे भरे रूखां की चोटी पै पंछी चहचावैं सैं।।

चरती घास गऊ बछड़ नै चाटती दूध पिलावै सै।

कवि अपनी मातृभूमि को ही अपने भाव, भाषा, लय, स्वर, छंद तथा ताल के साथ–साथ अपने जीवन की परिभाषा भी मानता है। उनके अनुसार इसका सब कुछ उसकी पालनहारी मातृभूमि ही है–

तूं हे विलक्षण तेरी कविता की लय छंद स्वर ताल सै।।

कवि ने अपनी मातृभूमि को माँ मानकर उसकी वंदना की है और उनकी महिमा का गुणगान किया है। कवि ने मातृभूमि को ही अपनी माता, पिता, सखा, बंधु, इष्टदेव और यहां तक कि भगवान् भी कह दिया है। कवि ने मातृभूमि को ही अपने जीवन की परिभाषा कहकर उसके प्रति अपनी निष्ठा भी व्यक्त की है। कवि ने मातृभूमि को स्वर्ग से बढ़ कर माना है और उस पर न्यौछावर होने के लिए तैयार है।

10. जगदीश चंद्र वत्स

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर समय–समय में अनेक साहित्यकार जन्मे हैं। इनमें जगदीश चंद्र वत्स का नाम प्रमुख है। जगदीश चंद्र वत्स का जन्म हरियाणा के करलान जिले के कुराना गाँव में सन् 1916 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री लखी राम था। जगदीश चंद्र वत्स की प्रारंभिक शिक्षा उर्दू–फारसी में हुई थी परंतु बाद में इन्होंने संस्कृत, हिंदी, अंग्रेजी भाषाओं का अध्ययन किया। इन्हें पौराणिक ग्रंथों, शास्त्रों, पुराणों, उपनिषदों आदि का विशेष ज्ञान था। इस कारण भारतीय संस्कृति में इनकी अपार निष्ठा थी। इनके काव्य में गुरुभक्ति, समाज–सुधार, स्वदेश प्रेम आदि की भावनाएँ इन्हें प्राप्त संस्कारों का परिणाम हैं। विभिन्न ऐतिहासिक एवं पौराणिक संदर्भों के माध्यम से कवि ने भारत के गौरवशाली अतीत का वर्णन करते हुए वर्तमान को स्वर्णिम बनाने का संदेश दिया है। इन्हें हरियाणा के लोक जीवन का पूर्ण अनुभव था, जिसे इन्होंने अपने कावय में यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है।

रचनाएँ – जगदीश चंद्र वत्स की रचना–लोक अत्यंत विस्तृत है। इन्होंने अपने काव्य में विभिन्न सामाजिक विकारों पर अनेक दोहे, भजन, मुक्तक आदि लिखे हैं। 'कीचक वध', 'द्रौपदी स्वयंवर', 'सभा–पर्व', 'गुरु महिमा', विद्या महिमा' आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ-

जगदीश चंद्र वत्स की कविता में उनका अपना व्यक्तित्व झलकता है। उनकी कविता में युग, समय तथा हृदय का अद्‌भुत समन्वय प्राप्त होता है। उनके जीवनानुभवों की प्रामाणिक अभिव्यक्ति उनके काव्य में प्राप्ति होती है। जैसे गुरु की महिमा का गुणगान करते हुए वे कहते हैं–

'इस कारण गुरु रत्तीराम का ध्यान सदा हम धरते हैं।
गुरु बिन जगदीश चंद्र की लय-सुर की पहचान नहीं।'

अनुभूति का यह खरापन और प्रमाणिकता उनके काव्य को वैशिष्ट्य प्रदान करता है।

2. भक्ति-भावना – जगदीश चंद्र वत्स ने पौराणिक ग्रंथों, वेदों, शास्त्रों, पुराणों, उपनिषदों आदि का गहन अध्ययन किया था। इसलिए इन पर वैष्णव भक्ति के संस्कार स्पष्ट दिखाई देते हैं। उन्होंने मध्यकालीन भक्त कवियों के समान भक्ति से संबंधित अनेक दोहों, भजनों, गीतों आदि की रचना है। 'आइये आइये दर्श दिखाइये कृष्ण मुरारी' भजन में कवि ने भगवान् के चौबीस अवतारों में से कुछ अवतारों का वर्णन करते हुए भगवान् को दुष्टों का संहारक तथा भक्तों का उद्धारक बताया है। कवि ने मनुष्य को अपना जन्म व्यर्थ न गवाँ कर प्रभु नाम स्मरण करने की प्रेरणा देता है–

'करले भक्ति भजन रट हरिनाम को, जीवन वृथा गवाने के काबिल नहीं है।
हीरा-मोती समझ ले तूं हर साँस को, ये रत्न धन लुटाने के काबिल नहीं है।'

3. राष्ट्रीय-चेतना – जगदीश चंद्र वत्स` काव्य में राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति विभिन्न स्तरों पर हुई है। भारत माता की वंदना करते हुए वह उन्हें सबका दुःख दूर करने वाली माता मानता है और कहता है–

'भारत जननी माता दुःख हरने वाली,
कर पैदा बलवान ध्यान ला रहै पुजारी।'

कवि देश में व्याप्त वैर–द्वेष, भ्रष्टाचार, दुराचार, व्यभिचार आदि से संतप्त है तथा इन्हें देश के विकास में बाधक मान कर कहता है–

'धर्म कर्म बल विद्या से, जगदीश मोड़ गए मुखड़े।
शराब माँस व्यभिचार फैल गया, बजैं रात-दिन हुकड़े।'

वह भारतवासियों को पढ़–लिखकर देश की उन्नति में सहायक बनने का संदेश देता है क्योंकि 'बिन विद्या के भारतवासी रहे मुसीबत झेल।'

4. *सामाजिकता* – *जगदीश चंद्र वत्स का काव्य समाज में व्याप्त विसंगतियों को उजागर करने में भी सक्षम है।* कवि का मानना है कि जब तक हम विभिन्न सामाजिक रूढ़ियों से ग्रस्त रहेंगे, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, अनाचार आदि का बोलबाला रहेगा और हम कभी भी उन्नति नहीं कर सकेंगे। इसलिए कवि ने इन विकारों की निंदा करते हुए लिखा है–

'दुराचार व्यभिचार नशे में, सारे निंदा हो ज्या।
कामी पुरुष काम के बस हो, बिल्कुल अंधा हो ज्या।
तन मन धन रंग रूप रहे ना, चेहरा मंदा हो ज्या।
भोग से रोग, रोग से मृत्यु, गल में फंदा हो ज्या।'

5. भाषा-शैली – जगदीश चंद्र वत्स की काव्य–भाषा लोक–भाषा हरियाणवी है जिसमें खुलापन, सामान्य बोलचान के शब्दों का प्रयोग, ठेठ मुहावरे, प्रवाहमयता तथा भाव–प्रवणता विद्यमान है। इन्होंने मुख्य रूप से मुक्तक काव्य की रचना की है जिसमें दोहा, भजन, गीत आदि प्रमुख हैं। इनकी रचनाएँ गेयता के गुणों से युक्त हैं। कवि ने मुख्य रूप से अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश, उपमा, रूपक, पदमैत्री अलंकारों का अधिक प्रयोग किया है। इनकी शैली उद्‌बोधनात्मक, संवादात्मक तथा नाटकीयता से युक्त है।

वास्तव में जगदीश चंद्र वत्स का काव्य अपनी संवेदना और शिल्प में हरियाणवी लोक जीवन का यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत करता है।

कविता-सार

चर्चित कवि जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित बारह मुक्त रचनाएँ 'हरियाणवी लोकधारा' पुस्तक में संकलित हैं। पहले 'भजन' में कवि ने सद्‌गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए बताया है कि गुरु के बिना ज्ञान, ज्ञान के बिना भक्ति और भक्ति के बिना भगवान् की प्राप्ति नहीं हो सकती। इसलिए सदा गुरु की कृपा प्राप्त करनी चाहिए।

दूसरे और तीसरे मुक्तक में कवि ने विद्या की महानता का वर्णन किया है। कवि विद्या को धन–दौलत से भी अधिक महत्त्वपूर्ण मानता है क्योंकि विद्या की न चोरी हो सकती है, न यह कभी कम होती है और न ही इसे ताले में बंद करके इसकी रक्षा करनी पड़ती है। विद्वान व्यक्ति विभिन्न समस्याओं का समाधान सहज ही खोज कर सदा सुखी रहता है।

चौथे मुक्तक में कवि ने पर्यावरण सुरक्षा की प्रेरणा देते हुए वृक्षों को नहीं काटने के लिए कहा है क्योंकि वृक्ष बाढ़ आने से रोकते हैं, इनसे अनेक जड़ी–बूटियाँ मिलती हैं तथा कृषि का उत्पादन बढ़ता है।

पाँचवें भजन में कवि ने 'सभा पर्व के चीर हरण' प्रसंग में दुःशासन द्वारा द्रौपदी का चीरहरण करने पर विदुर जी को क्रोध का वर्णन किया गया है। वे द्रौपदी के इस अपमान का बदला लेने के लिए तलवार निकाल कर दुःखासन का वध कर देना चाहते हैं।

छठे भजन में कवि ने मनुष्य को प्रभु भक्ति करने की प्रेरणा देते हुए कहा है कि यह मानव जीवन हीरे–मोती के समान अमूल्य है। इसे सांसारिक विषय–विकारों में व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए।

सातवें भजन 'आइये आइये दर्श दिखाइये कृष्ण मुरारी' में कवि भगवान् के विभिन्न अवतारों का वर्णन करता है जिन्होंने हिरण्यकश्यप, रावण, कंस आदि अत्याचारियों को मार कर प्रह्लाद, ध्रुव, सुदामा, विदुर, मीरा, शबरी, नरसी, धन्ना आदि भक्तों का उद्धार किया था। कवि अपने उद्धार की भी प्रार्थना करता है।

आठवें गीत में कवि ने भारत माता की वंदना करते हुए देश को उजड़ने से बचाने तथा देश में व्याप्त भ्रष्टाचार आदि

दूर करने की प्रार्थना की है।

नौवें भजन में द्रौपदी अपने स्वयंबर की शर्तों का स्वयं वर्णन करती है तथा दसवें पद में 'कीचक वध' की कथा प्रस्तुत की गई है। ग्यारहवें पद में संतान को पालने–पोसने की नीति पर प्रकाश डाला गया है तथा बारहवें पद में दुराचार, व्यभिचार, नशाखोरी की बुराइयों से बचने की प्रेरणा दी गई है। इनकी रचनाओं में प्रेरक भाव है।

व्याख्या

(1)

गुरु बिना ना ज्ञान किसे नै ज्ञान बिना जमै ध्यान नहीं।। टेक।।
ध्यान बिना भक्ति ना होती भक्ति बिन भगवान नहीं।।
बिना गुरु जो करैं तपस्या भ्रम जाल में घिरते हैं।
बिना गुरु ना गति लिखी दुःख चौरासी से भरते हैं।
अंधकारमय भव-सागर से पार गुरु ही करते हैं।
'इस कारण गुरु रत्तीराम का ध्यान सदा हम धरते हैं।
गुरु बिन जगदीश चंद्र की लय-सुर की पहचान नहीं।'

शब्दार्थ – जमै=जरा भी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'गुरु बिना ना ज्ञान' से ली गई हैं। इस भजन में कवि ने गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए यह स्पष्ट किया है कि गुरु के बिना समुचित ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि गुरु के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए लिखता है कि गुरु के बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती और जब तक ज्ञान नहीं प्राप्त होता मनुष्य का मन ध्यान में नहीं लगता है। ध्यान लगाये बिना भक्ति नहीं हो सकती और भक्ति के बिना भगवान् नहीं मिलते हैं। जो व्यक्ति गुरु के निर्देशों के बिना तपस्या करता है वह अनेक प्रकार के भ्रर्मों के जाल में फंस जाता है। बिना गुरु के ज्ञान के मनुष्य की मुक्ति भी नहीं होती और वह विभिन्न प्रकार की योनियों में जन्म लेकर विपत्तियों का सामना करता रहता है। अज्ञान रूपी अंधकार से भरे हुए इस संसार रूपी सागर से गुरु ही पार उतारते हैं। कवि कहता है कि इसलिए हम सदा अपने गुरु रत्तीराम का स्मरण करते रहते हैं क्योंकि गुरु के मार्गदर्शन के अभाव में कवि जगदीश चंद्र को सुर–तान की पहचान नहीं थी। कवि को काव्य–सृजन का ज्ञान अपने गुरु की कृपा से प्राप्त हुआ है। गुरु–महत्त्व प्रतिपादन है।

विशेष –

(i) गुरु के ज्ञान के बिना संसार रूपी सागर से मुक्ति असंभव बताई गई है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) रूपक तथा पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) शांत रस का सुंदर परिपाक है।

(v) कवि की गुरु भक्ति व्यक्त होती है।

(vi) प्रसाद माधुर्य गुण सम्पन्न शैली है।

(2)

धन से विद्या बताई धनी पुरुष नीत डरते हैं।। टेक।।
पढ़े लिखे इंसान जगत् में, निर्भय होकर फिरते हैं।
...धनवानों के धन के आगै सांकल ताला मरा रहै।

विद्वानों का गुप्त खजाना, बाहर जमीं मैं धर्‌य्या रहै।
धनवानों का धन के कारण जी खतरे में घिरा रहै।
विद्वानों का विद्या पढ़कै चित्त उमंग से भर्‌या रहै।
धनवानों को डाकै का डर, विद्वान कभी नहीं घिरते हैं।।
....भाईबन्द जागीर बाँट ले, विद्या नहीं बटाँ सकते।
चोर लुटेरे लूट सकै ना दुश्मन नहीं मिटा सकते।
सुरसी ढ़ोरा ढीमक चूहे रत्ति नहीं घटा सकते।
कर्जा डिग्री कुड़की में ना, साहूकार उठा सकते
विद्या का प्रचार सदा जगदीश रात-दिन करते हैं।

शब्दार्थ - निर्भय=बिना भय के, चित्त=दिल, मन, रत्ति=जरा–सा भी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'धन से विद्या बताई धनी' से ली गई हैं। इस भजन में कवि ने धन से विद्या को महान् बताया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने धम संपत्ति की अपेक्षा विद्या को अधिक उपयोगी मानते हुए लिखा है कि धन से विद्या अधिक महत्त्वपूर्ण होती है। धनी व्यक्ति सदा भयभीत रहते हैं कि कहीं कोई उनका धन चुरा न ले परंतु पढ़े–लिखे व्यक्ति संसार में निर्भय होकर विचरण करते हैं क्योंकि उनके विद्यारूपी धन को कोई भी नहीं चुरा सकता। धनवानों को अपने धन की रक्षा के लिए ताले–कुंडियाँ लगाकर उसकी रक्षा करनी पड़ती है, जबकि विद्वान अपने विद्या रूपी गुप्त खजाने को बाहर खुले में धरती पर रख देते हैं। धनवानों का मन धन की रक्षा की चिंता से सदा खतरों से घिरा रहता है, परंतु विद्वानों का मन विद्या पढ़कर और भी अधिक उत्साह से भरा रहता है। धनवानों को सदा अपने धन पर डाका पड़ने का अंदेशा सताता रहता है परंतु विद्वानों को कभी भी इस प्रकार का भय नहीं होता है। धनवानों के सगे–संबंधी उस की धन संपत्ति आपस में बांट सकते हैं परंतु विद्वान की विद्या को उसके सगे–संबंधी आपस में नहीं बांट सकते हैं। विद्वानों की विद्या को न तो चोर–लुटेरे लूट सकते हैं और न ही कोई दुश्मन उसकी विद्या को नष्ट कर सकता है। विद्वानों की विद्या को सुसरी, ढोरा, दीमक, चूहा भी जरा–सा भी कम नहीं कर सकते। साहूकार भी विद्वानों की विद्या को ऋण, डिग्री अथवा कुड़की में नहीं ले सकते। इसलिए कवि जगदीश कहता है कि वह रात–दिन विद्या का प्रचार करता है।

विशेष –

(i) धन की अपेक्षा विद्या को श्रेष्ठ बताया है क्योंकि इसे कभी कोई चुरा नहीं सकता।

(ii) भाषा व्यावहारिक हरियाणवी है।

(iii) तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों का प्रयोग हुआ है।

(iv) पदमैत्री तथा अनुप्रास अलंकार है।

(v) उद्‌बोधनात्मक शैली उपयोगिता का गुण विद्यमान है।

(3)

हे जी ! हे जी ! जगत में है विद्या का खेल।। टेक।।
बिना विद्या के भारत वासी रहे मुसीबत झेल।।
विद्या के पढ़ने से देखो राजा और वजीर बणै।
विद्या से तरक्की होती विद्या से जागीर बणै।
विद्या से तिजारत करके अय्यासी अमीर बणै।

विद्या से ही बम गैस टेक तोप तीर बणै।
विद्या से ही शास्त्र सीख रण में शूरवीर बणै।
विद्यावान सबके दुःख को हरने वाला पीर बणै।
तज फूट मिलादे मेल.....

शब्दार्थ – तिजारत=व्यापार, रण=युद्ध, पीर=गुरु, संत।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'विद्या का खेल' से ली गई हैं। इस भजन में कवि ने विद्या के महत्त्व का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि विद्या की उपयोगिता का वर्णन करते हुए लिखता है कि इस संसार में सर्वत्र विद्या का ही बोलबाला है। विद्या के बिना भारतवासियों को अनेक मुसीबतें झेलनी पड़ रही हैं। विद्या ग्रहण करने से ही राजा और मंत्री बन सकते हैं। विद्या प्राप्त करने से ही जीवन में उन्नति होती है तथा विद्या के बल पर ही मनुष्य अपनी जागीर बनाता है। विद्या के बल पर ही व्यापार करके व्यापारी अमीर बन जाते हैं। विद्या प्राप्त करके ही बम, गैस, टैंक, तोप, तीर आदि बनाए जाते हैं तथा विद्या से ही शस्त्र आदि चलाना सीख कर युद्ध में शूरवीर सैनिक बन कर जाते हैं। विद्वान व्यक्ति सब लोगों के दुःख को दूर करने वाला संत कहलाता है। विद्या ही परस्पर भेदभाव समाप्त करके सब से मेल कराती है।

विशेष –

(i) विद्या प्राप्ति के द्वारा समस्त कार्यो का होना संभव माना है।

(ii) अनुप्रास और पदमैत्री अलंकार है।

(iii) तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iv) गेयता और उद्बोधनात्मक शैली है।

(4)

आँख मीच लिया ठा कुल्हाड़ा तूँ काट रुख पछतायेगा।
बूंद एकना पड़ै जमी पै, फैर साँस तनै ना आवेगा।।
सबसे सच्चा धर्म मनुष्य का पेड़ लगावैं सब नर-नारी।
ना बाढ़ आवै, मिलै जड़ी बूटी, हो कृषि का उत्पादन भारी।।

शब्दार्थ – ठा=उठा, रुख=पेड़, जमी=धरती।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'पर्यावरण सुरक्षा' से संबंधित काव्य पंक्तियों से ली गई हैं। इन पंक्तियों में कवि ने वृक्षों की रक्षा करने का संदेश दिया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि अंधाधुंध वृक्षों की कटाई पर चिंता व्यक्त करते हुए लिखता है कि आँख बद करके कुल्हाड़ी उठा कर वृक्ष काटने से तुम्हें बाद में पछताना पड़ेगा। इसके बाद यदि वर्षा की एक भी बूंद न बरसी तो तुम्हें सांस लेना भी मुश्किल हो जाएगा।

मनुष्य का सबसे सच्चा धर्म यह है कि सब स्त्री–पुरुष मिल कर वृक्ष लगायें। वृक्ष लगाने से बाढ़ नही आती है। अनेक प्रकार की जड़ी–बूटियाँ प्राप्त होती हैं तथा कृषि का उत्पादन बहुत अधिक होता है। वृक्षों का महत्त्व दर्शाया गया है।

विशेष –

(i) वृक्षारोपण का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए वृक्षों के अवैध कटाव पर रोक लगाने का संदेश दिया गया है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) 'आँख मीचना' मुहावरे का सटीक प्रयोग है।

(iv) अनुप्रास तथा पदमैत्री अलंकार है।

(v) उद्‌बोधनात्मक शैली तथा गेयता का गुण है।

(5)

भरे विदुर जी क्रोध में उठा लई तलवार।
शठ दुःखासन नीच को, देऊ जान से मार।
देऊ जान से मार दुष्ट क्यूं, अधर्म करना चाहता है।
बिना खोट क्यूं इस अबला के, सिर पै चढ़ना चाहता है।
खबरदार ! निर्लज्ज ! चीर को जो अब हाथ लगायेगा।
मैं खून की नदी बहा द्यूंगा, कोई भी ना जिन्दा पायेगा।
दुर्योधन कहै विदुर से, यहां तेरा क्या काम।।
माले ले कै हाथ में, कहीं जाकै रट हरि नाम।। सभा पर्व (चीर-हरण)

शब्दार्थ – शठ=दुष्ट, चीर=वस्त्र, द्यूँगा=दूंगा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'चीर हरण' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने दुःशासन द्वारा द्रौपदी के चीरहरण के अवसर पर विदुर जी की भावनाओं का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने उस समय का वर्णन किया है जब दुःखासन द्रौपदी का चीर–हरण कर रहा होता है और कोई भी उसका विरोध नहीं करता तब विदुर जी को क्रोध आ जाता है और वे क्रोध में भर कर तलवार उठा लेते हैं और कहते हैं कि मैं दुष्ट दुःशासन नीच को जान से मार दूँगा। मैं इसे जान से मार दूँगा क्योंकि यह दुष्ट अधर्म करना चाहता है। बिना किसी अपराध के यह क्यों इस अबला नारी को अपमानित करना चाहता है ? विदुरजी दुःशासन को ललकार कर कहते हैं कि खबरदार हे निर्लज्ज, यदि तुमने द्रौपदी के वस्त्र को हाथ लगाया तो मैं यहाँ खून की नदी बहा दूँगा और तुम में से कोई भी जीवित नही रह पाएगा। इस पर दुर्योधन विदुर को डांटते हुए कहता है कि यहाँ तुम्हारा कोई काम नहीं है। तुम अपने हाथ में माला ले लो और कहीं जा कर हरि का नाम स्मरण करो।

विशेष –

(i) विदुर के मन में द्रौपदी के भरी सभा में होने वाले अपमान से उत्पन्न स्थिति का सहज रूप से वर्णन किया गया है।

(ii) तत्सम, तद्‌भव, देशज तथा विदेशी शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) 'सिर पै चढ़ना', 'खून की नदी बहाना' मुहावरों का सटीक प्रयोग है।

(iv) संवादात्मकता, नाटकीयता तथा गेयता विद्यमान है।

(6)

करले भक्ति भजन रट हरिनाम को, जीवन वृथा गवाने के काबिल नहीं है।
हीरा-मोती समझ ले तूं हर साँस को, ये रत्न धन लुटाने के काबिल नहीं है।।टेक।।
क्या पता सांस आए या न आएगा, फिर कठिनता से चोला मनुष्य का थ्यावेगा।
हड्डी चमड़ा जिस्म पड्या रह जाएगा, फिर किसी काम आने के काबिल नहीं है।।
जा ज्वानी, बुढ़ापे में विपता भरै, सेवा आर कुटुम्ब में कोई ना करै।
बाट देखैं सभी बूढ़ा क्यों ना मरै, अब रहा यह कमाने के काबिल नहीं है।।

भूल्या ईश्वर को फिरता मनुष्य देह को पा, ध्यान पल भर ना देख्या हरि में लगा।।

शब्दार्थ – वृथा=व्यर्थ, काबिल=योग्य, विपता=मुसीबत, बाट=प्रतीक्षा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'करले भक्ति भजन रट हरिनाम को' से ली गई हैं। इस भजन में कवि ने मनुष्य को प्रभु भक्ति के लिए प्रेरित किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि मनुष्य को अपना जीवन व्यर्थ के कार्यों में व्यतीत करने के स्थान पर प्रभु नाम स्मरण करने की प्रेरणा देते हुए लिखता है कि हे मनुष्य, तुम प्रभु की भक्ति करते हुए हरि का नाम रटते रहे क्योंकि यह मनुष्य का जीवन व्यर्थ गंवाने के योग्य नहीं है। तुम अपनी प्रत्येक सांस को हीरे–मोती के समान अमूल्य समझो क्योंकि इस मानव देह रूपी रत्न में आने वाली सांसें व्यर्थ में लुटाने योग्य नहीं हैं। हमें कुछ भी पता नहीं है कि हमारी ये सांसें कब तक आती रहेंगी और कब आनी बंद हो जाएँगी। जब सांस आनी बंद हो जाएगी तो फिर से यह मनुष्य देह बहुत कठिनता से प्राप्त होती हैं जब सांसे निकल जाती हैं तब मनुष्य के शरीर की हड्डियाँ और चमड़ा ऐसे ही पड़ा रह जाता है और वह पुनः किसी काम में लाने योग्य नहीं रह जाता है। जब जवानी चली जाती है तो बुढ़ापे में अनेक विपत्तियाँ घेर लेती हैं। ऐसे समय में परिवार का कोई भी सदस्य सेवा नहीं करता है। सभी लोग इस बात की प्रतीक्षा करते हैं कि बूढ़ा मरता क्यों नहीं क्योंकि यह अब कमाई करने के योग्य नहीं रह गया है। मनुष्य मानव देह प्राप्त कर ईश्वर को भूल जाता है और क्षण भर भी प्रभु की ओर ध्यान नहीं लगाता है। ईश–ध्यान लगाने का उद्‌बोधन है।

विशेष –

(i) मनुष्य को मानव देह प्राप्त कर अपना मन ईश्वर भक्ति में लगाने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) तत्सम, तद्‌भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास और रूपक अलंकार हैं।

(iv) मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(v) लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता तथा गेयता विद्यमान है।

(vi) उद्‌बोधनात्मक शैली है।

(vii) शांत रस तथा प्रसाद गुण है।

(7)

आइये आइये दर्श दिखाइये कृष्ण मुरारी।
तृष्णा नै सताये, आए शरण तुम्हारी।। टेक।।
जब हुई धर्म की हानि, हर्‌या पाप का भार तनै।
दुष्ट जनों के प्राण खपायें, भक्त उतारे पार तनै।
लै चोबिस अबतार तनै प्रभु युग युग में देह धारी।।
बचा लिये प्रहलाद तनै, दिये दर्श ध्रुव को आण कै।
हिरण्यकश्यप रावण अभिमानी, मार्‌या कंस पिछाण कै।
भक्ति में चित जाण कै, तनै पार भीलनी तारी।।
दुर्योधन की मेवा त्यागी, साग विदुर घर खा लिया।
दुखिया निर्धन विप्र सुदामा झट, छाती कै ला लिया।
गज को तनै बचा लिया और करी गीराह की हारी।।
नरसी नन्दा धन्ना तिरंगे करकै भक्ति ईश की।

तारा-मीराँ दोपद पै रहै छाया बण कै शीश की।
टेर सुणो जगदीश की, खड्या चरणों में पुजारी।।

शब्दार्थ – तृष्णा=इच्छाओं, लालचों, कामनाओं, विप्र=ब्राह्मण, गज=हाथी। तन्ने=तुम ने, टेर=आवाज देना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'आइये आइये दर्श दिखाइये कृष्ण मुरारी' से ली गई हैं। इस भजन में कवि ने प्रभु से दर्शन देने की प्रार्थना की है, जिससे उसकी इस भव सागर से मुक्ति हो सके।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहता है कि हे कृष्ण मुरारी, आप आइए और आकर मुझे दर्शन दीजिये। मुझे अनेक कामनाएँ सता रही हैं, इसलिए मैं आप की शरण में आ गया हूँ, आप मुझे इन तृष्णाओं से बचाइये। संसार में जब कभी भी धर्म की हानि होती है अथवा धर्म पर संकट आता है, आप स्वयं आकर पापों के बोझ से मुक्ति प्रदान करते हो। आप दुष्टों का विनाश करते हो तथा भक्तों का उद्धार करते हो। हे प्रभु, आप ने चौबीस अवतार लेकर प्रत्येक युग में शरीर धारण कर भक्तों का उद्धार किया है। आप ने प्रह्लाद के प्राणों की रक्षा की तथा ध्रुव को भी दर्शन दिए थे। आपने हिरण्यकश्यप, अहंकारी रावण तथा कंस का वध किया था। भीलनी को अपनी भक्ति में लीन समझ कर आप ने उसका उद्धार किया था। दुर्योधन द्वारा दिए गए मेवों को छोड़ कर आपने अपने भक्त विदुर के घर साग खाया और दुःखी गरीब ब्राह्मण सुदामा को अपनी छाती से लगा लिया था। जब गजराज ने आप को पुकारा था तो आप ने उसे बचा लिया और ग्राह को पराजित कर दिया था। नरसी, नंदा, धन्ना जैसे भक्त प्रभु की भक्ति करते–करते इस संसार से मुक्त हो गये। आपने मीरा और द्रौपदी की रक्षा की। कवि कहता है कि हे प्रभु ! आप जगदीश की भी पुकार सुनो जो आप के चरणों में आप का पुजारी बन कर खड़ा है।

विशेष –

(i) प्रभु के विभिन्न अवतारों का वर्णन करते हुए उनके भक्त–वत्सल रूप की दुहाई देते हुए अपने उद्धार की कामना की गई है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश तथा पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) पौराणिकता, लाक्षणिकता तथा गेयता का गुण है।

(v) भक्ति भावना का सुन्दर चित्रण है।

(8)

भारत जननी माता दुःख हरने वाली।
कर पैदा बलवान ध्यान ला रहै पुजारी।। टेक।।
बैर भाव को आग लगी, भाई से भाई लड़ता।
आपस की फिरके बाजी में, आवै ढंग बिगड़ता।
देश उजड़ता जाता सो गये रखवाली।
हो ज्यागी वियावान आन में, केसर क्यारी।
इस भारत का, लोग विदेशी देना चाहते घेरा।
दुनिया में घुड़दौड़ मच्ची हुई, दिल घबरावै मेरा।
आवै अन्धेरा छय्याता घटा उठी काली।
आंधी और तूफान हान कर रहै हमारी।।
द्रोपद-तारा-दमयंती, पैदा कर सिया सती सी।

अनसूइया और सावित्री अंजना व पार्वती सी।
दुर्गावती सी हो व्याहता, जिन्हें राख्यी लाली।
मारै दुष्ट पिछाण ताण कै तेग दूधारी।।
धर्म कर्म बल विद्या से, जगदीश मोड़ गये मुखड़े।
शराब माँस व्यभिचार फैल गया, बजै रात दिन हुकड़े।
तून लयसुर की खान, ज्ञान की तृष्णा भारी।।

शब्दार्थ – फिरकेबाजी=जात–पात से उत्पन्न भेदभाव, तेग दूधारी=दुधारी तलवार, तृष्णा=प्यास।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित कविता 'भारत जननी' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने भारत माता की वंदना करते हुए देश में व्याप्त अनाचार, विसंगतियों, वैर–द्वेष आदि को दूर कर राष्ट्रीय एकता स्थापित करने का संदेश दिया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि भारत माता की वंदना करते हुए लिखता है कि भारत माता सब के दुःखों को दूर करने वाली माता है। वह उनकी पूजा करते हुए उनसे वीरों को उत्पन्न करने की प्रार्थना करता है। कवि देश की वर्तमान दुर्दशा पर चिंता व्यक्त करते हुए कहता है कि आज देश में वैर–भाव बहुत अधिक फैल रहा है। भाई–भाई से लड़ रहा है। लोग परस्पर एक–दूसरे की आलोचना करते हैं जिससे देश का वातावरण बिगड़ रहा है। देश उजड़ता जा रहा है और देश के रखवाले मोह की नींद में सो रहे हैं। यदि यही दशा रही तो देश वीरान हो जाएगा और केसर की क्यारियाँ उजड़ जाएँगी। इस भारत देश को विदेशी शक्तियाँ घेर लेना चाहती हैं। संसार में सर्वत्र आपाधापी मची हुई है जिससे मेरा दिल बहुत घबरा रहा है। चारों ओर अंधकार छा रहा है तथा विपत्तियों रूपी काली घटायें छाती जा रही हैं। आँधी और तूफान हमारे देश की बहुत अधिक हानि कर रहे हैं। कवि कहता है कि हे भारत माता, तुम इस देश में फिर से द्रौपदी, तारा, दमयंती, सीता, अनसुइया, सावित्री, अंजना, पार्वती, दुर्गावती जैसी सतियों को उत्पन्न करो जिन्होंने इस देश की मर्यादा की रक्षा की थी। इन्होंने अपनी दुधारी तलवार द्वारा दुष्टों का विनाश किया था। जगदीश कवि कहता है कि आज लोगों ने धर्म, कर्म, बल और विद्या सब कुछ त्याग दिया है और चारों ओर शराब माँस, व्यभिचार फैलता जा रहा है जिससे रात–दिन झगड़े होते रहते हैं। हे भारत माता, आप लयसुर की भंडार हो। हमें ज्ञान प्राप्त करने की बहुत इच्छा है इसलिए हमें ज्ञान का दान दो।

विशेष –

(i) भारत वर्ष में व्याप्त अनाचार, भ्रष्टाचार, व्याभिचार आदि पर चिंता व्यक्त करते हुए देशवासियों को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(iv) रूपक तथा पदमैत्री अलंकार हैं।

(v) लाक्षणिकता तथा गेयता विद्यमान है।

(9)

कथन द्रौपदी का अपने पिता से
उठ क्यूं तलै पड़ी मेरी नार
मनै बता पिता घर गाम, करो कहां शादी का इंतजाम,
कहण में ना शरमाऊंगी।। टेक।।
जो पूरी शर्त करेगा, उसतै व्याह करवाऊंगी।।
रचो स्वयंवर इसा भूप सब, देसों के आवैं।

करूँ परीक्षा बल विद्या की, जो ब्याहणी चाहवैं।
अजमावैं सब तकदीर, छटैगा कोई बहादुर वीर,
नया एक खेल रचाऊंगी।।
सौ गज ऊंचा खंब सभा में, खड़ा कराया जा।
टंगै शिखर में मीन, तलै सी चक्कर घुमाया जा।
छाया जा नीचै दीख-तेल में नज़र जमाकै ठीक,
मीन की आंख फुड़ाऊंगी।।
चक्कर में से तीर निकल, जो नेत्र में लागे।
मछली गिरै जमीन, भाग जिस राजा के जागे।
आगे फिर खत्म सवाल, गले में दूंगी माला डाल,
करा यह प्रण निभाऊंगी।।

शब्दार्थ – नर नवाना=गर्दन झुकाना, चिंता करना, लज्जित होना, सवाल=प्रश्न।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित भजन 'कथन द्रौपदी का' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने द्रौपदी के स्वयंवर की शर्तों का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि उस समय का वर्णन करता है जब द्रौपदी अपने पिता से अपने स्वयंवर के संबंध ा में कहती है। द्रौपदी अपने पिता को संबोधित करते हुए कहती है कि आप उठकर बैठिए, इस प्रकार गर्दन झुकाकर चिंता में क्यों डूबे हुए हैं ? आप मुझे बताइये कि कैसा घर, वर है, और मेरे विवाह का आप कहाँ प्रबंध कर रहे हैं ? इस संबध में कहने से मैं किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव नहीं करूंगी। मैं तो उससे विवाह करूँगी जो मेरी शर्तें पूरी करेगा। आप इस प्रकार के स्वयंवर की घोषणा करो कि जिसमें समस्त देशों के राजा आएँ जो मेरे से विवाह करना चाहते हैं मैं उन सब के बल और विद्या की परीक्षा लूँगी। सब अपनी–अपनी तकदीर को अजमावेंगे और उन में से कोई एक वीर बहादुर ही निकलकर मुझ से विवाह रचा सकेगा। मैं इस प्रकार का एक नया खेल रचांऊँगी। सभा स्थल पर एक सौ गज ऊँचा खम्बा बनाया जाए। उसकी चोटी ऊपर एक मछली टांगी जाए और उसके नीचे एक चक्र घुमाया जाए। उस मछली और चक्र की छाया उस खम्भे के नीचे रखे तेल के कड़ाह में देखकर मैं मछली की आँख फोड़ने के लिए कहूँगी। चक्र में से तीर निकल कर यदि मछली की आँख में लग जाता है और मछली जमीन पर गिर जाती है तो उस राजा के भाग्य उदय हो जाएँगे और उसके बाद कोई प्रश्न नहीं करूँगी तथा उस भाग्यशाली के गले में माला डाल दूँगी। मैं अपने इस किए हुए प्रण को पूरी तरह से निभाऊँगी।

विशेष –

(i) द्रौपदी के साहस का वर्णन किया है कि किस प्रकार वह स्वयं अपने स्वयंबर की शर्तें निश्चित करती है।
(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।
(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है जैसे नार नवाना।
(iv) चित्रात्मकता, गेयता, संवादात्मकता के गुण विद्यमान हैं।
(v) ओजगुण सम्पन्न शैली है।

(10)

चला कीचक, भवन की तैयारी करी।। टेक।।
न देखे कोई ऐसे रस्ते चलूं - पावैगी दासी मैं जाके मिलूं
अब चलूँ बहुत सी इंतजारी करी।।

हे अंधेरा यहां कुछ चलता ना पता - आ गई हो तो प्यारी तूहीं दे बता
सब बख्स दे खता, जो तुम्हारी करी।।
आई आवाज चुड़ी-सी बजती सुनी - खुशी दिल में हुया मन की सोची बनी
दया आकै घणी, मुझ पे प्यारी करी।।
जाकै पकड़ी कलाई उमंग में भरा - भीम ने दी मरोड़ी हाय मां मरा
डरा मन में से कैसे मक्कारी करी।।
खाई जगदीश गल्ती क्मूं ऐसी मुझे - इसकी देह लगै मर्द जैसी मुझे
बात कैसी मुझे, बेविचारी करी।

शब्दार्थ – बख्स=क्षमा कर दे, खत=गलती, अपराध, घणी=अत्याधिक, बेविचारी=बिना सोची समझी, मर्द=पुरुष, मक्कारी=आलस्य।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित कविता 'कीचम वध' से ली गई है। इस कविता में कवि ने भीम द्वारा कीचक वध का प्रसंग प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने उस समय का वर्णन किया है जब अंधेरा होने पर कीचक द्रौपदी के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। कवि लिखता है कि कीचक अपने महल जाकर द्रौपदी से जाकर मिलने की तैयारियाँ करने लगा। यह इस प्रकार के रास्ते से चल कर मिलना चाहता है जहाँ से उसे जाते हुए कोई देख न सके। जब वह चलने के लिए व्याकुल हो उठा है क्योंकि उसने द्रौपदी से मिलने की बहुत प्रतीक्षा कर ली है। वह मिलन स्थल पर पहुंच जाता है। वहाँ बहुत अंधेरा है इसलिए वह उसे संबोधित करते हुए कहता है कि यहाँ अंधेरा है इसलिए कुछ पता नहीं चल रहा है, हे प्रिय, यदि तुम आ गई हो तो स्वयं की बता दो कि तुम कहाँ हो ? यदि मैंने कोई गलती की हो तो तुम मुझे क्षमा करना। तभी कीचक ने चूड़ियों की खनखनाती हुई आवाज सुनी और उसके मन में बहुत प्रसन्नता हुई कि उसकी इच्छा पूरी हो रही है। उसकी प्रिया ने यहाँ आकर उस पर बहुत दया की है। उसने उत्साह में भर कर जाकर उसकी कलाई पकड़ ली तो द्रौपदी के रूप में आए हुए भीम ने उसको मरोड़ी दी तो वह हाय माँ कह कर डर गया और सोचने लगा कि यह क्या मक्कारी हो रही है। जगदीश कवि लिखता है कि कीचक सोचता है कि मैंने कैसा धोखा खा लिया है। इसका शरीर तो पुरुष जैसा लग रहा है। यह मुझ से कैसी नासमझी हो गयी है।

विशेष –

(i) कीचक की द्रौपदी से मिलन की व्याकुलता का सजीव अंकन किया गया है।

(ii) कीचक कैकयराज का पुत्र और मत्स्य देश का राजा विराट का साला और सेनापति था। बनवास काल में जब पांडवों ने अज्ञातवास का एक वर्ष वेश और नाम बदल कर राजा विराट के यहाँ बिताया तो कीचक द्रौपदी पर कुदृष्टि रखने लगा था। उसके इस नीच मनोभाव से क्रुद्ध होकर भीम ने स्त्री वेश में उसका वध कर दिया था।

(iii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iv) मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(v) अनुप्रास और ध्वनि अर्थ व्यंजना अलंकार है।

(vi) आकर्षक गेयता तथा नाटकीयता विद्यमान है।

(11)

पांच साल तक लाड़ लिखे, दस साल लिख्या धमकाणा।। टेक।।
लगै सोहलवां साल बराबर, बेटा होज्या स्याणा।।
माता पिता का फर्ज यही, बचपन में लाड़ लड़ावै।

पांच साल के बाद ताड़ कै, विद्या खूब पढ़ावै।
साल सोहलवें बंद ताड़ना, कभी क्रोध ना ठावै।
जो शक्ति से काम लिया जा, वो सीधा सिर पै आवै।
प्रेमभाव से नित्य समझावै, ना चाहिए क्रोध उठाना।।

शब्दार्थ – स्याणा=बड़ी, बुद्धिमान, सीधा सिर पै आवै=विपरीत प्रभाव पड़ना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित 'नीति' कथनों से ली गई हैं। इस पंक्तियों में कवि ने बालक के पालन–पोषण के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि बेटे के पालन–पोष्ण के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि बेटा जब पाँच वर्ष तक का नहीं हो जाता तब तक उसे बहुत प्यार करना चाहिए तथा जब अगले दस वर्षों तक उसे धमका कर रखना चाहिए। जब बेटे को सोलहवां साल लग जाता है तो बेटा समझदार हो जाता है। उसे अपने बराबर समझना चाहिए। प्रत्येक माता–पिता का यह कर्त्तव्य है कि वे बचपन में बालक का खूब लाड़ करें और जब वह पाँच वर्ष का हो जाए तो उसे अनुशासन में रखते हुए खूब विद्या पढ़ायें। जब वह बालक सोलह वर्ष का हो जाए तो उसे ताड़ना बंद कर दें और उस पर कभी भी क्रोध नहीं करें। यदि उस पर बल प्रयोग किया जाएगा तो उसका विपरीत ही प्रभाव होता है। इसलिए बालक को नित्य प्रेम से समझाएँ और कभी भी उस पर क्रोध नहीं करें।

विशेष –

(i) बालक को पाँच वर्ष तक लाड़ करने, अगले दस वर्ष तक अनुशासन में रखने, पढ़ाने–लिखाने का कार्य करने तथा सोलह वर्ष की आयु के बाद उसे मित्र जैसा समझने के लिए कहा है।

(ii) क्रोध को अनुचित मनोभाव माना गया है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(iv) अनुप्रास अलंकार का सुंदर प्रयोग है।

(v) गेयता का गुण विद्यमान है।

(vi) प्रेरक भावाभिव्यक्ति है।

(12)

दुराचार व्यभिचार नशे में, सारे निंदा हो ज्या।
कामी पुरुष काम के बस हो, बिल्कुल अंधा हो ज्या।
तन मन धन रंग रूप रहे ना, चेहरा मंदा हो ज्या।
भोग से रोग, रोग से मृत्यु, गल में फंदा हो ज्या।
दाग लाग पर चंदा होज्या, चाहिए गात बचाणा।।
चंद्रदेव बेटा तेरी निंदा, हो रही नगरी भर में।
सुण सुण के तेरी बदनामी, मेरे होग जख्म जिगर में।
मैं बिल्कुल खामोश, मात तेरी बोल सके ना डर में।
पांहयां नीचे पाग मसलकै, धूल गिरा दी सिर में।
उस नार के घर में, तज दें आणा जाणा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जगदीश चंद्र वत्स द्वारा रचित 'नीति' के कथनों से ली गई हैं। इन पंक्तियों में कवि ने दुराचार, व्यभिचार, नशाखोरी आदि की निंदा की है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि समाज में व्याप्त दुराचार, व्यभिचार आदि की निंदा करते हुए लिखता है कि जो व्यक्ति दुराचारी, व्यभिचारी अथवा नशेबाज है उसकी सर्वत्र निंदा होती है। विषय–विकारों में लिप्त मनुष्य कामनाओं के वशीभूत होकर बिल्कुल अंधा हो जाता है। इसका तन, मन, धन, रंग–रूप सब कुछ नष्ट हो जाता है और उसका चेहरा फीका पड़ जाता है। अत्यधिक भोग विलास में लिप्त रहने से बीमारियाँ हो जाती हैं तो मृत्यु का कारण बन जाती हैं, गले में फंदा पड़ जाता है। किसी प्रकार की भी बुराई के दाग के लगने से मनुष्य बुरा बन जाता है। जैसे चांद में दाग होने पर उसकी बुराई की जाती है, इसलिए बुराइयों से अपने शरीर को बचाना चाहिए। पुत्र चंद्रदेव की समस्त नगर में तेरी इस कारण निंदा हो रही है क्योंकि तू दागी है। हे बेटा, तेरी बदनामी को सुन–सुन कर मेरे के हृदय में घाव लगत हैं। मैं बिल्कुल खामोश हूं तथा डर के मारे तुम्हारे पक्ष में बोल भी नहीं सकती। तुमने स्वयं ही अपनी मर्यादा रूपी पगड़ी को अपने पैरों से मसल दिया है और अपने सिर पर बदनामी रूपी धूल मल ली है। इसलिए तुम उस स्त्री के घर आना–जाना छोड़ दो जिसके कारण तुम्हारी इतनी बदनामी हो रही है।

विशेष –

(i) मनुष्य को दुराचार, व्यभिचार, नशे आदि से दूर रहने के लिए प्रेरणा दी गई है क्योंकि ऐसे व्यक्ति को समाज में बुरी नज़र से देखा जाता है तथा उसकी इज्जत भी कोई नहीं करता है।

(ii) तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) 'गले में फंदा पड़ना' आदि मुहावरों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(iv) अनुप्रास, रूपक तथा पदमैत्री अलंकार है।

(v) लाक्षणिकता तथा गेयता विद्यमान हैं।

(vi) सुंदर उद्बोधनात्मक शैली है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 जगदीश चंद्र वत्स के काव्य में सांस्कृतिक जागरण का स्वर मुखरित हुआ है-कथन की समीक्षा कीजिए।

उत्तर – जगदीश चंद्र वत्स पुराणों, उपनिषदों, शास्त्रों आदि के गहन अध्येता थे। इनकी भारतीय संस्कृति, सांस्कृतिक मूल्यों, पुरुषार्थ और कर्म में पूर्ण आस्थी थी। इन्हें वैष्णव धर्म में पूर्ण आस्था थी तथा उसके उदात्त रूप को इन्होंने अपने काव्य के द्वारा अभिव्यक्ति प्रदान की है। इनकी वैष्णव भावना में संकीर्णता, रूढ़िवादिता, हठधर्मिता, मदांधता अमानवता आदि के लिए कोई स्थान नहीं था। इन्होंने मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाते हुए भारतीय संस्कृति के अहिंसा प्रकम, समता, ममता, दया, करुणा आदि पक्षों को अपने काव्य में व्यापक तथा उदार भाव से प्रस्तुत करते हुए सांस्कृतिक जागरण का संदेश दिया है।

भारतीय संस्कृति में सद्गुरु का बहुत महत्त्व है क्योंकि गुरु के ज्ञान से ध्यान लगता है, ध्यान से भक्ति होती है, और भक्ति से परमात्मा की प्राप्ति होती है। बिना गुरु के निर्देश से तपस्या करने वाले विभिन्न भ्रमों के जाल में फंस जाते हैं। इसलिए कवि सदा गुरु–स्मरण पर बल देते हुए कहता है –

'इस कारण गुरु रत्तीराम का ध्यान सदा हम धरते हैं।
गुरु बिन जगदीश चंद्र की लय-सुर की पहचान नहीं।'

कवि ने लोक मानस में सांस्कृतिक जागरण का संदेश देने के लिए विद्या के प्रचार–प्रसार पर बल दिया है क्योंकि 'बिना विद्या के भारतवासी रहे मुसीबत झेल।' कवि विद्या को धन–दौलत से भी अधिक अमूल्य बता कर विद्या ग्रहण करने की प्रेरणा देता है। कवि के अनुसार–

-विद्यावान सबके दुःख को हरने वाला पीर बणे।'

भारतीय संस्कृति में वृक्षों को अत्यंत पूज्य माना गया है। पीपल की तो सदा पूजा होती है। नीम, आँवला आदि वृक्षों का भी लोक जीवन में बहुत महत्त्व है। इस संदर्भ में कवि ने वृक्षों की अंधाधुंध कटाई को संस्कृति के विरुद्ध मान कर वृक्षारोपण का संदेश दिया है जिससे देश हरा–भरा तथा समृद्ध बने–

'सबसे सच्चा धर्म मनुष्य का पेड़ लगावै सब नर-नारी।
ना बाढ़ आवै, मिलै जड़ी बूटी, हो कृषि का उत्पादन भारी।।'

भारतीय संस्कृति में नारी को बहुत सम्मानजनक स्थान दिया गया है और कहा गया है 'यत्र नारी पूज्यते, रमंते तत्र देवता'। कवि ने इसी भावना के अनुरूप द्रौपदी के चीर–हरण की घटना की निंदा करते हुए विदुर जी को तलवार लेकर दुःशासन को मारने के लिए तत्पर चित्रित किया है–

'भरे विदुर जी क्रोध में उठा लई तलवार।
शठ दुःखासन नीच को, देऊ जान से मार।'

इस संदेश में कवि भारतीय जन–मानव को नारी रक्षा की प्रेरणा देता है।

देश की सांस्कृतिक उन्नति तभी हो सकती है जब देश में सर्वत्र खुशहाली हो। वर्तमान समय में देश में व्याप्त दुराचार, भ्रष्टाचार, वैर भाव से त्रस्त होकर कवि देशवासियों को धर्म, कर्म और बल से मुख नहीं मोड़ने की शिक्षा देता है और भारत माता से कहता है–

'भारत जननी माता दुःख हरने वाली,
कर पैदा बलवान ध्यान ला रहै पुजारी।'

देश के सांस्कृतिक उत्थान के लिए कवि द्रौपदी, तारा, दमयंती, सीता अनुसुइया, सावित्री, पार्वती, दुर्गावती जैसी सती–साध्वी नारियों की आवश्यकता पर बल देता है, जिससे वे समाज को नई दिशा दे सकें।

जगदीश चंद्र वत्स हरियाणवी काव्य के ऐसे पुरोधा कवि हैं जिन्होंने अपने काव्य में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को क्षण भर के लिए भी नहीं भुलाया है। उन्होंने विभिन्न ऐतिहासिक एवं पौराणिक संदर्भों के माध्यम से लोक मानस में सांस्कृतिक जागरण का संदेश प्रसारित किया है। इन्होंने युगानुरूप परिवर्तनशीलता के अनुसार अपने उदात्त मंतव्य की अभिव्यक्ति की सहज प्रासंगिकता बनाए रखी है। इस कारण इनके काव्य में सांस्कृतिक जागरण का स्वर सर्वत्र मुखरित हुआ है। इस प्रकार इनका काव्य जन–मन प्रेरक है।

प्रश्न 2 जगदीश चंद्र वत्स की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि जगदीश चंद्र वत्स की काव्य भाषा उनके विचारों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने में सक्षम है। इन्होंने अपने काव्य में कथ्य के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है। इनके काव्य में शब्द, प्रतीक और बिंब लोक जीवन के लिए हैं जो कवि की अनुभूति की आँच में तपकर विशिष्ट छवि से दीप्त हो उठते हैं। इसलिए कवि को यह चिंता नहीं होती कि वह ऐसे शब्दों का प्रयोग कर रहा है जो कविता में स्वीकृत नहीं है अथवा जिन पर ग्रामत्व दोष लगा दिया जाएगा। कवि ने अपने काव्य में ठेठ हरियाणवी भाषा का प्रयोग किया है। इनकी भाषा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. **शब्द-शिल्प** – कवि की भाषा जितनी सरल, प्रवाहमय, भावपूर्ण, अर्थ–गांभीर्य आदि गुणों से युक्त होती है, उसकी अनुभूति की संप्रेषणीयता उतनी ही प्रभावशाली, स्पष्ट तथा हृदय–ग्राह्य होती है। जगदीश चंद्र वत्स ने मुख्य रूप से हरियाणवी में अपनी काव्य रचना की है परंतु उनके काव्य में हिंदी के तत्सम, तद्भव–गुरु, ज्ञान, ध्यान, विद्या, पुरुष, विद्वान, धर्म, कृषि, निर्लज्ज, वृथा, तृष्णा आदि शब्दों के अतिरिक्त विदेशी–इन्सान, खजाना, कर्जा, डिग्री, मुसीबत, जागीर, खबरदार, काबिल आदि शब्दों का भी यथास्थान प्रयोग किया गया है। बोलचाल के शब्दों के प्रयोग से इनके काव्य में सहजता आ गई है।

2. **ओज-प्रधानता** – जगदीश चंद्र वत्स की काव्य भाषा का स्वरूप लोक–भाषा के अनुरूप अनगढ़ तथा कृत्रिम सौंदर्य से मुक्त है। इस कारण इनकी भाषा में एक अपनापन, खरापन, अक्खड़पन और सहजता दिखाई देती है जो लोकभाषा हरियाणवी के अनुरूप है। इनके भजनों में माधुर्य एवं प्रसाद गुण विद्यमान हैं। राष्ट्रीय तथा सांस्कृतिक जागरण के संदेश से युक्त इनकी कविताओं में ओज गुण के दर्शन हो जाते हैं। वैसे नारी पर अत्याचार होते देख कर कवि कह उठता है–

"भरे विदुर जी क्रोध में उठा लई तलवार।
शठ दुःखासन नीच को, देऊ जान से मार।
देऊ जान से मार दुष्ट क्यूं, अधर्म करना चाहता है।
बिना खोट क्यूं इस अबला के, सिर पै चढ़ना चाहता है।"

3. मुहावरा-प्रयोग – जगदीश चंद्र वत्स ने अपने काव्य में लोक प्रचलित मुहावरों का प्रयोग करके अपनी काव्य भाषा के सौंदर्य में वृद्धि करते हुए इसमें लाक्षणिकता तथा प्रतीकात्मकता का समावेश कर दिया है। जैसे–भ्रम जाल में घिरना, सांस न आना, सिर पै चढ़ना, खून की नदी बहाना, पार उतारना, छाती से लगाना, लाड़ लड़ाना, गले में फंदा पणना आदि।

4. अलंकारिता – जगदीश चंद्र वत्स की काव्य भाषा में अलंकारों की स्थिति अत्यंत सहज तथा स्वाभाविक है। इन्होंने अपने काव्य में अनुप्रास, उपमा, रूपक, पुनरुक्ति प्रकाश, पदमैत्री आदि अलंकारों का सहज भाव से प्रयोग किया है। जैसे–'अंधकारमय भव–सागर से पार गुरु ही करते हैं।' (रूपक)

'सबसे सच्चा धर्म मनुष्य का पेड़ लगावैं सब नर–नारी।' (अनुप्रास)

कवि ने अपने कांव्य में वीर, शांत, वात्सल्य आदि रसों का यथास्थान प्रयोग किया है।

5. चित्रात्मकता – जगदीश चंद्र वत्स की काव्य भाषा में चित्रात्मकता का गुण विद्यमान है। वे शब्दों के माध्यम से किसी भी घटना अथवा स्थिति को सजीवता प्रदान कर देते हैं। 'कीचक–वध' प्रसंग में कीचक कामोन्मद होकर अंधेरे में चूडियाँ खनकने की आवाज सुनकर उसे द्रौपदी की कलाई समझ कर पकड़ता है तो उसकी जो दुर्दशा होती है उसका साक्षात् चित्र कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है–

"जाकै पकड़ी कलाई उमंग में भरा - भीम ने दी मरोड़ी हाय मां मरा
डरा मन में से कैसे मक्कारी करी।।
खाई जगदीश गल्ती क्यूं ऐसी मुझे - इसकी देह लगै मर्द जैसी मुझे
बात कैसी मुझे, बेविचारी करी।।"

इस प्रकार स्पष्ट है कि जगदीश चंद्र वत्स ने अपने काव्य में लोकभाषा हरियाणवी को उसके जन प्रचलित रूप में प्रयोग किया है। इससे इनकी रचनाओं को प्रेषणीयता में वृद्धि हुई है। कवि ने अपनी रचनाओं में संवादात्मक, नाटकीय तथा उद्‌बोधनात्मक शैलियों का प्रयोग किया है। इसका अधिकांश काव्य मुक्तक तथा गेयता के गुणों से युक्त है। इनकी भाषा भावानुकूल है।

प्रश्न 3 जगदीश चंद्र वत्स की भक्ति-भावना का परिचय दीजिए।

उत्तर – जगदीश चंद्र वत्स श्रद्धा भक्ति कवि हैं। इन्हें संस्कारों से वैष्णव भक्त कहा जा सकता है, जो भगवान् के विभिन्न अवतारों में विश्वास रखता है। इनकी वैष्णव भावना में संकीर्णता, रूढ़िवादिता, हठधर्मिंत, मदांधता और अमानवीयता के लिए कोई स्थान नहीं है। इसकी वैष्णव भावना का मूल अहिंसा, प्रेम, समता, ममता, दया, करुणा और सर्वभूत कल्याण में निहित है। इन्होंने अपनी वैष्णव धर्म की भावना को युग धर्म के साथ समन्वित कर के अत्यंत उदात्त एवं गरिमामयी बना दिया है। परमात्मा की भक्ति करने के लिए इन्होंने सद्‌गुरु की कृपा को आवश्यक माना है। इनके अनुसार गुरु के बिना ज्ञान, ज्ञान के बिना ध्यान, ध्यान के बिना भक्ति और भक्ति के बिना परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती है–

'गुरु बिना ना ज्ञान किसे नै ज्ञान बिना जमै ध्यान नहीं।। टेक।।
ध्यान बिना भक्ति ना होती भक्ति बिन भगवान नहीं।।
बिना गुरु जो करैं तपस्या भ्रम जाल में धिरते हैं।
बिना गुरु ना गति लिखी दुःख चौरासी में भरते हैं।'

कवि ने मनुष्य को मानव देह प्राप्त कर प्रभु नाम स्मरण करने की प्रेरणा दी है क्योंकि प्रभु नाम स्मरण के अभाव में यह मानव देह व्यर्थ ही नष्ट हो जाती है। मरने के बाद यह देह पुनः प्राप्त करना अत्यंत कठिन है। मानव देह प्राप्त कर सांसारिक माया मोह में ग्रस्त होकर परमात्मा को भुला देना उचित नही है। इसलिए कवि कहता है–

'करले भक्ति भजन रट हरिनाम को, जीवन वृथा गवाने के काबिल नहीं है।

हीरा-मोती समझ ले तूं हर साँस को, ये रत्न धन लुटाने के काबिल नहीं है।'

कवि को अवतारवाद में आस्था उनके भजन 'आइये आइये दर्श दिखाइये कृष्ण मुरारी' भजन में स्पष्ट दिखाई देती है। वे सांसारिक विषय–वासनाओं से मुक्ति प्राप्त करने के लिए श्रीकृष्ण को पुकार कर कहते हैं कि हे श्रीकृष्ण, आप आकर मुझे दर्शन दीजिए और मुझे इन सांसारिक तृष्णाओं से मुक्ति दिलाइये। उनका यह अनुरोध इस कारण है कि–

'जब हुई धर्म की हानि, हर्या पाप का भार तनै।

दुष्ट जनों के प्राण खपायें, भक्त उतारे पार तनै।

लै चोबिस अबतार तनै प्रभु युग युग में देह धारी।।'

इस संदर्भ में कवि प्रहलाद, ध्रुव, शबरी, सुदामा, नरसी, धन्ना आदि भक्तों का उद्धार करने तथा हिरण्यकश्यप, रावण, कंस आदि के संहार करने के उदाहरण दिए हैं। कवि अपने उद्धार की कामना करते हुए प्रार्थना करता है–

'टेर सुणो जगदीश की, खड्या चरणों में पुजारी।'

कवि की यह पुकार दास्य भाव की भक्ति के अंतर्गत आती है जिसमें भक्त सदा अपने आराध्य के चरणों की सेवा ही करना चाहता है। कवि ने अपनी भक्ति में सत्संति करते हुए गुरु चरणों की सेवा, हरिनाम का गुणगान करना, हरिकथा में अनुराग, छल–प्रपंच से मुक्त होकर परमात्मा में अटूट विश्वास रखना आवश्यक माना है। उन्हें विश्वास है कि परमात्मा अपने भक्तों के सभी कष्टों को निश्चित रूप से दूर करते हैं। वे समदर्शी हैं तथा उसका भी उद्धार अवश्य करेंगे। निश्चय ही इनकी कविता में भक्ति की प्रेरक अभिव्यक्ति हुई है।

11. डॉ० जय नारायण कौशिक

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर सरस्वती के अनेक उपासक सामने आते रहे हैं। उनमें डॉ० जयनारायण कौशिक का नाम श्रद्धा से लिया जाता है। श्री जयनारायण कौशिक का जन्म झज्जर जिले के जहांगीर पुर गाँव में सन् 1935 ई० में हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीराम स्वरूप मिश्र था। प्रारंभिक शिक्षा गाँव के स्कूल से प्राप्त करने के बाद जय नारायण जी ने विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त की थी। इन्होंने हरियाणा साहित्य अकादमी के निदेशक पद पर कार्य किया था। इन्होंने हरियाणवी लोक साहित्य के प्रचार–प्रसार में अभूतपूर्व योगदान दिया था जिस कारण इन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित भी किया गया है।

रचनाएँ – इन्होंने हरियाणवी लोक साहित्य के प्रचार–प्रसार के लिए 'हरियाणवी हिंदी कोश' तथा हरियाणवी प्रत्यय कोश' की रचना की है। इन्होंने वैदिक मंत्रों का अनुवाद 'धरा के गीत', भर्तृहरि शतक का अनुवाद' 'यात्रा के पड़ाव' तथा धम्मपद का अनुवाद 'बुद्धवाणी' शीर्षकों से किया है। इन्होंने नीति परक उक्तियों का हरियाणवी में प्रणयन किया है। 'हरियाणा वंदना', 'धरती माता' आदि इनकी हरियाणवी की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ -

जय नारायण कोशिक के काव्य की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. **राष्ट्रीय भावना** – जय नारायण कौशिक का काव्य राष्ट्रीय चेतना के स्वर से युक्त है। कवि के हृदय में अपने देश, प्रदेश और जाति के प्रति अपरिमित सम्मान है। वह हरियाणा को ब्रह्मा द्वारा रचित प्रदेश मानता है जहाँ सूर्य की किरणों का प्रकाश सबसे पहले पड़ता है। कवि अपनी मातृभूमि की वंदना करते हुए लिखता है–

'हर की भूम्मी हरियाणे तनै, बार बार हम सीस निवावाँ।
ज्ञान ध्यान की इस धरती के, आट्ठुँ पहर सदा गुण गावाँ।'

2. **प्रकृति-चित्रण** – जय नारायण कौशिक हरियाणवी जन–जीवन के कवि हैं। इन्होंने हरियाणा के प्राकृतिक वातावरण का अपने काव्य में सजीव चित्रण किया है। यहाँ के लहलहाते खेत, धरती का विस्तार कवि के मन को मोह लेता है–

'नंदन बण-सी इत हर याल्ली, इसके खेत हिलोरें मारै।'
'मोर-मोरणी कोयल कूक्कँ, खुस हों सारे हाली पाली।'
'हे धरती माता तेरा घणा बिस्तार। कितै परबत-टीब्बे कितै नदी जलधार।
बण-बण में बणमाणस हास रचै सैं, दीप-दीप में माणस बास करैं सैं।'

3. **धार्मिकता** – जय नारायण कौशिक के काव्य में ईश्वर के गुणों का मात्र गायन ही नहीं मिलता अपितु कवि ने इसके माध्यम से जीवन में आदर्श मूल्य अपनाने की प्रेरणा दी है। उनका मानना है कि ईश्वर की प्राप्ति मानव के माध्यम से ही संभव है। वे अतिथि सत्कार में ही परमात्मा के दर्शन कर लेते हैं–

'घर आए नैं आद्दर दे अर पालक पाँवड़ा लावै।
इसा आदमी घर बैठयाँ मंदर के दरसन पावै।।'

वे ईश्वर की प्राप्ति के लिए आडंबरपूर्ण भक्ति, तीर्थाटन आदि पर भी विश्वास नहीं करते हैं। उनकी मान्यता है कि–

'जाग्याँ भटकै सोयाँ भटकै पाप्पै दुनिया सारी

चाहवै तै भगवान मिला दे मन की लील्ला न्यारी।'

इसलिए वे मन की चंचलता को वश में करने का संदेश देत हुए कहते हैं–

'अपणे मन की रास थॉम मैं एक संकलप ठाऊँ।

धरम करम की नीत रहै अर इसवर मैं लौ लाऊँ।'

4. नैतिकता – जय नारायण ने अपने काव्य में मनुष्य को आदर्श जीवन व्यतीत करने के लिए अनेक उपाय भी बताएं हैं। कवि के यह नीति कथन समाज के लिए अत्यंत उपयोगी हैं। कवि ने सब से मीठा बोलने, मन को वश में करने का उपदेश दिया है। विषय–विक़ारों से दूर रहने, व्यर्थ की सोच–विचार में ग्रस्त रहने से दूर रहने के लिए भी कवि ने कहा है–

'कदे आग्गै की कदे पाच्छै की अणहोणी सोंच करावै।

इन्दरी के भोग्याँ में ला कै आट्दूँ पहर नचावै।'

5. भाषा-शैली – जय नारायण कौशिक ने अपने काव्य में व्यावहारिक लोकभाषा हरियाणवी के सहज एवं सरल रूप का प्रयोग किया है। कवि ने अपनी काव्य भाषा में चमत्कार तथा अर्थ गांभीर्य उत्पन्न करने के लिए मुहावरों तथा अलंकारों का सहज भाव से प्रयोग किया है। कवि की अधिकांश रचनाएँ विभिन्न राग रागनियों पर आधारित गेयता के गुणों से युक्त हैं।

इस प्रकार जय नारायण कौशिक हरियाणवी लोक मानस के मर्यादावासी कवि हैं जिन्होंने अपने काव्य के माध्यम से आदर्श समाज की स्थापना का प्रयास किया है तथा जन जागृति का संदेश दिया है। इनकी कविता में राष्ट्रीयता और मानवतावादी स्वर की प्रबलता है।

कविता-सार

चर्चित लोक कवि जय नारायण कौशिक द्वारा रचित तीन कविताएँ 'हरियाणवी लोकधारा' पुस्तक में संकलित हैं। पहली कविता 'हरियाणा वंदना' में कवि ने शिव की पवित्र धरती हरियाणा को बार–बार नमस्कार करते हुए इस ज्ञान ध्यान की भूमि की विशेषताओं का वर्णन किया है। ब्रह्मा ने जब संसार की रचना की तो ओम् का उच्चारण सर्वप्रथम इसी भूमि पर गूंज उठा था। सूर्य सर्वप्रथम इसे ही अपनी किरणों का उपहार देता है। वेदव्यास ने वेदों की रचना इसी धरती पर की थी। श्री कृष्ण ने गीता का उपदेश इसी धरती पर दिया था। यह धरती अभिमन्यु जैसे वीरों को जन्म देती है। यहाँ नंदन–वन जैसी हरियाली छाई रहती है। मोर, मोरनी, कोयल यहाँ अपनी मधुर ध्वनि सुनाते रहते हैं। यह धरती भारत के रखवालों की धरती है।

दूसरी कविता 'धरती माता' में कवि ने धरती के अत्यधिक विस्तार की चर्चा की है, जिस पर कहीं पर्वत, कहीं टीले तो कहीं जलधारा से परिपूर्ण नदियाँ बह रही हैं। यहाँ के वनों में वनचर तथा द्वीपों पर मनुष्य रहते हैं। प्रत्येक प्राणी अपने–अपने धर्म का पालन करता है तथा धरती माता इन सब को अपनी छाती से लगाकर इनका समभाव से पालन–पोषण करती है।

तीसरी कविता 'नीति' के कथनों की है। इसमें कवि ने मन को सांसारिक विषय–विकारों से दूर रख कर अपने वश में करने के लिए कहा है क्योंकि मन को वश में करने से मनुष्य धर्मानुसार जीवनयापन करते हुए प्रभु से लौ लगा सकता हैं कवि ने अतिथि सत्कार के महत्त्व पर भी प्रकाश डालते हुए कहा है कि अतिथि सेवा करने से घर में ही भगवान के दर्शन हो जाते हैं।

व्याख्या

(क) हरियाणा वंदना

(1)

हर की भूम्मी हरियाणे तनै, बार बार हम सीस निवावाँ।

ज्ञान ध्यान की इस धरती के, आट्ठुँ पहर सदा गुण गावाँ।
बिरम्हाँ नैं जिब जगत रचाया, ओम् नाम नभ मैं ऊच्चार्‌या।
सूरज की पहली किरणँ नैं, तेरी धरती को चुचकार्‌या।
वेद-व्चास नैं बेद रचण नैं, अपणा आस्सण अड़ै जमाया।
जिसै ज्ञान की चास लगी, वो तेरी सरणाई मैं आया।।
पीली पाट्याँ पहल्लचाँ उठ कै, वेद्दां के हम मंतर गावाँ।
हर की भूम्मी हरियाणे तनै, बार बार हम सीस निवावाँ।।

शब्दार्थ – हर=शिव, आट्ठुँ पहर=आठों पहर, हर समय, चुचकार्‌या=पुचकारना, दुलासा, बिरम्हाद्द=ब्रह्मा, चास=चाह, इच्छा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित कविता 'हरियाणा वंदना' में से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने देव भूमि हरियाणा का गुणगान किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि हरियाणा की वंदना करते हुए लिखता है कि हम हर अर्थात् शिव की इस भूमि हरियाणा को बार–बार सिर झुका कर नमस्कार करते हैं। कवि ज्ञान और ध्यान की इस पवित्र धरती के सदा आठों पहर अथवा हर समय गुण गाता रहता है। ब्रह्मा ने जब संसार की रचना की थी तो आकाश में ओंम शब्द का उच्चारण सबसे पहले यहीं से गूंज उठा था। सूर्य की पहली किरणें सबसे पहले हरियाणा की धरती को ही चूम कर दुलराया था। वेदव्यास जी ने वेद की रचना करने के लिए यहीं अपना आसन लगाया था अथवा वेदव्यास जी ने वेद की रचना इसी धरती पर की थी। जिसे भी ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा होती थी वह इसी धरती पर आता था। सूर्योदय से पहले ही यहाँ के निवासी जाग उठते हैं और वेदों के मंत्रों का उच्चारण करते हैं। कवि कहता है कि शिव की भूमि हरियाणा को हम बार–बार नमस्कार करते हैं।

विशेष –

(i) हरियाणा को हर अथवा शिव की भूमि कह कर इसे देवभूमि सिद्ध किया है।

(ii) हरियाणा में वेदों की रचना हुई है।

(ii) सहज, व्यावहारिक, तद्‌भव शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iv) पुनरुक्ति प्रकाश, अनुप्रास, मानवीकरण अलंकार है।

(v) प्रभावी रूप से पौराणिक तथा ऐतिहासिक तथ्यों को प्रस्तुत किया गया है।

(vi) मातृभूमि के प्रति आदर तथा श्रद्धा भाव है।

(vii) आकर्षक गेयता है।

(2)

न्या का पल्ला पकड़न आले, अडै हुए पांडु तपधारी।
सतियाँ की भी सती कुहावै, आड़ै तपी द्रौपदी नारी।।
गीता वचन सुनावण आला, ज्ञान्नी ध्यान्नी चक्करधारी।
बण कै आया खुदगडवाला, इत की धूल जटा मैं धारी।।
अभमन्नू से बालक इत के, किस-किस के हम नाम गिणावाँ।
हर की भूम्मी हरियाणे तनै, बार बार हम सीस निवावाँ।

शब्दार्थ – न्या=न्याय, चक्करधारी=चक्रधारी, श्रीकृष्ण, अभमन्नू=अभिमन्यु।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित कविता 'हरियाणा वंदना' में से ली गई हैं। इस

कविता में कवि ने देवभूमि हरियाणा के गुणों का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि हरियाणा की विशेषताओं का वर्णन करते हुए लिखता है कि इसी हरियाणा की धरती पर न्याय के मार्ग पर चलने वाले तपस्वी पांडव हुए थे। सतियों में सर्वश्रेष्ठ सती द्रौपदी का भी इसी धरती पर संतप्त होकर अपने सतीत्व की रक्षा के लिए तपस्या करनी पड़ी थी। महाज्ञानी योगेश्वर चक्रधारी श्रीकृष्ण ने इसी धरती पर गीता का प्रवचन किया था। श्रीकृष्ण यहाँ स्वयं ही रथवान बन कर आए थे और यहाँ की समस्त कठिनाइयों को अपने ऊपर ले लिया। अभिमन्यु जैसे वीर बालक इसी धरती पर हुए थे। कवि कहता है कि हम और किन–किन वीरों का नाम गिनायें ? शिव की भूमि हरियाणा को हम बार–बार नमस्कार करते हैं।

विशेष –

(i) हरियाणा को गीता की धरती कहा है।

(i) सहज, व्यावहारिक, भावपूर्ण, तत्सम–तद्भव प्रधान हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश, पदमैत्री अलंकार है।

(iv) हरियाणा के अतीत का गौरवगान किया गया है।

(v) आकर्षक गेयता है।

(3)

नंदन बण-सी इत हरयाल्ली, इसके खेत हिलोरें मारै।
अनधन के भंडार भरे रहैं, दुखियाँ के सब कारज सारैं।।
मोर-मोरणी कोयल कूकैं, खुस हों सारे हाली पाली।
पसु पखेरू सदा छिकै रहैं, नंदी-सुरभी करैं जुगाली।।
कीड़े-कुंजर एक मानकैं, सबजग का हम भला मनावाँ।
हर की भूम्मी हरियाणे तनैं, बार बार हम सीस निवावाँ।

शब्दार्थ – इत=यहाँ, हाली=हल चलाने वाले, पाली=पशुओं की देखभाल करने वाले, पखेरू=पक्षी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित कविता 'हरियाणा वंदना' में से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने देवभूमि हरियाणा के गुणों का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि हरियाणा की विशेषताओं का वर्णन करते हुए लिखता है कि यही हरियाणा प्रदेश है जहाँ इंद्र के नंदन–वन के समान सर्वत्र हरियाली फैली रहती है। इसके खेत सदा हरे–भरे होकर लहलहाते रहते हैं। यहाँ सदा अन्न और धन के भंडार भरे रहते हैं जिससे दुखियों के सभी कार्य पूरे हो जाते हैं। यहाँ कोई भी दुःखी नहीं रहता। यहाँ सदा मोर, मोरनी, कोयल की मधुर ध्वनियाँ सुनाई देती रहती हैं जिससे यहाँ के हल चलाने वाले, पशुओं की देखभाल करने वाले तथा प्रत्येक निवासी सदा प्रसन्न रहते हैं। यहाँ पर सभी पशु–पक्षी सदा भरपेट भोजन करके संतुष्ट रहते हैं और बैल तथा गाय पेटभर कर जुगाली करते रहते हैं। चींटी से लेकर हाथी तक सबको यहाँ समान माना जाता है तथा यहाँ के निवासी संसार के समस्त लोगों के कल्याण की कामना करते हैं। कवि कहता है कि हम शिव की इस भूमि को बार–बार नमस्कार करते हैं।

विशेष –

(i) हरियाणा को अन्न–धन से परिपूर्ण हरियाला प्रदेश बताते हुए पशु–पक्षियों का भी स्वर्ग बताया गया है।

(i) तद्भव, तत्सम, देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) उपमा, पदमैत्री अनुप्रास तथा पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार है।

(iv) प्रभावी आकर्षक गेयता है।

(v) मातृभूमि के प्रति आस्था व्यक्त की गई है।

(4)

कुलछेत्तर के नहा तला मैं, जनम-जनम के बंधन कट्टैं।
इत के मंदराँ के दरसन तैं पाप्पाँ के दल बाद्दल छट्टैं।
काम करो फल की चाहना नाँ, जपते इस मंतर की माला।
भारत के रखवालै बण कै, बांद्धैं सदा धरम का पाला।।
'कौशिक' जनम सफल इत आकै, और घणा के जिकर चलावाँ
हर की भूम्मी हरियाणे तनैं, बार बार हम सीस निवावाँ।

शब्दार्थ – कुलछेत्तर=कुरुक्षेत्र, तला=तालाब, घणा=अत्यधिक, हर=भगवान्, शिव, सीस निवावाँसिर झुका था।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित कविता 'हरियाणा वंदना' में से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने देव भूमि हरियाणा की विशेषताओं का उल्लेख किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि हरियाणा के सुप्रसिद्ध तीर्थ स्थल कुरुक्षेत्र का वर्णन करते हुए लिखा है कि कुरुक्षेत्र के सरोवरों में स्नान करने से मनुष्य जन्म–जन्मांतर के बधनों से मुक्त हो जाता है। यहाँ के मंदिरों के दर्शन करने से मनुष्य पापों के समूहों से छुटकारा प्राप्त कर लेता है। यहाँ रहने वाले लोग श्रीकृष्ण द्वारा गीता में दिए गए इस उपदेश की माला जपते रहते हैं कि 'कर्म करो परंतु फल की इच्छा मत करो।' यहाँ के लोग भारतवर्ष के रक्षक बन कर सदा धर्म का पालन करते हैं। कवि कौशिक कहते हैं कि यहाँ आने से मनुष्य का जन्म सफल हो जाता है इसलिए और अधिक क्या कहा जाए ? कवि कहता है कि शिव की इस पवित्र भूमि हरियाणा को हम बार–बार सिर झुका कर नमस्कार करते हैं।

विशेष –

(i) हरियाणा के सुप्रसिद्ध तीर्थस्थल कुरुक्षेत्र की विशेषताओं का वर्णन करते हुए इस तीर्थ पर स्नान करने से जन्म–जन्मांतर के बंधनों से मुक्त होने का संदेश दिया है।

(ii) तद्भव, शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) पुनरुक्ति प्रकाश, अनुप्रास तथा पदमैत्री अलंकार हैं।

(iv) मातृभूमि के प्रति आस्था व्यक्त की गई है।

(v) ओज प्रसाद गुण सम्पन्न शैली है।

(ख) धरती माता

हे धरती मात्ता तेरा घणा बिस्तारा। कितै परबत-टीब्बे कितै नदी जलधारा।।
बण-बण में बणमाणस हास रचैं सैं। दीप-दीप में माणस बास करैं सैं।
इन सारयाँ नै अपणी बोल्ली की चा सै। औराँ की बोल्ली मैं इनका नहीं लगा सै।।
सब अपणे-अपणे धरमाँ पै चाल्लैं सैं। वे धरम धार कै उस तैं नाँ हाल्लैं सैं।।
कोए खेती बाह्वै कोए तलवार चलावै। कोए टहल करै कोए पड्ढै और पढावै।
तूँ इन सार्याँ की कपिता गाँ कहलावै। सब भेद भुला एक थण तैं दूध पिलावै।।
तू इन सब नैं छात्ती ऊप्पर धारै। बस प्यार करै अर कदे नहीं फटकारै।।
मन्नैं बी तू धन का दूध चखा दे। सून्ने-चाँद्दी के इत अंवार लगा दे।

शब्दार्थ – टीब्बै=टीले, पुड्ढे=पढे, सून्ने=सोना।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित कविता 'धरती माता' में से ली गई हैं। इस कविता

में कवि ने धरती की असीमता, सहनशीलता, ममता आदि का वर्णन करते हुए धरती की देनों के प्रति आभार व्यक्त किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि धरती के विस्तार, विविधता आदि का वर्णन करते हुए लिखता है कि हे धरती माता, आप का विस्तार बहुत अधिक है। कहीं आप पर्वतों और टीलों से युक्त हैं तो कहीं आप के ऊपर नदियों के रूप में जल की धाराएं बहती रहती हैं। आपके जंगलों में अनेक वनमानुष रह कर आनंद मनाते हैं। आपके विभिन्न द्वीपों में मनुष्य निवास करते हैं। ये सब लोग अपनी–अपनी बोली की चाहना में मस्त रहते हैं तथा अन्य लोगों की बोलियों से इनका कोई लगाव नहीं होता है। सब अपने–अपने धर्म का पालन करते हैं और अपने धर्म वे विचलित नहीं होते हैं। यहाँ के लोगों में से कुछ लोग खेती करते हैं तो कुछ लोग देश की रक्षा के लिए योद्धा बन कर तलवारें चलाते हैं। कुछ लोग सेवा कार्य करते हैं तो कुछ पढ़ने–पढ़ाने का कार्य करते हैं। धरती माता तुम इन सब के लिए कामधेनु के समान हो जो सब प्रकार का भेदभाव भुलाकर समभाव से सबका पालन–पोषण करती हो। जिस प्रकार कपिला गाय सब को एक थण से दूध पिला कर तृप्त कर देती है वैसे ही धरती माता सब का समान भाव से पालन–पोषण करती है। कवि धरती माता के उपकारों का वर्णन करते हुए लिखता है कि धरती माता संसार के जड़–चेतन समस्त जीव–जतुओं, वनस्पतियों आदि को अपनी छाती के ऊपर धारण करती है तथा सबको अपना प्रेम बांटती रहती है। वह कभी भी किसी को फटकारती नहीं है। कवि धरती माता से प्रार्थना करता है कि मुझे भी तुम धन रूपी दूध का वरदान दे दो तथा सोने–चाँदी के ढेर लगा दो।

विशेष –

(i) धरती माता को कामधेनु के समान माना है जो धरती पर रहने वाले प्रत्येक प्राणी को समभाव से पालना करती है।

(ii) सहज, तद्भव, शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) पुनरुक्ति प्रकाश, अनुप्रास, रूपक और मानवीकरण अलंकार है।

(iv) देशभक्ति का मुखर स्वर है।

(v) आकर्षक गेयता है।

(ग) नीति

(1)

जणू पहाड़ चढणियाँ बोज्झा पीठ धार कै। ऊप्पर चडढै हंघा मार-मार कै।।
जणू बरसावा राम नैं ऊप्पर ठावै। पौन हिलौरे दे-दे कै बरसावै।।
तम भी न्यू ए पूरा हंघा लाओ। अपणे चित नैं एक ठिकाणै ल्याओ।।
जिब थारा चित एक ठोड़ आवैगा। आप्पै नैं आप्पा आप आप ठावैगा।।

शब्दार्थ – जणू=जिस प्रकार, हंघा=हांका, तम=तुम, जिब=जब, ठावैगा=स्थिर हो जाएगा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित 'नीति' के कथनों से ली गई हैं। कवि अपने अहंकार को त्याग कर प्रभु प्रेम में लीन होने की प्रेरणा दे रहा है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियों में कवि मनुष्य को प्रभु प्राप्ति कके लिए अपने मन को एकाग्र करने का संदेश देते हुए लिखता है कि जिस प्रकार व्यक्ति पीठ पर बोझ लादकर पहाड़ पर चढ़ते समय अपना सारा ध्यान पहाड़ पर चढ़ने में लगाये रखता है तथा हांफा मार–मार कर ऊपर चढ़ता रहता है तथा वर्षा के बादलों को वायु अपनी लहरों के बल से आकाश में ऊपर ले जा कर बरसाती है। उसी प्रकार से तुम भी पूरा जोर लगा कर अपने मन को एक स्थान पर स्थिर करो। जब तुम्हारा मन एक स्थान पर स्थिर हो जाएगा तब स्वयं ही तुम अपने आप को पहचान लोगे और तुम्हारा मन स्थिर हो जाएगा।

विशेष –

(i) मन का वश में करने से ही जीवन में उद्धार संभव माना गया है।

(ii) तद्भव शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) पुनरुक्ति प्रकाश, अनुप्रास, पदमैत्री अलंकार है।

(iv) प्रभावी गेयता है।

(v) आध्यात्मिकता की स्वर प्रधानता है।

(2)

जाग्याँ भटकै सोयाँ भटकै नाप्पै दुनिया सारी।
चाहवै तै भगवान मिला दे मन की लील्ला न्यारी।।
कदे आग्गै की कदे पाच्छै की अणहोणी सोंच करावै।
इन्दरी के भोग्याँ में ला कै आट्ठूँ पहर नचावै।
अपणे मन की रास थाँम मैं एक संकलप ठाऊँ।
धरम करम में नीत रहै अर इसवर में लौ लाऊँ।

शब्दार्थ – आट्ठूं=आठों, रास=लगाम, अर=और।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित 'नीति' से संबंधित कविता से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने नीति और भक्ति संबंधी अपनी भावनाओं को व्यक्त किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियों में कवि मनुष्य को चेतावनी देते हुए लिखता है कि मनुष्य इस संसार में जन्म लेकर सदा सांसारिक विकारों के पीछे भटकता रहता है। वह जागते और सोते समय भी भटकता है और सारे संसार को नापता फिरता है। मनुष्य के मन की गति विचित्र है। यदि वह चाहे तो अपने मन को वश में करके परमात्मा से भी मिल सकता है। मनुष्य का मन कभी भविष्य और कभी अतीत की होनी–अनहोनी सोचों में डूबा रहता है। यही मन मनुष्य को इंद्रियों के भागों में लिप्त करा कर आठों प्रहर अथवा हर समय नचाता रहता है। कवि कहता है कि मैं अपने मन रूपी घोड़े की लगाम पकड़कर एक संकल्प करता हूँ कि मैं धर्म कर्म में लग कर ईश्वर के प्रति अपने मन को लगाऊँगा।

विशेष –

(i) मनुष्य को सांसारिक विषय–विकारों को त्याग कर प्रभु के चरणों में मन लगाने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) तद्भव शब्दों से युक्त भावपूर्ण, मुहावरेदार हरियाणवी भाषा है।

(iii) पदमैत्री अलंकार है।

(iv) प्रभावी लाक्षणिकता तथा गेयता है।

(v) प्रसाद ओज गुण सम्पन्न शैली है।

(3)

ज्यूँ गडवाला रास थाँम घोड्याँ नैं राह पै ल्यावै।
मनका घोड़ा देह गाड्डे नैं अपणी चाल चलावै।।
मनुवा बूड्ढा नाँ होत्त, ले अम्बर बीच उछालै।
हिरदै बिच निवास करै पर जग नैं सिर पै ठालै।।
अपणे मन की रास थाँम मैं एक संकलप ठाऊँ।
धरम करम में नीत रहै अर इसवर में लौ लाऊँ।।

शब्दार्थ – गडवाला=गाडीवाला, घोड्याँ=घोड़ों गाड्डे=गाड़ी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ जय नारायण कौशिक द्वारा रचित 'नीति' से संबंधित कविता से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने नीति और भक्ति से संबंधित अपने विचारों को व्यक्त करते हुए मन को वश में करने का संदेश दिया है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियों में कवि मन को वश में करने के लिए कहता है कि जिस प्रकार गाड़ीवान घोड़ों की लगाम पकड़ कर उन्हें सही मार्ग पर चलाता है उसी प्रकार से मन रूपी घोड़े शरीर रूपी गाड़ी को अपनी इच्छा से चलाता है। यदि मन रूपी घोड़ा बूढ़ा नहीं हो तो वह शरीर रूपी गाड़ी को आकाश तक उछाल देता है अर्थात् मन बड़ी–बड़ी कल्पनाएँ कर लेता है। मन हृदय के मध्य में निवास करता है परंतु सारे संसार को अपने सिर पर उठा लेता है। अपने मन रूपी घोड़े की लगाम पकड़ कर मैं एक संकल्प करता हूँ कि धर्म–कर्म में लीन रहते हुए मैं ईश्वर भक्ति में मग्न रहूँगा।

विशेष –

(i) मन का वश में करने की प्रेरणा दी है अन्यथा मन सांसारिक विषय विकारों में लिप्त हो जाता है।

(ii) तद्भव और देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) उपमा, रूपक, पदमैत्री अनुप्रास अलंकार है।

(iv) ईश्वर के प्रति आस्था व्यक्त की गई है।

(v) लाक्षणिकता, मुहावरों का प्रयोग तथा गेयता है।

(4)

घर आए नैं आद्दर दे अर पालक पाँवड़ा लावै।
इसा आदमी घर बैठयाँ मंदर के दरसन पावै।।
घर आए नैं मीट्ठा बोल्लै आसण बिछा बठावै।
इसा आदमी न्यूँ समझो घर बैठ्याँ यग्ग रचावै।।
घर आए नै जो माणस कलसे तैं पाणी प्यावै।
इसा आदमी न्यूँ समझो यग की ताहीं जब ल्यावैं।।

शब्दार्थ – पालक पाँब्डा=पलक पावड़ा, आदर सम्मान।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ, जय नारायण कौशिक द्वारा रचित 'नीति' के कथन हैं। कवि अतिथि सत्कार को अनुपम यज्ञ करने के समान बता रहा है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावात्मक पंक्तियों में कवि 'अतिथि सत्कार' की महिमा का वर्णन करते हुए लिखता है कि जब कोई अतिथि तुम्हारे घर आए तो उसका पूरा आदर के साथ सत्कार करें। जो व्यक्ति इस प्रकार से घर आए हुए अतिथि का आदर सत्कार करता है उसे घर बैठे ही मंदिर में बैठे भगवान के दर्शन हो जाते हैं। जो अतिथि तुम्हारे घर आया है उससे मधुर शब्दों में बातचीत करो और उसे अच्छा आसन देकर बैठाइये। इस प्रकार से जो व्यक्ति अतिथि का सत्कार करता है वह घर बैठे ही यज्ञ करने का लाभ उठाता है। अपने घर आए हुए अतिथि को जो व्यक्ति कलसे से पानी पिलाता है वह व्यक्ति यज्ञ करने के सभी पुण्य प्राप्त कर लेता है।

विशेष –

(i) अतिथि सत्कार को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते हुए घर आए हुए अतिथि की सेवा करने की प्रेरणा दी गई है।

(ii) तद्भव और देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग है।

(iv) अनुप्रास तथा पदमैत्री अलंकार है।

(v) प्रेरक गेयता तथा लाक्षणिकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 'हरियाणा वंदना कविता में निरूपित राष्ट्रीय चेतना की विवेचना कीजिए।

उत्तर – राष्ट्रीय चेतना से अभिप्राय उस प्रवृत्ति से है, जिसमें किसी राष्ट्र के आत्मचेता नागरिकों को स्वाधीनता के लिए आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा, राष्ट्र की एकता और अखंडता को स्थिर करने के लिए प्रोत्साहन, मातृभूमि और मातृभाषा के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास तथा राष्ट्र विरोधी रूढ़ियों एवं परंपराओं के प्रति विद्रोह करने का दृढ़ सामर्थ्य हो। 'हरियाणा वंदना' कविता में जय नारायण कौशिक ने राष्ट्रीय चेतना के इसी स्वर को मुखरित करते हुए मातृभूमि हरियाणा के प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते हुए कहा है–

'हर की भूम्मी हरियाणे तनै, बार बार हम सीस निवावाँ।
ज्ञान ध्यान की इस धरती के, आट्ठुँ पहर सदा गुण गावाँ।'

सहृदय कवि ने अपने प्रदेश हरियाणा को देव भूमि कह कर स्मरण किया है तथा सदा इसके ही गुणों का वर्णन करना चाहता है। इस प्रकार वह अपनी मातृभूमि के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने में सफल हुआ है।

हरियाणा को देवभूमि सिद्ध करने के लिए कवि पौराणिक तथा ऐतिहासिक तथ्यों का आश्रय लेकर बताता है कि जब ब्रह्मा ने सृष्टि की रचना की थी तब सर्वप्रथम सूर्य ने अपनी पहली किरणों से इसी प्रदेश की धरती को अपना स्नेह प्रदान किया था। कवि के अनुसार

'बिरम्हाँ नैं जिब जगत रचाया, ओम् नाम नभ मैं ऊच्चार्‌या।
सूरज की पहली किरणँ नैं, तेरी धरती को चुचकार्‌या।'

केवल इतना ही नहीं इसी धरती पर वेद–व्यास जी ने वेदों की रचना की थी तथा ज्ञानपिपासू यहीं ज्ञान प्राप्त करने आते थे। अतीत के इस गौरव गान द्वारा कवि ने हरियाणावासियों को उनके समृद्ध अतीत का स्मरण कराते हुए उनमें राष्ट्रीय चेतना जागृत करने का सफल प्रयास किया है। वह चाहता है कि आज का हरियाणा भी अपने अतीत के गौरव के समान महान् बने।

लोक कवि हरियाणा प्रदेश की अन्य विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखता है कि यहाँ पांडवों ने सदा न्याय का साथ पकड़ा तथा श्रीकृष्ण ने स्वयं इस धरती पर गीता का उपदेश दिया था। अभिमन्यु जैसे वीर बालक भी इसी धरती की देन हैं। कवि कहता है–

'अभमन्यू से बालक इत के, किस-किस के हम नाम गिणावाँ।'

यही कारण है कि हरियाणा देव भूमि के साथ–साथ वीर भूमि कहलाती है। इन वीरों से प्रेरणा लेकर आज भी हरियाणावासी देश की रक्षा के लिए सबसे आगे रहते हैं–

'भारत के रखवालै बण कैं, बांद्धैं सदा धरम का पाला।'

सहृदय कवि हरियाणा को हरियाली का प्रदेश मानता है। यहाँ की धरती सदा हरे–भरे खेतों से लहलहाती रहती है। अन्न–धन के भंडारों से यह प्रदेश भरा हुआ है तथा यहाँ कोई भी दुःखी नहीं है। सब को सदा पेट भर अनाज उपलब्ध होता है। कवि का यह कथन इसी ओर संकेत करता है–

'नंदन बण-सी इत हरयाल्ली, इसके खेत हिलोरें मारै।
अनधन के भंडार भरे रहैं, दुखियाँ के सब कारज सारैं।।'

हरियाणा में केवल मानव ही सुखी नहीं है, यहाँ के पशु–पक्षी भी सदा आनंदमग्न और तृप्त रहते हैं। यहाँ सर्वत्र 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना व्याप्त रहती है। इसलिए कवि कहता है–

'मोर-मोरणी कोयल कूक्कैं, खुस हों सारे हाली पाली।
पसु पखेरू सदा छिके रहैं, नंदी-सुरभी करैं जुगाली।
कीड़े-कुंजर एक मानकैं, सबजग का हम भला मनावाँ।।'

हरियाणा के तीर्थों को कवि ने आवागमन के चक्करों से छुटकारा दिलाने वाला माना है। उसके अनुसार कुरुक्षेत्र के

सरोवरों में स्नान करने से मनुष्य जन्म–जन्मांतर के बंधनों से मुक्त हो जाता है तथा यहाँ स्थित मंदिरों के दर्शन करने से मनुष्य के समस्त पाप समाप्त हो जाते हैं।

इस प्रकार जय नारायण कौशिक ने 'हरियाणा वंदना' कविता में हरियाणा को देव भूमि कह कर बार–बार नमस्कार किया है तथा हरियाणा के अतीत के गौरव गान तथा मातृभूमि हरियाणा के प्रति अपनी अटूट श्रद्धा एवं आस्था व्यक्त करते हुए हरियाणावासियों में राष्ट्रीय चेतना जागृत की है जिससे वे भी अपने प्रदेश पर गर्व करें तथा कवि के इस कथन को सार्थक करें–

'काम करो फल की चाहना नाँ, इस मंतर की माला।'

गीता का यह कथन हरियाणावासियों को सदा कर्मशील बनाए रखता है तथा वे अपने प्रदेश की उन्नति में लगे रहते हैं। इस प्रकार हरियाणा का सुंदर गुणगान है।

प्रश्न 2. जय नारायण कौशिक की भाषा-शैली पर विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर – बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न कवि जय नारायण कौशिक की काव्य भाषा उनके भावों एवं विचारों को प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्ति प्रदान करने में सक्षम मानी जाती है। उन्होंने अपने काव्य कथ्य के अनुरूप भाषा और शिल्प का समायोजन किया है। इनके काव्य भाषा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

1. **शब्द-शिल्प** – कवि की भाषा जितनी सरल, प्रवाहमय, भावपूर्ण होती है, उसकी अनुभूतियों की संप्रेषणीयता भी उतनी ही प्रभावकारी, स्पष्ट और हृदयग्राह्य होती है। जय नारायण कौशिक लोककाव्य के कवि हैं, इसलिए इनकी काव्य भाषा भी प्रमुखतया हरियाणवी बोली है जिसमें खड़ी बोली के तद्भव, तत्सम तथा उर्दू के प्रचलित शब्दों के अतिरिक्त देशज जैसे–तनै, बिरम्हाँ, चुचकार्‌या, अड़ै, न्या, कड़ै आदि का खुल कर प्रयोग किया गया है। इन देशज शब्दों के प्रयोग से इनका काव्य आँचलिक रंग में रंग गया है तथा उसमें से हरियाणा की मिट्‌टी की सुगंध आने लगती है। जैसे–'हे धरती मात्ता तेरा घणा बिस्तार। बकतै परबत–टीब्बे कितै नदी जल धारा।

2. **भाषा-भास्वरता** – जय नारायण कौशिक ने अपने काव्य में कृत्रिम सौंदर्य से मुक्त अनगढ़ ठेठ हरियाणवी भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें एक अपनापन, खरापन, सहजता तथा सरलता दिखाई देती है जो हरियाणवी जन–जीवन की अपनी विशेषता है। इन्होंने अपनी भाषा के स्वरूप तथा गठन को निरंतर विकसित बनाये रखा है। इनकी राष्ट्रीय चेतना से युक्त कविताओं में ओज और माधुर्य गुण के सहज ही दर्शन हो जाते हैं। जैसे–

'हर की भूम्मी हरियाणे तनैं, बार बार हम सीस निवावाँ।
ज्ञानध्यान की इस धरती के, आट्‌ठुँ पहर सदा गुण गावाँ।'

इनके काव्य में अभिधा, लक्षणा और व्यंजना तीनों प्रकार की शब्द शक्तियों के प्रयोग होते हैं। इनमें से अभिधात्मक तथा लाक्षणिक प्रयोग अधिक प्राप्त होत हैं। जैसे–

'ज्यूँ गडवाला रास थॉम घोड्‌याँ नैं राह पै ल्यावै।
मनका घोड़ा देह गाड्‌डे नैं अपणी चाल चलावै।।'

3. **आलंकारिकता** – जय नारायण कौशिक के काव्य में अलंकारों की स्थिति अत्यंत सहज एवं स्वाभाविक है। कवि का रचनाओं में कृत्रिमता के स्थान पर सहजता, सरलता एवं स्वाभाविकता के अधिक दर्शन होते हैं। इसलिए इन्होंने भाषिक सौंदर्य में वृद्धि के लिए अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश, उपमा, रूपक, पदमैत्री, मानवीकरण आदि अलंकारों का सहज भाव से प्रयोग किया है। जैसे–

'पीली पाट्‌याँ पहल्याँ उठ कै बेद्‌दां के हम मंतर गावाँ। (अनुप्रास)

'हर की भूम्मी हरियाणे तनैं, बार बार हम सीस निवावाँ।' (पुनरुक्ति प्रकाश)

'नंदन बन सी इत हरियाल्ली, इसके खेत हिलोरें मारैं।' (उपमा)

'मन का घोड़ा देह गाड्‌डे नैं अपणी चाल चलावै।' (रूपक, अनुप्रास)

4. **मुहावरा-प्रयोग** – जय नारायण कौशिक ने अपनी काव्य भाषा में रोचकता, अर्थगांभीर्य तथा आंचलिकता लाने के लिए हरियाणवी में लोक–प्रचलित मुहावरों का सटीक प्रयोग किया है। जैसे–'आस्सण जमाना, चास लगाना, पल्ला

पकड़ना, हिलौरें मारना, कारज सारना, जुगाली करना, बंधन काटना, पाला पड़ना, चाल चलना आदि।

5. बिंब विधान – जय नारायण कौशिक के काव्य में जिस प्रकार की सहजता के दर्शन होते हैं उसी प्रकार की सहजता इनकी काव्य भाषा में प्रयुक्त बिंबों और प्रतीकों में दिखाई देती है। जीवन, जगत, प्रकृति आदि से लिए गए बिंब और प्रतीक कवि की लोक जीवन में गहरी पैठ के कारण ही संभव हो सके हैं। इन्होंने अपने काव्य में प्रयुक्त बिंबों तथा प्रतीकों से अपनी काव्य भाषा में स्पष्टता एवं सांकेतिकता की सृष्टि की है। प्रकृति का एक बिंब खींचते हुए कवि कहता है–

'बिरम्हाँ नैं जिब जगत रचाया, ओम् नाम नभ मैं ऊच्चार्‌या।
सूरज की पहली किरणँ नैं, तेरी धरती को चुचकार्‌या।।'

कवि ने अपने काव्य मे प्रतीकों का चयन लोकजीवन, संस्कृति तथा अपने आस–पास की जिंदगी से किया है। जैसे–

'जणू पहाड़ चढणियाँ बोज्झा पीठ धार कै।
ऊप्पर चडढै, हंघा मार–मार कै।।'

इस प्रकार कह सकते हैं कि जय नारायण कौशिक की भाषा ठेठ हरियाणवी होते हुए भी काव्य सौंदर्य से युक्त है। इनकी भाषा सहज, सुगम तथा कथ्य के अनुरूप है। इनकी भाषा अनुभूति की गहराइयों को अभिव्यक्ति प्रदान करने में सक्षम है। भावानुकूल भाषा इनके काव्य के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

प्रश्न 3 'धरती माता' तथा 'नीति' के भाव-पक्ष को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – सहृदय कवि जय नारायण कौशिक ने 'धरती माता' कविता में धरती की असीमता, सहनशीलता, ममता आदि का वर्णन करते हुए उसके प्रति अपना आभार व्यक्त किया है। कवि धरती माता के अत्यधिक विस्तार से चमत्कृत है, जिस पर कहीं पर्वत, कहीं टीले और कहीं नदियों से निर्मल जलधारा बह रही है। धरती के वनों में जंगली जानवर आदि तथा द्वीपों पर मनुष्य निवास कर रहे हैं। प्रत्येक प्राणी अपने–अपने में मस्त हैं। सब बपने–अपने धर्मों का पालन कर रहे हैं। कोई खेती कर रहा है, कोई योद्धा बन कर देश की रक्षा कर रहा है, कोई सेवा कार्य में लगा है तो कोई पढ़ने–पढ़ाने का कार्य कर् रहा है। धरती माता बिना किसी भेदभाव के सब का पालन–पोषण कर रही है।

'नीति' कथनों के अंतर्गत कवि ने मानव जीवन में उपयोगी कुछ नीतियों का सहज रूप से वर्णन किया है। सर्वप्रथम कवि मनुष्य को अपने मन की चंचलता को वश में करने के लिए कहता है क्योंकि यदि मन को वश में कर लिया जाए तो सब कुछ वश में जो जाता है–

'जिब थारा चित एक ठोड़ आवैगा।
आप्पै नैं आप्पा आप आप ठावैगा।।'

सहृदय कवि संसार में इधर–उधर भटकते रहने के स्थान पर एकाग्र भाव से प्रभु भक्ति करना उचित मानता है क्योंकि भटकाव से मन इंद्रियों के सुख भोगों की ओर आकर्षित होता है। इसलिए कवि कहता है–

'अपणे मन की रास थाँम मैं एक संकलप ठाऊँ।
धरम करम में नीत रहै अर इसवर में लौ लाऊँ।।'

मन को वश में करने के लिए कवि कहता है कि जिस प्रकार गाड़ीवाला घोड़े को उसकी लगाम पकड़ कर सीधे रास्ते पर ले जाता है उसी प्रकार से तुम भी अपने मन के चंचल घोड़े को नियंत्रित कर सकते हो। 'नीति' के अंतिम कथन में कवि ने अतिथि सत्कार की महिमा का वर्णन करते हुए घर आए हुए अतिथि का आदरपूर्वक सत्कार करने, उससे मीठा बोलने, उसे अच्छे आसन पर बैठाने, जल–पान आदि कराने के लिए कहा है क्योंकि अतिथि का आदर–सत्कार करना घर बैठे परमात्मा के दर्शन करने के समान माना गया है।

सहृदय कवि की मान्यता है कि मानव मूल्यों दया, ममता, आदर, भक्ति, सहानुभूति के धारण से मनुष्य में शक्ति और ऊर्जा आती हैं इससे ही मानवता का विकास होता है और मनुष्य सफलता का वरण करता है।

12. भारत भूषण सांघीवाल

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर तलवार के वीरों के साथ सरस्वती के उपासकों को भी जन्म देती रही है। ऐसे उपासकों में भारत भूषण सांघीवाल का नाम श्रद्धा से लिया जाता है। श्री भारत भूषण सांघीवाल हरियाणवी के प्रतिष्ठित साहित्यकारों में से एक हैं। इन्होंने लोक साहित्य की रचना में महत्त्वपूर्ण योगदान ही नहीं, अपितु, हरियाणवी साहित्य को नये आयाम भी प्रदान किए हैं। इन्होंने हरियाणवी साहित्य के गद्य और पद्य दोनों रूपों को अपनी लेखनी से नई दिशा दी। इनका जन्म सन् 1932 ई० में रोहतक जिले के सांघी नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री छोटे लाल था। ब्राह्मण परिवार में उत्पन्न श्री सांघीवाल ने अपने छुटपन से ही बुद्धि कौशल दिखलाना आरंभ कर दिया था। इनके द्वारा संस्कृत में रचित 'शिवस्तोत्रम्' नामक रचना ने सभी को आश्चर्यचकित किया था। इन्होंने शास्त्री, साहित्यरत्न और आयुर्वेद रत्न की उपाधियाँ प्राप्त की हैं।

रचनाएँ – श्री सांघीवाल ने सामाजिक, ऐतिहासिक और पौराणिक मिथकों का प्रयोग करते हुए अपनी रचनाओं की सृष्टि की है। उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं–

(क) काव्य – कीचक वध, रानी लक्ष्मीबाई, आजादी के परवाने, सूरज–चांद, भारतभूषण का गुच्छा, हरियाणवी गीतांजलि, महाराणा प्रताप, हकीकत राय, छत्रपति शिवाजी, वीरबाला चंचल कुमारी, स्वामी दयानंद सरस्वती।

(ख) सांग – किस्सा चांद कौर, किस्सा सूरज कौर, सरदार भगत सिंह, नेता जी सुभाष चंद्र बोस, सरदार उधम सिंह।

(ग) एकांकी – दीवे तले अंधेरा, थोड़े बच्चे होते, धरती के लाल।

कवि की रचना 'सूरज चाँद' को हरियाणा साहित्य अकादमी के द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

सहित्यिक विशेषताएँ-

1. **देश-प्रेम** – कवि के हृदय में देश–प्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी हुई है। जब कवि किशोरावस्था में था तब देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के पूरे प्रयत्न पूरे जोर पर थे। कवि निश्चित रूप से इस समय किए जाने वाले प्रयत्नों से प्रभावित हुआ होगा और वहीं उसके संस्कार बने होंगे। तभी तो उनके द्वारा रचित अधिकांश वीर–वीरांगनाओं से संबंधित हैं। कवि ने अपने भावों को अपने काव्य के पात्रों से मुख में प्रकट कराया है–

भारत माता के वीरां नै, सीख्या नहीं डरणा रै।
जुल्म अत्याचार का विरोध डट कै करणा रै।
गुलामी की बीमारी तैं, तो अच्छा से मरया रै।
भारत-भूषण पेट दूषण, भवसागर तै तरणा रै।।

कवि के हृदय में अंग्रेज सरकार के प्रति गहरा विरोध भाव था और वह उन्हें हर अवस्था में देश से मार भगाना चाहता था। उसकी दृष्टि में विदेशी शासक धोखेबाज और अत्याचारी थे–

जुल्मी दगाबाज सै गौरे, उन तै सबक सिखाणा होगा।
पड़ी जरूरत तै फांसी कै, तख्ते पै चढ़ ज्याणा होगा।

देश की स्वतंत्रता कहने–बोलने या मांगने से नहीं मिल जाती। इसके लिए प्रयत्न करना पड़ता है, स्वयं को मिटाना पड़ता है। युवा वीरों का हृदय तो वैसे भी जोश से भरा रहता है। इसलिए वह अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के कारण उबलता है–

जिस मैं नहीं स्वामी हो वा, विरथा होवै जवानी रै।
खून रंगा म्हैं वीरां का सै, नहीं भर्‌या सै पानी रै।
देखी जा ना हालत मां की, क्रांति होगी ल्याणी रै।
आज़ादी की दैवी भाई, मांगै सै कुर्बानी रै।
जिंदगी आणी जाणी रै यू अमर रहैगा काम मिटा।।

2. भक्ति-भावना – हरियाणा तो 'हर' और 'हरि' की भूमि है। यहाँ पर उत्पन्न सभी मानवों का भक्ति–भावना से ओत–प्रोत होना स्वाभाविक है। वातावरण और संस्कार सभी को प्रभावित करते हैं। कवि ने तो अपने बचपन में ही 'शिवस्तोत्रम' की रचना कर इसे प्रकट कर दिया था। उनकी कविता में भक्ति–भावना संबंधी तत्त्व बार–बार दिखाई देता है। विपदा की घड़ी में ईश्वर ही याद आता है और तब ऐसा लगता है कि केवल वही सहारा बन कर हमारा उद्धार कर सकता है–

घोर सै अंधेरा प्रभु, दीखता प्रकाश ना।
तेरे विना ईब कोए, रही और आश ना।
भार धारण कमा तारण आज्या, चक्र सुदर्शन धारण आज्या।
दुष्ट-दल संहारण आज्या, धार रूप विकराल तू।

3. गुरु-महत्त्व – गुरु ही मानव का मार्ग दिखा कर ईश्वर की ओर उन्मुख करता है। वही अच्छे–बुरे में भेद कराता है; अज्ञान के अंधकार को मिटाता है। कवि का मानना है कि गुरु ही ईश्वर–स्वरूपा होकर मानव जीवन के विभिन्न कार्यों को पूरा कराता है–

ब्रह्मा बणा कै करै देश का सही-सही निर्माण गुरु।
विष्णु बचा दे, अन-धन ऊंचै हौदे करता स्यान गुरु।
हर बन कै अज्ञान हरे-न्यूं शिव शंकर सा महान् गुरु।
मुक्ति का दे खोल रास्ता, न्यू सच्चा भगवान गुरु।

कवि की दृष्टि में गुरु से बढ़ कर और कोई नहीं है। वही सभी प्रकार के कष्टों को काट कर दूर करता है। यदि गुरु चाहे तो देश का कल्याण झट से पूरा करवा सकते हैं। वहीं तो सभी शिष्यों की मन की शुद्धि और निर्मल बुद्धि के आधार बनते हैं।

4. सुधारवादी दृष्टिकोण – कवि का दृष्टिकोण सुधारवादी है। वह शिक्षा को जीवन की परम आवश्यकता मानता है, क्योंकि शिक्षा की प्राप्ति से ही ज्ञान चक्षु खुलते हैं। शिक्षा के बिना कोई भी तरक्की नहीं कर सकता–

ना कर सकता तरकी जग सं माणस बिना पढ़ाई।
भले-बुरे नच्चे-टोटे का नहीं ज्ञान हो भाई।
भारत-भूषण खुद पढ़, छोरे-छोरी पढ़ा लुगाई।
फिर जाकै नः होगी जग यः तेरी कला सवाई।

कवि की दृष्टि में ज्ञान की प्राप्ति नर–नारी सभी के लिए आवश्यक है। व्यक्ति के पास चाहे कितनी भी धन–दौलत हो पर शिक्षा के बिना वह अधूरा ही रहता है। उसे पल–पल दूसरों का मुँह देखना पड़ता है–

बिना पढ़े इस दुनियां मैं सै पशु जिस जिंदगानी।
धक्के खाणे पड़ै कदे जब हो चिट्ठी बचवानी।
ना हिसाब-किताब का बेरा देखें जा मुंह कान्ही।
डिंघ-डिंघ पै भई लुटते देखे अनपढ़ मूढ़ अज्ञानी।

5. मूल्य-आस्था – कवि ने अपनी कविता के माध्यम से जीवन के लिए अनिवार्य मूल्यों की व्याख्या की है। सत्य–अहिंसा का मार्ग तो हमारे देश में युगों से महत्त्वपूर्ण रहे हैं। वाणी की कोमलता ईमानदारी और निष्ठापूर्वक कर्त्तव्यपूर्ति का योगदान सदा से ही रहा है। कवि का मानना है कि इनके द्वारा ही सभ्यता–संस्कृति की पहचान बनी रह सकती है। आपस में सुख–शांति से रहना भी बहुत आवश्यक है। लड़ाई–झगड़ा तो व्यक्ति को नष्ट कर देताहै, घर को खा जाता है, संबंधों को जला देता है–

जिस घर मैं एक्का नहीं, रोज रहे तकरार।
नहीं कदे भी हो सकै, उसका बेड़ा पार।
उसका बेड़ा पार नहीं हो दुःख हो मोटा।
लिच्छी माज्जै दूर, कूदता फिरता टोटा।

जीवन में कलह–क्लेश चिंता के कारण बनते हैं और ये व्यक्ति को भीतर ही भीतर खा जाते हैं।

6. मिथक-प्रयोग – कवि ने संस्कार से ही मिथकों का प्रयोग अपने जीवन में हर भारतीय की तरह किया। देव–देवताओं की जो कहानियां पुराण, रामायण, महाभारत आदि से कवि को प्राप्त हुई उनका सदुपयोग कवि ने स्थान–स्थान पर किया ताकि उनसे शिक्षा ली और दी जा सके। धौम्य ऋषि के आरुणी के माध्यम से कवि ने आज के विद्यार्थियों को शिक्षा देने का प्रयत्न किया है–

इसे इसे जै चेल्ले होज्यां पेट्टा भरज्या गुरुवाँ का।
दे असीस फिर शिष्य पार रै, परलै तरज्या गुरुवाँ का।।
जिस समाज राज मैं होता नहीं गुरु का मान दिखे।
सुख-शांति न लाभ मिलै भई, होती हरदम हान दिखे।।

7. भाषा-शैली – कवि ने हरियाणवी का प्रयोग अपने भावों के प्रकाशन के लिए किया है। वाक्य संरचना में हरियाणवी क्रिया रूपों का ही प्रयोग है। तद्भव और देशज शब्दावली का प्रमुखता से प्रयोग किया है। कहीं–कहीं उर्दू और अंग्रेजी शब्दों का रूप भी दिखाई दे जाता है–

(क) कितनी ए **स्कीम** बणाओ।

(ख) संकटा नै चोर, बदलैं देस की **तकदीर** वीर।

श्री सांधीवाल ने अपनी कविता में सर्वत्र लयात्मकता की सृष्टि की है। वे सांगी हैं इसलिए गेयता से उनका निकट का नाता है। छंद प्रयोग के द्वारा उन्होंने इस गुण को प्राप्त किया है। उनकी कविता में शांत रस की प्रधानता है पर वीर रस का भी उन्होंने बार–बार काव्य में समावेश किया है। वास्तव में कवि ने कविता में भाव और कला का सुंदर समन्वय किया है। इस प्रकार सांधीवाल श्रेष्ठ कवि हैं।

कविता-सार

श्री सांघीवाल ने समाज में गृहस्थ आश्रम को अन्य तीनों आश्रमों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण माना है; क्योंकि इससे ही परिवार आगे बढ़ता है और मानव को जिम्मेदारियों का अहसास होता है। उधम सिंह के माध्यम से कवि ने देश–प्रेम की भावना को व्यक्त किया है। व्यक्ति कहीं भी चला जाए पर देश–प्रेम का भाव तो सदा उस के हृदय में रहता है और उसे कर्म तथा निष्ठा की प्रेरणा देता रहता है। मानव को अपने जीवन में ईश्वर के प्रति आस्था की आवश्यकता सदा महसूस होती है। भारतीय नारी अपने परिवार को सबसे अधिक महत्त्व देती है। वह धर्म के नाम पर जान देती है पर अपमानजनक काम कभी नहीं करना चाहती। 'हरियाणा के किसान' में कवि ने किसानों के परिश्रमी–संतोष स्वभाव की प्रशंसा की है तथा माना है कि उन के समान कोई भी महत्त्वपूर्ण नहीं है। वे तो ईश्वर के ही रूप हैं। 'हरियाणा की नार' सुंदर, तगड़ी, लंबी और समझदार होती है जो अपने परिवार पर जान छिड़कती है। परिवार के लिए वह जी–जान से परिश्रम करती है। कवि ने गुरुओं के स्तर को बहुत ऊंचा माना है तथा समाज से अज्ञान मिटाने के लिए शिक्षा के महत्त्व को स्वीकार किया है।

व्याख्या

(1)

इस दुनिया मैं, गृहस्थ-आश्रम, सब तैं बड़ निराला।
कीड़ी तैं ले, हाथी तक यू, सब के पालण आला।
तारे सारे ऋण घरबारी, दिल मैं होवै उजाला।
सेवा करके अतिथि की रै, माणस लेज्या पाला।
आधा नर हो नारी बिन, भरपूर बणाना चाहिए।

शब्दार्थ – कीड़ी=चींटी, तारैं=उद्धार करे।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से अवतरित किया गया है। जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। कवि का मानना है कि मानव जीवन में गृहस्थ आश्रम सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसी से मानव की पूर्णता का परिचय मिलता है।

व्याख्या – कवि कहता है कि इस संसार में गृहस्थ–आश्रम सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है; निराला है–इससे बढ़कर और कोई आश्रम नहीं है। चींटी से लेकर हाथी तक सभी इसी आश्रम के द्वारा अपने–अपने परिवार का पालन–पोषण करते हैं, एक–दूसरे का सहारा बनते हैं। इसी से घर बाहर का सारा ऋण उतरता है और उद्धार होता है। परिवार में रहने वालों की सहायता करने से जो हार्दिक प्रसन्नता होती है उस से हृदय में प्रसन्नता रूपी उजाला हो जाता है। घर में आए मेहमानों की सेवा कर गृहस्थी जीवन में सफलता प्राप्त कर जाता है। नारी के बिना नर तो आधा होता है। गृहस्थ आश्रम को स्वीकार कर उसे पूर्ण बनाना चाहिए। इसी में नर–नारी की पूर्णता छिपी हुई है।

विशेष –

(i) गृहस्थ आश्रम के महत्त्व को प्रतिपादित किया गया है।

(ii) छन्द बद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) प्रसाद गुण तथा अभिधा शब्दशक्ति कथन की सरलता–सरसता के आधार बने हैं।

(v) भाषा सहज, सरल है।

(2)

ऊधमसिंह दस्तूर जगत का, भाई जरूर निभाणा।
बंसबेल चालण की खात्यर, चाहिए ब्याह करवाणा।।
कामदेव सै बड़ा बली यू, मुश्किल बस मैं आणा।
गलती करकै माणस नै फिर, पडया करै पछताना।
ब्याह टेल्यां मैं 'भारतभूषण' कवि का गाणा चाहिए।

शब्दार्थ – दस्तूर=नियम, वंसबेल=वंश परम्परा, खात्यर=के कारण, माणस=मनुष्य।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' से ली गई हैं। जिनके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। कवि ने माना है कि जीवन में विवाह होना बहुत आवश्यक है। इससे समाज की व्यवस्था बनी रहती है।

व्याख्या – अरे उधम सिंह, इस संसार का यह नियम है। भाई तुम इस का निर्वाह अवश्य करना। वंश बेल चलाने के लिए विवाह करवाना ही चाहिए। प्रेम और सौंदर्य का देवता कामदेव बहुत बलवान है। उसका हमारे बस में होना बहुत कठिन है। कामदेव के प्रभाव से गलती कर मानव को फिर बाद में पछताना पड़ता है। भारतभूषण कवि कहता

है कि विवाह की रस्मों–रिवाजों में उसके गीतों को गाना चाहिए।

विशेष –

(i) जीवन में विवाह–संस्था का होना अति आवश्यक है, इससे समाज में मर्यादा बनी रहती है।

(ii) छन्द–बद्धता से लयात्मकता को आधार मिला है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) प्रसाद गुण विद्यमान है।

(v) वर्णनात्मकता का गुण विद्यमान है। कवि के कथन से सरलता है।

रागनी - कहणा ऊधमसिंह का

(1)

सुण बात मेरी धर ध्यान,
भाई मैं ना शादी करवाऊँ।। टेक।।
पंछी सूं आजाद मैं, पिंजरे म्हैं रुकूं नहीं।
गुलामी की बेड़ी काटूं, उमरकैद मैं ठुकूं नहीं।
सूरज ज्यूं प्रकाश करूं, बादलां म्हैं ल्हुकूं नहीं।
टूटना मंजूर कती, गोरयां आग्गै झुकूं नहीं।
हुई भारत-मात बिरान,
बता मैं, क्यूकर मौड़ धराऊँ। सुण बात.....।

शब्दार्थ – सूं=हूँ, ल्युकूँ=छिपना नहीं है, गोरयां=अंग्रेजों, मौड़ धराऊँ=सेहरा बांधू।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से लिया गया है। जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति दिलाने वाले सेनानियों में प्रमुख ऊधम सिंह ने विवाह न कराने की बात कही है।

व्याख्या – ऊधम सिंह कहता है कि हे भाई, मेरी बात ध्यान से सुन। मैं शादी नहीं कराऊँगा। मैं तो आजाद पक्षी हूँ, इसलिए विवाह रूपी पिंजरे में मैं नहीं रूक सकूँगा। मैं देश की गुलामी की बेड़ियाँ काटूँगा। मैं विवाह रूपी उम्र कैद में ठुकना नहीं चाहता। मैं तो सूर्य की तरह जगमगाऊँगा, आजादी का प्रकाश करूँगा। मैं विवाहरूपी बादलों के पीछे नहीं छिपना चाहूँगा। मुझे टूटना और कट मरना तो स्वीकार है पर मैं अंग्रेजों के आगे नहीं झुकूँगा। भारत–माता वीरान हो रही है। तुम्हीं बताओ मैं इस अवस्था में अपने सिर पर सेहरा क्यों बंधवाऊ। तू मेरी बात सुन।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह ने विवाह कराने से साफ मना कर स्वतंत्रता में कूदना चाहा है।

(ii) गेयता का गुण विद्यमान है।

(iii) छंदबद्धता से सुन्दर विकसित लयात्मकता है।

(iv) ओजगुण और वीररस प्रधान है।

(v) प्रश्न अलंकार ने नाटकीयता की सृष्टि की है।

(vi) भाषा सहज, सरल है।

(2)

अंग्रेजां के वारंटा नै, समझ टेवा दिल बहलाऊँ।

हथकड़ियाँ नै समझ कांगणा, भाई अपणे सजाऊँ
जेल जिसकी डांडलवासा, इस बनड़ा बनना चाहूँ।
जिनै देखै सकल जहान,
बहू मैं, आजादी की ब्याहूँ।। सुण बात.....।

शब्दार्थ – टेवा=जन्म कुण्डली, इस=ऐसा, बनड़ा=दूल्हा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से ली गई हैं। जिनमें कवि ने अपना जीवन देश की सेवा में लगाने की बात कही है। इस रागनी के रचयिता श्री भारतभूषण सांधीवाल हैं।

व्याख्या – ऊधम सिंह कहता है कि अंग्रेज सरकार ने मेरे विरुद्ध जो वारंट जारी किया हुआ है, उसे जन्म कुण्डली समझ कर मैं अपन दिल बहलाऊँगा। हे भाई, हथकड़ियों को कंगन समझ कर उन्हें मैं अपने हाथों में पहनूँगा और उन्हें सजाऊँगा। अंग्रजों की जेल जिस की डांडलवासा (बारात घर) होगी। मैं तो ऐसा दूल्हा बनना चाहूँगा, जिसे सारा संसार देखे। मैं तो स्वतंत्रता रूपी पत्नी बहू प्राप्त करूँगा। मैं आजादी से विवाह करूँगा। तुम मेरी बात सुनो।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह ने विवाह न कर स्वयं को भारत माता के प्रति समर्पित करने का भाव प्रकट किया है।

(ii) छंदबद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दों का प्रभावी प्रयोग है। 'वारंट' अंग्रेजी शब्द है।

(iv) ओजगुण और वीर रस विद्यमान है।

(v) रूपक का प्रयोग है।

(vi) भाषा सहज, सरल है।

(3)

कदे जेल अर कदे रेल, ना मेरा एक ठिकाणा होगा।
रुखे सूखे टुकड़े खाणा, धरती म्हैं सो जाणा होगा।
जुल्मी दगाबाज सैं गोरे, उनतैं सबक सिखाणा होगा।
पड़ी जरूरत तै फांसी के, तख्ते पै चढ़ ज्याणा होगा।
हाँ, या मांगै सै बलिदान,
आजादी, अपणी बलि चढ़ाऊँ। सुण बात.....।

शब्दार्थ – कदे=कभी, जुल्मी=अत्याचारी, दगाबाज=धोखा देने वाले, सबक=पाठ।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से ली गई हैं। जिसके रचयिता श्री भारतभूषण सांधीवाल हैं। ऊधम सिंह ने अपने जीवन का उद्देश्य प्रकट करते हुए कहा है–

व्याख्या – मैं कभी तो अंग्रेज सरकार की जेल में होऊँगा और कभी रेलगाड़ी में बैठकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर आता जाता रहूँगा। मेरा कोई ठिकाना नहीं होगा। मैं किसी एक जगह रुक कर कहीं नहीं रहूँगा। मैं रूखी–सूखी रोटी खाऊँगा और धरती पर सोऊँगा।ये गारे अंग्रेज अत्याचारी हैं, धोखेबाज हैं। उन्हें तो पाठ पढ़ाना ही होगा। यदि आवश्यकता हुई तो मुझे फाँसी के तख्त पर चढ़ जाना होगा। स्वतंत्रता बलिदान माँगती है। मैं इस पर अपनी बलि चढ़ा दूँगा। तुम मेरे बात सुनो।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह ने अपने देश–प्रेम के भाव को वाणी प्रदान की है। वह देश की स्वंत्रता के लिए फाँसी के फंदे पर झूल जाना चाहता है।

(ii) ओजगुण और वीर रस ने कवि के भावों को ओजस्वी रूप प्रदान किया है।

(iii) तद्भव और देशज शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) छंद लयात्मकता का आधार बना है।

(v) हरियाणवी के क्रिया रूप प्रयोग किए गए हैं।

(vi) भाषा सहज, सरल है।

(4)

भारत माता के वीरां नै, सीख्या नहीं डरणा रै !
जुल्म अत्याचार का विरोध डट कै करणा रै !
गुलामी की बीमारी तैं, तो अच्छा से मरणा रै !
'भारतभूषण' पेट दूषण, भवसागर तै तरणा रै !
मुरद्यां मैं फूकै ज्यान,
कविता 'सांधीवाल की गाऊँ। सुण बात.....।

शब्दार्थ – दूषण=बुराई, मुरद्या=मृत शरीर, तरणा=मोक्ष।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से ली गई हैं। जिसके रचयिता श्री भारतभूषण सांधीवाल हैं। ऊधम सिंह ने अपना जीवन देश की स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए अर्पित करने की बात कही है।

व्याख्या – कवि कहता है कि भारत माता के वीरों ने कभी भी डरना नहीं सीखा। विदेशियों के द्वारा किए गए जुल्म और अत्याचार का विरोध तो डट कर करना है। गुलामी का जीवन जीना तो पाप है। यह एक बीमारी है। इससे मरना अच्छा है। भारतभूषण कवि कहता है कि गुलामी रूपी बुराई को समाप्त कर दुनिया रूपी सागर से पार हो जाना है। कविता में इतना बल होता है कि वह तो मुर्दों में भी प्राण फूँक देती है। मैं सांधीवाल की कविता गा रहा हूँ। तुम मेरी बात सुनो।

विशेष –

(i) कवि ने देश की मान–मर्यादा की रक्षा के लिए मर मिटने की बात कही है।

(ii) वीर रस ने कर परिपाक है।

(iii) ओज गुण प्रधान है।

(iv) छंदबद्धता से गेयता की सृष्टि हुई है।

(v) रूपक अलंकार का प्रयोग है।

(vi) भाषा सहज, सरल है।

रागनी - खत ऊधमसिंह का

(1)

अमरीका तैं चिट्ठी लिखता, दरद भरा पैगाम मिरा।
वीर भगतसिंह हाथ जोड़ भई, परेमसहित परणाम मिरा।।
लकड़ी का कर्‌या काम शुरु इत, ठेकेदार संग आकै नै।
कारखाने मैं हिस्सेदारी, कर ली मनैं कमाकै नै।
धन-दौलत का के ऊठै भई, चिंता छोड्‌डै खाकै नै।

सेवा करणा चाहूँ माँ की, तन मन धन सब लाकै नै।
दिन अर रात रहै बेचैनी, सूक्या देह का चाम मिरा।।
वीर भगतसिंह हाथ जोड़.....।

शब्दार्थ – तैं=से, पैगाम=संदेश, लाकै=लाकर, सूक्या=सूख गया, कमजोर हो गया, चाम=चर्म।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से लिया गया ह। जिसमें ऊधम सिंह के द्वारा लिखे पत्र का उल्लेख है।

व्याख्या – ऊधम सिह ने अपने पत्र में लिखा है कि मैं अमरीका से पत्र लिख रहा हूँ। मेरा संदेश दर्द भरा हुआ है। वीर भगत सिंह मैं हाथ जोड़कर प्रेमपूर्वक तुम्हें प्रणाम करता हूँ। मैंने यहाँ आकर ठेकेदार के साथ लकड़ी का कार्य आरंभ किया है। धन कमाने के लिए मैंने कारखाने में हिस्सेदारी में काम किया है। धन–दौलत प्राप्त कर व्यक्ति उच्चता प्राप्त करता है, बड़ा बनता है। चिंता तो खाकर ही छोड़ती है। जो व्यक्ति चिंता में डूबा रहता है वह नहीं बचता।मैं भारत माँ की सेवा तन, मन, धन यहाँ से लाकर करना चाहता हूँ। मुझे रात–दिन बेचैनी रहती है। मेरे शरीर की चमड़ी सूख गई है। मैं वीर भगतसिंह को हाथ जोड़ कर प्रणाम करता हूँ।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह के पत्र के माध्यम से उसी देशभक्ति की भावना को प्रस्तुत किया गया है।

(ii) अभिधात्मकता का प्रयोग है।

(iii) छंदबद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iv) वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया गया है।

(v) भाषा सहज, सरल है।

(2)

इन गोरयां के जुल्मां का मिरे, दिल के ऊपर घा सै रै !
जलियांवाला कांड मनै खुद, आँख्याँ तै देख्या सै रै !
गुलामी की जिंदगानी तैं, तो मरणा आच्छा सै रै !
लाठी-गोली खावैं वीर भई, जेलां के म्हैं जां सै रै !
मैं भी दिऊँ आहुति यज्ञ मैं, बणग्या सै प्रोग्राम मिरा।।
वीर भगतसिंह हाथ जोड़.....।

शब्दार्थ – मिरे=मेरे, घा=घाव, चोट।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से लिया गया ह। जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांधीवाल हैं। ऊधम सिंह ने अमेरिका से लिखे अपने पत्र में अंग्रेजों के प्रति विरोध ा और अपने दिल के भाव व्यक्त किए हैं।

व्याख्या – ऊधम सिह ने अपने पत्र में लिखा है कि इन गोरे अंग्रेजों के द्वारा किए गए अत्याचारें का मेरे हृदय पर घाव–सा हो गया है। मैंने अपनी आँखों से जलियांवाला बाग का कांड देखा था। गुलामी भरे जीवन से तो मर जाना अच्छा है। भारतवासी अंग्रेजों की लाठी–गोली खा कर वीरों की तरह उनकी जेलों में बंद हो रहे हैं। मेरा भी कार्यक्रम बन गया है कि मैं भी स्वतंत्रता की आजादी में अपनी आहुति दूंगा। वीर भगत सिंह को हाथ जोड़ कर मेरा प्रणाम।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह ने अपने भावों की अभिव्यक्ति की है।

(ii) छंदबद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) ओज गुण विद्यमान है।

(iv) वीर रस है।

(v) तद्भव और देशज शब्दों की अधिकता है।

(3)

जिस मैं नहीं स्वामी हो वा, बिरथा होवै जवानी रै !
खून रंगा म्हैं वीरां का सै, नहीं भर्‌या सै पानी रै !
देखी जा ना हालत मां की, क्रांति होगी ल्याणी रै !
आज़ादी की दैवी भाई, मांगै सै कुर्बानी रै !
जिंदगी आणी जाणी रै यू अमर रहैगा काम मिरा।।
वीर भगतसिंह हाथ जोड़.....।

शब्दार्थ – रवानी=गति, प्रवाह, विरथा=व्यर्थ।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से लिया गया है। जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। ऊधम सिंह ने अपने पत्र में ओजस्वी भावों को व्यक्त किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि जिस व्यक्ति में गतिशीलता नहीं उसकी जवानी तो व्यर्थ है। मेरे देश की मिट्टी में वीरों का रक्त सना हुआ है। इसमें पानी नहीं भरा हुआ है। मैंने भारत माँ की अवस्था को समझा है, भली–भाँति जाना है। अब तो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए क्रांति लानी ही होगी। अरे भाई, स्वतंत्रता की देवी बलिदान मांग रही है। यह जीवन तो आना–जाना है। मेरे द्वारा देश की आजादी के लिए किया गया काम अमर रहेगा–सदा सभी के द्वारा याद किया जाएगा। वीर भगत सिंह को हाथ जोड़कर मेरा प्रणाम।

विशेष –

(i) ऊधम सिंह के वीरता भरे भावों को वाणी प्रदान की गई है।

(ii) छंदबद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) वीर रस का परिपाक है।

(iv) ओज गुण की सृष्टि की गई है।

(v) तद्भव शब्दावली का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) भाषा सरल–सहज है।

(4)

अखबारां मैं पढ़-पढ़ मेरै, होरी गात उचाट्टी सै।
कद तांही बरदास्त करां जड़, जार्‌ही म्हारी काट्टी सै।
नरमली तैं ना काम चलै भई, ठा राखी उधमाट्टी सै।
साच कहै सैं भैंस उसी की, रै जिसकी लाठी सै।
'भारतभूषण' मेटूं दूषण, ऊधमसिंह सै नाम मिरा।।
वीर भगतसिंह हाथ जोड़.....।

शब्दार्थ – कद तांही=कब तक, बरदास्त=सहन, ढा=उठा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से लिया गया है। जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। ऊधम सिंह ने अमेरीका में रहते हुए समाचार–पत्रों से भारत में अंग्रेजों

की नीतियों को जान कर स्वयं को भारत माता के प्रति अर्पित करने की योजना बना ली थी।

व्याख्या – कवि कहता है कि ऊधम सिंह अपने पत्र में लिखते हैं कि अखबारें पढ़–पढ़ कर मेरा तो मन उचाट हो गया है। कब तक उन मूर्खों को सहन करें। हमारे द्वारा किए परिश्रम का फल तो उन्हें प्राप्त हो रहा है। अब नर्मी से काम नहीं चलेगा, भाई। ऊधम सिंह ने तो भारत माता की रक्षा के लिए शपथ लेने हेतु मिट्टी उठा रखी है। सच तो यही है कि जिसकी लाठी उसकी ही भैंस होती है। भारत भूषण कवि कहता है कि ऊधम सिंह ने कहा कि मेरा नाम ऊधम सिंह है और मैं सारी बुराई को मिटा दूंगा। वीर भगत सिंह को हाथ जोड़ कर मेरा प्रणाम।

विशेष –

(i). देश की रक्षा के लिए स्वयं को अर्पित करने का भाव प्रकट किया गया है।

(ii) ओज गुण का प्रयोग है।

(iii) वीर रस का परिपाक है।

(iv) तद्भव शब्दावली की अधिकता है।

(v) भाषा सरल–सहज है।

(5)

घोर सै अंधेरा प्रभु, दीखता प्रकाश ना – २।
तेरे विना ईब कोए, रही और आश ना – २।।
भार धरण कमा तौरण आज्या, चक्र सुदर्शन धारण आज्या।
दुष्ट-दल संहारण आज्या, धार रूप विकराल तू।

शब्दार्थ – ईब=अब, कोए=कोई।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से ली गई हैं जिनके रचयिता श्री भारत भूषण सांधीवाल हैं। कवि ने देश की अंग्रेजी राज्य से स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिए प्रार्थना की है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हे प्रभु, चारों ओर निराशा ओर पीड़ा का घनघोर अंधेरा छाया हुआ है। कहीं भी आशा रूपी प्रकाश नहीं दिखाई दे रहा। अब आप के बिना कोई आशा नहीं है। प्रभु भार को धारण करने और हमारा उद्धार करने के लिए आप आ जाओ। हे सुदर्शन चक्र को धारण करने वाले प्रभु, आप हमारी रक्षा के लिए आ जाओ। भाव है कि जब मानव को कहीं और सहारा नहीं मिलता तब ईश्वर के नाम का सहारा ही मिलता है और वही हमारे दुःखों को दूर करता है।

विशेष –

(i) आस्था–विश्वास भरे स्वर में मार्मिकता भरी हुई है।

(ii) प्रतीकात्मका विद्यमान है।

(iii) गेयता का स्वर प्रधान है। तुकांत छंद विद्यमान है।

(iv) स्वर में हताशा और निराशा का भाव स्पष्ट रूप से विद्यमान है।

(v) तत्सम और तद्भव शब्दावली का समन्वित रूप प्रकट किया गया है।

(6)

पतिदेव की सेवा मैं, दिनरात रहैं सैं।
टोटे मैं भी दुख नै बण एक गात सहैं सैं।
दिवैं धर्म पै ज्यान, करैं न काम हारी का।
सब तै ऊंचा दर्जा सै भारत की नारी का।

शब्दार्थ – टोटे=घाटे, कमी, दिवैं=देती है, ज्यान=जान, हारी=अपमान।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित रागनी से ली गई हैं, जिनके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। कवि ने भारतीय नारी की प्रशंसा करते हुए उसकी आंतरिक शक्ति का परिचय दिया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि भारतीय नारी दिन–रात अपने पति की सेवा में लगी रहती है। अभाव और घाटे की स्थिति में वह पति के दुःख को एक साथ मिल शरीर पर झेलती है। धर्म पर अपनी जान देती है और काम करते समय कभी भी अपमानजनक काम नहीं करती। कर्मठतापूर्वक कार्य करती रहती है। इस संसार में भारत की नारी का स्थान सबसे ऊँचा है, वह महान् है।

विशेष –

(i) भारतीय नारी का गुणगान किया है, जो अपने गुणों के कारण सर्वोच्च है।

(ii) तद्भव शब्दावली की अधिकता से प्रयोग किया गया है।

(iii) छंदबद्धता ने लय की सृष्टि की है।

(iv) शांत रस का परिपाक है।

(v) प्रसाद गुण का प्रयोग है।

(vi) भाषा सरल–सहज है।

हरियाणा का किसान

शिव के समान भोले-भाले सैं महान बड़े,
करते कल्याण भारत माता दुलारे सैं।
बण रेत के मांह रेत, ललकै कमावैं खेत,
चाहवैं हेत भरे धन, धान के भंडारे सै।
संकटां नैं चीर, बदलैं देस की तकरीर वीर,
धीर, संतोषी, संत दुनिया तैं न्यारे सैं।
मंदिर के समान उन की लागैं सुध छान मनैं
दीखते किसान जणु गोपाल किसन प्यारे सैं।

शब्दार्थ – चीर=काट, तकदीर=किस्तम, भाग्य, जणु=मानो।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से अवतरित किया गया है, जिसके रचयिता श्री भारत भूषण सांघीवाल हैं। कवि ने हरियाणा के किसान का प्रशंसा भरा वर्णन किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हरियाणा के किसान भगवान् शिव के समान भोले–भाले और सीधे–सादे हैं। वे बड़े महान् हैं। वे भारत माता के सपूत हैं और उसके कल्याण के लिए कठोर परिश्रम करते हैं। परिश्रम करते समय वे रेत में रेत की तरह बन जाते हैं और जी–जान से खेत में काम करते हैं। उनकी काम करने की ललक अनूठी है। वे भारत माता के धान–धान्य से भंडार भर देना चाहते हैं। वे सभी प्रकार के संकटों को काट कर, नष्ट कर किसी वीर की तरह देश के भाग्य को बदल देना चाहते हैं। वे धीर हैं, संतोषी हैं और सारे संसार से भिन्न संत हैं। वे तो मंदिर के समान पवित्र हैं। जिन की सुध मन में लगी रहती है। कवि कहता है कि किसान तो ऐसे दिखाई देते हैं मानों प्यारे से गोपाल कृष्ण जी हों।

विशेष –

(i) हरियाणा के किसानों के स्वभाव और परिश्रम की प्रशंसा की गई है।

(ii) शांत रस का परिपाक है।

(iii) प्रसाद गुण सम्पन्न भाषा है।

(iv) तद्भव शब्दावली प्रभावी है।

(v) उत्प्रेक्षा और अनुप्रास का सहज प्रयोग किया गया है।

हरियाणा की नार

चांदा सा मुंह गोल, लांबी तगड़ी सुडोल बोल,
मिसरी सी रही घोल, सार जाणैं गाणे की।
राखै सब का आदरमान, पति नैं समझैं भगवान,
ऊंचे सैं विचार-ज्ञान, सीधे सादे बाणे की।
देखै नहीं गात करैं ललकैं खुभात भई,
दिन अर रात जगन राखतीं कमाणे की।
सिर पर आठड़, एक हाथ रही पाकड़ बाछड़,
गोदी म्हैं टाबर, इसी नार हरियाणे की।

शब्दार्थ – टाबर=परिवार।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित श्री भारत भूषण सांधीवाल कृत कविता 'हरियाणा की नार' से ली गई हैं जिनमें हरियाणवी महिला की प्रशंसा की गई है।

व्याख्या – कवि कहता है कि हरियाणा की नार का चाँद–सा सुंदर गोल चेहरा और लंबा–तगड़ा सुडौल शरीर है। जब वह बोलती है तो ऐसा लगता है कि मिस्री–सी घोल कर मीठे स्वर में कुछ कह रही हो। उसके स्वर में संगीत की मिठास प्रतीत होती है। वह सभी के मान–सम्मान को बना कर रखती है, पति को भगवान के समान मानती है। सीधे–सादे वेशभूषा वाली उस महिला के विचार और ज्ञान उच्च है। वह परिश्रमी है। वह अपने शरीर की परवाह न करते हुए दिन–रात धन कमाने की मन में इच्छा रखती है और इसके लिए प्रयत्न करती है। सिर पर गट्ठर और एक हाथ में बछड़ा पकड़ कर हर समय परिश्रम में लगी दिखाई देती है। अपने पूरे परिवार को अति निकट रख उसकी देखभाल में दिन–रात लगी रहती है। हरियाणा की नार ऐसी है।

विशेष –

(i) हरियाणवी महिला का सुंदर चित्रण किया है।

(ii) चित्रात्मकता का समावेश है।

(iii) प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति का सहज प्रयोग सराहनीय है।

(iv) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(v) उपमा, अनुप्रास और स्वरमैत्री का प्रयोग किया है।

ऊँचा दर्जा गुरुवां का

(1)

इस दुनियाँ मैं, सबतै ऊंचा, हो सै दरजा गुरुवां का।
कई जन्म तक नहीं उतरता, भाइयों करजा गुरुवां का।।
ब्रह्मा बणा कै करै देश का सही-सही निर्माण गुरु।
विष्णु बणा दे, अन-धन ऊंचै हौदे करता स्यान गुरु।

हर बण कै अज्ञान हरै-न्यूं शिव शंकर सा महान् गुरु।
मुक्ति का दे खोल रास्ता, न्यू सच्चा भगवान गुरु।
न्यूवैं आदर कर्‌या करै थी, पहल्याँ परजा गुरवाँ का।
राजा सीस झुकाया करते चरण फिरज्या गुरुवां का।।
धोम्य ऋषि के आश्रम में एक, आरुणि नाम सुण्या होगा।
गुरु-आज्ञा तैं गया खेत मैं, हाल तमाम सुण्या होगा।

शब्दार्थ – दरजा=स्तर, तमाम=सारा।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से अवतरित किया गया है, जिसके कवि भारत भूषण सांधीवाल ने समाज में गुरुओं का महत्त्व और उनकी श्रेष्ठता प्रतिपादित की है।

व्याख्या – कवि कहता है कि इस संसार में गुरुजनों का स्तर और स्थान सबसे ऊंचा है। गुरु जो ज्ञान प्रदान करते हैं उसका उधार तो भाइयो, कई जन्मों तक नहीं उतरता। गुरु ब्रह्मा का स्वरूप पाकर देश का ठीक–ठीक निर्माण करते हैं। गुरु ही विष्णु रूप में अनाज, धन और समाज में ऊंचे स्थान तथा पद प्रदान करते हैं, वही बुद्धिमता प्रदान करते हैं। गुरु ही भगवान् शिव बनकर मानवता के अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करते हैं। वास्तव में ही गुरु शिव–शंकर की तरह महान् होता है। गुरु ही ज्ञान प्रदान कर मुक्ति का रास्ता खोल देता है। इस प्रकार गुरु ही सच्चा भगवान् है। इसी प्रकार पुराने समय में प्रजा अपने गुरुओं का सम्मान किया करती थी। राजा–महाराजा भी गुरुओं के चरणों में अपना सिर झुकाया करते थे, उनके प्रति मान–आदर का भाव व्यक्त किया करते थे। आप ने धौम्य ऋषि के आश्रम में रहने वाले आरुणि का नाम सुना होगा। यह सारा हाल भी सुना होगा कि गुरु के आदेश से वह खेत में गया था।

विशेष –

(i) गुरुओं के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए सर्वोच्च पद प्रदान किया गया है।

(ii) छंदबद्धता से लयात्मकता की सृष्टि हुई है।

(iii) शांत रस का परिपाक है।

(iv) प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति से कथन को सरलता–सरसता प्रदान की गई है।

(v) तद्‌भव शब्दावली का प्रभावी रूप है।

(vi) भाषा सरल–सहज है।

(2)

बन्धे आग्गै पड़ग्या, अड़ग्या, सुकड़ग्या गीत सुण्या होगा।
गुरु नै ठाया, हिरदै लाया, हुया गुणधाम सुण्या होगा।
इसे इसे जै चेल्ले होज्या पेट्टा भरज्या गुरुवाँ का।
द्रें असीस फिर शिष्य पार रै, परलै तरज्या गुरुवाँ का।।
जिस समाज राज मैं होता नहीं गुरु का मान दिखे।
सुख-शांति न लाभ मिलै भई, होती हरदम हान दिखे।।
कितनी ए स्कीम बणाओ, होता ना उत्थान दिखे।
गुरु चाह्वै तैं सुरंग बणै यू, अपणा हिंदुस्तान दिखे।
सींचो जड़ नै, फल हर नर नैं, मिल अमर जा गुरुवां का।।
मन की शुद्धि, निर्मल बुद्धि, नै वर करज्या गुरुवाँ का।।

शब्दार्थ – बंधे=छोटा बांध, ठाया=उठाया।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ से अवतरित किया गया है, जिसके कवि भारत भूषण सांघीवाल हैं। कवि ने धौम्य ऋषि के शिष्य आरुणी का प्रसंग ग्रहण कर गुरु–शिष्य परंपरा की श्रेष्ठता को प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – कवि कहता है कि खेत में आरुणी एक छोटे बांध के सामने पानी रोकने के लिए लेट गया, वहीं अड़ गया और ठंड के कारण शरीर सिकुड़–सा गया–यह तो आपने सुना होगा। उसे धौम्य गुरु ने उठाया, हृदय से लगाया और आरुणी गुणों का भंडार बन गया, ज्ञानवान हो गया–यह तो सुना होगा। यदि ऐसे–ऐसे शिष्य हो जाएं तो गुरुओं की पूरी संतुष्टि हो जाए, वे अपार सुख की प्राप्ति करें गुरु शिष्य को आशीर्वाद देते हैं और शिष्य का उद्धार हो जाता है और गुरुओं का आशीष प्राप्त कर वे तर जाते हैं। जिस समाज और राज्य में गुरुओं का मान–सम्मान होता दिखाई नहीं देता वहां सुख, शांति और नाम नहीं होता। वहां तो सदा हानि होती ही दिखाई देती है। चाहे कितनी भी योजनाएं बना लो, तरीके अपना लो, तरीके अपना लो पर वहाँ सदा हानि ही होती है। यदि गुरु चाहे तो हमारा भारत देश भी स्वर्ग बनता दिखाई दे सकता है। जड़ को सींचने से हर इंसान को फल की प्राप्ति हो। गुरुओं का आशीर्वाद तो मन की शुद्धि और निर्मल बुद्धि का वरदान बन जाता है।

विशेष –

(i) गुरु की महत्ता को प्रतिपादित किया गया है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन को सरलता–सरसता मिली है।

(iii) प्रसाद गुण सम्पन्नता है।

(iv) शांत रस का परिपाक है।

(v) मिथक के प्रयोग से रोचकता की सृष्टि की है।

(vi) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(3)

'भारतभूषण सांघीवाल' गुरु सेवा मैं मन लाओ रै।
ज्ञान रूपी बैठ नाव मैं, भवसागर तर ज्याओ रै।
पता नहीं एक पल का, करलो, जो कुछ करणा चाहो रै।
के फैदा जब चिड़ियाँ चुगज्यां, खेत फेर पछताओ रै।
जिंदगानी हो सफल ध्यान जो, दिल तैं धरज्यां गुरुवां का।।
हटैं रुकावट सारी जो ले, अससी नर जा गुरवां का।।
ना कर सकता तरकी जग सं माणस बिना पढ़ाई।
भले-बुरे नफे-टोटे का नहीं ज्ञान हो भाई।
भारत-भूषण खुद पढ़, छोरे-छोरी पढ़ लुगाई।
फिर जाकै नः होगी जग मे तेरी कला सवाई।
नया जमाना, बढ आगः, तू कर ले मन की चाही।।

शब्दार्थ – फैदा=लाभ, तरकी=तरक्की, सवाई=अधिक प्रभावी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित पाठ 'ऊंचा दरजा गुरुवां का से अवतरित किया गया है, जिसमें कवि ने गुरुओं की श्रेष्ठता का उल्लेख किया है।

व्याख्या – कवि भारत भूषण सांघीवाल कहते हैं कि हे साथियो, गुरुओं की सेवा में अपना मन लगाओ। ज्ञान रूपी नौका में बैठ कर इस संसार रूपी सागर को पार कर जाओ। समय की परिवर्तशीलता का कुछ पता नहीं है। जो कुछ हो उसे पूरा कर लो। जब चिड़िया खेत चुग जाएंगी तब पछताने का कोई लाभ नहीं होगा–जब तक तुम्हारे हाथ

में अवसर है तब तक उसका लाभ प्राप्त कर लो। यदि दिल में गुरुओं का ध्यान धारण कर लो और उनके प्रति सम्मान रखो, तो जीवन सफल हो जाए। जो व्यक्ति गुरुओं का आशीर्वाद लेता है उसके राह की सारी रुकावटें हट जाती हैं। शिक्षा–प्राप्ति के बिना मानव इस संसार में तरक्की नहीं कर सकता। अशिक्षित व्यक्ति को अच्छे–बुरे, लाभ–हानि का ज्ञान नहीं हो पाता। भारत भूषण कवि कहता है कि हे भाई ! तू स्वयं पढ़, बेटे–बेटी और पत्नी को भी पढ़ा। तब जाकर इस संसार से तेरी प्रतिष्ठा सवा गुणा होगी, तेरी मान–मर्यादा बढ़ जाएगी। नया युग आ गया है, तू आगे बढ़ और अपने मन की चाही बात को पूरा कर ले।

विशेष –

(i) गुरु महत्ता के प्रतिपादन के साथ–साथ शिक्षा प्राप्ति का महत्त्व है।

(ii) अभिधात्मकता से कथन को सरलता–सरसता और स्पष्टता प्राप्त हुई है।

(iii) रूपक, अनुप्रास, स्वरमैत्री और लोकोक्ति का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

(iv) प्रसाद गुण सम्पन्नता है।

(v) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया गया है।

(vi) उपदेशात्मकता का स्वर प्रधान है।

कर जमींदार पढ़ाई

विद्या की सै कमी तिरे मैं, कुछ पढ़ लिख ले भाई।
जमींदार बिन विद्या तेरी होरी लोग हंसाई।।
कसट कमाई करै भलाई, दिन अर रात कमावै।
जाड़ा, गरमी, बरसा ओले, नहीं ध्यान मैं ल्यावै।
मैले बिस्तर, नाज तलक ना पेट भराई थ्यावै।
तिरे कमाए धन तैं सारी दुनिया मौज उड़ावै।
मूढ़ गवांर बतावै न्यूवैं, तंनै कुछ अन्यायी।।

शब्दार्थ – तिरे में=तुम में, होरी=हो रही है, नाज=अनाज, तंनै=तुम्हें।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता 'कर जमींदार पढ़ाई' से ली गई हैं। कवि भारत भूषण सांधीवाल ने हरियाणा के जमींदारों से आग्रह किया है कि वे भी पढ़–लिख कर ज्ञान प्राप्त करें।

व्याख्या – कवि कहता है कि जमींदार भाई, तुम में पढाई की कमी है, ज्ञान का अभाव है इसलिए तू कुछ पढ़–लिख ले। विद्या के बिना सारे लोग तेरे अज्ञान पर हंस रहे हैं, तेरा मज़ाक उड़ा रहे हैं। तू कष्टपूर्वक परिश्रम करता है, दूसरों की भलाई करता है और दिन–रात कमाई करता है–परिश्रमपूर्वक जीवन चलाता है। परिश्रम की धुन में तू सर्दी–गर्मी–वर्षा–ओले तक का ध्यान नहीं करता। तेरे वस्त्र मैले–कुचैले हैं, अनाज तक पेट में भरने की तुझे फुरसत नहीं। तेरे द्वारा कमाये गये धन से सारी दुनिया मौज करती है, मजे उड़ाती है पर फिर भी तुझे मूर्ख–गंवार बताती है, अन्यायी कहती है। तू शिक्षा प्राप्त कर ताकि तू परिश्रम करने के अतिरिक्त कुछ और भी जान सके।

विशेष –

(i) शिक्षा प्राप्ति की अनिवार्यता पर बल दिया गया है।

(ii) उपदेशात्मकता का स्वर प्रधान है।

(iii) अभिधा का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) प्रसाद गुण सम्पन्नता है।

(v) तद्भव शब्दों का प्रभावी प्रयोग है।

(vi) भाषा सरल–सहज है।

पढ़ण आले अर अणपढ़ का संवाद

चाल पढ़ण इब चालोगे भई सारु पढ़ाई हो सै।
नहीं पढ़ण मैं चालूं रै बेकार पढ़ाई हो सै।।
बिना पढ़े इस दुनियां मैं सै पशु जिस जिंदगानी।
धक्के खाणे पड़ै कदे जब हो चिट्ठी बचवानी।
ना हिसाब-किताब का बेरा देखें जा मुंह कांही।
डिंघ-डिंघ पै भई लुटते देखे अनपढ़ मूढ़ अज्ञानी।
धोखे का दे जाल काट हथियार पढ़ाई हो सै।।

शब्दार्थ – जिस=जैसी, बचवानी=पढ़वानी, बेरा=पता, डिंघ डिंघ=कदम कदम'।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता 'पढ़ण आले और अणपढ़ का संवाद' से लिया गया है, जिसकी रचना श्री भारतभूषण सांघीवाल ने की है। शिक्षा के महत्त्व को स्वीकारते हुए कवि ने माना है कि बिना शिक्षा प्राप्त व्यक्ति का जीवन कभी सार्थक नहीं बन सकता। अशिक्षित व्यक्ति तो दु खी ही रहता है।

व्याख्या – पढ़ने वाला कोई किसी अनपढ़ को संबोधित करते हुए कहता है कि पाठशाला में पढ़ाई करायी जा रही है, अब तुम पढ़ने के लिए चलो। वह उत्तर देता है कि मैं पढ़ने नहीं चलूँगा। पढ़ाई तो बेकार होती है। पढ़ा–लिखा कहता है कि इस संसार में बिना पढ़े–लिखे व्यक्ति का जीवन पशु–सा होता है। जब कभी कहीं से आई चिटठी पढवानी हो तो जगह–जगह धक्के खाने पड़ते हैं। न तो हिसाब–किताब का पता लगता है और दूसरों की ओर सहायता प्राप्ति के लिए देखना पड़ता है। जीवन की राह में कदम–कदम पर मूर्ख, अनपढ़ों और अज्ञानियों को लुटते हुए देखा है। यदि तुम पढ़ाई कर लोगे, शिक्षा प्राप्त कर लोगे तो तुम धोखे के जाल को शिक्षा के हथियार से काट सकोगे। भाव है कि शिक्षा प्राप्ति के बाद तुम्हें कोई ठग नहीं सकेगा।

विशेष –

(i) शिक्षा के महत्त्व को प्रतिपादित किया है। मूर्ख व्यक्ति की परेशानियां तब दूर हो सकती हैं जब वह ज्ञान क प्रकाश को प्राप्त कर लेता है।

(ii) संवादात्मकता ने नाटकीयता की सृष्टि की है।

(iii) अभिधात्मकता से कथन को सरलता–सरसता मिली है।

(iv) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया है।

(v) पुनरुक्ति प्रकाश और अनुप्रास का स्वाभाविक प्रयोग किया गया है।

घर का एक्का

जिस घर मैं एक्का नहीं, रोज रहे तकरार।
नहीं कदे भी हो सकै, उसका बेड़ा पार।
उसका बेड़ा पार नहीं हो दुःख हो मोटा।
लिछमी माज्जै दूर, कूदता फिरता टोटा।
कहता "सांघीवाल" कल्हा काल का वासा,
रहो प्रेम के साथ, करो ना घर मैं रासा।।

शब्दार्थ – एक्का=एकता, तकरार=बहस, झगड़ा, कदे=कभी, लिछमी=धन की देवी, लक्ष्मी, टोटा=कमी, घाटा, नुकसान,

कल्हा=कलह।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण अवतरण हमारी पाठ्य–पुस्तक 'हरियाणवी लोकधारा' में संकलित कविता 'घर का एक्का' से अवतरित किया गया है। जिसके रचयिता श्री भारतभूषण सांघीवाल हैं। कवि ने घर में एकता के महत्त्व को प्रतिपादित किया है और माना है कि जहाँ एकता नहीं होती वहाँ कलह–क्लेश से कंगाली का प्रवेश हो जाता है।

व्याख्या – कवि कहता है कि जिस घर में एकता नहीं है, प्रतिदिन लड़ाई–झगड़ा होता है उसका कभी भी बेड़ा पार नहीं हो सकता अर्थात् उस परिवार का पतन हो जाता है। उस परिवार का कल्याण नहीं होता और साथ ही भारी दुःखों का सामना करना पड़ता है। घर की धन–दौलत नष्ट हो जाती है, लक्ष्मी देवी अपना वास वहाँ से त्याग देती है। सब प्रकार के नुकसान और घाटे कूदते फिरते हैं, अर्थात् हर कार्य में असफलता मिलती है, निर्धनता घर में प्रवेश कर जाती है। सांघीवाल कवि कहता है कि कलह तो काल के वास के समान है अर्थात् कलह तो मौत का कारण बन जाती है। घर में प्रेमपूर्वक रहो और कभी भी लड़ाई–झगड़ा न करो।

विशेष –

(i) घर में लड़ाई–झगड़ा कभी न करने का परामर्श दिया है ताकि परिवार का मान–यश और धन–दौलत सुरक्षित रह सके।

(ii) तद्भव और देशज शब्दावली का प्रभावी प्रयोग किया है।

(iii) उपदेशात्मकता का स्वर प्रधान है।

(iv) अनुप्रास मानवीकरण और कारण अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग सराहनीय है।

(v) प्रसाद गुण सम्पन्नता है।

(vi) अभिधात्मकता से कथन के सरलता–सरसता विकसित हुई है।

अभ्यासार्थ-प्रश्न

प्रश्न 1 भारत भूषण सांघीवाल के काव्य में लोक भावनाओं और सामाजिक सुधार का स्वर मुखरित हुआ है – इस तथ्य की पुष्टि कीजिए।

उत्तर – पाठ्यक्रम में संकलित चर्चित कवि भारतभूषण सांघीवाल के काव्य में लोक भावनाओं और समाज सुधार का स्वर स्पष्ट रूप से प्रकट हुआ है। साहित्य समाज का दर्पण है और उसमें समाज का मुखरित होना सहज–स्वाभाविक है। वास्तव में समाज ही तो साहित्य का निर्माता है। कवि ने समाज की झांकी को ही अपने काल में चित्रित नहीं किया है, बल्कि उसमें हो सकने वाली संभव सुधारों की ओर भी संकेत किया है। कवि के द्वारा व्यंजित लोक भावनाओं और सामाजिक सुधारों को निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. **गृहस्थाश्रम चित्रण** – मनु ने मानव समाज के लिए अपनी 'मनुस्मृति' में चार आश्रमों की व्यवस्था की है–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। मानव जीवन के पहले पच्चीस वर्ष ब्रह्मचर्य से तो उससे अगले पच्चीस वर्ष गृहस्थ आश्रम से संबंधित हैं। कवि ने गृहस्थ आश्रम को सबसे कठिन माना है। इसके द्वारा व्यक्ति का जीवन संयमित होता है, लेन–देन आता है, सामाजिक संबंध बनते हैं और सब से बढ़ कर समाज का विकास और वृद्धि इसी से होता है। यदि गृहस्थ आश्रम में कोई व्यक्ति प्रवेश नहीं करता तो समाज की चक्की गति ही रुक जाए–

इस दुनिया मैं, गृहस्थ-आश्रम, सब तैं बड़ा निराला।
कीड़ी तैं ले, हाथी तक यू, सब के पालण आला।
तारै सारे ऋण घरबारी, दिल मैं होवै उजाला।
सेवा करके अतिथि की रै, माणस लेज्या पाला।
आधा नर हो नारी बिन, भरपूर बणाना चाहिए।

हर व्यक्ति के जीवन में काम संबंधों का विशेष महत्त्व होता है। गृहस्थ आश्रम उन्हें प्रदान करता है जिस से समाज

में अव्यवस्था नहीं फैलती। यह आश्रम अति आवश्यक है।

2. आस्तिकता – ईश्वर को कभी किसी ने देखा नहीं, पाया नहीं पर फिर भी सभी सबसे अधिक से डर कर, स्वयं को संयमित रखते हैं। आस्तिकता का भाव मानसिक संबल बनाता है, कार्य करने के लिए दिशा दिखाता है और मन में शांति का भाव उत्पन्न करता है। कवि ने इस लोक भावना को अनेक स्थान पर प्रकट किया है और इसके आधार पर जीवन की सुख–शांति प्राप्त करने का प्रयत्न किया है–

घोर सै अंधेरा प्रभु, दीखता प्रकाश ना।
तेरे बिना ईब कोए, रही और आश ना।
भार धारण कमा तारण आज्या, चक्र सुदर्शन धारण आज्या।
दुष्ट-दल संहारण आज्या, धार रूप विकराल तू।

3. गुरु-भक्ति – कवि की मान्यता है कि गुरु भक्ति के द्वारा समाज का कल्याण होता है। गुरु ही शिक्षा देता है, राह दिखाता है और अंधेरे पथ को प्रकाशवान् बनाता है। मनुष्य चाहकर भी गुरु का ऋण नहीं उतार सकता–

इस दुनियाँ मैं, सबतै ऊंचा, हो सै दरजा गुरुवां का।
कई जन्म तक नहीं उतरता, भाइयों करजा गुरुवां का।।

गुरु के समक्ष सभी श्रद्धा से झुकते, स्वयं को छोटा मानते हैं। यदि शिष्य गुरु से ठीक प्रकार शिक्षा ले तो उस का जीवन कल्याणमयी हो जाए। गुरु तो समाज को स्वर्गतुल्य बनाने की योग्यता रखते हैं।

4. शिक्षा का महत्त्व – अशिक्षित व्यक्ति यदि अपने जीवन का विकास ठीक प्रकार से नहीं कर पाता तो समाज के लिए कल्याणकारी उपकरण किस प्रकार बन सकता है। उसे तो चिट्ठी पढ़वाने के लिए दूसरो के पास जाना पड़ता है, हिसाब–किताब के लिए दूसरों का मुँह देखना पड़ता है–

बिना पढ़े इस दुनियां मैं सै पशु जिस जिंदगानी।
धक्के खाणे पड़े कदे जब हो चिट्ठी बचवानी।
ना हिसाब-किताब का बेरा देखें जा मुंह कान्ही।
डिंघ-डिंघ पै भई लुटते देखे अनपढ़ मूढ़ अज्ञानी।
धोखे का दे जाल काट हथियार पढ़ाई हो सैं।।

व्यक्ति के पास कितनी भी संपत्ति क्यों न हो, शिक्षा के बिना वह सुखी नहीं रह सकता। सारी दुनिया उसका मजाक उड़ाती है–

विद्या की सै कमी तिरे मैं, कुछ पढ़ लिख ले भाई।
जमींदार बिन विद्या तेरी होरी लोग हंसाई।।

5. पारिवारिक-चित्रण – कवि का मानना है कि जहाँ कहीं भी कलह–क्लेश होता है, वहाँ हर प्रकार से नुकसान होता है। परिवार टूट जाता हैं, संबंध बिगड़ जाता है, धन नष्ट हो जाता है–

जिस घर मैं एक्का नहीं, रोज रहे तकरार।
नहीं कदे भी हो सकै, उसका बेड़ा पार।
उसका बेड़ा पार नहीं हो दुःख हों मोटा।
लिछमी माज्जै दूर, कूदता फिरता टोटा।

6. देशभक्ति – देश के प्रति भक्ति–भाव हर व्यक्ति के हृदय में निश्चित रूप से होना चाहिए। जो व्यक्ति देश के प्रति वफादार नहीं उसका तो मर ही जाना अच्छा है। देश पर आए किसी भी संकट का सामना करना हर देशवासी का पुनीत कर्त्तव्य है–

भारत माता के वीरां नै, सीख्या नहीं डरणा रै।
जुल्म अत्याचार का विरोध डट कै करणा रै।
गुलामी की बीमारी तें, तो अच्छा से मरणा रै।
भारत-भूषण भेटदषण, भव सागर तै तरणा रै।।

देशभक्त तो देश के लिए मर--मिट जाने में गर्व अनुभव करता है। वह तो फांसी के तख्ते पर खड़े होने के लिए बेताबी से इंतजार करता है।

कवि ने अपनी कविता के माध्यम से समाज सुधार और लोक भावनाओं को मुखरित कर समाज को प्रेरणा देने का कार्य किया है। इस प्रकार सांघीवाल सामाजिक चित्रण के महान कवि हैं।

प्रश्न 2 भारतभूषण सांघीवाल की भाषा पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – हरियाणवी लोक–साहित्य के साथ वर्षों से संबंधित चर्चित कवि श्री भारतभूषण सांघीवाल केवल श्रेष्ठ भावों को प्रकट करने वाले ही नहीं हैं बल्कि उत्कृष्ट भाषा शिल्पी भी हैं। उन्होंने भाव और कला का सुंदर समन्वय किया है। उनकी भाषा में प्रवाह है, रसमयता है और विशेष आकर्षण है जिस कारण पाठक के साथ उनके मन की तारतम्यता हो जाती है। उनकी भाषा संबंधी विशेषताओं को निम्नलिखित आधारों पर स्थापित किया जा सकता है–

1. **भाषा-सरलता** – कवि की भाषा ठेठ हरियाणवी है। वाक्य संरचना में कवि ने हरियाणवी क्रियाओं का प्रयोग करके इसे अलग स्वरूप प्रदान कर दिया है। 'न' के स्थान पर 'ण' और 'ड़' के स्थान पर 'ड' के प्रयोग से उसका रूप स्पष्टतः अलग हो जाता है। जैसे--डरणा रै, करणा रै, मरणा रै, तरणा रै। कवि ने तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुत कम किया है जबकि वह संस्कृत भाषा का विद्वान है। इससे यह तात्पर्य नहीं है कि उनका ऐसे शब्दों से कोई संबंध नहीं। 'गृहस्थ आश्रम', 'ऋण', 'नर', 'नारी', 'भवसागर', 'यज्ञ', क्रांति', 'चक्र सुदर्शन' आदि शब्दों का प्रयोग सराहनीय है पर उन्होंने देशज और तद्भव शब्दों को अधिकता से प्रयुक्त किया है–

(क) वंस बेल चालण की खात्यर, चाहिए ब्याह करवाणा।

(ख) बण रेत के मोह रेल ललके कमावैं खेत।

(ग) बंधे आगे पडग्या, अडग्या सुकडया जात सुण्या होगा।

(घ) जिंदगानी हो सफल ध्यान जो दिल तै धरज्यां गुरुवां का।

(ङ) मूढ़ गवांर बतावै न्यूवै तन्ने कुछ अन्यायी।

कवि ने विदेशी शब्दावली का प्रयोग भी किया। अंग्रेजी, अरबी और फारसी के प्रचलित शब्दों को उन्होंने स्वाभाविक रूप से लिया है–

(क) अंग्रेजां के **वारंटा** नै समझ टेवा दिल बहलाऊँ।

(ख) **जेल** जिसकी डांडलवासा, इस बनड़ा बनना चाहूँ।

(ग) **जुल्मी दगाबाज** सैं गोरे, उन तैं सबक सिखाणा होगा।

(घ) कद तक **बरदास्त** करां जड़, जा रही म्हारी काट्टी सै।

(ङ) कितन ऐ **स्कीम** बणाओ।

2. **प्रतीकात्मकता** – कवि ने लोकभाषा का अभिधात्मक प्रयोग किया है पर फिर भी स्थान–स्थान पर प्रतीकात्मकता और लाक्षणिकता के प्रयोग ने उन्हें गहनता–गंभीरता प्रदान की है जिससे साधारण पाठक को कुछ पल अर्थ ग्रहण के लिए सोचना पड़ता है–

(क) सींचो जड़ नै, फल हर नर नै मिल अमर जो गुरुवां का।

(ख) के फैदा जब चिड़ियां चुग ज्यां, खेत फरे पछताओ रै।

(ग) पंछी सू आजाद मैं, पिंजरे म्हँ रुकू नहीं।

3. छंद-अलंकार विधान – कवि ने लयात्मकता की सृष्टि के लिए छंद प्रयोग किया है। उन्होंने तुकांत छंद की सहायता से संगीतात्मकता उत्पन्न की है पर फिर भी उन छंदों का प्रयोग वर्णों–मात्राओं के गिने हुए व्यवहार पर आश्रित नहीं है। कवि ने प्रमुख रूप से भावव्यंजना पर बल दिया है, शिल्प पर नहीं। उन्होंने अलंकारों को सोच–समझ कर प्रयुक्त नहीं किया है पर फिर कुछ अलंकार भाव प्रवणता के कारण अपने आप ही मिल गए हैं–

(क) **उदाहरण** –सूरज ज्यूं प्रकाशकरूं, बादला म्हैं ल्हुकूं नहीं।

(ख) **अनुप्रास** – जिंदगी आणी जाणी रै, यूं अमर रहेगा काम मिरा।

(ग) **पुनरुक्ति प्रकाश** – अखबारां मैं पढ़–पढ़ मेरै होरी गात उचाट्टी सै।

(घ) **उत्प्रेक्षा** – दीखते किसान जणु गोपाल किसन प्यारे सै।

(ङ) **उपमा** – चांदा–सा मुंह गोल–लांबी तगड़ी सुडौल बोल।

वास्तव में कवि ने भावों के प्रकाशन के लिए सहज–स्वाभाविक रूप से भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें कोई कृत्रिमता नहीं है। उसमें सहजता है, सरसता है, प्रवाहमयता है।

प्रश्न 3 कवि की किसान एवं नारी भावना का परिचय दीजिए।

उत्तर – कवि ने अपने काव्य के द्वारा हरियाणा के किसान का सजीव चित्र खींचा है। भगवान् शिव के समान भोला–भाला है। छल–फरेब से वह कोसों दूर है। परिश्रम से कार्य करते हुए वह अपनी सुध–बुध भी खो बैठता है–

बण रेत के मांह रेत, ललकै कमावैं खेत,
चाहवैं हेत भरे धन, धान के भंडारे सै।

हरियाणा का किसान धैर्यवान है, संतोष से पूर्ण है, संतों के समान है–वह सबसे अनूठा है। वह तो पूजा के योग्य है–

मंदिर के समान उन की लागैं सुध छान मनैं
दीखते किसान जणु गोपाल किसन प्यारे सैं।

हरियाणी नारी बहुत सीधी–सादी है पर सुंदर है। गोरे रंग, लंबे–तगड़े शरीर की स्वामिनी अत्यंत मीठी आवाज में बोलती है। जब वह बोलती है तो ऐसा लगता है जैसे उसकी आवाज में मिश्री घुली हुई हो–

चांदा सा मुंह गोल, लांबी तगड़ी सुडोल बोल,
मिसरी सी रही घोल, सार जाणैं गाणे की।

वह सभी का आदरमान करती है। पति को तो वह भगवान् तुल्य मानती है। वह रात–दिन परिश्रम करती है। घर का काम निपटा कर वह घर के सुख के लिए पति का हाथ बंटाती है। सिर पर बड़ा सा गट्ठर रख कर वह पूरे परिवार की चिंता में परिश्रम करती है–

सिर पर आठड़, एक हाथ रसी पाकड़ बाछड़,
गोदी म्हैं टाबर, इसी नार हरियाणे की।

निश्चय ही भारतीय समाज के प्रधान वर्ग किसान और विनम्रता की मूर्ति नारी का मनभावन चित्रण कवि के काव्य में मिलता है।

13. कंवल हरियाणवी

जीवन परिचय

वीर प्रसूतिनी हरियाणा की धरती पर अस्त्र–शस्त्र चलाने वाले वीरों के साथ लेखनी के सिपाही भी सामने आते रहे हैं। इनमें कंवल हरियाणवी का नाम विशेष श्रद्धा से लिया जा रहा है। कंवल हरियाणवी का जन्म हरियाणा के कैथल जिले के पाई गांव में 9 मई, सन् 1927 ई० को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री केवल राम व्यास था। कंवल हरियाणवी अध्ययन के पश्चात् भारतीय सेना में भर्ती हो गए थे तथा वहां से सूबेदार के पद से सेवानिवृत्त हुए। उन्होंने जीवन–संघर्ष से जूझते हुए हरियाणवी जन–जीवन का गहराई से अध्ययन किया था, जिसका प्रभाव उनके साहित्य पर स्पष्ट दिखाई देता है। इन्हें हरियाणवी कहानी लेखकों में प्रथम कहानीकार के रूप में जाना जाता है।

रचनाएँ – कंवल हरियाणवी ने हरियाणवी गद्य और पद्य दोनों को अपनी रचनाधर्मिता से समृद्ध किया है। 'लीक पुरानी मोड़ नवा', 'संग्रह हरियाणवी कहानियों का' इनकी हरियाणवी भाषा में रचित कहानियाँ तथा 'लौट आओ कर्म सिंह' इनकी हिंदी कहानियों का संग्रह है। 'तलाश अपने साये की', 'तारे नवे–नवे से', धड़कनें एहसास की', 'नैया और पतवार' – इनके हरियाणवी काव्य संग्रह हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ-

कंवल हरियाणवी के काव्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **भक्ति-भावना** – कंवल हरियाणवी के काव्य में वैष्णव भावनाओं के अनुरूप भक्ति का स्वरूप प्राप्त होता है। कवि किसी विशेष सम्प्रदाय से प्रभावित नहीं है तथा न ही किसी संप्रदाय विशेष का प्रचार–प्रसार ही करता है, अपितु अपने साथ–साथ समाज के कल्याण के लिए भी प्रभु से प्रार्थना करता है। कवि ने आडंबर पूर्ण भक्ति के स्थान पर एकांतिक भक्ति भावना को महत्त्व देते हुए मन–मंदिर में उस परमात्मा के नाम स्मरण पर अधिक बल दिया है। इसलिए कवि कहता है–

'मोह माया सा न कोई दुश्मन मन मंदिर सा जप ना।'

2. **प्रेम-भावना** -- कंवल हरियाणवी के काव्य में लौकिक प्रेम का चित्रण यथार्थ के धरातल पर प्राप्त होता है। वह एक अनन्य प्रेमी के समान अपनी प्रियतमा के लिए कुछ भी करने के लिए सदा तत्पर रहता है। उसकी एक मुस्कान के लिए वह अपने लहू से उसकी मांग सजाना चाहता है–

'तिरी मांग मैं मुस्करावण की खात्तर,
सजाऊंगा अपने लहू की मैं रोली।'

जब कवि अपनी प्रियतमा को पहली बार देखता है तो उसके सौंदर्य के प्रभाव से वह स्वयं को इतना मोहित अनुभव करता है कि चित्र–लिखित सा हो जाता है–

'तन्नै देख कै न खड्या रह गया मैं
जणों कोई फोटू जड्या गया मैं।।'

3. **नीति कथन** – कंवल हरियाणवी के काव्य में विभिन्न आदर्शों की स्थापना के लिए अनेक प्रकार के नीति कथन प्राप्त होते हैं। इन कथनों के माध्यम से कवि एक आदर्श समाज की स्थापना का स्वप्न देखता है। कवि मानव जीवन में सत्याचरण पर बल देता है और कहता है–

'झूठ बराबर पाप नहीं और सच बराबर तप ना।'

उसका विश्वास है कि मनुष्य का साथ उसका 'सत' देता है, इसके अतिरिक्त उसका साथ देने वाला कोई नहीं होता

है। झूठ को तो उसने नरक–कुंड माना है–

'एक सचाई चलै साथ मैं बाकी कुछ ना अपना,
झूठ नरक का कुंड बतावैं कहगे बड़े बडेरे।'

4. आध्यात्मिकता – कंवल हरियाणवी के काव्य का स्वर आध्यात्मिकता से युक्त है। जीवन की क्षण–भंगुरता पर प्रकाश डालते हुए कवि मन की चंचलता को वश में करने के लिए कहता है–

'च्यार दिन की जिंदगी मैं दुख पावै गा,
मान जा मन बेईमान पछत्यावै गा।'

इसलिए वे मनुष्य को अज्ञान रूपी अंधकार से निकलकर ज्ञान रूपी गंगा में गोते लगाने के लिए कहता है जिससे मनुष्य संसार रूपी सागर से पार उतर सकता है अन्यथा इसी भवसागर में गोते लगाता रह जाएगा–

'ज्ञान रूपणी गंगा जी मैं बहणा ठीक सै,
भव सागर मैं आखिर कब तक गोते खावैगा।'

5. मानवतावाद – कंवल हरियाणवी का काव्य मानव कल्याण का संदेश देता है। वह मनुष्य को नेकी–बदी के संघर्ष से दूर रहने तथा किसी से भी नफरत न करने की सलाह देता है। उसका मानना है कि मानवता के कल्याण के लिए यदि दुःख भी सहन करने पड़ें तो कोई बात नहीं है। मनुष्य को प्रत्येक स्थिति में प्रसन्न रहना चाहिए तथा जिस स्थिति में प्रभु रखते हैं, उसी में रहना चाहिए–

'जिस बिध राखै राम उसी बिध रहणा ठीक सै
मानवता के हित मैं दुखड़ा सहणा ठीक सै।'

6. भाषा-शैली – कंवल हरियाणवी ने अपने काव्य में व्यावहारिक हरियाणवी भाषा का प्रयोग किया है जिसमें बोलचाल के उर्दू, अंग्रेजी, खड़ी बोली के तद्भव, तत्सम शब्दों के साथ मुहावरों और लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग भी मिलता है। कवि का हरियाणवी लोक धुनों पर आधारित होने के कारण गेयता के गुणों से युक्त है। इनकी शैली उद्बोधनात्मक है।

कंवल हरियाणवी वास्तव में ही हरियाणा की मिट्टी के कवि हैं तथा इनका काव्य सामाजिक सुधारवादी दृष्टिकोण को लेकर आदर्श समाज की स्थापना का प्रयास करता है। हरियाणवी साहित्य में इनका विशेष स्थान है।

कविता-सार

कंवल हरियाणवी द्वारा रचित चार रचनाएं 'हरियाणवी लोकधारा' पुस्तक में संकलित हैं। इनकी पहली कविता 'सत्य की महिमा' है। इस कविता में कवि ने सत्य का महत्त्व रेखांकित करते हुए झूठ को पाप तथा सत्य को तपस्या करने के समान बताया है। विभीषण, युधिष्ठिर, द्रोणाचार्य, गांधी जी को सत्य मार्ग पर चलने से ही प्रतिष्ठा प्राप्त हुई थी। झूठ नरक का कुंड है तथा झूठे का कोई साथी नहीं होता। झूठा सदा कष्ट उठाता है और उसकी इज्जत कोई नहीं करता है।

दूसरी कविता 'चेतावनी' में कवि ने मनुष्य को मन की चंचलता को वश में करने, धैर्यपूर्वक जीवन व्यतीत करने, मानव के कल्याण के लिए दुःखों को सहने, पराजित होने पर संतप्त न होने तथा विजय प्राप्त करने पर अहंकार न करने के लिए समझाया है। वह घर आए अतिथि का उचित सत्कार करने तथा सोच–समझ कर बोलने के लिए कहता है।

तीसरी कविता 'गौ रक्षा' में कवि गऊ पालने के लाभ बताते हुए गौ–रक्षा का संदेश देता है। गऊ की सेवा करने से दरिद्रता, बीमारियां दूर हो जाती हैं तथा सुख समृद्धि प्राप्त होती है।

चौथी कविता के रूप में कवि की तीन 'गज़लें' प्रस्तुत की गई हैं। पहली गज़ल में कवि ने समय का महत्त्व प्रतिपादित किया है कि समय बलवान है। यह सब को नचा रहा है। वर्तमान युग में मनुष्य के रहन–सहन, खान–पान सब कुछ का मशीनीकरण हो गया है। मनुष्य निरंतर सांसारिक माया–जाल में ग्रस्त होता जा रहा है। वह इन बंधनों से मुक्त नहीं हो पा रहा है।

दूसरी गज़ल में कवि ने अपनी प्रेम भावनाओं को व्यक्त किया है। उसे अपनी प्रियतमा का प्रेम विटामिन की गोली के समान शक्ति प्रदान करता है। वह उसकी मुस्कान देखने के लिए उसकी मांग अपने लहू की रोली से भरने के लिए तत्पर है। वह उसे देखते ही उसके सौंदर्य की आभा से चित्रलिखित–सा रह जाता है।

तीसरी गज़ल में कवि ने समाज सुधार का स्वर मुखरित करते हुए नेकी–बदी के संघर्ष से दूर रहने तथा संसार में नफरत न फैला कर प्रेम भाव से मिलजुल कर रहने का संदेश दिया है। सभी रचनाएँ विशेष भावात्मक हैं।

व्याख्या

सत्य की महिमा

झूठ बराबर पाप नहीं और सच बराबर तप ना
मोह माया सा ना कोई दुश्मन मन मन्दिर सा जप ना
सच के कारण भग्त विभिक्षण ऊंची पदवी पा गे
सच के कारण धर्म युधिष्ठिर कितना नाम कमा गे
सच के कारण द्रौण गुरु खुद अपने प्राण गंवा गे
सच के कारण गांधी जी भी लाखों कष्ट उठा गे
एक सचाई चले साथ मैं बाकी कुछ ना अपना
झूठ नरक का कुंड बतावैं कहगे बड़े बडेरे
झूटे का ना साथी कोई दुश्मन लोग भतेरे
जीवन भर तो कष्ट उठावैं फेर नर मैं डेरे
इज्जत ना कोई करता उस की पिटता शाम सवेरे
पैर जलैं गे जान बूझ कै अग्नि पै को टप ना

शब्दार्थ –विभिक्षण=विभीषण, बडे बडेरे=बड़े–बड़ों ने।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित कविता 'सत्य की महिमा' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने सत्य की महिमा का वर्णन करते हुए सदा सत्याचरण की प्रेरणा दी है।

व्याख्या – इन पंक्तियों में कवि सत्याचरण के संबंध मं अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखता है कि झूठ बोलने के समान अन्य कोई पाप नहीं है तथा सत्य बोलने के समान अन्य कोई तप नहीं है। इस संसार में मोह, माया से ग्रस्त होने के समान कोई शत्रु नहीं है और मन रूपी मंदिर में प्रभु कानाम स्मरण करते रहने के समान कोई अन्य जप नहीं है। सत्याचरण के कारण ही भक्त विभीषण को उच्च पद की प्राप्ति हुई थी। सत्यवादी होने के कारण ही धर्मराज युधिष्ठिर को संसार में बहुत अधिक प्रसिद्ध मिली है। सत्य के मार्ग पर चलते हुए गुरु द्रौणाचार्य ने स्वयं अपने प्राणों का बलिदान कर दिया था। सत्य का अनुसरण करते हुए गांधी जी ने लाखों कष्ट उठाये। मनुष्य के साथ केवल उसका सत्य ही चलता है, इस सत्य के अतिरिक्त संसार में शेष मनुष्य का और कुछ भी नहीं है।

बड़े–बड़ों ने यह बताया है कि झूठ बोलना नरक–कुंड में गिरने के समान है। झूठे व्यक्ति का कोई साथी नहीं होता, परंतु उसके शत्रु बहुत होते हैं। झूठा व्यक्ति आजीवन कष्ट उठाता है और मृत्यु के बाद उसे नरक भोगना पड़ता है। झूठे व्यक्ति की कोई इज्जत नहीं करता तथा उसकी सदा बेइज्जती और पिटाई होती रहती है। यदि कोई व्यक्ति जान बूझ कर आग पर चलता है तो उसके पांव जल जाते हैं। उसी प्रकार झूठे व्यक्ति को भी सदा अपमान ही सहन करना पड़ता है।

विशेष –

(i) 'सच्चे का बोल–बाला, झूठे का मुंह काला' उक्ति के अनुसार झूठ की निंदा करते हुए सत्याचरण करने पर बल दिया है।

(ii) भाषा तत्सम, तद्भव देशज, उर्दू शब्दों से युक्त व्यावहारिक हरियाणवी है।

(iii) अनुप्रास, रूपक, उपमा अलंकार है।

(iv) मुहावरों और लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग किया गया है।

(v) गेयता का गुण विद्यमान है।

(vi) प्रसाद गुण संपन्न शैली है।

चेतावनी

च्यार दिन की जिंदगी मैं दुख पावै गा,
मान जा मन बेईमान पछत्यावै गा।
जिस बिध राखै राम उसी बिध रहणा ठीक सै
मानवता के हित मैं दुखड़ा सहणा ठीक सै।
जो कुछ कहणा सोच समझ कै कहणा ठीक सै।
ज्ञान रूपणी गंगा जी मैं बहणा ठीक सै
भव सागर मैं आखिर कब तक गोते खावै गा
बाजी हार गया तो ब्याकुल जान ना करिये
जीत गया तो भूल कै अभिमान ना करिये
घर आये का हरगिज भी अपमान ना करिये
'कंवल कवि' अनजान बात अनजान ना करिये
तीर हाथ से छूट गया ना वापिस आवैगा।

शब्दार्थ –बिध=तरीका, प्रकार, भवसागर=दुनिया रूपी सागर।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित कविता 'चेतावनी' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने जीवन में उपयोगी नीतियों को अपनाने का संदेश दिया है अन्यथा मानव–जीवन व्यर्थ ही नष्ट हो जाएगा।

व्याख्या – इन पंक्तियों में कवि मनुष्य को चेतावनी देते हुए लिखता है कि हे मनुष्य, यदि तुम मानव देह धारण करके सांसारिक विषय–विकारों में ग्रसत रहे तो अपनी इस चार दिनों अर्थात् क्षण–भंगुर जीवन में अनेक दुःख सहन करने पड़ेंगे। इसलिए तुम अपने चंचल मन को अपने वश में कर लो अन्यथा तुम्हें पछताना पड़ेगा। मनुष्य को अपना जीवन उसी प्रकार से व्यतीत करना चाहिए जिस प्रकार प्रभु राम उसे रखना चाहते हैं। मानवता के कलण के लिए मनुष्य को कुछ दुःख भी यदि सहन करने पड़ें तो उसे उन दुःखों को सहन करना चाहिए। मनुष्य जब भी कुछ कहने लगे तो उसे सोच–विचार कर ही बोलना चाहिए। उसे सदा ज्ञान प्राप्ति का प्रयत्न करते हुए ज्ञान रूपी गंगा में स्नान करना चाहिए अर्थात् ज्ञान प्राप्ति के सदा प्रयास करते रहना चाहिए। इस संसार रूपी सागर में माया–मोह के बंधनों से ग्रस्त होकर कब तक गोते खाते रहोगे ? इस संसार रूपी सागर से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। यदि तुम जीवन–संघर्ष में कभी पराजित हो जाते हो तो व्याकुल नहीं होना चाहिए तथा विजय मिलने पर भूले से भी अपनी जीत पर अभिमान नहीं करना चाहिए। घर आए हुए अतिथि का कभी भी अपमान नहीं करना चाहिए क्योंकि जैसे हाथ से छूटा हुआ तीर लौट कर नहीं आता है उसी प्रकार से मुंह से बिना सोचे समझे निकली हुई बात भी मुड़ कर वापस नहीं आती है।

विशेष –

(i) मनुष्य को मर्यादित जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी है।

(ii) भाषा तत्सम, तद्भव देशज, उर्दू शब्दों से युक्त व्यावहारिक हरियाणवी है।

(iii) मुहावरों का प्रभावी प्रयोग है।

(iv) रूपक, अनुप्रास अलंकार है।

(v) लाक्षणिकता, प्रतीकात्मकता एवं संगीतात्मकता है।

(vi) प्रसाद गुण संपन्न शैली है।

गौ रक्षा

सब प्रतिज्ञा कर कै रख ल्यो एक गऊ घर मैं
किरसी दलिंद्दर रोग भाग जा दर्द तलक ना हो सिर मैं
सुबह शाम कर पूजा इस की लेकर प्रेम पुष्प कर मैं
"कंवल कवि" हो शुद्ध आत्मा लग जा ध्यान आप हर मैं
धर्म वृक्ष की जड़ काट्टै तू लिये पाप की आरी क्यूं।

शब्दार्थ –दलिद्दर=गरीबी, तलक=तक, हर=शिव।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित कविता 'गौ रक्षा' से ली गई हैं। इस कविता में कवि ने गऊ के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए गौ–रक्षा पर बल दिया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में कवि गऊ के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखता है कि सब लोग प्रतिज्ञा करो और एक गऊ अपने घर में रख लो। गऊ रखने से घर की गरीबी, बीमारी आदि दूर हो जाते हैं तथा सिर में दर्द तक नहीं होता है। घर में रखी हुई गऊ की सुबह–शाम अपने हाथों से प्रेम रूपी पुष्पों को लेकर पूजा करो। कंवल कवि कहता है कि इस प्रकार गऊ की पूजा करने से आत्मा शुद्ध हो जाती है तथा अपने आप शिव में ध्यान लग जाता है। धर्म रूपी वृक्ष की जड़ें काटने के लिए तुम अपने हाथों में पाप रूपी आरी क्यों लेकर फिर रहे हो ? गौ सेवा करने से तुम्हारे सभी पाप कट जायेंगे।

विशेष –

(i) गौ सेवा करने से सुख समृद्धि प्राप्त होने का संदेश दिया गया है।

(ii) भाषा तत्सम, तद्भव देशज, उर्दू शब्दों से युक्त व्यावहारिक हरियाणवी है।

(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग है।

(iv) अनुप्रास तथा रूपक अलंकार है।

(v) लाक्षणिकता एवं गेयता विद्यमान है।

(vi) उद्बोधनात्मक शैली है।

ग़ज़ल

(1)

बख्त लुट्टै सै सभै नै बख्त नै लुट्टै सै कौण
गम के बाज्जै सै हथौड़े आप तैं टुं सै कोण।
जिंदगी की कैद तै तो छूट कै जावैं सैं लोग
जुल्फ का कैद्दी बणै तो कैद तै छुट्टै सै कौण।
रहणे-रहणे खाणे-पीणे सब मसिन्ना पै चढ़े
काठ की इब ओखली मैं बाजरा घुट्टै सै कोण।
साच नै कुछ आंच सै अक झूठ कै पां सैं बता
ग्राहक सैं अमृत के सरे जैहर नै घुट्टै सै कोण।

छूटणा चाहवै सै फंस कै कितना भोला सै "कंवल"
माया के इस जाल मैं फंस के भला छुट्टे से कोण।

शब्दार्थ – बख्त=समय, सभे=सभी, जुलफ का कैदी=नारी–सौंदर्य और प्रेम का कैदी, मसिन्ना= मशीनों, काठ=लकड़ी।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित गज़ल 'बख्त लुट्टै सै' से ली गई हैं। इस गज़ल में कवि ने मनुष्य को सांसारिक माया–मोह के बंधनों से मुक्त होने की प्रेरणा दी है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियों में कवि मनुष्य को चेतावनी देते हुए लिखता है कि समय बहुत बलवान होता है। समय सब को लूटता है परंतु समय को कोई नहीं लूट सकता अर्थात् बीता समय कभी हाथ नहीं आता है। गमों के बोझ से दब कर मनुष्य हथौड़ा पड़ने के समान टूट जाता है। जीवन के बंधनों से तो मनुष्य मृत्यु के बाद छुटकारा पा जाता है, किंतु जो व्यक्ति नारी की जुल्फों का कैदी बन जाता है वह उन जुल्फों की कैद से कभी मुक्त नहीं जो पाता। आजकल समस्त रहन–सहन, खान–पान मशीनी हो गया है। अब कोई भी लकड़ी की बनी हुई ओखली में बाजरा नहीं कूटता है। सत्य पर आँच नहीं आती है परंतु अब सत्य पर आंच आ रही है तथा ठूठ अपने पांव पसार रहा है। ग्राहकों को अमृत के बदले ज़हर के घूंट पिलाए जा रहे हैं। कंवल कवि कहता है कि भोला मनुष्य सांसारिक माया–मोह के बंधनों में फंसकर अब इनसे निकलने के लिए छटपटा रहा है। वह यह नहीं जानता कि माया–मोह के इस जाल में फंस कर भला कौन छुटकारा पा सकता है ?

विशेष –

(i) सांसारिक माया–मोह में ग्रस्त व्यक्ति कभी भी इसके बंधन से मुक्त नहीं हो पाता, इसलिए इनसे बचना चाहिए।

(ii) भाषा उर्दू, हिन्दी के तत्सम, तद्भव तथा देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी है।

(iii) मुहावरों का सटीक प्रयोग है।

(iv) अनुप्रास पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार हैं।

(v) लाक्षणिकता एवं गेयता के आकर्षक रूप हैं।

(2)

मैं खेल्लूंगा इब मस्त हो कै न होली, तिरि प्यार से इक बिटामिन की गोली।
तिरि मांग मैं मुस्करावण की खात्तर, सजाऊंगा अपने लहू की मैं रोली।
मन्नै आजमायें सै दोनों बराबर, बुढ़ाप्पा सै महंगा जवान्नी सै भोली।
रित्या न कदे दानियां का खजाना, भरी न कदे भी भिखारी की झोली।
सुण्या सै या पत्थर नै भी मोम कर दे, नज़र प्यार की ऊं तो दिक्खै सै भोली।
मिरै आग्गै-आग्गै भटकते सै साये, मिरै पाच्छै-पाच्छै लुटेरयां की टोली।
'कंवल' तेर माथे की त्यौड़ी बतावैं, उठें झाल दिन मैं तिरै ओली-सोली।
तन्नै देख कै न खड्या रह गया मैं, जणों कोई फोटू जड्या गया मैं।
'कंवल' चर लिया बैड़ नै खेत सारा, ड्रेना-सा बण कै अड़या रह गया मैं।

शब्दार्थ – इब=अब, तिरी=तेरी, खात्तर=के लिए, रित्या=खाली होना, त्यौड़ी=सिलवट, ड्रेना=पक्षियों को डराने के लिए खेत में बनाया जाने वाला भूसे का कनकौआ, बैड़=बाड़।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित गज़ल 'मैं खेल्लूंगा इब मस्त हो कै न होली' से ली गई हैं। इस गज़ल में कवि ने प्रेम को वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियों में कवि अपनी प्रियतमा को संबोधित करते हुए लिखता है कि मैं अब मस्त होकर होली नहीं खेल सकूंगा क्योंकि अब तुम्हारा प्यार मेरे लिए एक विटामिन की गोली जैसा हो गया है। तेरी एक मुस्कान के लिए मैं तुम्हारी मांग को अपने लहू की रोली से सजा दूंगा। मुझे दोनों की दशाओं में तुम आज़मा सकती हो, मैं

बुढ़ापे से महंगा और जवानी से भोला हूँ। दान देने वालों का दान देने का खज़ाना कभी खाली नहीं होता और मांग–मांग कर भी भिखारी की झोली कभी नहीं भरती है। मैंने सुना था कि प्यार की नज़र पत्थर को भी पिघला कर मोम कर देती है परंतु वह तो मुझे बहुत मासूम दिखाई देती है। मेरे आगे भटकते हुए साए दिखाई दे रहे हैं तथा मेरे पीछे लुटेरों की टोलियां हैं। कंवल कवि कहता है कि तुम्हारे माथे पर पड़ने वाले बल यह बता रहे हैं कि तुम्हारे मन में भी हलचल हो रही है। तुम्हें देखते ही मैं ऐसे खड़ा रह गया जैसे कोई फोटो जड़ दी गई हो। मैंने बहार के स्वप्न देखे थे परंतु मैं गमों की गुफा में कैद होकर रह गया। कंवल कवि लिखता है कि जब बाड़ ने ही सारा खेत चर लिया तो मैं खेत की रक्षा घटने के लिए भूसे के बने हुए कनकौआ–सा उसे देखता रह गया।

विशेष –

(i) प्रियतमा के वियोग में अपनी दशा का वर्णन किया गया है।

(ii) तत्सम, तद्भव तथा देशज तथा विदेशी शब्दों से युक्त प्रवाहमयी हरियाणवी भाषा है।

(iii) मुहावरों और लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग है।

(iv) अनुप्रास उपमा, पदमैत्री अलंकार हैं।

(v) चित्रात्मकता, लाक्षणिकता तथा गेयता विद्यमान हैं।

(vi) प्रसाद–माधुर्य गुण संपन्न शैली है।

(3)

धरती पै जिब तै उपज्या इस जिंदगी का रौला।
तब तै छिड्या सै नेकी-बदी का रौला।
विस्फोट तै भर्या सै इस जिंदगी का आंगण
तौड़ैगा इब गगन नै इस आदमी का रौला।
नफरत के बीज बो कै सुख चाहवै कोई पागल
छिड़ ग्या इस सदी मैं अगली सदी का रौला।
अनुभव की सारी खुशबू इस मैं 'कंवल' मिलैगी
मेरी गज़ल नहीं सै दिल की लगी का रौला।

शब्दार्थ – जिस=जब, रौला=शोर, नेकी=अच्छाई, पक्षी=बुराई, नेकी=भलाई, अच्छाई, बदी=बुराई।

प्रसंग – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित गज़ल 'धरती पै जिब तै उपज्या इस ज़िन्दगी का रौला' से ली गई हैं। इस गज़ल में कवि ने स्पष्ट किया है कि जब से संसार में मनुष्य का जन्म हूआ है, यहां अच्छाई और बुराई में सदा संघर्ष होता रहता है।

व्याख्या – प्रस्तुत भावपूर्ण पंक्तियों में कवि मानव जीवन में संघर्ष की सत्यता को उजागर करते हुए लिखता है कि जब से इस संसार में मनुष्य का जीवन प्रारंभ हुआ है, तब से यहाँ अच्छाई और बुराई में संघर्ष चल रहा है। मानव जीवन रूपी आंगन, जीवन–संघर्ष रूपी विस्फोटों से भरा हुआ है। मनुष्य अब आकाश को भी तोड़ने का प्रयत्न कर रहा है। इस संसार में परस्पर ईर्ष्या–द्वेष आदि के बीज बोकर कोई पागल मनुष्य ही सुख की कामना कर सकता है क्योंकि नफरत का फल सदा दुःखद ही होता है। इसलिए इस संसार में इसी शताब्दी में अगली शताब्दी में होने वाले संघर्षों की तैयारी हो गई हैं। कवि कंवल कहता है कि मैं जो कुछ भी कह रहा हूँ यह मात्र कल्पना नहीं अपितु मेरे व्यक्गित अनुभवों का निचोड़ है। यह मात्र मेरी गज़ल नहीं है बल्कि इसमें मेरे दिल की लगी हुई ठेसों का यथार्थ वर्णन किया गया है।

विशेष –

(i) मनुष्य को ईर्ष्या–द्वेष आदि त्याग कर मानवतावाद का प्रचार करने की प्रेरणा देते हुए सबके सुखी होने की कामना

की है।

(ii) उर्दू, तत्सम, तद्भव शब्दों से युक्त भावपूर्ण हरियाणवी भाषा है।

(iii) अनुप्रास तथा रूपक अलंकार है।

(iv) 'दिल की लगी' मुहावरे का सटीक प्रयोग किया गया है।

(v) लाक्षणिकता एवं गेयता विद्यमान हैं।

(vi) प्रसाद–माधुर्य गुण संपन्न शैली है।

अभ्यासार्थ-प्रश्न

प्रश्न 1 कंवल हरियाणवी के काव्य में सांस्कृतिक चेतना पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – चर्चित कवि कंवल हरियाणवी हरियाणा की मिट्टी से जुड़े हुए साहित्यकार हैं। इनकी रचनाओं में भारतीय संस्कृति का गुणगान, अतीत–गौरव की उद्घोषणा, पुरुषार्थ और कर्म करने की प्रेरणा, सांस्कृतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना आदि का स्वर सुनाई देता है। इन्होंने भारतीय सांस्कृतिक एवं नैतिक मूल्यों को गहन अभिव्यक्ति प्रदान कर भारतीय समाज को अपना स्वर्णिम अतीत स्मरण करा हीन भावना से मुक्त किया तथा अपनी संस्कृति पर गर्व करने की प्रेरणा दी है। इनकी सांस्कृतिक चेतना में संकीर्णता, रुढ़िवादिता, हठधर्मिता, मदांधता और अमानवता के लिए कोई स्थान नहीं है। आज विश्व में मानवतावादी विचारधारा के लिए जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयत्न हो रहे हैं, उनकी झलक केवल हरियाणवी के काव्य में स्पष्ट दिखाई देती है।

भारतीय संस्कृति में सत्यवादिता का बहुत महत्त्व है। इस तथ्य को स्वीकार करते हुए कंवल हरियाणवी ने वर्तमान युग में भी सत्य के मार्ग पर चलने का संदेश देते हुए कहा है–'झूठ बराबर पाप नहीं और सच बराबर तप ना' क्योंकि 'एक सचाई चलै साथ मैं बाकी कुछ न अपना।' कवि ने विभीषण, युधिष्ठिर, द्रोणाचार्य, गांधी जी आदि की ख्याति का कारण उनके सत्य मार्ग पर चलने को माना है। कवि ने झूठे को नरक के कुंड में गिरने वाला बताया है जिसकी समाज में कोई भी इज्जत नहीं करता है।

भारतीय जन–जीवन में मन की चंचलता, संयम, समन्वय आदि को मानव जीवन के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना गया है। मानव देह को क्षणभंगुर मान कर सदा सद्कर्म करने के लिए प्रेरित किया गया है। कंवल हरियाणवी ने भी वर्तमान समाज में सांस्कृतिक चेतना जताते हुए मानवता के कल्याण के लिए स्वयं दुःख सहने तथा संयमित जीवन यापन करने का संदेश दिया है–

'च्यार दिन की जिंदगी मैं दुख पावै गा,
मान जा मन बेईमान पछत्यावै गा।
जिस बिध राखै राम उसी बिध रहणा ठीक सै
मानवता के हित मैं दुखड़ा सहणा ठीक सै।'

कवि ने हार–जीत में भी धैर्यपूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए कहा है–

'बाजी हार गया तो ब्याकुल जान ना करिये
जीत गया तो भूल कै अभिमान ना करिये।'

भारतीय संस्कृति में गऊ का बहुत महत्त्व है। आधुनिक युग में गऊ पालने की परंपरा समाप्त होती जा रही है। इससे कंवल हरियाणवी का मन बहुत विचलित हो उठा है और उसने गोर रक्षा का प्रण करते हुए लिखा है–

'सब प्रतिज्ञा कर कै रख ल्यो एक गऊ घर मैं
किरसी दलिंद्दर रोग भाग जा दर्द तलक ना हो सिर मैं
सुबह शाम कर पूजा इस की लेकर प्रेम पुष्प कर मैं
"कंवल कवि" हो शुद्ध आत्मा लग जा ध्यान आप हर मैं'

समय बहुत अमूल्य माना जाता है। जो समय बीत जाता है वह लौट कर नहीं आता है। इसलिए कवि लोगों को व्यर्थ में समय नष्ट करने का संदेश देते हुए कहता है–

'बख्त लुट्टै सै सभै नै बख्त नै लुट्टै सै कौण
गम के बाज्जै सै हथौड़े आप तैं टुं सै कोण।'

कंवल हरियाणवी के सांस्कृतिक आदर्श मर्यादावादी हैं। कवि ने इन्हें युग धर्म के साथ समन्वित करने का सार्थक प्रयास किया है क्योंकि सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए इसी प्रकार की समन्वित जीवन दृष्टि की आवश्यकता होती है। कवि ने, अपने काव्य के माध्यम से, समाज को मर्यादा और शिष्टाचार के पालन के लिए प्रेरित किया है। आधुनिक सभ्यता के अंधानुकरण द्वारा भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का अवमूल्यन कवि को उचित नहीं प्रतीत होता है। वे अपने कवि–कर्म का मुख्य लक्ष्य अपनी सांस्कृतिक धरोहर की रक्षा करना मानते हैं। उन्होंने पाश्चात्य प्रभावों के साथ हुई टक्कर में भारतीय संस्कृकति की अस्मिता को अक्षुण्य रखने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

प्रश्न 2 कंवल हरियाणवी की भाषा-शैली पर विचार कीजिए।

उत्तर – कंवल हरियाणवी ठेठ हरियाणवी की शब्दावली और ध्वनियों में हरियाणवी बोली का रस अपने काव्य में घोलने वाले साहित्यकार हैं। इनकी भाषा इनके काव्य के कथ्यानुरूप, भावपूर्ण और प्रवाहमयी है। इन्हें हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी आदि भाषाओं का पर्याप्त ज्ञान था। इस कारण इनके काव्य में इन भाषाओं के प्रचलित शब्दों का भी सहजता से प्रयोग हुआ है। जैसे–मन, मंदिर, कष्ट, प्राण, प्रतिज्ञा, कुंड, बेईमान, बाजी, हार, जीत, हरगिज़, विटामिन, ड्रेन आदि। इनकी भाषा की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :–

1. **भाषा स्वरूप** – कंवल हरियाणवी की काव्य भाषा का स्वरूप अनगढ़ बोलचाल की हरियाणवी बोली का है, जिसमें कहीं भी कृत्रिमता नहीं है। इनकी भाषा का यह खरापन, अक्खड़पन और सहजता इनकी कविता में एक नया स्वर भर देता है। इनकी भाषा निरंतर विकसित तथा प्रगतिशील बनी रही है। इन्होंने अपने काव्य में प्रसाद, माधुर्य और ओज तीनों गुणों का प्रयोग किया है। इनकी सांस्कृतिक चेतना से युक्त उद्‌बोधनात्मक शैली की रचनाओं में ओज गुण, प्रेमाभिव्यक्ति में माधुर्य तथा भक्ति और नीति से संबंधित रचनाओं में प्रसाद गुण के दर्शन होते हैं। जैसे–

'झूठ बराबर पाप नहीं और सच बराबर तप ना
मोह माया सा ना कोई दुश्मन मन मन्दिर सा जप ना।'

2. **शब्द-शिल्प** – भाषा जितनी सरल, प्रवाहमय, भावपूर्ण तथा अर्थ गांभीर्य से युक्त होती है, उसकी अनुभूतियों की संप्रेषणीयता भी उतनी ही अधिक प्रभावशाली, स्पष्ट और हृदय ग्राह्य होती है। कंवल हरियाणवी की भाषा प्रमुखतया व्यावहारिक हरियाणवी है जिसमें हिंदी के तत्सम, तद्‌भव शब्दों के अतिरिक्त देशज तथा उर्दू, अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग मिलता है। इन्होंने अपने काव्य में कथ्यानुरूप शब्द–योजना की है। इन्होंने शब्दों को अपनी सुविधा के अनुसार भी प्रस्तुत किया है। जैसे–

'कंवल' चर लिया बैड़ नै खेत सारा,
ड्रेना-सा बण कै अड़या रह गया मैं।'
'मिरै आग्गै-आग्गै भटकते सै साये,
मिरै पाच्छै-पाच्छै लुटेरयां की टोली।'

3. **आलंकारिकता** – कंवल हरियाणवी की काव्य भाषा में अलंकारों की स्थिति अत्यंत सहज एवं स्वाभाविक है। उनके काव्य में कथन की सुंदरता संवेदनात्मक अधिक है। उनके विचार सरल एवं बोध गम्य हैं। उनके गीतों में गेयता की प्रधानता है। अलंकारों में मुख्य रूप से अनुप्रास, पुंनरुक्ति प्रकाश, रूपक, उपमा, पदमैत्री आदि का अधिक प्रयोग हुआ है। जैसे–

'ज्ञान रूपणी गंगा जी मैं बहणा ठीक सै' (रूपक)
'भव सागर मैं आखिर कब तक गोते खावै गा' (रूपक)
'रहणे-रहणे खाणे-पीणे सब मसिन्ना पै चढ़े' (अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश)

4. मुहावरा और लोकोक्ति-प्रयोग – कंवल हरियाणवी ने अपनी काव्य भाषा को रोचकता, चमत्कार, अर्थ गाभीर्य, लाक्षणिकता आदि प्रदान करने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों का सटीक प्रयोग किया है। इनके यह प्रयोग अत्यंत सहज, स्वाभाविक तथा कथ्यानुरूप हैं। जैसे–

'सच के कारण धर्म युधिष्ठिर कितना नाम कमा गे'
'जिस बिध राखै राम उसी बिध रहणा'
'तीर हाथ से छूट गया ना वापिस आवैगा'
'धर्म वृक्ष की जड़ काट्टै तू लिये पाप की आरी'
'मेरी गज़ल नहीं सै दिल की लगी का रौला'

5. बिंब और प्रतीक-विधान – सहजता के कवि कंवल हरियाणवी की काव्य भाषा में बिंब और प्रतीकों का भी अत्यंत स्वाभाविक विधान प्राप्त होता है। कवि ने अधिकांश बिंब जीवन, जगत और आस–पास की प्रकृति से लिए हैं। इनके बिंब और प्रतीक विधान से इनकी भाषा में स्पष्टता और सांकेतिकता उत्पन्न हो जाती है जिससे भाषिक सौंदर्य में वृद्धि हो जाती है। जैसे–

'मैं खेल्लूंगा इब मस्त हो कै न होली,
तिरि प्यार से इक बिटामिन की गोली।'
'तन्नै देख कै न खड्या रह गया मैं,
जणों कोई फोटू जड्या गया मैं।'
'कंवल' चर लिया बैड़ नै खेत सारा,
ड्रेना-सा बण कै अड़या रह गया मैं।'

अतः कह सकते हैं कि कंवल हरियाणवी की भाषा सहज, सरल, कथ्यानुरूप, प्रवाहमयी तथा भावपूर्ण है। इसमें कल्पना की समाहार शक्ति, भाषा की समास शक्ति तथा अनुभूति की अद्‌भुत गहराई भी है। भावानुकूल भाषा अभिव्यक्ति के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

प्रश्न 3 कंवल हरियाणवी की गज़लों की संवेदना स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – 'हरियाणवी लोकधारा' पुस्तक में कंवल हरियाणवी द्वारा रचित तीन गज़लें संकलित हैं। इन गज़लों में कवि ने विभिन्न विषयों को प्रतिपादित किया है।

'बख्त लुट्टै सै' गज़ल में कवि ने स्पष्ट किया है कि समय बहुत बलवान होता है। समय सब को लूटता है परंतु समय को कोई नहीं लूट पाता। गमों के बोझ से दबकर मनुष्य टूट जाता है। जिंदगी के बंधनों से मनुष्य मृत्यु के बाद मुक्त हो जाता है परंतु नारी की जुल्फों में कैद व्यक्ति को कभी छुटकारा नहीं मिलता है। कवि आधुनिक युग में रहन–सहन, खान–पान के मशीनीकरण पर भी चिंता व्यक्त करता है और सांसारिक माया–मोह से दूर रहने का संदेश देता है।

'मैं खेल्लूंगा इब मसत हो कै न होली' गज़ल में कवि ने अपनी प्रियतमा के प्रेम को अपने लिए शक्तिवर्धक गोली बताया है। वह उसकी मांग अपने रक्त की रोली से सजाना चाहता है। वह उसे चाहता है, वह भी उसे अवश्य ही चाहती होगी क्योंकि–

'कंवल' तेर माथ्थे की त्यौड़ी बतावैं,
उठें झाल दिन मैं तिरै ओली-सोली।'

'धरती पै जिब तै उपज्या इस जिन्दगी का रौला' गज़ल में कवि ने समाज में व्याप्त नेकी–बदी के संघर्ष पर चिंता व्यक्त की है। कवि धरती को और अधिक विस्फोटक स्थिति से बचाना चाहता है। संसार में फैलती हुई नफरत सर्वत्र दु:खद स्थितियाँ पैदा कर रही हैं। कवि कहता है–

'नफरत के बीज बो कै सुख चाहवै कोई पागल
छिड़ ग्य इस सदी मैं अगली सदी का रौला।'

कवि इस ईर्ष्या–द्वेष, अनाचार, दुराचार भरे संसार में प्रेम की सुगंध फैलाना चाहता है जिससे मानवता का कल्याण हो सके। मानवतावादी कवि समाज में सौमनस्य स्थापित कर जन–मन को प्रसन्न देखना चाहता है।

1. कंवल हरियाणवी

आसा की किरण

जीवन परिचय

कंवल हरियाणवी का जन्म हरियाणा के कैथल जिले के पाई गाँव में 9 मई, सन् 1927 ई० को हुआ था। इनके पिता का नाम श्री केवल राम व्यास था। इन्होंने भारतीय सेना में सूबेदार के रूप में कार्य किया था। वहाँ से सेवानिवृत्त होने के बाद वे हरियाणवी साहित्य लेखन से जुड़ गए। इनकी रचनाएँ हरियाणवी लोक जीवन से प्रभावित हैं। इन्हें हरियाणवी कहानी का प्रथम कहानीकार कहा जाता है।

रचनाएँ – कंवल हरियाणवी काव्य तथा गद्य लेखन में अपना योगदान दिया है। इनकी रचनाओं में हरियाणपी परिवेश अपनी संपूर्णता के साथ उजागर हुआ है। इन का प्रमुख हरियाणवी कहानी संग्रह 'लीक पुरानी मोड़ नवां' है।

साहित्यिक विशेषताएँ –

कंवल हरियाणवी सामाजिक सरोकार के लेखक हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में अपने आस–पास के समाज में व्याप्त विसंगतियों का चित्रण करते हुए उनका समाधान भी सुझाया है। 'आसा की किरण' एक सांवले रंग की लड़की की व्यथा–कथा है। जिसे देखने अनेक लोग आते है। पर उसके सांवले रंग के कारण उसे नापसंद कर देते हैं। कई बार दहेज के कारण उसका संबंध नहीं हो पाता, परंतु जब मुनीस उसे देखने आता है तो वह दहेज के भावतोल को देख कर बिगड़ जाता है और स्पष्ट कहता है–'मन्नै पसंद सै कमला मैं आखरी सांस तक देक्खूंगा इसकी बाट।' और उसके माता–पिता को यह रिश्ता मंजूर करना पड़ता है।

2. **भौतिकतावाद** – कंवल हरियाणवी ने जीवन और जगत को अत्यंत गहराई से देखा है और अपने उन अनुभवों को सहज रूप से शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त कर दिया है। इन्होंने यथार्थ पर किसी प्रकार का आदर्श लादने का प्रयत्न नहीं किया है, अपितु मनोवैज्ञानिक रूप से स्थितियां इस प्रकार की उत्पन्न कर देते हैं कि इनके आदर्श स्वयं ही मुखरित हो उठते हैं। 'आसा की किरण' में मुनीष माता–पिता के दहेज के प्रति मोल–भाव कोदेख कर विचलित हो उठता है। उस का यह कथन 'जितनी चाहिए मुंह खेल के मैंग ल्यो अपने बेट्टे की कीमत। चार लाख पांच लाख।' उसके मन की व्यथा को स्पष्ट करता है कि क्या वह बिकाऊ हो गया है ? यहीं वह कमला से विवाह करने का निर्णय ले लेता है। लेखक की मर्मभेदी दृष्टि केवल सामाजिक विसंगतियों का चित्रण ही नहीं करती अपितु उन पर तीक्ष्ण प्रहार भी करती है।

3. **चित्रात्मकता** – कंवल हरियाणवी शब्दों के जादूगर हैं। वे अपने शब्दों के माध्यम से स्थिति, पात्र, वातावरण आदि का सजीव वर्णन करने में सिद्धहस्त हैं। उनके इन वर्णनों से उनकी कल्पना साकार रूप धारण कर लेती है। 'आसा की किरण' कहानी में रात्रि के अंधकारमय वातावरण का सजीव चित्र लेखक ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है–'कमरे में कुछ देर सन्नाटा सा छाया रह्या। दिवाल पै टंगी घड़ी की टिक–टिक ब्हौत सारे सवाल ब्हौत सारी सिंक्या लिये अपणी चाल चालदी रई। अंधेरी रैन की सारी कालस जणौ उस कमरे मैं घुस आई।! सायें..... सायें.....।'

4. **मनोवैज्ञानिक दृष्टि** – कंवल हरियाणवी की कहानियों में मानसिक अतर्द्वद्व की प्रधानता है। इनके पात्र जीवन संघर्षों से जूझते हुए अपनी समस्याओं के समाधान के लिए सदा चिंतन करते रहते हैं। मध्यवर्गीय माता–पिता के लिए बेटी का विवाह करना एक बहुत ही कठिन कार्य होता है। जवान बेटी की चिंता उन्हें सदा व्याकुल करती रहती है। 'आसा की किरण' में रामदास अपनी पुत्री कमला के लिए उचित वर न मिलने के कारण रात को सो भी नहीं पाता तो उसकी पत्नी उसे समझाती है कि–'सोण की कोसस करो जो तड़कै सवेरै उठणा पड़ैगा, चिंत्या कर्यां तै के बणै सै, होणा तो ओहे सै जो भगवान न रच राख्या सै। मेरा दिन न्यूं कहै सै इब कै कमला के भाग जरूर चमकैंगे।'

5. भाषा-शैली – कंवल हरियाणवी लोक माणस के लेखक हैं इसलिए उन्होंने अपने लेखक में सहज, सरल तथा व्यावहारिक लोकभाषा हरियाणवी का प्रयोग किया है जिसमें तत्सम, तद्भव शब्दों के साथ ही आँचलिक शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। भाषा में अर्थ गांभीर्य तथा रोचकता उत्पन्न करने के लिए लेखक ने मुहावरों तथा लोकोक्तियों का भी सटीक प्रयोग किया है। जैसे–'होणा तो ओह सै जो भगवान् नै रच राख्या सै', 'चपत खाना', 'काम की न काज की ढाई सेर नाज की', 'नाक चढ़ाना', 'इस हाथ दे, उस हाथ ले', 'हरि झंडी दिखाणा' आदि। इसकी शैली वर्णनात्मक, संवादात्मक तथा विचारात्मक है।

कंवल हरियाणवी जन–जीवन के सफल चितेरे कहे जा सकते हैं, जिनकी रचनाएं हरियाणे के लोक जीवन के यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं।

कहानी-सार

'आसा की किरण' 'कंवल हरियाणवी' की श्रेष्ठ रचना हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि जब लोग अपने बेटे के लिए बेटी देखते हैं। उस समय दूसरे की बेटी न समझ कर कोई वस्तु समझते हैं और जब अपनी बेटी की बारी आती है उस समय उनकी स्थिति देखने लायक होती है। इस कहानी में आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज विरोधी स्वर को उठाया गया है।

ज्ञानवती और सेठ रामदास की बेटी कमला को देखने कल कुछ लोग आने वाले हैं। इसलिए दोनों को सारी रात नींद नही आती है। रामदास को घड़ी की आवाज सिर पर हथौड़ों जैसी लगती है। ज्ञानवती को भगवान पर विश्वास है कि उसकी बेटी कमला को कल आने वाले लोग जरूर पसंद कर लेंगे। कमला में सभी गुण हैं वह पढ़ी–लिखी, घर के काम में निपुण है। लेकिन उसका रंग सांवला है। इसलिए दो बार नापसंद कर दी गई कमला की शादी में एक लाख रुपया नगद देने के लिए तैयार हैं। ज्ञानवती कहती है कि उन्होंने तो अपने बेटे धीरज की शादी में कोई मांग नहीं रखी थी और बहू भी ऐसी आई है, जो काम नहीं करती है, सिर्फ उसका रंग साफ है। सारा दिन खाट पर पड़े–पड़े रोती रहती है। इसलिए ज्ञानवती ने उसे अलग कर दिया।

रामदास को धीरज एवं उसकी बहू के न आने का भी दुःख है क्योंकि कल उसने अपनी बेटी दिखानी है। रामदास अपनी पत्नी ज्ञानवती से कहता है कि यह सारा उसका दोष है उसे ही चाँद जैसी बहू की चाहना थी। वह भी ध ीरज के लिए दूसरों की लड़कियों का ऐसे नाप–तोल करती थी जैसे वह लड़की न होकर पशु हो। उस समय सोचना चाहिए कि अपने घर भी लड़की है। ज्ञानवती बात को टालना चाहती है लेकिन रामदास अपने मन की भड़ांस निकालना चाहता है। इसलिए आगे कहता है कि यदि उस समय ज्ञानों के मन में भगवान का डर होता, आज उसकी बेटी के साथ ऐसा नहीं होता कि लोग उसे दो बार नापसंद कर देते। यह तो कलयुग है। इस हाथ ले और उस हाथ दे।

ज्ञानो और धीरज ने सभी कामों में निपुण लड़की को केवल उसके सांवले रंग के कारण नापसंद कर दिया था। यह तो उनके बुरे कर्मों का फल है। ज्ञानो रामदास से ऐसा कहने को मना करती है और कहती है कि सारी गलती मेरी नहीं है धीरज को भी सुंदर लड़की चाहिए थी।

रामदास ज्ञानो को ताना मारता है कि दूसरों की बेटी का अपमान करना बहुत बड़ा पाप है। लड़की तो देवी का रूप है जब से इनकी कदर घटी है समाज में धर्म, कर्म सब पैसा हो गया है। फूलों जैसी लड़कियां तराजू में तुलने लगी हैं। धीरज ने भी लड़की के गुणों से नहीं सुंदरता से शादी की है। ज्ञानो रामदास को व्यंग्य करने से मना करती है और कहती है कि कमला की शादी के लिए उसने भगवती का जागरण बोल रखा है। रामदास कहता है कि औरत ही औरत की दुश्मन है लड़कियों की बिगड़ती दशा के लिए औरत ही जिम्मेदार है। एक ओर औरतें अपने अधिकार के लिए पुरुषों से लड़ाई कर रही है दूसरी ओर औरतें अपनी ही जड़ें काट रही हैं। किसी दिन यह समाज धू–ध ू करके जल जाएगा। रामदास इतना कह कर रोने लग जाता है।

रामदास कमला के विषय में सोच रहा है कि कल कमला उन लोगों के सामने कांपती टांगों से आशा–निराशा में डूबी चाय लेकर जाएगी। लड़के वाले इस तरह देखेंगे जैसे उसकी किस्मत के ठेकेदार हों। जो जैसा करेगा वैसा ही फल पाएगा। ज्ञानो सुबह कमला को उठाने जाती है। कमला को दरवाजा खोलने में देरी हो जाती है ज्ञानो डर जाती है और चीख पड़ती है। रामदास घबरा जाता है। कमला के दरवाजा खोलने पर दोनों उसे ठीक देखकर खुश होते

हैं। कमला अपने पिता रामदास को रोते देखकर चुप कराती है और कहती है कि आज फिर आपको मेरे सांवले रंग के कारण अपमान का घूंट पीना पड़ेगा। यह सब माँ और भईया के कर्मों का फल है जो हम दोनों को भुगतना है। रामदास और ज्ञानो उसे तैयार होने के लिए कहते हैं।

सेठ माया प्रसाद अपनी पत्नी रुक्मणी, बड़े बेटे–बहू तथा मुनीष के साथ ठीक समय पर रामदास के घर आते हैं। सभी लोग रामदास के घर को ऐसे देखते हैं जैसे उसे आँखों में तौल रहे हों। रामदास डेढ़ लाख रुपया लगाने को कहता है। ज्ञानो कमला के गुणों की प्रशंसा करती है लेकिन रुक्मिणी उसके सांवले रंग को लेकर व्यंग्य करती है। कमला चाय लेकर आती है। कमला को देखते ही वहां सन्नाटा छा जाता है। ऐसा लगता है जैसे कमला का सांवला रंग सभी के चेहरों पर पुत गया हो। कमला को देखते ही रुक्मिणी चलने के लिए खड़ी हो जाती है। रामदास उनके आगे गिड़गिड़ाता है। एक लाख रुपया और देने की पेशकश करता है लेकिन कमला अपने पिता का हाथ पकड़ लेती है। माया प्रसाद के आगे झकने को मना कर देती है। सभी लोग जाने के लिए बाहर निकलते हैं लेकिन मुनीष बैठा रहता है। मुनीष अपनी माँ रुक्मणी को उसकी कीमत लगाने के लिए ताना मारता है कि उसकी कीमत चार पांच लाख रुपया मांग लेनी चाहिए। मुनीष कहता है कि मुझे कमला पसंद है मैं आखिरी साँस तक उसका इंतजार करूंगा कहकर बाहर निकल जाता है। मुनीष की बात सुनकर माया प्रसाद रिश्ता स्वीकार कर लेता है। सभी के चेहरों पर खुशी छा जाती है।

व्याख्या

1. "तन्ने बोये सै ये बदी के बीज। मैं तो चांद बरगी बहू ल्यूंगी अपणै धीरज खात्तर ! जिब तौं लोग्गां की छोरियां नै देक्खण जै की न्यूं नाप-तोल करै थी जगों पै किसे की बेट्टी नी पसू हो, जिब नी दिक्खै था तन्ने म्हारै बी बेट्टी सै।"

शब्दार्थ – बदी=बुराई, बरगी=जैसी, खात्तर=के लिए, छोरियां=लड़कियाँ, पसू=पशु।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर को रेखांकित किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में सेठ रामदास अपनी पत्नी ज्ञानो को उसकी गलतियों का अनुभव कराता है जिसका फल वह और उसकी बेटी कमला भुगत रहे हैं। रामदास ज्ञानो से कहता है कि यह दुर्भाग्य के बीच तुमने बोए हैं अर्थात् कमला को तो नापसंद ज्ञानो की करनी का फल है। धीरज के लिए चांद जैसी बहू लाने की इच्छा थी अर्थात् जब बेटे के लिए बहू लाने के लिए लड़कियां देखी थीं उस समय बहू के रूप में चांद चाहिए था। रामदास ज्ञानो से कहता है कि लोगों के घरों में लड़कियां देखने जाओ तो ऐसे देखो जैसे खरीदने से पहले पशु की जांच की जाती है। उस समय लोग यह भूल जाते हैं कि उनके घर भी लड़कियां हैं। उनकी भी बारी आनी है।

विशेष –

(i) आजकल लोग अपने लड़के के लिए लड़की ऐसे देखने जाते हैं जैसे कोई पशु हो। उस समय यह नहीं सोचते कि उनके घर भी लड़की है।

(ii) ठेठ हरियाणवी भाषा है।

(iii) भाषा प्रवाहमय और भावपूर्ण है।

(iii) संवादात्मक शैली है।

2. "जाण क्यूँ द्यूँ तन्नै जिब क्यूं नी सोच्या जिब म्हारी बेट्टी गेल न्यू होवैगी उसकै सांवरे रंग कै लोग नाक चढ़ावैंगे म्हारे दिल पै के गुजरेगी। जे तौं न्यूं सोचदी तेरे दिन मैं भगवान का डर हौंदा आज अपणी बेट्टी गैल या नी बगदी। यू तो कलजुग सै ज्ञानो कलजुग। इस हाथ दे, उस हाथ ले। क्यूक्कर, नाक चढ़ै कै बात करी थी तन्नै जिब अपां जैपरकास की छोरी नै देक्खण गये थे। किसी सलखणी अर साऊ छोरी थी। उसका सांवलारंग देख के क्यूक्कर मुंह फैर्‌या था तन्नै मेरे इब तांई याद सै ज्ञानो। यू सारा तेरे बैहड़े करयां का फल सै जिस

नै आज मैं और कमला भुगतना लैग रे सां।"

शब्दार्थ – गेल=साथ, सलखणी=घर के काम में निपुण, साऊ=सीधी, तांई=तक, बैहड़े=बुरे, करयां=काम।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में सेठ रामदास के माध्यम से आधुनिक समाज की तस्वीर पेश की है कि लोग अपने लड़के लिए लिए लड़की देखने जाते हैं। उस समय उनका व्यवहार दूसरा होता है। जब अपने घर की लड़की बारी आती है उस समय उनका व्यवहार और होता है। ज्ञानो रामदास को व्यंग्य करने से मना करती है। लेकिन रामदास कहता है कि अब क्यों बात समाप्त करती हो जब नहीं सोचा था कि हमारी बेटी का रंग भी सांवला है। उसके सांवले रंग को देखकर लोग भी नाक चढ़ायेंगे। उस समय हमारे दिन पर क्या गुजरेगी अर्थात् कमला सांवले रंग के कारण दो बार नापसंद हो गई है। इसलिए रामदास और ज्ञानो अंदर से टूट गए हैं। रामदास ज्ञानो से कहता है कि यदि उसे भगवान् का डर होता तो आज अपनी बेटी के साथ ऐसा नहीं होता। यह तो कलयुग है। जैसा हम करते हैं उसका फल उसी समय मिल जाता है। जब हम लोग जयप्रकाश की लड़की को देखने गए थे उस समय तूने भी नाक चढ़ाकर बात की थी अर्थात् ज्ञानो धीरज के लिए लड़कियां देखने जाती थी उस समय उसके पैर जमीन पर नहीं थी। जयप्रकाश की लड़की सभी कामों में निपुण थी और सीधी–सादी थी लेकिन उसका रंग सांवला था। उसका सांवला रंग देखकर तूने भी ऐसे मुंह फेरा था। मुझे अब तक याद है अर्थात् ज्ञानो को उस समय धीरज के लिए अच्छी लड़की की परिभाषा चाँद जैसी बहू लाना थी। सांवला रंग देखकर ज्ञानो मना कर देती थी। रामदास ज्ञानो से कहता है कि यह सब तुम्हारे बुरे कर्मों का फल है। जिसका आज वह और कमला भुगतान कर रहे हैं अर्थात् कमला का भी रंग सांवला है जबकि वह सारे कामों में निपुण है। लोग उसका रंग देखते हैं काम नहीं। यह सब ज्ञानों के बुरे कर्मों का फल है जिसे आज उसकी बेटी भुगत रही है।

विशेष –

(i) आधुनिक समाज में लड़कियों का अच्छे होने की अपेक्षा सुंदर होना आवश्यक है। यह सब उनके माँ–बाप के कारण होता है क्योंकि जब वे अपने लड़के के लिए लड़की देखते है। उस समय उन्हें भी साँवली लड़कियाँ पसंद नहीं आती हैं।

(ii) भाषा ठेठ हरियाणवी है।

(iii) भाषा में मुहावरों का भी प्रयोग है।

(iv) संवादात्मक शैली है।

3. "मैं कह्या करदा किसी की बेट्टी का अपमाना करना बहौत बड़ा पाप सै। म्हारे धरम मै। तो कन्या देवी का रूप हो सै ज्ञानो जिब तै इनकी कदर घटगी सत्यानाश हो गया सारे समाज का, धरम रह्या ना करम रह्या बस धन माया रैहगी। फुल्लां बरगी कन्या इब ताखड़ी मैं तुलै से, फित्ता ले कै उनके अगां नै नाप्पै सै हम कितने दुष्ट होगे, ज्ञानो।"

शब्दार्थ – ताखड़ी=तराजू, तुलै=तोलना, फित्ता=नाप लेने वाला फीता, दुष्ट=अत्याचारी।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने रामदास के माध्यम से आधुनिक समाज में लड़कियों के घटते सम्मान का वर्णन किया है। रामदास ज्ञानो से कहता है कि मैं तुमसे कहा करता था कि किसी की बेटी का इस तरह अपमान नहीं किया जाता, पराई बेटी का अपमान करना बहुत बड़ा पाप है अर्थात् ज्ञानो जयप्राकश की बेटी को उसके सांवले रंग के कारण मना कर देती है। हमारे धर्म में तो कन्या देवी का रूप समझी जाती थी। जब से समाज में लड़कियों का सम्मान घटा है समाज का बुरा समय आ गया है। समाज में धर्म–कर्म समाप्त हो गया है। केवल धन ही सब कुछ हो गया है अर्थात् कन्या को देवी माना जाता था लेकिन आज के समाज में लड़की धर्म–कर्म के स्थान पर धन की

वस्तु रह गई है क्योंकि लड़की दहेज के रूप में धन लाती है। रामदास आगे कहता है कि फूलों जैसी लड़कियां अब तराजू में तोली जाने लगी हैं। उनके शरीर को फीते से नापा जाने लगा है। ऐसे काम करते हुए हम लोग कितने अत्याचारी हो जाते हैं अर्थात् हम लोग लड़कियों को ऐसे देखते हैं जैसे किसी पशु को खरीदते समय उसकी जांच की जाती है। हम जैसे लोग ही इन पर अत्याचार करते हैं।

विशेष –

(i) जब से समाज में लड़कियों का सम्मान घटा है, तब से धर्म–कर्म सब समाप्त हो गया है। धर्म–कर्म के नाम पर सब कुछ धन ही हो गया है।

(ii) भषा ठेठ हरियाणवी उर्दू, तत्सम शब्दों से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) संवादात्मक शैली है।

4. जिब कमला या को ट्रे ले कै सामणै जावेगी। एस तसबीर सी घूमगी उसकी आँख्यां मैं। कमला की कांबदी टांग, आँख्यां मैं बैह आर लाज की छाया, आपणे सांवले रंग पै कुढ़दी, आसा अर निरासा के भंवर मैं डुगबदी-तिरदी जिब उनके सनमुख जावैगी के बिनैगी उसे दिन पै। ए भगवान ये के सै एक तो पालो-पलोस्सो पढ़ी-खिल लड़की द्यो अर उन कान्नी न्यू देक्खो जणों वै म्हारी किसमत के ठेकेदार सै। ये सारे बिच्चार सेठ रामदास नै भित्तर तक तोड़ गै।" जो किसे ने जलावैगा एक दिन आप बी जलैगा।" उसकी आत्मा ने कहा।

शब्दार्थ – कांबदी=काँपती, बैह=भय, डर, कुढदी=जलती, खीझती, भंवर=जाल, सनमुख=आगे, समक्ष, कान्नी=तरफ, भित्तर=अंदर।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने रामदास की स्थिति का वर्णन किया है। उसे नींद नहीं आ रही है। कमला को देखने लड़के वाले आ रहे हैं। वह कमला की मनोदशा के विषय में सोच रहा है। रामदास की आँखों के आगे कमला की एक तस्वीर घूम रही थी। कल लड़के वालों के समक्ष कमला कांपती टाँगों, आँखों में भय और लाज की छाया लिए, अपने सांवले रंग पर खीझती हुई, आशा और निराशा के भंवर में उलझती हुई चाय की ट्रे लेकर जाएगी। उस समय उसके मान पर क्या बीतेगी अर्थात् आधुनिक समाज में लड़की लड़के वाले के समक्ष जाते हुए आशा–निराशा में डूबी रहती है वह लड़के वाले पसंद करेंगे या नहीं। रामदास सोच रहा है कि एक तो पली हुई, पढ़ी–लिखी लड़की लड़के वालो को दो फिर भी वे ऐसे देखते हैं जैसे हमारी किस्मत के ठेकेदार हों अर्थात् लड़के वाले लड़की वालों को ऐसे देखते हैं जैसे हमारी किस्मत का फैसला करने वाले हो। रामदास के मन में उठ रहे सारे विचार उसे अंदर तक तोड़ रहे थे। रामदास की आत्मा से आवाज निकलती है यदि कोई किसी को दुःखी करेगा वह एक दिन स्वयं भी दुःखी होगा अर्थात् जो जैसा करेगा वह वैसा ही भुगतेगा।

विशेष –

(i) लेखक का भाव यह है कि लड़के वाले लड़की वालों की किस्मत के ठेकेदार हैं। लड़की वाले पढ़ी–लिखी, पली हुई लड़की भी देते हैं फिर भी लड़के वालों से कमजोर होते हैं।

(ii) भाषा ठेठ हरियाणवी है, तत्सम शब्दों से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) विचार प्रधान वर्णनात्मक शैली है।

5. "रोवै ना बाप्पू अपणी बेट्टी पै भरोस्सा राख मैं आप सुलट बरत ल्यूंगी इस समाज गेल्लै। मैं जाणूं सूं तेरे दूख नै। धीरज भाई अर् भाभी बी ना आये आज फेर थम नै अपमान की गोली खाणी पड़ैगी मेरे कारण आज फेर मेरा सांवला रंग थारै आग्कै अंधेरा बण कै छावैगा, आज फेर मेरा सोद्दा होगा, नाप-तोल होगा। थारै दिल पै के बित्तैगी मैं समझूं सूं बाप्पू। मेरे भाई अर माँ नै बीतो यू टरामा कई बै खेल्या सै, अपां दोनों इस हम मैं नी के पर अपणी एक नी चाल्ली, आज बाह्य करणी भरणी पड़ री सै भाई चाहवै था चांद बरगी बहू अर माँ चाहवै थी धन माया। बाप्पू तौं मिल्या ना करै नैह धो। कै महैकान्नाँ खात्तरदारी की त्यादी करो, मैं मान आद

तै ज्यूण खात्तर संघरस करूँगी बाप्पू।।"

शब्दार्थ – सुलट=सुलझना, बाह्ए=वही, नैह्! धो=नहा धोकर, खात्तरदारी=आवभगत, आदर सत्मर, मान आद=मान सम्मान, संघ्रस=संघर्ष।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने कमला के साहस का वर्णन किया है। वह अपने पिता रामदास को हिम्मत रखने के लिए कहती है। कमला के अनुसार उसे तथा रामदास को माँ ज्ञाना और धीरज की करनी का फल तो भुगतना ही होगा। कमला रामदास से कहती है कि पिता जी आप रोईए मत। अपनी बेटी पर विश्वास रखें। वह इस समाज के साथ स्वयं ही सुलझ लेगी। आपको धीरज भाई और भाभी के न आने का दुःख है आपको मेरे कारण मेरे सांवले रंग के कारण फिर अपमान का घूंट पीना पड़ेगा। अर्थात् कमला अपने पिता को धीरज और उसकी पत्नी के न आने पर दुःखी देखती है तो उसको हिम्मत बंधाती है। वह इस समाज से अकेली ही सुलझ लेगी। कमला रामदास को कहती है कि आज फिर उन्हें उसके कारण अपमान सहन करना पड़ेगा। उसका सांवला रंग रामदास के चेहरे पर अंधेरा बन कर छा जायेगा। उसके सांवले रंग के कारण उसका फिर सौदा होगा और नाप–तोल होगा। उस समय पिता के दिल पर क्या बीतती है वह सब जानती है। अर्थात् कमला अपने सांवले रंग के कारण पिता के होने वाले अपमान के विषय में जानती है। उसका पिता लड़के वालों से उसके सांवले रंग का सौदा करेंगे। कमला कहती है कि उसके भाई और माँ ने भी ऐसा ही तमाशा कई बार किया है, उस समय बाप बेटी की एक नहीं चली थी। वे दोनों इस तमाशे के हम में नहीं थे अर्थात् कमला की माँ और भाई जब देखने जाते वही सब कुछ करते थे जो आज उनके साथ हो रहा है। इसीलिए कमला कहती है कि जैसी करनी करी थी वैसी ही भुगतनी पड रही है। भाई को चाँद सी बहू चाहिए थी और माँ को धन चाहिए था अर्थात् माँ और भाई का किया हुआ आज बेटी को भरना पड रहा है। कमला अपने पिता से नहा–धोकर मेहमानों के आदर–सत्कार की तैयारी करने को कहती है और चिंता करने की जरूरत नहीं है। वह मान–सम्मान से जीने के लिए संघर्ष करेगी अर्थात् वह इस समाज में लड़की होने का मान–सम्मान बना कर रखने के लिए संघर्ष करेगी।

विशेष –

(i) समाज में पढ़ी–लिखी लड़की की हिम्मत का वर्णन किया है। आज की लड़की अपने माता–पिता तथा अपने मान–सम्मान के लिए संघर्ष करने के लिए तैयार हैं।

(ii) ठेठ हरियाणवी, उर्दू तथा देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण और प्रवाहमय भाषा है।

(iii) संवादात्मक शैली है।

6. "भगवती तो सब्है की सुध ले सै ज्ञानो। म्हारी कमला कंवारी तो नी रहणी पर मैं तो न्यूं रोऊं सूं ये औरत की दुसमन क्यूं सैं। समाज मैं जितने बखेड़े होवे सैं लड़कियों की जितनी बेकदरां हो री सै इस मैं सब तैं बड़ा औरतां का हाथ सै। एक कान्नी तो थम अपणा हक मांगों से मरदाँ ने जी भर कै कोसो सो दूसरे पास्सै अपणी जड़ नै आप काट्टो से। इतने गये गुजरे हम क्यूक्कर होंगे के नतीजा लिकड़ैगा इसका किसे दिन धक-धक जलैगा यू समाज। सब कुछ मलिया मेट हो जागा ज्ञानो सब कुछ। गला भर आया राम दास का।

शब्दार्थ – बखेड़े=विवाद, बेकरदां=बेइज्जती, मलिया–मेट=सब कुछ समाप्त होना।

प्रसंग – प्रस्तुत पंक्तियाँ कंवल हरियाणवी द्वारा रचित 'आसा की किरण' कहानी से ली गई हैं। यह एक सामाजिक कहानी है। इस कहानी के माध्यम से आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज–विरोधी स्वर को उठाया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में ज्ञानो जब रामदास से कहती है कि उसने कमला की शादी के लिए भगवती का जागरण बोल रखा है तो रामदास रोते हुए ज्ञानो से कहता है कि ज्ञानो भगतवी माँ तो सबका ध्यान रखती है। अर्थात् भगवती माँ से कुछ कहने की जरूरत नहीं पड़ती है। हमारी कमला तो कुंवारी तो रहेगी नहीं अर्थात् उसकी भी शादी हो ही जाएगी। रामदास कहता है कि मैं कमला को लेकर परेशान नहीं हूँ। मैं तो इसलिए दुःखी हूँ कि औरत ही औरत की दुश्मन क्यों है। समाज में जितने भी लड़कियों के विवाद हैं जितनी इनकी बेइज्जती हो रही है। उन सबके पीछे

औरतों का हाथ है अर्थात् समाज में आधुनिकता की आड़ में औरत ही औरत की दुश्मन बनी बैठी है। रामदास ज्ञानी से कहता है कि एक तरफ तो तुम औरतें अपने अधिकारों की मांग को लेकर जी भर के पुरुषों को बुरा–भला कहती हैं और दूसरी तरफ अपनी ही जड़ काटती हो अर्थात् औरत पुरुषों को अपना दुश्मन मानती हैं, परन्तु उन्हें नहीं मालूम के वे पुरुषों से अधिक अपनी जड़ को स्वयं ही काट रही हैं। पुरुषों से अधिक वे स्वयं ही दुमश्न बन बैठी हैं। रामदास कहता है कि हम लोग इतने गये गुजरे कैसे हो गए, इन सबका क्या परिणाम निकलेगा। किसी दिन यह समाज भी लड़कियों के घटते सम्मान के कारण अपनी ही लगाई आग में जल जाएगा। इस तरह तो सब समाप्त हो जाएगा कुछ भी नहीं रहेगा अर्थात् औरत ही औरत की दुश्मन बन कर अपनी जड़ें काटेंगी तो यह सम्मान लड़कियों की आहों से जल उठेगा। उस समय कुछ भी नहीं बचेगा।

विशेष –

(i) पुरुषों से अधिक औरत ही औरत की दुश्मन है। समाज में लड़कियों के घटते सम्मान के लिए औरत ही जिम्मेदार है।

(ii) ठेठ हरियाणवी, उर्दू तथा देशज शब्दों से युक्त भावपूर्ण और प्रवाहमय भाषा है।

(iii) संवादात्मक शैली है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 'आसा की किरण' कहानी के उद्देश्य पर विचार कीजिए।

उत्तर – साहित्य रचना बिना उद्देश्य के संभव नहीं है। जो लोग यह घोषित करते हैं कि 'कला' कला के लिए है और उसका कोई उद्देश्य आवश्यक नहीं, वे कला को जीवन से काटने का अपराध करते हैं। जीवन से कट कर साहित्य अथवा कला निरर्थक हो जाती है। साहित्य रचना समाज में, समाज के लिए प्राणियों द्वारा की जाती है। साहित्य जीवन का दर्पण भी होता है और दीपक भी। साहित्य में जीवन का चित्रण भी रहता है और उसे सुधार भी संकेत है। सहित्य जीवन के यथार्थ को प्रदर्शित करता है तथा उसके सामने आदर्श भी प्रस्तुत करता है। कविता का लक्ष्य यदि आनंद की प्राप्ति है तो कहानी से भी आनंद ही प्राप्त होता है। कहानी से मनोरंजन ज्ञान, वृत्तियों के सुधार तथा उपदेश का काम लिया जा सकता है। प्रेमचंद से पहले कहानी प्रायः मनोरंजन को मुख्य लक्ष्य बनाकर लिखी जाती थी, इसलिए उस समय तिलस्मी, ऐय्यारी तथा जासूसी कहानियाँ अधिक लिखी जाती थीं। मुंशी प्रेमचंद ने हिंदी कहानी को सामाजिक समस्याओं के साथ जोड़ा और साथ में कलात्मकता द्वारा मनोरंजन का अंश भी बनाकर रखा। प्रेमचंद ने कहानी का उद्देश्य 'मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को उजागर करना' माना है। वे कहानी को 'मानव जीवन की व्याख्या' भी मानते थे।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यदि 'कंवल हरियाणवी' द्वारा रचित कहानी 'आसा की किरण' पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि यह एक सोद्देश्य रचना है जिसमें लेखक ने आधुनिक परिप्रेक्ष्य में नवयुवकों के दहेज विरोधी स्वर का वर्णन किया है। नवयुवकों को लड़की के गुणों की ओर ध्यान देने के लिए प्रेरित किया है। कहानी में वर्णित उद्देश्य का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है।

1. **जीवन का यथार्थ** – 'आसा की किरण' कहानी एक सामाजिक कहानी है जिसमें एक लड़की के जो शादी के योग्य है माता–पिता का वर्णन है। रामदास और ज्ञानो कमला के सांवले रंग को लेकर चिंतित है। पहले भी लड़के वाले उसको दो बार नापसंद कर चुके हैं। रामदास सांवले रंग की कीमत एक लाख रुपया नगद लगा चुका है और भी बढ़ाने की सोच रहा है। ज्ञानो कला की माँ जब बेटे के लिए बहू देखने जाती थी उसे भी लड़कियां पसंद नहीं आती थीं। लड़कियों का सांवला रंग देखकर नाक चढ़ जाती थी। अब अपनी बेटी कमला के समय में उसे उसमें रंग को छोड़कर सभी गुण दिखाई पड़ते हैं। रामदास कहता है कि यही जीवन है जैसा तुम लोक करते हो वैसा तुम्हें भरना पड़ता है।

2. **औरत की दुश्मन औरत** – 'कंवल हरियाणवी' ने 'आसा की किरण' में यह स्पष्ट किया है कि समाज में आधुनिक बनने के चक्कर में औरत ही औरत का दुश्मन बन गई है। पहले कन्या को देवी का रूप समझा जाता था। लेकिन जब से समाज में लड़कियों का सम्मान कम हुआ है समाज का ढंग ही बदल गया है। ज्ञानी जब धीरज के

लिए लड़कियाँ देखने जाती थी उस समय उसे चाँद जैसी बहू चाहिए थी साथ में धन भी। उस समय उसने नहीं सोचा था कि उसके घर में भी लड़की है। कमला को देखने आई रुक्मणी भी कमला को देखते ही उठकर चल देती है। इस कहानी के माध्यम से लेखक ने यह दिखाया है कि पुरुषों से ज्यादा औरत ही औरत की दुश्मन हैं।

3. दहेज प्रथा का विरोध – 'आसा की किरण' एक सामाजिक कहानी है इसमें दहेज प्रथा के विरोध में नवयुवकों के स्वर को उठाया गया है। कमला को देखने मुनीष तथा उसके परिवार आता है। कमला जैसे ही कमरे में आती है उसका सांवला रंग सभी के चेहरों पर किसी–न–किसी रूप में पुत जाता है। कमला का पिता कमला के रंग के कारण डेढ़ लाख से ढाई लाख रुपया लगाने को तैयार हो जाता है। कमला अपने पिता को ऐसा करने से रोकती है कि उसके लिए झुकने की जरूरत नहीं है। मुनीष का परिवार जाने के लिए खड़ा हो जाता है। रामदास गिड़गिड़ाने लग जाता है। मुनीष बैठा रहता है। मुनीष कहता है कि वह कमला से ही शादी करेगा। आप अपने बेटे की जितना चाहो कीमत मांग लो लेकिन वह आखिरी सांस तक कमला का ही इंतजार करेगा। सबको मुनीष के आगे झुकना पड़ता है और यह रिश्ता तय हो जाता है।

लेखक का उद्देश्य नवयुवकों के लिए है यदि वह चाहें तो दहेज प्रथा को जड़ से मिटा सकते हैं। वह लालच में न पड़कर लडकियों को समाज में उनका उचित स्थान दे सकते हैं।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि 'आसा की किरण' का मूल उद्देश्य युवा वर्ग को यह संदेश देता है कि समाज में बिगड़ते समीकरण को सही दिशा देने के लिए युवा वर्ग को आगे आकर संघर्ष करना चाहिए। युवा वर्ग के साहस से समाज में बढ़ती दहेज–प्रथा जैसी कुरीति दूर हो सकती है।

प्रश्न 2 'आसा की किरण' कहानी की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम साधन हैं यह साधन जितना उत्तम होगा, रचना भी उतनी ही उत्कृष्ट मानी जाएगी। कहानी जीवन का दर्पण और मानव जीवन का चित्र है। अतः कहानीकार की सफलता इस बात में है कि वह अपनी कहानी की भाषा शैली को अधिक–से–अधिक सरल और सरस बनाने का प्रयत्न करे। यही कारण है कि भाषा में सरलता, सरसता, मधुरता तथा अभिव्यक्ति का गुण होना चाहिए। 'कंवल हरियाणवी' का हरियाणवी भाषा पर पूर्ण अधिकार है इस कारण 'आसा की किरण' कहानी में वे अपने भावों को व्यक्त करने में पूर्ण रूप से सफल हुए हैं। भाषा की सृष्टि से 'आसा की किरण' कहानी में निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती हैं–

1. सरल, स्वाभाविक भाषा – 'कंवल हरियाणवी' ने आसा की किरण कहानी में नवयुवकों के दहेज विरोधी स्वर को रेखांकित किया है जिसके लिए उन्होंने आम लोगों की भाषा को ही अपनी अभिव्यक्ति के रूप में अपनाया है। जैसे–

"के कसर सै मेरी कमला मैं, पढ़ी–लिखी, सब क्योए मैं गुणवान्, बस धुहै खोट सै अर् उसका रंग सांवला सै, मन्नै तो लेण–देण की बी पूरी छूट कर दी, पूरा एक लाख नकद, अर् ब्याह का सारा खरचा अलग। होर के मांग्गे सै लोग मन्नै धुहै बेरा नी पाट्या।"

इन पंक्तियों में लेखक ने एक ऐसे व्यक्ति की मानसिक स्थिति को व्यक्त किया है जिसकी लड़की पहले दो बार नापसंद कर दी गई है। रामदास को लोगों की मांग के लिए 'बेरा नी पाट्या' कहने से कथन में स्वाभाविकता आ गयी है।

2. पात्रानुकूल भाषा – 'कंवल हरियाणवी' ने 'आसा की किरण' कहानी में स्थिति, स्थान तथा व्यक्ति के स्तर एवं मनोभावों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है।

रामदास ज्ञानो पर व्यंग्य करता है–तन्नै बोये सै येबदी के बीज। मैं तो चाँद बरगी बहू ल्यूंगी अपणै धीरज खातर। जिब तौं लोग्गां की छोरियां नै देक्खण जै भी न्यूं नाप–तोल करै थी जणो वै किसे की बेटी नी पसू हो, जिब नी दिक्खै, तन्नै म्हारैबी बेट्टी सै।

कमला अपने पिता की स्थिति समझते हुए उसे हिम्मत बंधाती है–"बाप्पू तौं चिंत्या ना करै नैह् धो कै म्हैमान्नाँ की खातरदारी की त्यारी करो, मैं मान आप तैं ज्यूण खात्तर संघरस करूंगी बाप्पू।"

इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि लेखक ने देशकाल तथा पात्रों के अनुकूल भाषा का सफल प्रयोग किया है।

3. प्रवाहमयी भाषा – 'आसा की किरण' कहानी में लेखक ने अत्यंत प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है। वार्तालाप अत्यंत सहज तथा कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले हैं। भाषा में सामान्य बातचीत की सादगी तथा मुहावरों का सहज प्रयोग भाषा के प्रवाह में वृद्धि करते हैं। जैसे रामदास का यह कथन–"मैं कह्या करदा किसे की बेटी का अपमान करना ब्हौत बड़ा पाप सै। म्हारे धरम मैं तो कन्या देवी का रूप हो सै ज्ञानो जिब है इनकी कदर घटगी सत्यानास हो ग्या सारे समाज का धरम रह्या न करम रह्या बस धन माया रैह्गी। फुल्लां बरगी कन्या इब ,ताखड़ी मैं तुलै सै, फित्ता लै के उनके अंगां नै नाप्पे सै हम कितने दुष्ट होगे ज्ञानो।"

इन पंक्तियों में सहज प्रवाहमयी भाषा के दर्शन होते हैं।

4. बिम्ब प्रधान – कंवल हरियाणवी ने 'आसा की किरण' कहानी में शब्द चित्र भी प्रस्तुत किए हैं जिससे भाषा में चित्रात्मकता का गुण उत्पन्न हो जाता है। जैसे–

"कमला की कांबदी टांग, आँख्या मैं बैह् अर लाल की छाया, आपणे सांवले रंग पै कुढ़दी, आसा आर निरासा के भंवर मैं डुबदी–तिरदी जिब उनके सनमुख जावैगी कै बित्तैगी उसके दिल पै।" इन पंक्तियों में लेखक कमला की लड़के वालों के आगे जाने के लिए चित्र को शब्दों में स्पष्ट रूप से अंकित किया है।

5. शैली – 'आसा की किरण' कहानी में कंवल हरियाणवी ने मुख्य रूप से संवादात्मक शैली का वर्णन किया है। इससे कथा में रोचकता एवं गति आ गई है। पात्रों के व्यक्तित्व एवं चरित्रो का उद्घाटन भी संवादों से होता है। संवाद सहज, स्वाभाविक, संक्षिप्त, चुस्त, पात्रानुकूल, अवसरानुकूल एवं सटीक होने चाहिए। जैसे–

"बैठ्य के सै मुनीस खड्या हो।" रुक्मणी नै कह्या।

"के बात सै माँ देखली बहू" पहली बार मुंह खोल्या मुनीस नै "जितनी चाहिए मुँह खोल के मैंग ल्यो अपणे बेट्टे की कीमत च्यार लाख पांच लाख।"

"के बकवास करै से मुनीस खड्या हो।" माया प्रसार कै अग सी लैग गी।

उपर्युक्त संवादों से पात्रों की मानसिकता का ज्ञान होता है। इनके संवादों में व्यंग्यत्मका भी मुखरित हो उठती है। इस प्रकार 'आसा की किरण' में अधिकांश संवाद, सहज, सरल, स्वाभाविक, पात्रों की मानसिक स्थिति तथा देशकाल के अनुरूप है इनसे कहानी के विकास में सहायता मिलती है तथा रोचकता का समावेश होता है।

वस्तुतः आसा की किरण कहानी की भाषा शैली पात्रानुकूल तथा वस्तु के अनुरूप तथा वातावरण की सृष्टि करने में समर्थ है। यह अत्यंत सरल सहज स्वाभाविक है। चित्रात्मकता से कहानी की भाषा के प्रभाव में और भी अधिक वृद्धि हो जाती है।

प्रश्न 3 'आसा की किरण' कहानी के आधार पर रामदास का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर – रामदास 'कंवल हरियाणवी' द्वारा रचित 'आसा की किरण' का नायक है। रामदास एक विवश पिता है। उसकी बेटी कमला को सांवले रंग के कारण दो बार ,नापसंद कर दिया गया है। रामदास समाज में लड़कियों के घंटते सम्मान से दुःखी है। रामदास के चरित्र की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. पारिवारिकता – रामदास एक मध्यम वर्गीय परिवार से है। उसकी पत्नी ज्ञानो है। रामदास की एक बेटी कमला है और लड़का धीरज है। धीरज की शादी हो चुकी है।

2. भावुक – रामदास एक भावुक इंसान है। रामदास कमला की सांवले रंग के कारण शादी न होने से दुःखी है। कमला को देखने लड़के वाले आने वाले हैं। वह यह सोचकर दुःखी होता रहता है कि कमला को लड़के वाले पसंद करेंगे या नहीं। कमला के दरवाजा खोलने में देरी होने पर रामदास के मन में गलत धारणाएं जन्म ले लेती हैं और वह रोने लगता है "कमला दरवाज्जा खोल बेट्टी, इतना जुल्म ना करे म्हारे पै, इसी सजा ना दे आपणे बाप्पे नै। कोई पड़ौसी सुनेगा तो कै कहैगा। रेत मैं रुल जा गी म्हारी इज्जत म्हारे पै दया कर बेटी।" हिचकी बंधगी उसकी।" रामदास अपने बेटे धीरज और उसकी पत्नी के न आने पर दुःखी है। यदि दोनों लड़के वालों के सामने साथ रहते तो हिम्मत बनी रहती।

3. नारी भावना – रामदास नारी जाति के प्रति जागरूक है। वह समाज में लड़कियों के घटते सम्मान से दुःखी

है। पहले समाज में लड़कियों को देवी का रूप माना जाता था। लेकिन अब धर्म, कर्म सब रुपया ह। वह औरत को ही औरत का दुश्मन मानता है। लड़कियों के घटते सम्मान के लिए पुरुषों से अधिक औरतों को कारण मानता है क्योंकि औरतें आधुनिक बनने के लिए पुरुषों से बराबरी का अधिकार तो माँगती हैं साथ में अपनी ही जाति की जड़ें काट रहीं हैं। लड़के वाले लड़कियों को देखने ऐसे जाते हैं जैसे लड़की नहीं कोई पशु देखने जा रहे हों। उसकी जांच बहुत बारीकी से करते हैं। रामदास लड़कियों को सभी गुणों से निपुण करने के हक में हैं। वह सुदंरता के स्थान पर गुणी लड़की के पक्ष में है। वह अपने बेटे धीरज के लिए भी गुणी लड़की लाना चाहता था। लेकिन पत्नी तथा बेटे के आगे एक नहीं चलती है।

4. **बाह्याडंबर खंडन** –रामदास लोगों के दोहरे व्यक्तित्व से बहुत दुःखी है। रामदास अपनी पत्नी पर उस समय व्यंग्य करता है कि धीरज के लिए लड़की देखने के लिए जाते हुए उसी सोच सुंदर बहू लाने की थी। सांवली लड़कियों को देखकर नाक चढ़ जाती थी। आज अपनी बेटी कमला दो बार नापसंद कर दी जाती है तो उसे कमला के सावले रंग में भी सुंदरता दिखती है। कमला सभी प्रकार से निपुण लड़की है। वह लड़के वालों से भी कहती है कि ससार में केवल दो ही रंग हैं। रामदास अपनी पत्नी को कमला के लिए चिंतित देखता है तो उसे कहता है, "जाण क्यू दयूं" तन्नै जिब क्यूंनी सोच्या जिब म्हारी बेटी गेल न्यूं होवैगी उसकै सांवले रंग पै लोग नाक चढ़ावैंगे म्हारे दिल पै के गुजरैगी।"

5. **विवशता** – रामदास जब धीरज के लिए लड़की देखने जाते हैं उसी एक नहीं चलती है। वह अपनी पत्नी और बेटे के आगे विवश था। रामदास घर में नेक, सीधी ओर सभी कार्यों में निपुण लड़की बहू बनाकर लाना चाहता था लेकिन बेटे को चाँद जैसी बहू और पत्नी को धन चाहिए था। अपनी विवशता के कारण रामदास चुप रहता है।

6. **रूढ़ि-प्रभाव** – रामदास दहेज प्रथा को बढ़ावा देने वाले व्यक्तियों में से एक है। रामदास कमला की शादी में एक लाख नकद और पचास हजार ऊपर से लगाने की बात करता है। कमला के सांवले रंग को देखते हुए वह एक लाख और खर्च करने के लिए तैयार है। जब लड़क वाले कमला को उसके रंग के कारण नापसंद करके जाने लगते हैं। "रामदास ने गिड़गिड़या कै कह्या जिस सांवला रंग सै एक लाख होर दे दयूँगा।" इस प्रकार रामदास जैसे लोग ही दहेज प्रथा को बढ़ावा देते हैं।

इस प्रकार कह सकते हैं कि रामदास भावुक, नारी जाति के प्रति जागरूक, परिस्थिति वश विवश, लोगों के दोहरे व्यक्तित्व से दुःखी तथा बेटी की शादी न होने पर दहेज बढ़ाने की पेशकश करने वाला एक मजबूर पिता है। वह समाज के बदलते व्यवहार से दुःखी है। यदि यह समाज इसी रफ्तार से बदलता रहा तो एक दिन जल जाएगा अर्थात् सब समाप्त हो जाएगा। सामान्य जीवन जीने वाले व्यक्ति का आकर्षक प्रतिनिधित्व है।

प्रश्न 4 'आसा की किरण' कहानी के आधार पर कमला का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर – 'कंवल हरियाणवी' द्वारा रचित 'आसा की किरण' एक सामाजिक कहानी है जिसमें दहेज–विरोधी स्वर का उठाया गया है। कमला इस कहानी की नायिका है। कमला के माता–पिता उसकी शादी को लेकर परेशान हैं। कमला के चरित्र की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. **पारिवारिक संदर्भ** – कमला रामदास तथा ज्ञानी की लड़की है। कमला देखने में सुंदर है लेकिन उसका रग सांवला है। कमला बी०ए० पास है और घर के सभी कामों में निपुण है। कमला का एक भाई है जो अपनी पत्नी के साथ बाहर रहता है।

2. **संवेदनशीलता** – कमला संवेदनशील लड़की है। वह अपने पिता को रोते देख दुःखी हो जाती है। वह अपने पिता के दुःख को समझती है कि उसका पिता उसके सांवले रंग के कारण ज्यादा दुःखी है। इसलिए वह अपने पिता से कहती है–"आज फेर मेरा सांवला रंग थारै बाग्गै अंधेरा बण कै छावैगा। आज फेर मेरा सौद्दा होगा, नाप–ताल होगा। तारै दिल पै के बित्तगी मैं समझूं सूं बाप्पू।" कमला भी अपनी माँ और भाई के व्यवहार से दुःखी थी जब वे दोनों लड़क देखने जाते थे। कमला के अनुसार उसे तथा उसके पिता को माँ और भाई के कर्मों का फल भुगतना पड़ रहा है।

3. **सहसी** – कमला साहसी लड़की है। अपने पिता को धीरज के न आने पर टूटा हुआ देखती है तो वह अपने

पिता की हिम्मत बंधाती है। "बाप्पू तों चिंता ना करै नैह धो। म्हैमान्नों की खात्तरदारी की त्यारी करो।" कमला के साहस को देखकर रामदास की हिम्मत बढ़ती है। वह अपनी माँ को भी चिंता न करने के लिए कहती है "माँ मैं सब तरिया त्यार रहूंगी फिकर ना करै।" जबकि कमला को भी हिम्मत की आवश्यकता थी लेकिन भाई भाभी के न आने पर कमला स्वयं साहस करती है तथा माता–पिता का भी हौंसला बढ़ाती है।

4. **स्वाभिमानी** – कमला एक स्वाभिमानी लड़की है। वह अपने माता–पिता की इज्जत बनाए रखती है। कमला अपने पिता से भी कहती है–"मैं मान आद तै ज्यूण खातर संघरस करूंगी बाप्पू।" कमला जब चाय लेकर लड़के वालों के सामने जाती है तो ऐसा लगता है कमला का सांवला रंग सबके चेहरों पर पुत गया हो। लड़के वाले उठकर जाने लगते हैं तो रामदास गिड़गिड़ाने लगता है तथा शादी में और ज्यादा पैसा लगाने को तैयार हो जाता है। उस समय कमला अपने पिता को लड़के वालों के सामने झुकने को मना करती है। वह उनके सामने अपने पिता के सम्मान को गिरने नहीं देना चाहती। इससे उसके स्वाभिमानी होने का पता चलता है।

5. **समझदार** – कमला एक समझदार लड़की है। ज्ञानी सबेर जब उसे जगाने जाती है तो उसे दरवाजा खोलने में देरी हो जाती है। रामदास और ज्ञानो समझते हैं कि कमला ने अपने सांवले रंग से दुःखी होकर कुछ कर लिया है। लेकिन कमला दरवाजा खोलती है तो कहती है कि वह कोई ऐसा काम नहीं करेगी जिससे उसके माता–पिता को दुःखी होना पड़े।

वास्तव में कमला साहसी, स्वाभिमानी, समझदार तथा संवेदनशील लड़की है जो अपने परिवार की मर्यादा के लिए किसी के सामने झुकने को तैयार नहीं है। वह अपने पिता को भी दूसरों के सामने झुकने से रोकती है।

कमला आदर्श पथ की साहसी बालिका है जिसमें समाज का दिशा देने के प्रेरक भाव हैं।

2. रामफल चहल

साझा सीर

जीवन परिचय

रामफल चहल का जन्म हरियाणा के भिवानी जिले के नीमड़ी गांव में सन् 1956 ई० में हुआ था। अध्ययन के साथ–साथ इन्हें रंगमंच से भी लगाव रहा है। इन्होंने हरियाणवी फिल्मों में नायक के रूप में अभिनय भी किया है। इन्हें हरियाणवी जन–जीवन का गहरा अनुभव है, जिसकी झलक इनकी रचनाओं में देखी जा सकती है। वर्तमान में वे आकाशवाणी, कुरुक्षेत्र में कार्यरत हैं।

रचनाएँ – रामफल चहल का रचना संचार बहुत विस्तृत है। इन्होंने हरियाणवी रंगमंच, फिल्म गद्य, कविता, नाटक आदि अनेक विधाओं को अपनी रचनाधार्मिता से समृद्ध किया है। इनकी प्रमुख रचनाएँ 'स्वतंत्रता सेनानी एवं कवि फौजी मेहर सिंह, बाजे भगत : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, राम किशन व्यास : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, विघ्न की जड़, साझा सीर आदि हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ -

रामफल चहल का साहित्य हरियाणवी लोक जीवन एवं संस्कृति से जुड़ा हुआ है। इनके साहित्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं--

1. **यथार्थवाद** -- रामफल चहल ने अपने साहित्य में समाज में जो कुछ देखा है, उसका उसी रूप में चित्रण किया है। इस प्रकार उनकी साहित्यिक दृष्टि यथार्थवादी है। 'सांझा सीर' नाटक में लेखक ने स्पष्ट किया है कि किस प्रकार अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए धर्मसिंह मानसिंह को संन्यासी हो जाने से रोकता है। धर्म सिंह का परिस्थितियों के वशीभूत होकर स्वार्थपूर्ण समझौता करना लेखक के यथार्थवादी दृष्टिकोण का ही परिचायक है।

2. **भौतिकतावाद** -- रामफल चहल का दृष्टिकोण भौतिकतावादी है। उन्होंनें जीवन और जगत् को जैसा देखा और अनुभव किया है, उसका सहज भाव से निरूपण किया है। 'साझा सीर' नाटक में मान सिंह का छोटा भई धर्म सिंह शहर में पढ़ने जाता है। वहां की भौतिकता उसे इतना आकर्षित करती है कि वह पढ़ाई के स्थान पर घूमने–फिरने, सलीमा देखने आदि में ही लगा रहता है। लेखक ने भौतिकतावाद की चका–चौंध में अंधी हुई आज की पीढ़ी को परोक्ष रूप से यह संदेश दिया है कि वे अपनी सांस्कृतिक परंपराओं को त्याग कर पश्चिम का अंधानुकरण न करें क्योंकि यह भेड़चाल विनाश की ओर ले जा रही है।

3. **संस्कार भावना** -- रामफल चहल ने अपनी रचनाओं के माध्यम से हरियाणवी संस्कृति को वर्तमान संदर्भों से जोड़ते हुए अपने परंपरागत आदर्शों की रक्षा करने का प्रयास किया है। इस स्थिति में लेखक को विभिन्न त्रासदियों से भी गुजरना पड़ा है। 'सांझा सीर' नाटक में जब मानसिंह को राज से पता चलता है कि उसका छोटा भाई शहर में पढ़ने के स्थान पर फिल्में देखता है तो वह राज को कहता है –'रै फेर तूं उसका दोस्त कड़ै, तूं तो दुश्मन ओगा। वो तो भेज दिया सलीमे म्हैं, अर तू अड़ै पढ़ण लाग रह्या।' और जब मानसिंह को यह ज्ञात होता है कि उसका भाई उसे धोखा देकर उसके पैसों से शहर में मौज मस्ती कर रहा है तथा तीन साल से लगातार फेल हो रहा है तो वह संबंधों में आए इस अवमूल्यन पर निराश हो कर संन्यास लेकर हरिद्वार जाने का निश्चय कर लेता है।

4. **मनोवैज्ञानिकता** – रामफल चहल को मानव–मन की भावनाओं की गहरी पहचान है। इनकी रचनाओं में सर्वत्र अंतर्द्वन्द्व दिखाई देता है। पात्रों और स्थितियों को वे ऐस मोड़ देते हैं कि प्रत्येक स्थिति सहज और स्वाभाविक प्रतीत होती है। धर्म सिंह के चरित्र में बदलाव अचानक नही आता अपितु उस का मानसिक आंदोलन ही उसे अपने बडे भाई को मनाने के लिए तैयार करता है। धर्म सिंह का यह कथन उसके पश्चात्ताप का ही परिणाम है--'भाई मेरे तैं

गलती होगी मन्नैं माफ कर दे अर तमं हरद्वार मत जा।'

5. भाषा-शैली –रामफल चहल हरियाणवी जन–जीवन के लेखक हैं, इसलिए अपनी रचनाओं में उन्होंने व्यावहारिक बोलचाल की हरियाणवी भाषा का प्रयोग किया है, जिसमें हिंदी के तत्सम, तद्भव तथा विदेशी शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। जैसे–मतलब, दुश्मन, फिल्म, गर्ल फ्रैंड, हाल, पुलिस, कोशिश, प्रस्थान, अंतराल, पैंडल आदि। लेखक ने मुख्य रूप से संवादात्मक, व्यंग्यात्मक, चित्रात्मक तथा वर्णनात्मक शैलियों का प्रयोग किया है। ग्रामीण महिला द्वारा किए गए कार्यों का एक शब्द चित्र तथा इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है–'दखे सुणै सै के सारे गिहुंआ के गैअरे मन्नैं लाए सैं आर सारी तूड़ी सिर पै ढोई सै, लामणी लागण तै लेकीं आज ताहीं पूरी महीना हो गया काम मैं टूटती नै।'

निश्चय ही रामफल चहल मानवीय संवेदना के सफल चितेरे साहित्यकार हैं। इनका रचना संसार हरियाणवी लोक जीवन का दर्पण कहा जा सकता है।

नाटक-सार

'रामफल चहल' द्वारा लिखित 'साझा सीर' नामक हरियाणवी नाटक है। नाटक में आधुनिक भौतिकवादिता प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक संबंधों का यथार्थ चित्रण किया गया है। शहरी चकाचौंध से प्रभावित मानसिंह का छोटा भाई धर्म सिंह अपने भाई की ममता को हाशिये पर धकेलता हुआ उनकी खून पसीने की कमाई को व्यर्थ में खर्च करता है। रामफल चहल का यह नाटक यथार्थ का चित्रण करता है।

मानसिंह अपने भाई धर्मसिंह से मिलने देसी घी का डिब्बा लेकर जाता है। मानसिंह धर्मसिंह के होस्टल जाता है। ध र्मसिंह अपने कमरे में नहीं मिलता है। मानसिंह साथ वाले कमरें में धर्मसिंह के सहपाठी राज से मिलता है। मानसिंह को राज से पता चलता है कि धर्मसिंह बी०ए० फाईनल में नहीं है, अभी तक ग्यारहवीं कक्षा में है। वह लगातार तीन साल से फेल हो रहा है। धर्मसिंह शहर में लड़कियों के पीछे घूमता–फिरता है, पिक्चरें देखता है। मानसिंह को विश्वास नहीं होता है। मानसिंह धर्मसिंह के आने पर पूछताछ करता है। धर्मसिंह अपने सहपाठी राज को झूठा साबित करना चाहता है लेकिन मानसिंह उसे डांटता है कि वह कर्जा लेकर उसे शहर में पैसा भेजता है; उसके बच्चे तंगी में गुजारा कर रहे हैं। मानसिंह धर्मसिंह को गांव चलने के लिए कहता है। धर्मसिंह गांव जाने में आना–कानी करता है तो कुछ काम धंधा करने को कहकर मानसिंह गांव वापिस आ जाता है।

मानसिंह की पत्नी धनकौर मानसिंह से धर्मसिंह के विषय में पूछती है, वह उसे कुछ नहीं बताता है। कुछ समय बाद धर्मसिंह की चिट्ठी आती है कि वह पुलिस में भर्ती हो गया। धनकौर कहती है कि अब धर्मसिंह अपनी पढ़ाई पर लिया कर्जा उतार देगा। गेहूं पक कर तैयार होने पर धनकौर मानसिंह को पैंडल और सूट बनवाने के लिए कहती है। मानसिंह गेहू बेचकर पैसा आने पर बनवाने को कहता है तथा धनकौर को शहर जाकर खरीददारी करवाने को कहता है लेकिन धर्मसिंह अपनी पत्नी शांति को लेकर शहर चला जाता है।

गेहूं बेचने पर मिले पैसों से धर्मसिंह की पत्नी शांति पैंडल तथा सूट बनवा लेती है। इस बात को लेकर शांति और धनकौर में झगड़ा होता है। शांति अपने हिस्से की बात करती है। धर्मसिंह भी उसका साथ देता है। मानसिंह कहता है कि पिता जी के मरने के बाद उसे कर्जा लेकर पढ़ाया–लिखाया, उसका कोई एहसान नहीं है। मानसिंह धर्मसिंह को अपने बेटे रमेश को पढ़ाने–लिखाने की बात करता है। धर्मसिंह कहता है कि मेरे माँ–बाप तो मर गए थे इसलिए मानसिंह ने उसे पाला, पढ़ाया, लिखाया था लेकिन रमेश का पिता मानसिंह तो जीवित है, वह क्यों उसके जिम्मेदारी उठाएं मानसिंह यह कहता है कि फिर वह घर छोड़ कर हरिद्वार जाकर संन्यासी बन जाता है। फिर धर्मसिंह और शांति, धनकौर तथा रमेश की जिम्मेदारी स्वयं ही उठायेंगे और इतना कहकर घर से निकल जाता है। शांति को अपने झगड़े पर पछतावा होता है कि सारी जिम्मेदारी अब उन पर आ गई है वह धर्मसिंह से मानसिंह को रोकने को कहती है। शांति और धर्मसिंह मानसिंह को रोकते हैं तथा उससे अपनी गलती की क्षमा मांगते हैं कि ऐसी गलती कभी नहीं होगी। साथ रहने में ही लाभ है और इज्जत भी बनी रहती है।

व्याख्या

1. "आं रै तनैं क्याहे का भी ख्याल कोन्यां, तनैं बेरा सै मैं किसरू-किस घोरै पिस्से ब्याज पै ले की तनै द्यूं सूं अर मेरे बालक लुक्खी रोटी खां सै आर घी तेरे खातर दे ज्यां सूं। शर्म नहीं आती थोड़ी बोहत तनैं।"

शब्दार्थ – क्याहे=किसे, कोन्यां=नहीं, बेरा=पता, पिस्सै=पैसे, लक्खी=रुखी।

प्रसंग – प्रस्तुत संवादात्मक पंक्तियां 'रामफल चहल' द्वारा संपादित नाटक 'साझा सीर' में से ली गई हैं। लेखक ने इस नाटक में आधुनिक भौतिकवादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक सम्बन्धों के यथार्थ का वर्णन किया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में मानसिंह धर्मसिंह को उसके गलत कार्यों के लिए डांटता है। धर्मसिंह तीन साल से लगातार ग्यारहवीं में फेल हो रहा और मानसिंह से झूठ बोलताहै कि वह चौदहवीं कक्षा में है। शहर में लड़कियों के साथ घूमता है। मानसिंह उसको झूठ बोलने पर डांटता है कि धर्मसिंह की किसी भी बात का ध्यान नहीं है अर्थात् उसे भाई मान सिंह की इज्जत का ध्यान नहीं है। उसका भाई उसे कैसे पढ़ा–लिखा रहा है। मानसिंह कहता है कि उसे तो पता भी नहीं है वह किस प्रकार लोगों से पैसे ब्याज पर लेकर उसे भेजता है। अर्थात् मानसिंह ब्याज पर पैसे लेकर भेजता है और वह घूमने–फिरने और लड़कियों के साथ पिक्चर देखने में खर्च करता है। मानसिंह धर्मसिह के लिए घी का डिब्बा लेकर आता है जबकि गांव में उसके बच्चे रुखा–सूखा खाते हैं अर्थात् मां–बाप के मरने के बाद मानसिंह धर्मसिंह को अपने बच्चों की तरह पालता है। उसे शहर में पढ़ने भेजता है। देसी घी से सेहत बनी रहे भेजता रहता है जबकि अपने बच्चों को रुखा खाने के लिए देता है। मानसिंह डांटता है कि धर्मसिंह को शर्म आनी चाहिए कि उसका भाई उसके लिए इतना करता है और वह यहां पर आवारागर्दी कर रहा है।

विशेष –

(i) बड़ा भाई मां–बाप के मरने के बाद अपने बड़े होने का फर्ज पूरा कर रहा है और छोटा भाई आवारागर्दी कर रहा है।

(ii) भाषा भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है।

(iii) प्रभावी यथार्थ चित्रण है।

(iv) संवादात्मक शैली है।

2. "हाँ ईब तो खुलगी होंगी तेरी आंख अक् ईब वी कोन्या तसल्ली हुई। उन गिहूआं के पईसा ता तो इस बन्तों का पैण्डल बणग्या। सारी खुभात मन्नै करी अर पैण्डल या पहर कर गिरकावैगबी।"

शब्दार्थ – गिहूआं=गेहूँ, पईसा=पैसा, खुभात=मेहनत, पहरकी=पहन कर, गिरकावैगी=फिरना।

प्रसंग – प्रस्तुत संवादात्मक पंक्तियां 'रामफल चहल' द्वारा लिखित नाटक 'साझा सीर' में से ली गई हैं। लेखक ने इस नाटक में आधुनिक भौतिकवादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक सम्बन्धों के यथार्थ का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने उस समय का वर्णन किया था जब धर्मसिंह अपनी पत्नी शांति के साथ शहर में गेहूं बेचकर, शांति के लिए पैंडल तथा सूट बनवाकर देता है। धनकौर के स्वार्थ के लिए व्यंग्य करती है कि अब तो तुम्हारी आंखें खुल गई होंगी या अभी भी तसल्ली नहीं हुई है अर्थात् मानसिंह से धनकौर धर्मसिंह के सारे पैसे अपनी पत्नी पर खर्च करने पर शांति द्वारा हिस्सा मांगने पर कहती है कि अब तो आंखें खोल ले। भाई का ख्याल छोड़ दे या अभी भी कुछ बाकी है। धनकौर कहती है गेहूं लगाने, पानी देने, काटने तथा इकट्ठी करने में सारी मेहनत उसने की है, गेहूँ बेचकर आए पैसों से शांति का पैंडल बन गया है। मेहनत वह करे और पैण्डल पहनकर यह घूमेगी अर्थात् गेहूं के सभी प्रकार के कामों में मेहनत उसने की है और पैंडल शांति का बन गया। धनकौर के मन में वर्षों से पैंडल पहनने की इच्छा थी। वह मानसिंह से कहती भी है लेकिन वह मना कर देता है।

विशेष –

(i) धनकौर के वर्षों से पैंडल पहनने की इच्छा को दबा कर रखती है लेकिन शांति के पैंडल बनवाने और हिस्सा मांगने पर उसे मानसिंह पर क्रोध आता है।

(ii) नारी की आभूषणप्रियता का चित्रण है।

(iii) भाषा भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी है।

(iv) उद्‌बोधनात्मक तथा व्यंग्यात्मक शैली है।

3. हाँ भाई इज्जत तो बहोत घणी हो ज्या सै जब छोटे भाई की बहू जेठ आग्गै न्यू खुल्ले मुंह स्याहमी बोलण लागज्या तो इज्जत मैं तो के कमी रहै सै।

शब्दार्थ – जेठ=पति का बड़ा भाई, स्याहमी=सामने से, लागज्या=लग जाना।

प्रसंग – प्रस्तुत संवादात्मक पंक्तियां 'रामफल चहल' द्वारा संपादित नाटक 'साझा सीर' में से ली गई हैं। लेखक ने इस नाटक में आधुनिक भौतिकवादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक सम्बन्धों के यथार्थ का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने उस समय का वर्णन किया है जब शांति और धर्मसिंह दोनों अपना हिस्सा मांगते हैं। शांति धनकौर की मानसिंह के आगे ही बेइज्जती करती है। उस समय मानसिंह धर्मसिंह से गंभीर स्वर में कहता है कि तुम लोगों ने बहुत ज्यादा इज्जत दे रखी है। जब छोटे भाई की बहू अपने बड़ों के सामने खुले मुंह बोलने लग जाए तो इज्जत देने में क्या कमी रह जाती है अर्थात् जब घर के छोटे बड़ों के सामने बोलने लग जाते हैं तो उस इज्जत देने में भी बेइज्जती है। धर्मसिंह तथा शांति के मानसिंह के सामने धनकौर से झगड़ा करने पर मानसिंह को अपनी बेइज्जती अनुभव होती है।

विशेष –

(i) गांव में आज भी छोटे भाई की पत्नी जेठ से बोलना तो दूर उसके सामने खुले मुंह भी नहीं जाती अर्थात् घूंघट के बिना नहीं जाती है। यदि कोई ऐसा करता है तो बड़ों को अपनी बेइज्जती अनुभव होती है।

(ii) ग्रामीण परिवेश का सहज चित्रण है।

(iii) भाषा भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iv) संवादात्मक शैली है।

4. फेर आपणा तो बाब्बु मरग्या था, ज्यों तै पढ़ज्ञया मैं। तनै जै बाब्बु जिनता रहै ए तो तेरा अहसान क्यूं हुवै ए। तू तो जीवै सै आपणे छोहरे न खुदै पढ़ा, अर मन्नै करदे न्यारा।

शब्दार्थ – बाब्बु=पिता, बापू, जिनता=जीवित, छोहरे=लड़का, न्यारा=अलग।

प्रसंग – प्रस्तुत संवादात्मक पंक्तियां 'रामफल चहल' द्वारा संपादित नाटक 'साझा सीर' में से ली गई हैं। लेखक ने इस नाटक में आधुनिक भौतिकवादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक सम्बन्धों के यथार्थ का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन करता है जब मानसिंह धर्मसिंह से कहता है कि वह भी उसके लड़के को उसी तरह पढ़ाए–लिखाए जैसे उसने उसको पढ़ाया है। धर्मसिंह पराई औलाद को पढ़ाने के लिए मना करता है। मानसिंह कहता है यदि वह भी ऐसा सोच लेता तो उसके सिर कर्जा न चढ़ता। उस समय धर्मसिंह कहता है कि उसके तो मां–बाप मर गए थे इसलिए उसने उसे पढ़ाया अर्थात् मां–बाप के मरने के बाद बड़े भाई की जिम्मेदारी थी। उसको पढ़ाना लिखाना इसलिए उसने उसे पढ़ाया। धर्मसिंह कहता है कि यदि बापू जीवित होते तो उसका उस पर क्यों एहसान होता अर्थात् यदि मां–बाप जीवित रहते थे तो मानसिंह का उस पर यह एहसान नहीं होता कि उसने उसे पालकर बड़ा किया है। धर्मसिंह अपने भाई से कहता है कि आप तो अभी जीवित हो इसलिए अपने लड़के को स्वयं पढ़ा–लिखा और उसे जमीन–जायदाद में हिस्सा देकर अलग कर दे अर्थात् धर्मसिंह का अभिप्राय यह है कि अभी तो मानसिंह जीवित है इसलिए यह तो उसी की जिम्मेदारी है, उसकी जिम्मेदारी नहीं हैं। धर्मसिंह अपने भाई को अलग होने के लिए भी कहता है।

विशेष –

(i) आधुनिक भौतिकवादी समाज समाज में खून के रिश्ते फीके हो गए हैं। धर्मसिंह मानसिंह को अपनी जिम्मेदारी स्वयं उठाने को कहकर अलग होने की बात करता है।

(ii) बिखरते परिवार का चित्रण है।

(iii) भाषा भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iv) शैली संवादात्मक है।

5. बेगारी सीख जो न्यूंरा सेध्या करे, आज मन्नैं रोको सो तड़कै फेर बेईमाना करोगे।

शब्दार्थ – सेध्या=तंग करना, तडकै=सुबह, बेगारी=बेगानी।

प्रसंग – प्रस्तुत संवादात्मक पंक्तियां 'रामफल चहल' द्वारा लिखित नाटक 'साझा सीर' में से ली गई हैं। लेखक ने इस नाटक में आधुनिक भौतिकवादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक सम्बन्धों के यथार्थ का वर्णन किया गया है।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने उस समय का वर्णन किया है जब घर छोड़कर जाते हुए मानसिंह को धर्मसिंह और उसकी पत्नी रोकते हैं और अपनी गलती पर पछताते हुए माफी मांगते हैं। शांति अपनी माँ की शिक्षा में आकर घर में लड़ाई करके अलग होना चाहती थी। शांति अपनी गलती मानती है। उस समय मानसिंह कहता है कि बेगानी बातों पर चलकर दुःख ही होता है अर्थात् मानसिंह के घर छोड़कर जाने पर पूरे घर की जिम्मेदारी धर्मसिंह और शांति पर आ जाती है। मानसिंह कहता है कि अब तो तुम लोग मेरे को जाने से रोक रहे हो, फिर किसी की बातों में आकर सुबह उठकर फिर से मन में बेईमानी आ जाए अर्थात् कहीं फिर से दोनों के मन में अलग होने की इच्छा जागृत हो जाए।

विशेष –

(i) दूसरों की बातों में आकर घर में झगड़ा होने का संदर्भ है।

(ii) समाज में व्याप्त बेईमानी का चित्रण है।

(iii) भाषा भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) प्रभावी यथार्थ चित्रण है।

(iv) शैली विचारात्मक है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 'साझा सीर' हरियाणवी नाटक के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – साहित्य रचना बिना उद्देश्य के संभव नहीं है, जो लोग यह घोषित करते हैं कि 'कला' कला कि लिए है और उसका कोई उद्देश्य होना आवश्यक नहीं, वे कला को जीवन काटने का अपराध करते हैं। जीवन से कट कर साहित्य या कला निरर्थक हो जाती है। साहित्य रचना समाज में, समाज के लिए, प्राणियों द्वारा की जाती है। साहित्य जीवन का दर्पण भी होता है और दीपक भी। साहित्य में जीवन का चित्रण भी रहता है और उसे सुधारने का संकेत भी। साहित्य जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करता है तथा उसके सामने आदर्श भी प्रस्तुत करता है। काव्य का लक्ष्य यदि आनंद प्राप्ति है तो नाटक से भी आनंद प्राप्त होता है। नाटक से मनोरंजन, ज्ञान, वृत्तियों के सुधार तथा उपदेश का काम किया जा सकता है। प्रेमचन्द ने नाटक का मुख्य उद्देश्य 'मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को उजागर करना' माना है। वे नाटक को 'मानव जीवन की व्याख्या भी मानते थे।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर 'रामफल चहल' द्वारा रचित नाटक 'साझा सीर' पर विचार करें तो ज्ञान होगा यह एक सोद्देश्य रचना है जिसमें लेखक ने आधुनिक भौतिकतावादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक संबंधों के यथार्थ का वर्णन किया है। इस नाटक का उद्देश्य निम्नलिखित है–

1. भौतिकतावाद – 'रामफल चहल' ने 'साझा सीर' नाटक में आधुनिक समाज में बढते भौतिकतावाद के प्रभाव को दिखाया है। नाटक का मुख्य पात्र मानसिंह का छोटा भाई धर्मसिंह शहर में रहकर पढ़ रहा है। मानसिंह गांव में ब्याज का पैसा लेकर धर्मसिंह को शहर भेजता है और उसकी सेहत बनी रहे उसके लिए देशी घी का डिब्बा भी भेजता रहता है लेकिन धर्मसिंह शहर की चकाचौंध में खो जाता है। लड़कियों के साथ घूमता–फिरता है लेकिन पिक्चरें देखने जाता है। वह भाई के सिर कर्जा करके शहर में आवारागर्दी कर रहा है। धर्मसिंह तीन साल से लगातार फेल हो रहा है लेकिन वह अपने भाई मानसिंह को अपने फेल होने का नहीं बताता है। मानसिंह को जब धर्मसिंह के सहपाठी

से पता चलता है बहुत दुःख होता है। इससे आज के नवयुवकों में बढ़ते भौतिकतावाद के प्रभाव का ज्ञान होता है कि किस तरह वह अपने परिवार वालों को बेवकूफ बनाते हैं।

2. पारिवारिकता – 'साझा सीर' नाटक में लेखक ने आधुनिक समाज में फीके पड़ते सामाजिक संबंधों का वर्णन किया है। मां–बाप के मरने के पश्चात् मानसिंह अपने छोटे भाई धर्मसिंह को अपने बच्चों से भी अधिक अच्छी तरह पालता है। उसे शहर पढ़ने–लिखने भेजता है लेकिन धर्मसिंह शहर में रहकर अपने भाई को धोखा देता है। मानसिंह द्वारा ब्याज पर लेकर भेजे गए पैसों को आवारागर्दी पर खर्च करता है। मानसिंह को जब पता चलता है तो दुःख होता है। धर्मसिंह अपनी पत्नी शांति से मिलकर शहर में गेहूं बेचकर सारे पैसों का पैंडल तथा सूट बनवा लेता है जिससे मानसिंह की पत्नी धनकौर दुःखी होती है कि उसने खेतों में इतनी मेहनत की और उसे कुछ भी नहीं मिला। बात बढ़ने पर धर्मसिंह मानसिंह के अब तक उसके लिए किए को उसका फर्ज बताकर उससे अलग होने की बात करता है। इससे आधुनिक समाज में संयुक्त परिवार स्वार्थपन के कारण टूटते दिखाई देते हैं। पारिवारिक स्वार्थपन अपनों को अपनों से दूर कर रहा है।

3. यथार्थ-चित्रण – 'सांझा सीर' नाटक में जीवन के यथार्थ को दिखाया है कि जब स्वयं पर जिम्मेदारी पड़ती है तो कैसा अनुभव होता है। मानसिंह धर्मसिंह से कहता है कि वह तो हरिद्वार जाकर संन्यासी हो जाएगा। सारे परिवार की जिम्मेदारी वह अकेला उठाए और घर छोड़कर चल देता है। उस समय धर्मसिंह और शांति, जिनका दिमाग आसमान में उड़ रहा था, धरातल पर आ जाता है क्योंकि उन दोनों को पूरे परिवार की जिम्मेदारी उठानी पड़ेगी और कर्जा भी चुकाना पड़ेगा। इसलिए परिस्थितियों के वशीभूत हो धर्मसिंह स्वार्थ वश मानसिंह को जाने से रोकता है और अपनी गलतियों की क्षमा मांगता है। इससे पता चलता है कि जब जिम्मेदारियों का एहसास होता है, आदमी आसमान से धरातल पर आ जाता है।

वस्तुतः 'साझा सीर' नाटक का मुख्य उद्देश्य है कि पारिवारिक संबंध साथ रहने से ही अच्छे बनते हैं। अलग–अलग रहने से हाथ कुछ नहीं लगता है। बढ़ती भौतिकतावाद से दूर रहकर ही सामाजिक संबंधों को मजबूत बनाया जा सकता है। इसलिए अंत में धर्मा व शांति कहते हैं, 'ना हाम तो साझे ए रहांगे। साझै म्हां ए सबका सीर हो सै।' साथ रहने में ही सबकी इज्जत है। पारिवारिक संदर्भ का प्रेरक रेखांकन है।

प्रश्न 2 'साझा सीर' की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – भाषा भावों की अभिव्यक्ति का उत्तम साधन है। यह साधन जितना उत्तम होगा, रचना भी उतनी उत्कृष्ट मानी जाएगी। नाटक जीवन का दर्पण और मानव जीवन का चित्र है। अतः लेखक की सफलता इस बात में है कि वह अपने नाटक की भाषा–शैली को अधिक से अधिक सरल और सरस बनाने का प्रयत्न करे। इसलिए भाषा में सरलता, सरसता, मधुरता तथा अभिव्यक्ति की सक्षमता का गुण होना चाहिए।

'रामफल चहल' 'साझा सीर' नाटक में अपने भावों को व्यक्त करने में पूर्ण रूप से सफल हुए है। भाषा की दृष्टि से 'साझा सीर' नाटक में निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती हैं–

1. सरल भाषा – 'रामफल चहल' ने 'साझा सीर' नाटक में आधुनिक भौतिकतावादी प्रभाव के कारण बदलती मानसिकता तथा फीके पड़ते सामाजिक संबंधों का वर्णन किया है जिसके लिए उन्होंने आम लोगों की भाषा को ही अपनी अभिव्यक्ति के रूप में अपनाया है जैसे–

"आ रै तनै क्याहे का भी ख्याल कोन्यां, तनैं बेरा सै मैं किस–किस धोरै पिस्से ब्याज पै ले कीं तनैं दयूं सूं, अर मेरे बालक लुक्की रोटी खां सै अर घी तेरे खातर दे ज्यां सूं। शर्म नहीं आती थोड़ी बोहत तनै।" लेखक ने इन पंक्तियों में एक ऐसे व्यक्ति का वर्णन किया है जो अपने छोटे भाई को कर्जा लेकर शहर में पढ़ने भेजता है लेकिन भाई शहर में आवारागर्दी करता है, भाई को शर्म करने को कहने से कथन में स्वाभाविकता आ गई है।

2. पात्रानुकूल भाषा – 'रामफल चहल' ने साझा सीर' नाटक में स्थिति एवं मनोभावों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया है। शांति का धर्मा को अपने हिस्से के लिए उकसाते हुए यह कहना–"आए साल इतण नाज होण लाग रह्या तेरा के हिस्सा ना था उसमै।"

मानसिंह और धनकौर का यह वार्तालाप उनके संबंध के अनुरूप है। जैसे–

धनकौर – उठ कै मुंह तो धोले, अक खाट मैं पड़या ए पड़या खागा।

मानसिंह – ल्यावै न शेरां के मुंह किसनै धोए सै।

धनकौन – तो तनैं गादड़ों कै पाच्छे कोण लोटे लेकी भाजता देख्या ? अके भाई गादड़ मुंह धोके जीमीए।

3. प्रवाहमयी भाषा – 'साझा सीर' नाटक में लेखक ने प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग किया है। वार्तालाप अत्यंत सहज तथा कथावस्तु को गति प्रदान करने वाले हैं। जैसे–धर्मसिंह के सहपाठी राज का यह कथन–

"जी चौदहवीं इस साल कैसे, वो पिछलै तीनूं साल तो फेल था, अभी तो ग्यारहवीं में ही है।"

इन पंक्तियों में सहज प्रवाहमयी भाषा के दर्शन होते हैं।

4. शब्द-शिल्प – 'साझा सीर' नाटक की भाषा में हरियाणवी शब्दावली का प्रयोग किया गया है। लेखक ने नाटक में पात्र, परिस्थिति, वातावरण तथा भाव के अनुकूल हरियाणवी शब्दावली का प्रयोग किया है। जैसे–आंगण, घाल, अक, कोण, रै, सै, अर, घरां, बेरा, ईब, मन्नै, तीनूं, चालां, हाम, सीर आदि।

5. शैली – 'साझा सीर' नाटक में 'रामफल चहल' ने मुख्य रूप से संवादात्मक शैली का प्रयोग किया है। इससे कथा में रोचकता एवं गति आ गई है। पात्रों के व्यक्तित्व एवं चरित्रों का उद्‌घाटन भी संवादों से होता है। संवादों से पात्रों की मानसिक स्थिति का भी ज्ञान होता है। संवादों में व्यंग्यात्मकता भी मुखरित हो उठती है। मानसिंह के खिचड़ी में घी मांगने पर धनकौर कटाक्ष करती है–लच्छण तो तेरे इस सै आक घी का बारा ए ल्याकै धरदयूं तेरे आगै। वो कटावणी म्हं दूध रहया खा की पड़ रहै न। लेखक ने कहीं–कहीं विचारात्मक शैली का भी प्रयोग किया है। जैसे–"हां भाई इज्जत तो बहोत घणी हो ज्या सै जब छोटे भाई की बहू जेठ आग्गै न्यूं खुल्ले मुंह स्याहमी बोलण लागज्या तो इज्जत मैं तो के कमी रहै सै।"

वास्तव में 'साझा सीर ' की भाषा शैली पात्रानुकूल, कथावस्तु के अनुरूप तथा वातावरण की सृष्टि करने में समर्थ है। यह अत्यंत सरल, सहज तथा स्वाभाविक है। हरियाणवी शब्दावली होने के कारण भाषा प्रवाहमय है। नाटक संवादात्मक शैली में है, कहीं–कहीं व्यंग्यात्मक तथा विचारात्मक शैली का भी ज्ञान होता है।

प्रश्न 3 'साझा सीर' नाटक के आधार पर मानसिंह का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर – 'साझा सीर' नाटक रामफल चहल द्वारा रचित है। इस नाटक का मुख्य पात्र मानसिंह है। मानसिंह आधुनिक भौतिकतावादी प्रभाव के कारण बिगड़ते पारिवारिक संबंधों से टूट गया है। मानसिंह के चरित्र की मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. पारिवारिकता – मानसिंह का घर बड़ा है। मानसिंह के परिवार में उसका छोटा भाई पत्नी धनकौर एवं एक लड़का है। वह खेती–बाड़ी करता है। वह परिवार चलाने में प्रयासरत है।

2. ईमानदार – मानसिंह ईमानदार आदमी है। मां–बाप के मरनें के पश्चात् वह अपने छोटे भाई का ध्यान पूरी ईमानदारी से रखता है। उसके मन में छल–कपट नही है। अपनी इसी आदत के कारण अपने भाई धर्मसिंह और उसकी पत्नी को शहर गेहूं बेचने भेज देता है।

3. सहज स्वभाव – मानसिंह स्वभाव का सीधा है। उसके स्वभाव में धोखा–धड़ी नहीं है। अपने इसी स्वभाव के कारण अपने भाई के हाथों छला जाता है। मानसिंह ने अपने छोटे भाई को शहर में ब्याज पर पैसा लेकर पढ़ने के लिए भेज रखा था लेकिन भाई धर्मसिंह उन पैसों को आवारागर्दी पर खर्च करता है और तीन साल से लगातार फेल हो रहा है। मानसिंह को उसके सीधे स्वभाव के कारण पता नहीं चलता है।

4. अनुज स्नेह – मानसिंह अपने छोटे भाई से बहुत प्यार करता है। वह अपने बच्चों को रुक्खा–सूखा खाने को देता है, लेकिन अपने छोटे भाई को देसी घी का डिब्बा देना नहीं भूलता है। भाई को ब्याज पर लाकर पैसे देता है जिससे उसके सिर कर्जा हो जाता है। धर्मसिंह के अलग होने की बात सुनकर मानसिंह घर छोड़कर हरिद्वार जाकर रहने को तैयार हो जाता है–"हरद्वार जा सूं। संन्यास ल्यूंगा। इसतै दोनू काम हो ज्यांगे न्यारा होण तै बच जागा अर कर्जा यो धर्मा आपणे आप उतारैगा।"

5. प्रेरक व्यक्तित्व – मानसिंह अपने छोटे भाई के व्यवहार से दुःखी है। मानसिंह शहर में छोटे भाई धर्मसिंह से

मिलने जाता है तो उसके सामने धर्मसिंह की असलियत आ जाती है। मानसिंह धर्मसिंह से कहता है–""आ रै तनै क्याहे का भी ख्याल कोन्यां, तनैं बेरा सै मैं किस–किस धोरै मिस्से ब्याज पै ले कीं तनैं दयूं सूं, अर मेरे बालक लुक्की रोटी खां सै अर घी तेरे खातर दे ज्यां सूं। शर्म नहीं आती थोड़ी बोहत तनै।" धर्मसिंह मानसिंह के बेटे रमेश की जिम्मेदारी उठाने को 'पराई औलाद' कह कर इंकार कर देता है तो मानसिंह दुःखी हो जाता है और कहता है कि "भाई जैं मैं बी न्यूए सोच लेता तो ना तो मेरे सर कर्जा चढैऐ अर तू पाली रहता।" मानसिंह अपने भाई–भाभी के व्यवहार से दुःखी हो हरिद्वार जा कर संन्यासी बनने को कहकर घर छोड़कर चला जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज के भौतिकतावादी प्रभाव के कारण खून के रिश्ते कमजोर पड़ने के कारण घर के बड़े दुःखी हो उठते हैं। मानसिंह अपना सब कुछ छोटे भाई पर खर्च करके खुश रहता है। वही भाई उसके बच्चों को पराई औलाद कहकर उनकी जिम्मेदारी उठाने को मना कर देता है।

प्रश्न 4 'साझा सीर' नाटक के आधार पर धर्मसिंह का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर – 'रामफल चहल' द्वारा रचित 'साझा सीर' नाटक में धर्मसिंह मानसिंह का भाई है। लेखक ने धर्मसिंह के माध्यम से शहरी चकाचौंध से प्रभावित नवयुवक खून के रिश्तों को परे धकेलते हुए अपने स्वार्थों की पूर्ति करते हैं। धर्मसिंह के चरित्र की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **पारिवारिकता** – 'साझा सीर' नाटक में धर्मसिंह के मां–बाप मर चुके हैं। घर में बड़ा भाई मानसिंह, भाभी धनकौर तथा उनका लड़का रमेश है। धर्मसिंह की पत्नी का नाम शांति है। वह पुलिस में नौकरी करती है।

2. **नगरीय प्रभाव** – धर्मसिंह गांव से जब शहर पढ़ने जाता है, वह भी शहरी चकाचौंध से प्रभावित हो जाता है। शहर में वह लड़कियों के साथ घूमता–फिरता है। पिक्चर देखता है। इसी कारण वह ग्यारहवीं में तीन साल लगातार फेल हो चुका है। उसने फेल की बात अपने घर नहीं बता रखी थी। मानसिंह को जब इस बात का पता चलता है। वह धर्मसिंह से पूछताछ करता है "तूं सांची सांच बता इबकै कोण सी जमात मैं सै यो छोहरा न्यूं कहवै था तू ग्यारहवीं मैं ऐ सै अर तीनूं साल फेल हुया था।"

3. **भातृ-प्रेम** – धर्मसिंह अपने बड़े भाई से विश्वासघात करता है। मां–बाप के मरने के पश्चात् मानसिंह उसका अपने बच्चों से भी अधिक ख्याल रखता है। धर्मसिंह को शहर में पढ़ने के लिए ब्याज पर पैसे लेकर भेजता है जिससे उसके सिर कर्जा भी चढ़ जाता है। उन पैसों से धर्मसिंह शर में मौज–मस्ती करता है तथा अपने भाई के विश्वास को तोड़ता है। ऐसे ही जब धर्मसिंह अपनी पत्नी के साथ जाकर शहर में गेहूं बेचकर मिले पैसों से अपनी पत्नी के लिए पैंडल तथा सूट बनवाता है और मानसिंह के कहने पर भी अपनी भाभी के लिए कुछ नहीं लाता है। भाभी धनकौर को उसके इस विश्वासघात से क्रोध आता है और वह धर्मसिंह को फटकारती है।

4. **स्वार्थ भाव** – धर्मसिंह स्वार्थी आदमी है। धर्मसिंह को पता था कि उसके भाई कर्जा लेकर उसे शहर में पढ़ने भेज रखा है लेकिन शहर की मौज–मस्ती में डूबकर वह स्वार्थी हो जाता है। मानसिंह के यह कहने पर कि जितने साल मैंने तुझे पढ़ाया लिखाया, उतने मेरे बेटे रमेश को पढ़ा–लिखा, धर्मसिंह बेगानी औलाद की जिम्मेदारी क्यों उठाए कहकर मना कर देता है और अपना हिस्सा मांगता है। इससे उसके स्वार्थी होने का पता चलता है।

5. **भावुक** – धर्मसिंह बहुत भावुक है, वह अपनी पत्नी शांति की बातों में आकर अपने भाई से लड़ाई करता है और हिस्सा मांगता है, मानसिंह उसे जो पढ़ाया लिखाया है, वह तो उसका फर्ज था। मानसिंह पर कोई एहसान नहीं करा है। पत्नी की बातों में आकर गेहूं बेचकर मिले पैसे खर्च कर देता है और अलग होने की बात करता है।

6. **आत्मबोध** – मानसिंह धर्मसिंह के स्वार्थ से दुःखी होकर घर छोड़कर हरिद्वार में संन्यासी बनने को कहता है और घर छोड़कर चला जाता है। उस समय धर्मसिंह को अनुभव होता है कि उसके ऊपर पूरे परिवार तथा कर्जा उतारने की जिम्मेवारी आ गई है। वह अपनी पत्नी के साथ जाकर मानसिंह को हरिद्वार जाने से मना करता है और अपनी गलतियों की क्षमा मांगता है। धर्मसिंह मानसिंह को मना कर घर ले आता है और कहता है कि–"ना हाम तो साझै ए रहांगे। साझे म्हां ए सबका सीर हो सै।"

निश्चय ही धर्मसिंह शहरी चकाचौंध में फंस कर खून के रिश्तों की अहमता को पीछे धकेलता हुआ अपने स्वार्थ में डूबा हुआ है। वह अपने भाई मानसिंह को भी परिस्थितिवश स्वार्थ के वशीभूत होकर वापस लाता है।

3. रघुवीर सिंह मथाणा

स्वर्ण जयंती

जीवन परिचय

हरियाणवी गद्य लेखकों में मथाणा का नाम विशेष रूप से लिया जाता है। रघुवीर सिंह मथाणा का जन्म सन् 1954 ई० में कुरुक्षेत्र जिले के मथाना गांव में हुआ था। इन्होंने एम०ए० हिन्दी सांहित्य में उत्तीर्ण की थी। इन्हें हरियाणवी लोक जीवन और संस्कृति से विशेष मोह है। वर्तमान में हरियाणा पुलिस में कार्य करते हुए भी इनका संबंध हरियाणवी साहित्य सृजन से बना हुआ है।

रचनाएँ – रघुवीर सिंह मथाणा हरियाणा पुलिस में होते हुए भी अपने लेखन से विलग नहीं रहे हैं। इन्होंने साहित्य की विभिन्न विधाओं जैसे–कहानी, पत्रकारिता, उपन्यास, कविता, नाटक आदि में भरपूर लेखन कार्य किया हैं इनकी प्रसिद्ध रचनाएं 'कोहरा, भटकी गलियां बहके लोग, आर्त्तनाद, रोशनी, महक माटी की, खाली हाथ, बल्लभगढ़ का नाहर, बदलते पात्र, हरियाणा कहावतों के झरोखे से, संत ब्रह्मनंद सरस्वती : व्यक्तित्व एवं कृतित्व आदि हैं।

साहित्यिक विशेषताएँ -

रघुवीर सिंह मथाणा ने सृजनात्मक एवं आलोचनात्मक दोनों प्रकार के साहित्य की रचना की है। इनके साहित्य म हरियाणवी लोक जीवन का यथार्थ स्वरूप दिखाई देता है। इनके साहित्य की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

1. **यथार्थ चित्रण** – रघुवीर सिंह मथाणा ने अपनी रचनाओं में वर्तमान जीवन में व्याप्त विभिन्न विसंगतियों का चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। आज के समाज में जी रहे व्यक्ति की विवशताओं का सजीव अंकन इनके साहित्य की प्रमुख विशेषता है। 'स्वर्ण जयंती' एकाकी में लेखक ने थाने के मुंशी की ऐसी ही दशा का वर्णन किया है जो एक असहाय बुढ़िया की सहायता करना चाहता है, परंतु समाज के तथाकथित प्रभावशाली लोगों के भय से कुछ नहीं कर पाता।

2. **मनोवैज्ञानिकता** – रघुवीर सिंह मथाणा एक यथार्थवादी साहित्यकार हैं, परंतु इन्होंने अपनी रचनाओं में पात्रों का हृदय परिवर्तन किसी अलौकिक चमत्कार के माध्यम से न कर के मनोवैज्ञानिक रूप से किया है। वे स्थिति अथवा पात्र को ऐसे मोड़ पर पहुँचा देते हैं जहाँ उस स्थिति पर पात्र मानसिक द्वंद्व में फंस कर उचित–अनुचित के मंथन में लग जाता है तथा अपने अंतर्मन की आवाज पर उचित के पक्ष में निर्णय लेकर सद्मार्ग पर चलने कप प्रयास करता है। 'स्वर्ण जयंती' एकांकी का थाने का मुंशी भी अपने मन की बात सुन कर समाज के प्रभावी लोगों की चिंता न करते हुए गरीब बुढ़िया की सहायता करने का निर्णय करता है और सिपाही कहता है कि–'जा रै ताई नै वापस बुला कै ल्या। आज स्वर्ण जयंती नै, स्वर्ण युग का आगाज हम ही करैं गे।

3. **युगबोध** – रघुवीर सिंह मथाणा की रचनाओं में परिवेश का चित्रण अत्यंत सूक्ष्मता के साथ किया गया है। इनकी अधिकांश रचनाओं में गांव, कस्बे, नगर के विभिन्न वातावरणों का सजीवता के साथ अंकन प्राप्त होता है। 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में लेखक ने एक थाने के कार्यालय का शब्द चित्र–सा प्रस्तुत कर दिया है। जैसे–'थाना के मुंशी का कार्यालय। मेज, कुर्सी और मेज के सामने एक लकड़ी का बैंच रखा है। मेज पर टेलीफोन रखा है। मुंशी कुर्सी पर बैठा है। सामने मेज पर रोज़नामचा की किताब बंद रखी है। मुंशी ड्यूटी रजिस्टर को देख रहा है। बैंच पर सामने एक सिपाही बैठा है।

4. **चित्रमयता** – रघुवीर सिंह मथाणा शब्दों के जादूगर हैं। वे अपनी भाषा के माध्यम से किसी भी स्थिति, घटना अथवा व्यक्ति का शब्द चित्र प्रस्तत करने में निपुण हैं। 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में भी इन्होंने यह चमत्कार दिखाया

है। थाने में आने वाली बुढ़िया का वर्णन करते हुए लिखता है--'जर्जर वस्त्रों में अपनी बुझी देह को लिपटाए हुए एक बुढ़िया का प्रवेश। उस का दम फूला हुआ है।' एक अन्य स्थान पर व्यक्ति का वर्णन किया गया है--'दो आदमी एक तीसरे आदमी को दोनों ओर से कंधों से पकड़े हुए प्रवेश करते हैं। वह व्यक्ति जख्मी हालत में हैं। सारे वस्त्र खून से सने हुए हैं और वह कर्राह रहा है।'

5. **भाषा-शैली** -- रघुवीर सिंह मथाणा की भाषा हिंदी के तत्सम, तद्भव; विदेशी, पंजाबी तथा देशज शब्दों से युक्त हरियाणावी है। जैसे--ताई, टैम, क्यूंकर, पुत्तर, खोट्टा, चंगा, तफतीश, फुरसत, मुलाजम, मैसेज, ट्रैफिक, वायरलैस, नामोनिशान, बेरूखी, व्यक्ति, वस्त्र, प्रस्थान आदि। लेखक ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। बुढ़िया ठेठ पंजाबी बोलती है। लेखक ने मुख्य रूप से वर्णनात्मक, व्यंग्यात्मक, संवादात्मक तथा विचारात्मक शैलियों का प्रयोग किया है। पात्रों की रूपरेखा तथा स्थिति विशेष का वर्णन करते हुए लेखक की शैली चित्रात्मक भी हो जाती है।

रघुवीर सिंह मथाणा हरियाणवी लोक साहित्य के सफल चितेरे कहे जा सकते हैं। इन्होंने विभिन्न सामाजिक वर्जनाओं का यथार्थ अंकन करते हुए उन का आदर्शोन्मुख समाधान भी प्रस्तुत करने का प्रयास किया हैं

एकांकी-सार

'स्वर्ण जयंती' 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित हरियाणवी एकांकी है। लेखक ने इस एकांकी में देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में अनसुने रह जाती हैं। लेखक ने इस एकांकी में भ्रष्टाचार और विसंगतियों के बीच संघर्षरत व्यक्ति की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है।

शहर के थाने में मुंशी स्वर्ण जयंती के लिए पुलिस की ड्यूटी लगा रहा है। उस समय फटेहाल एक बुढ़िया आती है। मुंशी बुढ़िया को बेंच पर बैठने के लिए कहता है। बुढ़िया वहीं जमीन पर बैठ जाती है और मुंशी से कहती है कि उसने बहुत दिनों से उसकी ओर चक्कर नहीं लगाया है। मुंशी समय की कमी बताता है। मुंशी बुढ़िया से थाने में आने का कारण पूछता है। बुढ़िया बताती है कि सड़क के किनारे, जहाँ पर वह भुट्टा बेचती है, वहाँ पर कुछ शरारती लड़के भुट्टा खाकर बिना पैसे दिए चले जाते हैं। बुढ़िया की बात पूरी होने से पहले ही मुंशी के पास फोन आता है कि प्रकाश फिलिंग स्टेशन पर डकैती हो गई है। मुंशी सिपाही को वायरलैस ऑपरेटर से कंट्रोल रूम, एस०एच०ओ० और एस०पी० साहब को मैसेज करने के लिए कहता है। सिपाही वायरलैस ऑपरेटर मुंशी से एक पी०जी०आई० में बर्निंग केस की सूचना देता है। लड़की दहेज के कारण जल कर मरी है।

मुंशी झल्ला जाता है कि इसे भी आज ही मरना था। मुंशी बर्निंग केस छोड़कर पहले प्रकाश फिलिंग स्टेशन पर पड़ी डकैती का मैसेज भेजता है। मुंशी को वहाँ बैठी बुढ़िया का ध्यान आता है। वह बुढ़िया से उन शरारती लड़कों के नाम बताने के लिए कहता है।

बुढ़िया नाम बताने लगती है, उसी समय दो--तीन व्यक्ति एक घायल व्यक्ति को लेकर आते हैं। उन लोगों को मारने वाले व्यक्ति की रिपोर्ट करनी थी क्योंकि उसके बिना अस्पताल में कोई डॉक्टर नहीं देखेगा। मुंशी उन्हें कहता है कि आज स्वर्ण जयंती के कारण बड़े--बड़े नेता लोग शहर में आए हुए हैं। वहीं सारी पुलिस की ड्यूटी लगी हुई है। जब कोई हवलदार आएगा तो वह उसे अस्पताल भेज देगा। वे लोग रिपोर्ट करने की जिद करते हैं। मुंशी उन्हें डांट कर भगा देता है।

थाने में मुंशी के पास फोन आता है कि जिस रास्ते पर नेता जी की गाड़ी निकलनी थी, वहाँ ट्रेफिक जाम हो गया है। मुंशी जल्दी से एस०पी० साहब को वायलेस से मैसेज भेजने की कहता है। मुंशी को बुढ़िया की याद आती है तो वह उससे पूछता है कि उन लड़कों के नाम बताए। बुढ़िया पूछती है कि क्या आज पन्द्रह अगस्त है ? मुंशी कहता है कि 15 अगस्त के साथ--साथ आज पूरे पचास साल देश को आजाद हुए हो गए हैं। बुढ़िया को पचास साल पहले की मार--काट याद आ जाती है। वह कहती है कि जो यादें दुःख दें, उन्हें भुलादेना ही ठीक है। लेकिन मुंशी कहता है कि पर भूलती तो नहीं हैं। उस समय भी धर्म के नाम पर झगड़ा हुआ था। आज भी धर्म के नाम पर दंगा--फसाद चल रहा है। बुढ़िया मुंशी को बताती है कि उसके भुट्टों को नुकसान बग्गे के आदमियों ने पहुंचाया है। बग्गे का नाम सुनकर मुंशी और सिपाही दोनों के चेहरे उतर जाते हैं। बग्गे की बड़े--बड़े नेताओं से जान--पहचान है।

मुंशी कहता है कि यह बड़े लेवल की बात है। यदि कोई और होता, वह उसकी खाल खींच लेता। मुंशी बुढ़िया को

कहीं और बैठकर भुट्टा बेचने के लिए कहता है। बुढ़िया कहती है कि इस बात की क्या गारंटी है कि वहां उसे कोई आदमी तंग नहीं करेगा। मुंशी की मजबूरी देखते हुए बुढ़िया उसे मन न खराब करने को कहकर चली जाती है। मुंशी को अपने पीछे एक गीत सुनाई देता है–तूफां से लाएं हम किश्ती निकाल कर। मुंशी पर उस गीत का प्रभाव पड़ता है। वह सिपाही से कहता है कि बुढ़िया को बुलाकर ला। आज स्वर्ण जयंती के अवसर पर वह स्वर्ण युग की शुरुआत करेगा अर्थात् बुढ़िया को न्याय जरूर दिलवाएगा।

व्याख्या

1. "किते नी मरता यू। थम नै बेरा कोन्यां के आज स्वर्ण जयंती मनाई जा रही है। शहर में बड़े-बड़े नेता लोग आए हुए हैं। फोर्स सारी ड्यूटियां पै गई होई हैं। जाओ ! हस्पताल चले जाओ। डियूटी पै तै कोई हवलदार आया तै उसनै ब्याण लेण भेज द्यूंगा।"

प्रसंग – प्रस्तुत अभिनयात्मक पंक्तियाँ 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित 'स्वर्ण जयंती' नामक एकांकी में से ली गई हैं। इस एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। आधुनिक समाज में सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में अनसुनी ही रह जाती हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन कर रहा है। शहर थाना में एक मारपीट का केस आता है। घायल व्यक्ति को अस्पताल में इलाज के लिए लेकर जाने से पहले थाने में रिपोर्ट करवाने आते हैं। थाने में कोई भी हवलदार नहीं है। थाना मुंशी उन लोगों से कहता है कि आदमी मरने वाला नहीं है। तुम लोगों को पता नहीं है कि आज स्वर्ण जयंती मनाई जा रही है जिसके कारण शहर में बड़े–बड़े नेता लोग आए हुए हैं। पूरी पुलिस फोर्स उन लोगों की सुरक्षा के लिए शहर में जगह–जगह ड्यूटी लगी हुई है अर्थात् थाने में कोई हवलदार भी नहीं है। जनता की रक्षा करने वाली पुलिस जनता के सेवकों की रक्षा के लिए लगी हुई है। थाना मुंशी कहता है कि तुम लोग इलाज के लिए इसे अस्पताल ले जाओ। जब ड्यूटी पर कोई हवलदार आएगा उसे बयान लेने भेज दिया जाएगा अर्थात् मारपीट मामलें में हजार बातें खड़ी करने वाले लोग आज अस्पताल बिना रिपोर्ट लिखे इलाज करवाने को कह रहे हैं।

विशेष –

(i) पुलिस जनता की रक्षा के लिए है लेकिन स्वर्ण जयंती के अवसर पर पुलिस नेताओं की सुरक्षा में लगी हुइ हे।

(ii) भाषा हरियाणवी शब्दावली शब्दों से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) व्यंग्यात्मक शैली है।

2. "पुत्तर, ओ दिन पुलाए नी जा सकते। वड्डा भैडा वक्त सी। इन्ना खोट्टा वक्त ते भगवान दुश्मन नूं वी ए वखाए। खैर पुत्तर। जिन्ना जल्दी होवे खोट्टे वक्त नूं ते पुला देणा चाइदा।"

शब्दार्थ – पुत्तर=बेटा, पुलाए=भुलाना, वड्डा=बहुत, भैडा=बुरा, वखाए=दिखाना, खोट्टे=बुरे।

प्रसंग – प्रस्तुत अभिनयात्मक पंक्तियाँ 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित 'स्वर्ण जयंती' नामक एकांकी में से ली गई हैं। इस एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। आधुनिक समाज में सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में अनसुनी ही रह जाती हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में थाना मुंशी जब बुढ़िया से कहता है कि देश को आजाद हुए पचास वर्ष हो गए हैं, उसके उपलक्ष्य में स्वर्ण जयंती मनाई जा रही है तो बुढ़िया को पचास साल पहले हुई मार काट याद हो आती है। उस समय बुढ़िया मुशी से कहती है कि बेटा वह समय कभी भुलाए भूला नहीं जा सकता है। बहुत ही बुरा समय था अर्थात् भारत–पाकिस्तान के बंटवारे के समय हुई मारकाट ने लोगों के दिलों पर गहरा प्रभाव छोड़ा है जिसे लोग आजादी के पचास सालों बाद भी भुला नहीं सके हैं। बुढ़िया कहती है कि वह समय बहुत बुरा था। इतना बुरा समय भगवान् किसी दुश्मन को भी न दिखाए अर्थात् यदि कोई दुश्मन भी हो तो, बदले के पचास पहले का बुरा समय भगवान उसे भी न दिखाए। बुढ़िया कहती है कि बेटा बुरा वक्त जितनी जल्दी हो भुला देना चाहिए अर्थात् बुरा वक्त व्यक्ति को दुःख तो देता है लेकिन आगे की जिंदगी बिताने के लिए जितनी जल्दी हो सके बुरे वक्त को भुला देना चाहिए।

विशेष –

(i) बुरे समय को भुलाकर भविष्य में उन्नति कर सकते हैं। इसलिए जितनी जल्दी हो बुरा वक्त भुला देना चाहिए।

(ii) भाषा पंजाबी शब्दावली से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) शैली विचारात्मक है।

3. "हमनै तै भुला राख्या पर ये करम ठोक भुलाण तै कोन्यां देत। आजकाल सारा रा बखेड़ा धर्म के नाम पै होर्‌या अर वो पंग्गा भी धर्म के नाम पै होया था।"

शब्दार्थ – बखेड़ा=विवाद, पंग्गा=झगड़ा।

प्रसंग – प्रस्तुत अभिनयात्मक पंक्तियाँ 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित 'स्वर्ण जयंती' नामक एकांकी में से ली गई हैं। इस एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। आधुनिक समाज में सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में अनसुनी ही रह जाती हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में उस समय का वर्णन है जब बुढ़िया कहती है कि बुरे समय को भुला देना ही अच्छा है। मुंशी बुढ़िया की इस बात पर कहता है कि हम लोग तो पुरानी बातें भुला दें अर्थात् हम पुराना बुरा वक्त तो भूल भी जाएं लेकिन हमारे कर्मो के ठेकेदार अर्थात् नेता लोग पचास साल पहले हुई मारकाट को भुलाने नहीं देते हैं। नेता लोग आज भी धर्म के नाम पर विवाद खड़ा किया रखते हैं और पचास साल पहले भी हिंदू–मुस्लिम झगड़ा धर्म के नाम पर हुआ था अर्थात् पचास साल पहले भी धर्म के नाम पर दंगं–फसाद हुए थे और आज भी हालात वहीं हैं। आज भी लोग धर्म के नाम पर एक–दूसरे से लड़ रहे हैं।

विशेष –

(i) हम लोग तो पुराना बुरा वक्त भुला दें लेकिन हमारी किस्मत के ठेकेदार अर्थात् नेता लोग लोगों को आज भी धर्म के नाम पर लड़ा कर पचास साल की मारकाट को भूलने नहीं देते हैं।

(iii) भाषा हरियाणवी शब्दावली से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iv) व्यंग्यात्मक शैली है।

4. "अर याए तो बात है। या तै बड्डे लेवल की बात हो गई। ऐरा-गैरा नत्थू खैरा होंदा तै मैं इनकी खाल इब्बे खेंच लेता। पर ताई ! इतना ब्योंत अपणा कोन्या।"

शब्दार्थ – लैवल=स्तर, इब्बे=अभी, ब्योंत=हिम्मत।

प्रसंग – प्रस्तुत अभिनयात्मक पंक्तियाँ 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित 'स्वर्ण जयंती' नामक एकांकी में से ली गई हैं। इस एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। आधुनिक समाज में सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में अनसुनी ही रह जाती हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक उस समय का वर्णन करता है, जब बुढ़िया तंग करने वालों के नाम बताती है। मुंशी बग्गे का नाम सुनकर उदास हो जाता है, सिपाही मुंशी को बताता है कि बग्गे की नेताओं से भी अच्छी जान–पहचान है। मुंशी बुढ़िया से कहता है कि उस गुंडे की पहुंच ऊपर तक हैं। यह तो बड़े स्तर की बात है अर्थात् बुढ़िया को तंग करने वाले लोगों की बातें सुननी पड़ सकती हैं। मुंशी बुढ़िया से कहता है कि यदि उस आदमी की अपेक्षा कोई आम आदमी होता तो वह अभी जाकर उसकी खाल खींच लेता अर्थात् बग्गे की अपेक्षा कोई आम आदमी होता तो बुढ़िया को मुंशी न्याय दिलवा देता। लेकिन अम्मा ! हमारी इतनी हिम्मत नहीं है कि हम उस पर हाथ डाल सकें अर्थात् बड़े आदमी के आगे पुलिस वालों की भी नहीं चलती है।

विशेष –

(i) पुलिस नेता लोग, बड़े आदमियों तथा गुंडों का साथ देती है, इसलिए आम आदमी को न्याय नहीं मिलता है।

(iii) भाषा हरियाणवी शब्दावली शब्दों से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) सुन्दर अभिनयात्मकता है।

(iv) व्यंग्यात्मक शैली है।

5. "पुत्तर, ओ गल नी ए। इह जवान बहुत वड्डा ए। आदमी कित्तै वी गुजर-बसर कर सकदा ए ! पर इस गल दी की गारंटी है के उत्थे कोई बग्गा नी होणा।"

प्रसंग – प्रस्तुत अभिनयात्मक पंक्तियाँ 'रघुवीर सिंह मथाणा' द्वारा रचित 'स्वर्ण जयंती' नामक एकांकी में से ली गई हैं। इस एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है। आधुनिक समाज में सच्चाई और मानवीयता अराजकता की स्थिति में बिना सुने रह जाती हैं।

व्याख्या – प्रस्तुत पंक्तियों में उस समय का वर्णन किया गया है जब मुंशी बुढ़िया को वह जगह छोड़कर दूसरे स्थान पर जाकर भुट्टा बेचने को कहता है। उस जगह पर कौन सी तुम्हारी जड़ें गड़ी हुई हैं। मुंशी की बात सुनकर बुढिया कहती है कि बेटा यह बात नहीं है। यह संसार बहुत बड़ा है। आदमी कहीं भी रहकर अपना गुजारा कर सकता है लेकिन इस बात की क्या गांरटी है कि वहां कोई बग्गा तंग नहीं करेगा अर्थात् आदमी कहीं भी रहकर अपना गुजारा कर सकता है लेकिन जिस डर के कारण वह अपनी जगह छोड़कर दूसरी जगह जाता है वहां कोई बड़ा आदमी नहीं होगा जो तंग नहीं करेगा।

विशेष –

(i) आदमी कहीं भी रहकर गुजारा कर सकता है, लेकिन इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि वहां कोई तंग करने वाला नहीं होगा।

(iii) भाषा पंजाबी शब्दावली से युक्त भावपूर्ण तथा प्रवाहमय है।

(iii) सुंदर अभिनयात्मकता है।

(iv) व्यंग्यात्मक शैली है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

प्रश्न 1 'स्वर्ण जयंती' हरियाणवी एकांकी का उद्देश्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर – साहित्य–रचना बिना उद्देश्य के संभव नहीं है। जो लोग यह घोषित करते हैं कि 'कला' कला के लिए है और उसका कोई उद्देश्य होना आवश्यक नहीं है, वे कला को जीवन से काटने का अपराध करते हैं। जीवन से कट कर साहित्य अथवा कला निरर्थक हो जाती है। साहित्य रचना समाज में, समाज के लिए प्राणियों द्वारा की जाती है। साहित्य जीवन का दर्पण भी होता है और दीपक भी। साहित्य में जीवन का चित्रण भी रहता है और उसे सुधारने का संकेत भी। साहित्य जीवन के यथार्थ को प्रदर्शित करता है तथा उसके सामने आदर्श भी प्रस्तुत करता है। प्रेमचंद ने साहित्य का उद्देश्य मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को उजागर करना माना है।

रघुवीर सिंह मथाणा द्वारा रचित एकांकी 'स्वर्ण जयंती' पर विचार करें तो ज्ञात होगा कि यह एक सोद्देश्य रचना है। जिसमें लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने ला रखा है। एकांकी की मुख्य पात्र बुढ़िया के माध्यम से सच्चाई और मानवता अराजकता की स्थिति में अनसुने रह जाने का वर्णन किया है। यदि पुलिस तंत्र चाहे तो आधुनिक समाज में अराकता की स्थिति में सुधार ला सकता है। इस एकांकी का उद्देश्य निम्नलिखित है

1. अव्यवस्था-चित्रण – 'स्वर्ण जयंती' में मानवता और सच्चाई अराजकता की स्थिति में दबकर रह जाती है। स्वर्ण जयंती के अवसर पर पूरी पुलिस फोर्स शहर में नेताओं की सुरक्षा के लिए जगह–जगह ड्यूटी पर है। थाने में बुढ़िया अपनी शिकायत लेकर आती है लेकिन मुंशी के पास सुनने का समय नहीं है। कहीं पर डकैती हो गई है या दहेज के कारण बहू जल कर मर गई है। मुंशी अभी इन्हीं सूचना में उलझा होता है कि ट्रैफिक जाम की सूचना आ जाती है। जिस सड़क पर ट्रैफिक जाम है वहां से नेता की वापसी में गाड़ी निकलनी है। मुंशी को ट्रैफिक जाम की सूचना ज्यादा महत्त्वपूर्ण लगती है। वह उसकी सूचना एस०पी० तक वायरलैस द्वारा पहुंचा देता है। थाने में मारपीट का कंस आता है। उसकी रिपोर्ट लिखे बिना उन्हें भगा दिया जाता है। बुढ़िया के द्वारा यह कहे जाने पर कि उसे बग्गे के आदमी तंग कर रहे हैं। बग्गा एक गुंडा है और वह वार्ड का एम०सी० है। उसकी नेताओं तक पहुंच है। बश का नाम सुनकर मुंशी बुढ़िया को अपनी मजबूरी बताता है। इससे आज के समाज में फैलती अराजकता का पता चलता

है और पुलिस तंत्र पर व्यंग्य किया गया है। पुलिस जनता की सुरक्षा के लिए नहीं है लेकिन जनता के सेवकों अर्थात् नेताओं की सुरक्षा के लिए है।

2. यथार्थ-चित्रण – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में लेखक ने देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने लाकर रखा है। आज देश में आजादी की पचासवीं सालगिरह मनाई जा रही है। आज स्वर्ण जयंती है लेकिन देश की स्थिति वही है जो आज से पचास साल पहले थी। पचास साल पहले आजादी के लिए धर्म के नाम पर हिंदू–मुस्लिम दंगे हुए थे, जो बंटवारे का कारण बने थे। वही धर्म के नाम पर दंगे आज भी चल रहे हैं। उन दंगों के पीछे नेताओं का हाथ है। मुंशी के कथन से यह बात स्पष्ट है–'हमनै तै भुला राख्या पर ये करम ठोक भुलाण तै कोन्या देते। आज सारा री बखेडा धर्म के नाम पै हो रया अर वो पंग्गा भी धर्म के नाम पै होया था।' इससे देश का यथार्थ चेहरा लोगों के समाने आता है।

3. भ्रष्टाचार चित्रण – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में पुलिस तंत्र द्वारा ही भ्रष्टाचार बढ़ाया जाता है, दर्शाया गया है। बुढ़िया सड़क के किनारे पर भुट्टा बेचती है। कुछ शरारती लड़के उसके भुट्टे खा जाते हैं, पैसे भी नहीं देते हैं। मांगने पर टोकरी उठाकर फेंक देते हैं तथा बुढ़िया को मारते हैं। बुढ़िया न्याय के लिए शहर थाना में आती है। मुंशी बुढ़िया को मदद कर आश्वासन देता है लेकिन बग्गे गुंडे का नाम सुनकर मुंशी अनी मजबूरी दर्शाता है क्योंकि बग्गा वार्ड का एम०सी० है तथा उसके घर मंत्रियों का आना जाना है; जिससे मुंशी को अपनी नौकरी भी खतरे में पड़ने का डर होता है। मुंशी के इस कथन से पुलिस तंत्र में फैला भ्रष्टाचार उजागर होता है–"अर याए तो बात है। या तै वड्टे लेवल की बात हो गई। ऐरा–गेरा नत्थू खैरा होंदा तै में इनकी खाल इब्बे खेंच लेता। पर ताइ ! इतना ब्योंत अपणा कोन्यां।"

4. अन्याय-विरोधी स्वर – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में मुंशी द्वारा अपनी मजबूरी दिखाने पर बुढ़िया उसे कहती है कि आजकल सभी मजबूर हैं लेकिन वह दुखी न हो, कहकर चली जाती है। मुंशी को पीछे से एक गीत सुनाई देता है कि "तूफां से लाए हम किश्ती निकाल कर....।" मुंशी उस गीत का सुनकर थाने में टहलता है। फिर कुछ निर्णय लेता है और सिपाही से कहता है कि बुढ़िया को बुला कर लाए। उसे न्याय दिलाने के लिए बड़े लोगों से टक्कर लेनी ही पड़ेगी। मुंशी देश की आजादी की स्वर्ण जयंती पर संकल्प करता है। इस अवसर पर देश के स्वर्ण युग की शुरुआत वे लोग ही करेंगे। मुंशी के कथन–"जा रै; ताई नै वापस बुला कै ल्या। आज स्वर्ण जयंती नै स्वर्ण युग का आगाज हम ही करैंगे।"

निष्कर्ष रूप से हम कह सकते हैं कि 'स्वर्ण जयंती' एकांकी का मूल उद्देश्य देश का यथार्थ चेहरा तथा सच्चाई और मानवता में फैली अराजकता समाज के सामने लाना था। पुलिस तंत्र किस तरह नेताओं और गुंडों के समक्ष मजबूर है। पुलिस वाले भी कमजोरों को न्याय नहीं दिलवा सकते हैं। लेखक ने देश में फैली व्याप्त समस्याओं का समाधान भी दिया है। जब तक पुलिस वाले अपनी ताकत का सही ढंग से प्रयोग करें तो सभी को न्याय मिलता है। मुंशी अंत में बुढ़िया को न्याय दिलाने के लिए तैयार हो जाता है और कहता है कि 'स्वर्ण जयंती' के अवसर पर देश के स्वर्ण युग की शुरुआत वे ही लोग करेंगे।

प्रश्न 2 'स्वर्ण जयंती' की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

उत्तर – भाषा भावों की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम साधन है। यह साधन जितना उत्तम होगा, रचना भी उतनी ही उत्कृष्ट मानी जाएगी। उपन्यास जीवन का दर्पण और मानव जीवन का चित्र है। अतः लेखक की सफलता इस बात में है कि वह अपनी रचना की भाषा शैली को अधिक से अधिक सरल और सरस बनाने का प्रयत्न करे। यही कारण है कि 'रघुबीर सिंह मथाणा' ने एकांकी 'स्वर्ण जयंती' में भाषा को सरल, सरस तथा अभिव्यक्ति में सक्षम बनाया है। भाषा की दृष्टि से 'स्वर्ण जयंती' में निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती हैं–

1. सरल भाषा – रघुवीर सिंह मथाणा ने 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में देश के यथार्थ चेहरे को समाज के सामने रखा है जिसमें उन्होंने आम लोगों की भाषा को ही अपनी अभिव्यक्ति के रूप में अपनाया है। जैसे–"इन्नै बी आजए मरणा था–दो दिन आगै–पाच्छै ना कर सकै थी। या तो मर–मुर ली–इन्नै छोड़। प्रकाश फीलिंग स्टेशन पै डकैती पड़गी, फटाफट मैसेज कर दो।"

इन पंक्तियों में लेखक ने पुलिस तंत्र में फैली अराजकता को व्यक्त किया है कि पुलिस वालों के लिए दहेज के लिए

मारी औरत का केस बेकार लगता है। मुंशी की ज्यादा काम के लिए झल्लाहट 'दो दिन आगै–पाच्छै ना मर सकै थी।' कथन से दिखाई देती है। इससे कथन में स्वाभाविकता आ गई हैं

2. पात्रानुकूल भाषा – रघुवीर सिंह मथाणा ने 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में देशकाल तथा पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। एकांकी में बुढ़िया पात्र का दुःख इस कथन में दिखाई देता है "पुत्तर ! ओए दिन पुलाए नी जा सकदे। वड्डा भैडा वक्त सी। इन्ना खोटा वक्त ते भगवान दुश्मन नू वी न वखाए। खैर, पुत्तर ! जिन्ना जल्दी होवे खोट्टे वक्त नूं ते पुला देणा चइदा।"

इन पंक्तियों में लेखक ने बुढ़िया के देश की आजादी के समय हुई मार–काट के दुःख का वर्णन किया है। उन दिनों को भुलाना आसान नहीं है। बुढ़िया का संबंध देश की सीमा के आस–पास से है इसलिए उसकी भाषा में पंजाबी शब्दावली का प्रयोग है। इसी प्रकार थाना मुंशी के कथन में पुलिस वाला कड़कपन दिखाई देता है "ताई ! इन रसख्या तै रहण दे। जिब मनै कह दिया उनके नाम बता, उनको मैं आप देख ल्यूंगा।" इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि लेखक ने देशकाल तथा पात्रों के अनुकूल भाषा का सफल प्रयोग किया है।

3. प्रवाहमयी भाषा – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी की भाषा में लेखक ने अत्यंत प्रवाहपूर्ण भाषा में सामान्य बातचीत की सादगी तथा मुहावरों का सहज प्रयोग भाषा के प्रवाह में वृद्धि ही करते हैं जैसे मुंशी का यह कथन–"अर याए तो बात है। या तै बड्डे लेवल की बात हो गई। ऐरा–गेरा नत्थू खैरा होंदा तै मैं इनकी खाल इब्बे खेंच लेता। पर ताई ! इतना ब्योंत अपणा कोन्या।"

इन पंक्तियों में सहज प्रवाहमयी भाषा के दर्शन होते हैं।

4. शब्द-शिल्प – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में हरियाणवी तथा पंजाबी शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इससे एकांकी की भाषा सहज, सरल तथा पात्रों तथा भाव के अनुकूल हो गई है।

(क) हरियाणवी शब्द – ताई, टैम, क्यूंकर, फेर, काटनी बारया, आगै–पाच्छै, असख्यां, इसी–तिसी, माटी आदि।

(ख) पंजाबी शब्द – पुत्तर, छलियां, गल मैन्नू, कुज, तुआड्डे, मुण्डे, पुलाए, भैडा, खोट्टा, वखाएं, चंगा, आखदे, माडा आदि।

(ग) अंग्रेजी शब्द – फिलिंग स्टेशन, सेल्समैन, वायरलैस, ऑपरेटर, कन्ट्रोलरूम, मैसेज, बर्निंग केस, ट्रैफिक आदि।

(घ) उर्दू शब्द – तफतीश, जख्मी, फुरसत, मुलाजम, जहान, आगाज आदि।

5. शैली – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में रघुवीर सिंह मथाणा ने मुख्य रूप से व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग किया है। जिसमें देश की आजादी कीं 'स्वर्ण जयंती' पर पूरी पुलिस फोर्स शहर में आए नेताओं की सुरक्षा में लगी हुई है। थाने में मुंशी के पास एक बुढ़िया आती है। उसको शहर का गुंडा और उसके वार्ड का एम०सी० बग्गा के आदमी तंग कर रहे हैं। मुंशी बग्गे का नाम सुनकर अपनी मजबूरी दर्शाता है। क्योंकि बग्गे के घर नेताओं का आना जाना है और पुलिस नेताओं की सुरक्षा कर रही है। बुढ़िया मुंशी की मजबूरी देखते हुए थाने से वापिस चली जाती है। लेखक ने इसमें बुढ़िया के माध्यम से पुलिस तंत्र पर व्यंग्य किया है। इनके कारण भी देश में अराजकता की स्थिति बढ रही है।

निश्चय ही 'स्वर्ण जयंती' एकांकी भाषा शैली पात्रानुकूल, कथावस्तु के अनुरूप तथा वातावरण की सृष्टि करने में समर्थ है। यह हरियाणवी तथा पंजाबी शब्दावली से युक्त सरल, सहज और स्वाभाविक है। एकांकी मुख्य रूप से व्यंग्यात्मक शैली में लिखी गई है।

प्रश्न 3 'स्वर्ण जयंती' एकांकी के आधार पर बुढ़िया का चरित्र-चित्रण कीजिए।

उत्तर – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी रघुवीर सिंह मथाणा द्वारा रचित है। इस एकांकी की मुख्य नारी पात्र बुढ़िया है। उसकी आयु साठ साल के लगभग है। वह सड़क के किनारे भुट्टा बेचती है। एकांकी के आधार पर बुढ़िया के चरित्र की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार हैं–

1. स्वाभिमानी – बुढ़िया साठ वर्ष के लगभग है। इतनी आयु में वह सड़क के किनारे बैठकर भुट्टा बेचकर गुजारा कर रही है। इससे उसके स्वाभिमानी होने का ज्ञान होता है।

2. **साहसी** – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में बुढ़िया सड़क के किनारे बैठ कर भुट्टा बेचती है कुछ दिनों से कुछ शरारती लड़के भुट्टा खा जाते हैं और पैसे भी नहीं देते हैं। विरोध करने पर उसकी टोकरी उठाकर फेंक दी और उसे ध क्का दे दिया। बुढ़िया को पता है कि वे गुंडे किसी बड़े आदमी के साथ हैं फिर भी वह उनके विरुद्ध थाने में शिकायत लेकर आती है।

3. **न्यायप्रियता** – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी में बुढ़िया तंग करने वाले लड़कों की शिकायत लेकर थाने में आती है। उसे पुलिस के न्याय पर विश्वास है। वह थाने में बग्गे की शिकायत करती है।

4. **स्वर्णिम अतीत की साक्षी** – थाने में बुढ़िया को पता चलता है कि आज देश को आजाद हुए पचास वर्ष हो गए हैं तो वह कहती है–देश में हुई मारकाट को भी पचास साल पूरे हो गए हैं। उसे पुराना वक्त याद आता है। वह उदास हो जाती है। बुढ़िया मुंशी से कहती है–"पुत्तर ! ओ दिन पुलाए नी जा सकदे। वड्डा भैड़ा वक्त सी इन्ना खोट्टा वक्त ते भगवान् दुश्मन नूं वी न वखाए।" आजादी के समय बुढ़िया दस बारह वर्ष की थी।

5. **आशावादी** – 'स्वर्ण जयंती' एकांकी के आधार पर हम कह सकते हैं कि बुढ़िया आशावादी है इसलिए न्याय मिलने के विश्वास से वह थाने में जाती है। पचास वर्ष पहले हुई मारकाट को याद करके दुःखी है लेकिन उसे भुला देना ही अच्छा है तथी अच्छे कल की आशा की जाती है। मुंशी बुढ़िया को कहीं ओर बैठकर भुट्टा बेचने को कहता है। तब बुढ़िया कहती है कि क्या गारंटी है वहां पर और कोई बग्गा नहीं होगा अर्थात् किसी के डर से वह कहीं ओर चली जाए। बुढ़िया के आशावादी दृष्टिकोण से उसे अंत में न्याय मिलता है।

निश्चय ही बुढ़िया स्वाभिमानी, न्याय में विश्वास करने वाली आशावादी नारी है। उसने अतीत में बहुत मारकाट देखी है। इसलिए वह किसी से डरती नहीं है। बुढ़िया के आत्मविश्वास को देखकर मुंशी भी उसे न्याय दिलाने के लिए बग्गे जैसे मुंडे से टकराने के लिए तैयार हो जाता है।